Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

# निर्णय-सूची

[1985] 1 उम० नि० प०


पृष्ठ संख्या

"उच्चतम न्यायालय के (प्रकाशनीय और अप्रकाशनीय) निर्णयों के महत्वपूर्ण मुद्दे ।" (57 - 83)

आयकर आयुक्त, एर्नाकुलम, केरल **बनाम** शासकीय समापक, पलई सेंट्रल बैंक लिमिटेड (समापनाधीन) 1206

उत्तर प्रदेश राज्य **बनाम** पी० ए० मधु 985

केरल राज्य और अन्य **बनाम** एम०पद्मनाभन नायर 859

कोरोमंडल फर्टिलाइजर्स लिमिटेड **बनाम** भारत संघ और अन्य 1178

गोवा, दमण और दीव माध्यमिक शिक्षा बोर्ड **बनाम** कुमारी हेमा लाड और अन्य 1174

जे० के० भारती और अन्य **बनाम** महाराष्ट्र राज्य और अन्य 1117

पंजाब राज्य **बनाम** नोहर चन्द 971

बामर लारी कर्मकार संघ, मुम्बई और अन्य **बनाम** बामर लारी एण्ड कम्पनी लिमिटेड और अन्य 895

बिहार राज्य **बनाम** विष्णु चंद लाल चौधरी और अन्य 927

मनमोहन सिंह जैटला **बनाम** आयुक्त संघ राज्य क्षेत्र चण्डीगढ़ और अन्य 864

महिन्दर सिंह और अन्य **बनाम** पंजाब राज्य और एक अन्य 875

मिली तालीमी मिशन का प्रबन्ध बोर्ड, बिहार, रांची और अन्य **बनाम** बिहार राज्य और अन्य 1140

रसिकलाल वाघजीभाई पटेल **बनाम** अहमदाबाद नगर निगम और एक अन्य 963

राजेन्द्र झा **बनाम** पीठासीन अधिकारी, श्रम न्यायालय, बोकारो स्टील सिटी, जिला धनबाद और एक अन्य 1193

राम जेठमलानी **बनाम** भारत संघ 980

शरद बिरधीचन्द शारदा **बनाम** महाराष्ट्र राज्य 995

सरोज रानी (श्रीमती) **बनाम** सुदर्शन कुमार चड्ढा 1122

सुदर्शन चिट्स (इण्डिया) लिमिटेड **बनाम** जी० सुकुमारन पिल्ले और अन्य 1160

सैयाजी मिल्स लिमिटेड **बनाम** क्षेत्रीय भविष्य निधि आयुक्त 881

हरशरण वर्मा **बनाम** उत्तर प्रदेश राज्य और एक अन्य 954


Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

# विषय-सूची

## [1985] 1 उम० नि० प०

पृष्ठ संख्या

**अधिलाभकर अधिनियम (सुपर प्राफिट्स टैक्स ऐक्ट,) 1963 (1963 का 14)**

—धारा 4 [सपठित धारा 2 (5), 2(9) और द्वितीय अनुसूची, नियम 1]—अधिलाभकर का प्रभार—प्रश्नगत निर्धारिती कंपनी का समापनाधीन होना—शासकीय समापक का नियुक्त किया जाना—कम्पनी की पूंजी और उसकी आरक्षितियों की संगणना के लिए अधिनियम के उपबंध समापनाधीन कम्पनी की बाबत लागू नहीं हो सकते। परिणामस्वरूप मानक कटौती अभिनिश्चित नहीं की जा सकती और इसलिए ऐसी कम्पनी पर उक्त धारा 4 के अधीन अधिलाभकर प्रभार्य नहीं है।

**आयकर आयुक्त, एर्नाकुलम, केरल बनाम शासकीय समापक, पलई सैंट्रल बैंक लिमिटेड (समापनाधीन)** 1206

**औद्योगिक नियोजन (स्थायी आदेश) अधिनियम, 1946-(1946 का 20)**

—धारा 3 (2) और अनुसूची की मद 9—"अवचार"—उच्च न्यायालय द्वारा ऐसे कृत्य को भी अवचार मान लेना जो सम्बद्ध सेवा विनियम में प्रगणित अवचारों में सम्मिलित नहीं है—उक्त दृष्टिकोण सही नहीं है, अतः "अवचार" सम्बद्ध सेवा विनियम में अवश्य ही प्रगणित होना चाहिए तभी किसी कर्मकार को उसके आधार पर दण्डित किया जा सकता है अन्यथा नहीं।

**रसिकलाल वाघजीभाईपटेल बनाम अहमदाबाद नगर निगम और एक अन्य** 963

**औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 (1947 का 14)**

—धारा 33(2) (ख) (सपठित सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908की धारा 11)—कर्मचारी की पदच्युति या सेवोन्मुक्ति के अनु-

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh


मोदन के समर्थन में अतिरिक्त साक्ष्य पेश करने का औचित्य—अपीलार्थी को अवचार के अभिकथन के आधार पर पदच्युत किया जाना—श्रम न्यायालय के समक्ष औद्योगिक विवाद का पर्याप्त समय तक लम्बित रहना—प्रबंधमण्डल द्वारा पदच्युति के अनुमोदन और पश्चात्वर्ती प्रक्रम में और आगे साक्ष्य पेश किए जाने के लिए आवेदन फाइल किया जाना—कर्मचारी द्वारा ऐसी इजाज़त दिए जाने की बात को चुनौती दी जानी—वास्तव में, पदच्युति या सेवोन्मोचन के आदेश के अनुमोदन के लिए उक्त धारा के अधीन की गई कार्यवाही में नियोजक को यह छूट होती है कि वह कर्मचारी के विरुद्ध पारित आदेश को न्यायोचित ठहराने के लिए साक्ष्य पेश करे—जब कर्मचारी न्यायालय के आदेश को प्रथम बार चुनौती नहीं दे रहा है, तो ऐसे मामले में पूर्व-न्याय का सिद्धांत प्रवर्तित होगा।

**राजेन्द्र झा बनाम पीठासीन अधिकारी, श्रम न्यायालय, बोकारो स्टील सिटी, जिला धनबाद और एक अन्य** 1193

**कर्मचारी भविष्य निधि और प्रकीर्ण उपबंध अधिनियम, 1952 (1952 का 19)**

—धारा 16(1)(ख)—भविष्य निधि में अभिदाय करने विषयक उपबन्धों का लागू होना—अपीलार्थी द्वारा परिसमापन में कारखाने का खरीदा जाना—नए सिरे से कारबार में पूंजी लगाना और नयी संविदाओं पर लगभग 70 प्रतिशत उस कारखाने के कर्मकारों को नियोजित करना—नया लाइसेंस प्राप्त करने के पश्चात् कारखाने में नए किस्म के माल का उत्पादन शुरु करना—यह दावा किया जाना कि कारखाने को प्रारम्भ हुए तीन वर्ष की कालावधि समाप्त नहीं हुई है—अधिनियम द्वारा पहले से ही शासित कारखाने के चलने में किसी प्रकार के व्यवधान का अर्थान्वयन कारखाने के बंद होने के रूप में नहीं किया जाना चाहिए और व्यवधान के पश्चात् यह नहीं समझा जाना चाहिए कि नया कारखाना स्थापित हो चुका है अतः कारखाने में विनिर्माण कार्य के पुनः शुरु होने पर उक्त अधिनियम के उपबन्ध लागू होंगे और कारखाने का मालिक अभिदाय करने के दायित्वाधीन होगा।

**सैयाजी मिल्स लिमिटेड बनाम क्षेत्रीय भविष्य निधि आयुक्त** 881

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh


**कंपनी अधिनियम, 1956 (1956 का 1)**

—धारा 446(2)—कम्पनी न्यायालय द्वारा दिये गये परिसमापन आदेश को अपील न्यायालय द्वारा प्रास्थगित रखने की स्थिति में न्यायालय की अधिकारिता—कंपनी का परिसमापन करने वाले कम्पनी न्यायालय के आदेश को अपील न्यायालय द्वारा केवल प्रास्थगित करना और शासकीय समापक को अंतरिम समापक के रूप में नियुक्त करना—ऐसा आदेश तत्समय अप्रवृत्त रहता है तथा समापन कार्यवाहियां लंबित रहती हैं और वे अस्तित्वहीन नहीं होती हैं—आदेश पारित करने वाले या प्रास्थगित रखने वाले न्यायालय को धारा 446(2) के अधीन कार्यवाहियों का निपटारा करने की अधिकारिता प्राप्त होगी।

सुदर्शन चिट्स (इण्डिया) लिमिटेड बनाम जी० सुकुमारन पिल्ले और अन्य 1160

**केन्द्रीय उत्पाद-शुल्क और नमक अधिनियम, 1944 (1944 का 1)**

—धारा 3 और अनुसूची 1, मद 14-जज [सपठित केन्द्रीय उत्पाद-शुल्क नियम, 1944, नियम 8(1)]—उत्पाद-शुल्क से छूट की मांग का औचित्य—अपीलार्थी द्वारा अधिसूचना 23/70 तारीख 1-3-1970 के अधीन 'ग्रोमर एन० पी० के० 14-35-14' उर्वरक को मिश्रित उर्वरक के रूप में उत्पाद-शुल्क से छूट की मांग की जानी—चूंकि 'ग्रोमर एन० पी० के० 14-35-14' मिश्रित उर्वरक नहीं है, इसलिए वह उस रूप में उत्पाद-शुल्क से छूट प्राप्त करने का हकदार नहीं है।

कोरोमंडल फर्टिलाइजर्स लिमिटेड बनाम भारत संघ और अन्य 1178

—धारा 4, स्पष्टीकरण (1973 के अधिनियम सं० 22 द्वारा उसके प्रतिस्थापन से पूर्व)—व्यापारिक बट्टा—चूंकि विक्रय अभिकर्ता को उसके द्वारा की गई सेवाओं के लिए करार के आधार पर पारिश्रमिक के रूप में संदत्त कमीशन व्यापारिक बट्टा नहीं है, इसलिए वह कटौती योग्य नहीं है।

कोरोमंडल फर्टिलाइजर्स लिमिटेड बनाम भारत संघ और अन्य 1178

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

**गोवा, दमण और दीव बोर्ड आफ हायर सेकण्डरी एजूकेशन बोर्ड ऐक्ट, 1975 (1975 का 13)**

—धारा 46 [सपठित गोवा, दमण एण्ड दीव सेकेण्डरी एण्ड हायर सेकेण्डरी एजूकेशन रूल्स 1975—नियम 37(1) और (2)]—विधिमान्यता—12वें स्तर की परीक्षा में बैठने वाले कतिपय छात्रों द्वारा 1975 के ऐक्ट के अधीन विरचित नियमों के नियम 37 के खण्ड (1) और (2) के उपबंधों को इस आधार पर चुनौती देते हुए रिट पिटीशन फाइल किया जाना कि वे अधिकारातीत और अविधिमान्य हैं—जहां तक नियम 37 के खण्ड (1) और (2) के उपबंध 12वें स्तर की परीक्षाओं में बैठने वाले अभ्यर्थियों द्वारा उत्तर पुस्तिकाओं के निरीक्षण और/या पुनर्मूल्यांकन किए जाने पर प्रतिषेध लगाते हैं वहां तक वे अधिकारातीत और अविधिमान्य नहीं हैं।

**गोवा, दमण और दीव माध्यमिक शिक्षा बोर्ड** बनाम **कुमारी हेमा लाड और अन्य** 1174

**ट्रेजरी कोड—नियम 186**

—कोषाधिकारी द्वारा सेवा-निवृत कर्मचारी को अंतिम वेतन प्रमाण पत्र और कोई दायित्व न होने का प्रमाण पत्र पेश करने में विलंब किया जाना—अपीलार्थी (राज्य सरकार) द्वारा विलंब के लिए प्रत्यर्थी को दोषी ठहराया जाना—सेवा-निवृत होने वाले प्रत्येक सरकारी सेवक को अंतिम वेतन प्रमाण पत्र प्रदान करना कोषाधिकारी का कर्तव्य है तथा विलंब के लिए औचित्य या स्पष्टीकरण न होने की दशा में यदि संबंधित राज्य सरकार चाहे तो दोषी अधिकारी को आपराधिक त्रुटियों द्वारा हुई नुकसानी की प्रतिपूर्ति करने का निदेश दे सकती है।

**केरल राज्य और अन्य** बनाम **एम० पद्मनाभन नायर** 859

**दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2)**

—धारा 154—प्रथम इत्तिला रिपोर्ट—फोन द्वारा पुलिस को सूचना दिया जाना जिसमें हत्यारे के नाम का उल्लेख न किया जाना—फोन पर दिए गए संदेश को किसी भी प्रकार प्रथम इत्तिला रिपोर्ट नहीं माना जा सकता।

**उत्तर प्रदेश राज्य** बनाम **पी० ए० मधु** 985

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

—धारा 179 और 180 [सपठित आवश्यक वस्तु अधिनियम, 1955 (1955 का 10) धारा 11 और 13-क]—विचारण की अधिकारिता—उर्वरक के विनिर्माता द्वारा विनिर्मित उर्वरक घटिया स्तर का पाया जाना तथा विनिर्माता के विपणन अभिकर्ता (मार्किटिंग ऐजेन्ट) द्वारा ऐसे उर्वरक को विनिर्माण के स्थान से किसी भिन्न स्थान पर बेचा जाना—अपर सेशन न्यायाधीश द्वारा विपणन अभिकर्ता को अभियोजित किया जाना किंतु उच्च न्यायालय द्वारा अपर सेशन न्यायाधीश के आदेश को अपास्त किया जाना—ऐसे न्यायालय को, जहां घटिया स्तर का उर्वरक बेचा गया था, विनिर्माता और विपणन अभिकर्ता, दोनों का विचारण करने की अधिकारिता प्राप्त होगी और उच्च न्यायालय द्वारा सेशन न्यायाधीश के आदेश में हस्तक्षेप करना ठीक नहीं है।

**पंजाब राज्य बनाम नोहर चन्द** 971

## पंजाब एडेड स्कूल्स (सिक्योरिटी आफ सर्विस) ऐक्ट, 1969

—धारा 3(1), (2), (5) (सपठित संविधान—अनुच्छेद 311)—सेवा-समाप्ति—प्रत्यर्थी स्कूल के प्रबंधमण्डल द्वारा अपीलार्थियों की सेवाएं दण्ड स्वरूप समाप्त की जानी—सेवा-समाप्ति के लिए नियुक्ति-पत्र में उल्लिखित शर्त का आश्रय लिया जाना—अनुशासन संबंधी कार्यवाही को वापस लेना—असद्भाव के अभिवाक् की जांच न किया जाना—सहायता प्राप्त किसी स्कूल के कर्मचारी को पदच्युत करने या हटाने या पदावनत करने से पूर्व अनुशासनात्मक कार्रवाई करना आवश्यक है।

**मनमोहनसिंह जैटला बनाम आयुक्त, संघ राज्य क्षेत्र चंडीगढ़ और अन्य** 864

## पेंशन अधिनियम, 1871 (1871 का 23)

—धारा 5 और 6—सेवा-निवृत्त कर्मचारियों को पेंशन और उपदान का संदाय—कोषाधिकारी द्वारा सेवा-निवृत कर्मचारी का अंतिम वेतन प्रमाण पत्र और कोई दायित्व न होने का प्रमाण पत्र पेश करने में विलंब किया जाना—प्रत्यर्थी (सेवा-निवृत कर्मचारी) द्वारा पेंशनऔर उपदान के विलम्ब से संदाय के लिए परिनिर्धारित नुकसानी के रूप में ब्याज की वसूली के लिए दावा—पिटीशनर द्वारा इसका विरोध किया जाना—पेंशन और उपदान सरकार द्वारा अपने

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कर्मचारियों को उनकी सेवा-निवृति पर दिया जाने वाला उदारदान (बाउंटी) नहीं बल्कि मूल्यवान अधिकार और सम्पत्ति है, और इसके संवितरण में किसी आपराधिक विलंब के लिए वर्तमान मार्केट दर पर इसका वस्तुतः संदाय करने की तारीख तक शास्ति के रूप में व्याज का संदाय करना होगा।

केरल राज्य और अन्य बनाम एम० पद्मनाभन नायर 859

**बाम्बे लाटरीज (कण्ट्रोल एण्ड टैक्स) एण्ड-प्राइज कम्पटीशन (टैक्स) ऐक्ट, 1958 (1958 का 82)**

—धारा 32(ग)—(सपठित संविधान का अनुच्छेद 14)—राज्य सरकार द्वारा प्राधिकृत लाटरियों को अधिनियम से छूट दी जानी—राज्य सरकार द्वारा दी गई छूट के भेदभाव बरतने वाली होने का अभिवाक् लिया जाना—छूट दिए जाने में भेदभाव अंतर्वलित नहीं है।

जे०के० भारती और अन्य बनाम महाराष्ट्र राज्य और अन्य 1117

**बिहार स्टेट मैनेजमेंट आफ एस्टेट्स एण्ड टेन्योर्स ऐक्ट, 1949 (1949 का 21)**

—धारा 31—संपदा का ले लिया जाना—धारा 3(1) के अधीनराज्य द्वारा वादी प्रत्यर्थी की संपदा के प्रबंध को अपने अधीन लेते हुए अधिसूचना का निकाला जाना—वादी द्वारा इस आधार पर वाद फाइल किया जाना कि वादगत संपदा के एक भाग का प्रबंध ग्रहण करते हुए उस अधिसूचना के निकालने के और भिन्न-भिन्न तौजियों की पृथक् संग्रहण विवरणियां तैयार न करने के कारण वादी को हानि हुई है—बाद में संपदा के अनधिसूचित भागों की बाबत भी अधिसूचना का निकाला जाना—चूंकि इस बात का कोई भी सबूत नहीं है कि राज्य या उसके अधिकारियों ने जानबूझकर व्यतिक्रम किया है या घोर उपेक्षा की है अथवा वादी के साम्पत्तिक हितों में अप्राधिकृत रूप से मध्यक्षेप किया है, इसलिए वादी द्वारा राज्य और उसके अधिकारियों के विरुद्ध किया गया नुकसानी का दावा स्वीकार नहीं किया जाएगा।

**बिहार राज्य बनाम विष्णु चंद लाल चौधरी और अन्य** 927

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

**भारतीय दण्ड संहिता, 1860 (1860 का 45)**

—धारा 300 (सपठित भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 101-140)—हत्या के मामले में पारिस्थितिक साक्ष्य—यह साबित करने का भार कि परिस्थिति-श्रृंखला की कड़ियां पूरी हैं, अभियोजनपक्ष पर होता है—यदि अभियोजन में कोई कमजोरी या कमी है, तो मिथ्या प्रतिरक्षा या अभिवाक् प्रस्तुत करके उस कमी को दूर नहीं किया जा सकता।

**शरद बिरधीचंद शारदा बनाम महाराष्ट्र राज्य** 995

—धारा 302/34 तथा 307/34 [सपठित आयुध अधिनियम, 1959 (1959 का 54) धारा 27]—चार व्यक्तियों का पूर्वोक्त धाराओं के अधीन सेशन न्यायालय द्वारा विचारण किया जाना—मुख्य अभियुक्त को सात वर्ष के कठिन कारावास से दण्डादिष्ट किया जाना—शेष तीन अभियुक्तों को दोषमुक्त कर दिया जाना—मुख्य अभियुक्त द्वारा दोषसिद्धि के विरुद्ध अपील की जाना—दूसरी ओर मुक्त किए गए तीन व्यक्तियों के संबंध में सरकार द्वारा अपील किया जाना—उच्च न्यायालय द्वारा मामले को नए सिरे से लिखे जाने और और समुचित निर्णय दिए जाने के लिए सेशन न्यायालय को वापस भेज दिए जाने का आदेश दिया जाना—उच्च न्यायालय ने ऐसा करके अनुचित कदम उठाया था—उच्च न्यायालय स्वयं तथ्यों संबंधी अंतिम न्यायालय होता है और उसका यह कर्तव्य था कि वह साक्ष्य के सही होने तथा ग्राह्य होने के बारे में अपना समाधान कर लेता और अपील का विनिश्चय स्वयं करता बजाय इसके कि वह उसे सेशन न्यायालय को प्रतिप्रेषित करता।

**मोहिन्दर सिंह और अन्य बनाम पंजाब राज्य और एक अन्य** 875

**भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 (1872 का 1)**

—धारा 3—पारिस्थितिक साक्ष्य—जहां अभियुक्त की दोषसिद्धि परिस्थिति के साक्ष्य के आधार पर की जाती है, वहां अन्य बातों के साथ-साथ उसकी पूर्ववर्ती शर्त यह है कि जिन परिस्थितियों से दोष विषयक निष्कर्ष निकाला जाता है, वे पूरी तरह 'साबित की जानी चाहिएं—सम्बन्धित परिस्थितियां 'साबित की जानी चाहिएं या 'साबित करनी होंगी,' न कि 'साबित की जा सकती हैं'—परिस्थितियां निश्चायक प्रकृति की होनी चाहिएं तथा

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

उन्हें साबित की जाने वाली उपकल्पना को छोड़कर, प्रत्येक संभावित उपकल्पना को अपवर्जित करना चाहिए ।

**शरद बिरधीचन्द शारदा** बनाम **महाराष्ट्र राज्य** 995

—धारा 3 और 101-104 (सपठित भारतीय दण्ड संहिता, 1860 की धारा 302)—सन्देह का फायदा—ज़हर खिलाकर हत्या की जानी—जहां साक्ष्य के आधार पर दो सम्भावनाएं उपलभ्य हों या हो सकती हैं, वहां अभियुक्त सन्देह का फायदा प्राप्त करने का हकदार होता है ।

**शरद बिरधीचन्द शारदा** बनाम **महाराष्ट्र राज्य** 995

—धारा 32(1)—मृत्युकालिक कथन—विस्तार—मृतक द्वारा वह कथन किया जाना जो ऐसे संव्यवहार की परिस्थितियों से सम्बन्धित हो, जिसके परिणामस्वरूप मृत्यु हुई है ऐसे मृतक का कथन ग्राह्य होता है जिसकी मृत्यु हो जाती है, चाहे वह मृत्यु मानव-वध का परिणाम हो अथवा आत्महत्या का परन्तु यह तब जबकि उक्त कथन मृत्यु के कारण से सम्बन्धित हो या उन परिस्थितियों को प्रदर्शित करता हो जिनके परिणामस्वरूप मृत्यु हुई है ।

**शरद बिरधीचन्द शारदा** बनाम **महाराष्ट्र राज्य** 995

## महाराष्ट्र रिकगनीशन आफ ट्रेड यूनियंज एण्ड प्रीवेन्शन आफ अनफेयर ट्रेड प्रेक्टिसिस ऐक्ट, 1971

—धारा 20(2)(ख), [सपठित संविधान 1950, अनुच्छेद 19(1) (क) और (19)(1)(ग)] औद्योगिक विवाद में कर्मकारों के प्रतिनिधित्व का स्वतन्त्रता के मूल अधिकारों का प्रभाव—1971 के अधिनियम की उक्त धारा द्वारा कर्मकारों के मान्यताप्राप्त संघ को कर्मकारों की ओर से औद्योगिक विवाद सम्बन्धी कार्यवाही में हाजिर होने या प्रतिनिधित्व करने का अनन्य अधिकार दिया जाना—ऐसा अनन्य अधिकार संविधान के अनुच्छेद 19(1)(क) और (19)(1)(ग) के अधीन उन कर्मकारों की मूल स्वतंत्रताओं का अतिक्रमण नहीं करता जो मान्यता प्राप्त संघ के सदस्य नहीं हैं ।

**बामर लारी कर्मकार संघ, मुम्बई और अन्य** बनाम **बामर लारी एण्ड कम्पनी लिमिटेड और अन्य** 895

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

—धारा 20 (2) (ख) (सपठित संविधान, 1950 अनुच्छेद 14) कर्मकारों का प्रतिनिधित्व और समता का मूल अधिकार—1971 के अधिनियम की उक्त धारा द्वारा कर्मकारों के मान्यता प्राप्त संघ को नियोजक से समझौता करने का अनन्य अधिकार दिया जाना और ऐसे समझौते का सभी कर्मकारों पर जो संघ के सदस्य हैं और जो संघ के सदस्य नहीं हैं—आबद्धकर होना—ऐसे समझौते के अधीन की गई कटौती संविधान के अनुच्छेद 14 का अतिक्रमण नहीं करती अतः यह कटौती न तो अनुचित है और न अयुक्तियुक्त और न ही अवैध है ।

**बामर लारी कर्मकार संघ, मुम्बई, और अन्य बनाम बामर लारी एण्ड कम्पनी लिमिटेड और अन्य** 895

## संविधान, 1950

—अनुच्छेद 30—अल्प संख्यक वर्गों के शिक्षा सम्बन्धी अधिकार की व्याप्ति—विवादग्रस्त संस्था मिली तालीमी मिशन, बिहार, रांची द्वारा शिक्षक प्रशिक्षण कालेज चलाया जाना—उक्त संस्था का एक अल्पसंख्यक संस्था होना—संस्था द्वारा 1977 में सम्बंधन किये जाने और मान्यता प्राप्त करने के लिए आवेदन किया जाना—प्रश्नगत कालेज के निरीक्षण के लिए सरकार द्वारा रांची विश्वविद्यालय को निदेश दिया जाना—मार्च, 1980 में विश्वविद्यालय प्राधिकारियों द्वारा सम्बंधन किए जाने और मान्यता की सिफारिश के बावजूद सरकार द्वारा कोई अन्तिम विनिश्चय न किया जाना—उच्च न्यायालय में आवेदन किये जाने पर उसके निदेशानुसार सरकार द्वारा केवल तीन सत्रों के लिए मान्यता अनुमोदित की जानी किन्तु बाद में सरकार द्वारा मान्यता रद्द की जानी—बिहार के शिक्षा आयुक्त द्वारा कालेज को सम्बंधन करने और मान्यता देने की सिफारिश की जानी—इस पर भी कोई कार्रवाई न की जानी—ऐसी स्थिति में पर्याप्त कारण बताए बिना सम्बंधन करने और मान्यता मंजूर करने से इन्कार करना संविधान के अनुच्छेद 30 के उपबंधों का उल्लंघन माना जाएगा ।

**मिली तालीमी मिशन का प्रबन्ध बोर्ड बिहार, रांची और अन्य बनाम बिहार राज्य और अन्य** 1140

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

—अनुच्छेद 133 [सपठित हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955— धारा 28,9,13 और 23]—उच्चतम न्यायालय में की गई अपील में अभिवाक् में संशोधन—पत्नी द्वारा दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्या-स्थापन हेतु किए गए पिटीशन में सम्पत्ति डिक्री प्राप्त की जाना—एक वर्ष तक सहवास न होने के आधार पर पति द्वारा तलाक के लिए पिटीशन—पत्नी द्वारा लिए गए सहवास के अभिवाक् को नामंजूर करते हुए डिक्री पारित की जाना—सम्मति डिक्री के दुरभिसंधिपूर्ण होने के आशय के अभिवाक् के संशोधन को अनुज्ञात नहीं किया जा सकता।

**सरोजरानी (श्रीमती) बनाम सुदर्शन कुमार चड्ढा** 1122

—अनुच्छेद 136—तथ्य सम्बन्धी एक ही निष्कर्ष में उच्चतम न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप—जब विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय दोनों ही तथ्य सम्बन्धी एक ही निष्कर्ष निकालते हैं, तो उच्चतम न्यायालय अनुच्छेद 136 के अधीन केवल विशेष परिस्थितियों में ही या वहां जहां विधि सम्बन्धी कोई त्रुटि हुई हो, हस्तक्षेप कर सकता है।

**शरद बिरधीचन्द शारदा बनाम महाराष्ट्र राज्य** 995

—अनुच्छेद 136—उच्चतम न्यायालय की विशेष अधि-कारिता—यदि उच्च न्यायालय ने साक्ष्य की अवहेलना कर दी है या उस पर विचार नहीं किया है या साक्षियों के साक्ष्य में अन्त-र्निहित गुणागुण का विवेचन नहीं किया है और अभियुक्त को साधारण आधारों पर दोषमुक्त कर दिया है, जो नितान्त अमान्य हैं, तो उच्चतम न्यायालय उच्च न्यायालय के निर्णय में हस्तक्षेप करेगा।

**उत्तर प्रदेश राज्य बनाम पी० ए० मधु** 985

—अनुच्छेद 164(1) और 173(क) (1963 के सोलहवें संशोधन अधिनियम द्वारा यथा संशोधित) —किसी राज्य में मंत्रियों की नियुक्ति—अनुच्छेद 176(क) के संशोधन का प्रभाव—कोई ऐसा व्यक्ति जो राज्य विधानमण्डल का सदस्य न हो, संविधान के अनुच्छेद 164(1) के अधीन उक्त संशोधन के पश्चात् भी मंत्री के रूप में नियुक्त किया जा सकता है किन्तु अनुच्छेद 164(4) के अधीन ऐसा मंत्री जो निरंतर छह मास की किसी अवधि तक

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

राज्य के विधानमण्डल का सदस्य नहीं रहता है, उस अवधि की समाप्ति पर मन्त्री नहीं रहेगा।

**हरशरण वर्मा बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और एक अन्य** 954

—अनुच्छेद 227 और 12—उच्च न्यायालय की अधिकारिता—सरकारी सहायता प्राप्त स्कूल की प्रबन्ध समिति द्वारा पिटीशनर की सेवा समाप्त करना—पक्षकारों के बीच आयुक्त का विनिश्चय अंतिम होना—आयुक्त के विनिश्चय को उच्च न्यायालय में चुनौती दिया जाना—उच्च न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप करने से मना करना—आयुक्त अनुच्छेद 12 के अधीन कानूनी प्राधिकारी होने के कारण उसके विनिश्चय उच्च न्यायालय की रिट अधिकारिता के भीतर आते हैं।

**मनमोहन सिंह जैटला बनाम आयुक्त संघ राज्य क्षेत्र चण्डीगढ़ और अन्य** 864

—अनुसूची 7—सूची 2, प्रविष्टि 34 (सपठित सूची 1, प्रविष्टि 40) दांव और द्यूत—महाराष्ट्र राज्य के भीतर लाटरी के टिकटों का विक्रय किया जाना—महाराष्ट्र राज्य द्वारा टिकटों के विक्रय पर पाबंदी लगाई जानी—राज्य विधानमंडल दांव और द्यूत की बाबत जिसके अन्तर्गत लाटरी भी संचालित की जा सकती है। विधि बनाने के लिए सशक्त है।

**जे०के० भारती और अन्य बनाम महाराष्ट्र राज्य और अन्य** 1117

**सुप्रीम कोर्ट रूल्स, 1966**

—भाग 1—आदेश 7, नियम 2, सपठित—आदेश 2, नियम 2—वृहत्तर न्यायपीठ के प्रति निर्देश से संबंधित परिपाटी तथा प्रक्रिया-अत्यधिक लोक महत्व के गंभीर प्रश्नों को अन्तर्वलित करने वाले असाधारण मामले—पंजाब में की गई कार्यवाही के पश्चात् निरुद्ध सिख नेताओं की निर्मुक्ति को अन्तर्वलित करने वाला विवाद्यक—उक्त विवाद्यक दीर्घावकाश न्यायाधिपति को निर्दिष्ट किया जाना—न्यायाधिपति के विचार में ऐसा महत्वपूर्ण विवाद्यक वृहत्तर न्यायपीठ के समक्ष रखा जाना आवश्यक है—अतः उक्त विवाद्यक दीर्घावकाश न्यायाधिपति द्वारा उच्चतम न्यायालय के सात न्यायाधिपतियों की वृहत्तर न्यायपीठ को निर्दिष्ट किया गया।

**राम जेठमलानी बनाम भारत संघ** 980

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh


## हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 (1955 का 25)

—धारा 9, 13ख और 23—तलाक का आधार—प्रत्यर्थी-पति द्वारा पत्नी को सहवास से वंचित रखना—पत्नी के पक्ष में दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन की सम्पति-डिक्री पारित की जाना—पति-पत्नी के बीच एक वर्ष तक सहवास न होने के आधार पर पति द्वारा तलाक की मांग की जाना—पति तलाक की डिक्री पाने का हकदार है।

**सरोज रानी (श्रीमती) बनाम सुदर्शन कुमार चड्ढा** 1122

—धारा 9 (सपठित संविधान 1950 अनुच्छेद 14 और 21)—धारा 9 के अधीन विहित दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन के उपचार से संविधान के अनुच्छेद 14 और 21 का उल्लंघन नहीं होता।

**सरोज रानी (श्रीमती) बनाम सुदर्शन कुमार चड्ढा** 1122

———

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



# उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका

## तुलनात्मक सारणी

### मार्च, 1985

| क्रम सं० | निर्णय तथा दिनांक | ए० आई० आर० | एस० सी० आर० | एस० सी० सी० |
|---|---|---|---|---|
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 |
| 1. | केरल राज्य और अन्य बनाम एम० पद्मनाभन नायर (17.12.84) | — | — | — |
| 2. | मनमोहन सिंह जैटला बनाम आयुक्त, संघ राज्य क्षेत्र चंडीगढ़ और अन्य (19.12.84) | — | — | — |
| 3 | महिन्दर सिंह और अन्य बनाम पंजाब राज्य और एक अन्य (20.12.84) | — | — | (1985) 1 फरवरी, 342 |

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 |
|---|---|---|---|---|
| 4. | सैयाजी मिल्स लिमिटेड **बनाम** क्षेत्रीय भविष्य निधि आयुक्त (21.12.84) | — | — | — |
| 5. | बामर लारी कर्मकार संघ, मुम्बई और अन्य **बनाम** बामर लारी एण्ड कम्पनी लिमिटेड और अन्य (21.12.84) | — | — | — |
| 6. | बिहार राज्य **बनाम** विष्णु चंद लाल चौधरी और अन्य (8.1.85) | 1985 फरवरी, 285 | — | — |
| 7. | हरशरण वर्मा **बनाम** उत्तर प्रदेश राज्य और एक अन्य (10.1.85) | 1985 फरवरी, 282 | — | — |
| 8. | रसिकलाल वाघजीभाई पटेल **बनाम** अहमदाबाद नगर निगम और एक अन्य (14.1.85) | — | — | — |
| 9. | पंजाब राज्य **बनाम** नोहर चन्द (17.5.84) | 1984 सितम्बर, 1492 | — | (1984) 3 अगस्त, 512 |
| 10. | राम जेठमलानी **बनाम** भारत संघ (19.6.84) | — | — | (1984) 3 सितम्बर, 696 |

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh


| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 |
|---|---|---|---|---|
| 11. | उत्तर प्रदेश राज्य **बनाम** पी० ए० मधु (17.7.84) | 1984 सितम्बर, 1523 | — | (1984) 4 अक्तूबर, 83 |
| 12. | शरद बिरधीचंद शारदा **बनाम** महाराष्ट्र राज्य (19.7.84) | 1984 अक्तूबर, 1622 | — | (1984) 4 अक्तूबर, 116 |
| 13. | जे० के० भारती और अन्य **बनाम** महाराष्ट्र राज्य और अन्य (23.7.84) | 1984 सितम्बर, 1542 | — | (1984) 3 सितम्बर, 704 |
| 14. | सरोज रानी (श्रीमती) **बनाम** सुदर्शन कुमार चड्ढा (8.8 84) | 1984 सितम्बर, 1562 | — | (1984) 4 अक्तूबर, 90 |
| 15. | मिली तालीमी मिशन का प्रबंध बोर्ड, बिहार, रांची और अन्य **बनाम** बिहार राज्य और अन्य (14.8.84) | 1984 नवम्बर, 1757 | — | (1984) 4 नवम्बर, 500 |
| 16. | सुदर्शन चिट्स (इण्डिया) लिमिटेड **बनाम** जी० सुकुमारन पिल्ले और अन्य (16.8.84) | 1984 अक्तूबर, 1579 | — | (1984) 4 दिसम्बर, 657 |
| 17. | गोवा, दमण और दीव माध्यमिक शिक्षा बोर्ड **बनाम** कुमारी हेमा लाड और अन्य (16.8.84) | 1984 अक्तूबर, 1584 | — | (1984) 4 अक्तूबर, 58 |

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 |
|---|---|---|---|---|
| 18. | कोरोमंडल फर्टिलाइजर्स लिमिटेड **बनाम** भारत संघ और अन्य (17.8.84) | 1984 नवम्बर, 1772 | — | — |
| 19. | राजेन्द्र झा **बनाम** पीठासीन अधिकारी, श्रम न्यायालय, बोकारो स्टील सिटी, जिला धनबाद और एक अन्य (21.8.84) | 1984 अक्तूबर, 1696 | — | — |
| 20. | आयकर आयुक्त, एर्नाकुलम, केरल **बनाम** शासकीय समापक, पलई सैंट्रल बैंक लिमिटेड (समापनाधीन) (16.10.84) | 1985 फरवरी, 146 | — | (1985) 1 जनवरी, 45 |

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

# उच्चतम न्यायालय के (प्रकाशनीय और अप्रकाशनीय) निर्णयों के महत्वपूर्ण मुद्दे*

## 1 दिसम्बर, 1984 को समाप्त सप्ताह :

| क्र० सं० | अन्तर्वस्तु | मद |
|---|---|---|
| 1. | **शिक्षु अधिनियम, 1961 :** | |
| | धारा 22 (2)—नियुक्ति पत्र में यह शर्त कि शिक्षु तभी खपाया जाएगा जब रिक्तियां होंगी—क्या यह शर्त नियोजक को शिक्षुता पूरी होने पर शिक्षु को अपने स्थापन में नियुक्त करने के लिए आबद्ध करती है। | 334 |
| 2. | **दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 :** | |
| | धारा 428—1898 की संहिता के अधीन सिद्धदोष अभियुक्त—1973 की संहिता प्रवृत्त होने के बाद फाइल की गई अपील—क्या अभियुक्त धारा 428 का फायदा पाने के लिए हकदार है। | 335 |
| 3. | **संविधान, 1950 :** | |
| | अनुच्छेद 136—तीनों न्यायालयों द्वारा तथ्य के एक समान निष्कर्ष—उच्चतम न्यायालय अनुच्छेद 136 के अधीन फाइल की गई अर्जी में कब साक्ष्य का पुनर्विलोकन करेगा। | 336 |
| | अनुच्छेद 141—निचले स्तर के न्यायालय उच्चतर स्तर के न्यायालयों के विनिश्चयों को स्वीकार करने के लिए बाध्य हैं। | 337 |
| | अनवधानता—क्या उच्च न्यायालय उच्चतम न्यायालय के विनिश्चय की अनवधानता के कारण बताकर अवहेलना कर सकता है। | 338 |

*उच्चतम न्यायालय की अनुज्ञा से प्रकाशित

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh


| क्र० सं० | अन्तर्वस्तु | मद |
|---|---|---|
| | अनुच्छेद 226—राजस्व मामलों में उच्च न्यायालय द्वारा एकपक्षीय कारण विहीन अंतरिम आदेश पारित किया जाना—इस पद्धति का अनुमोदन नहीं किया गया। | 339 |
| | अनुच्छेद 233—व्याप्ति—अधीनस्थ न्यायिक सेवा के नियुक्ति से पूर्व सात वर्ष के वकालत के अनुभवी सदस्य—क्या वे सीधे भर्ती द्वारा उच्चतर न्यायिक सेवा में नियुक्ति के पात्र हैं। | 340 |
| 4. | **कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम, 1948 :** | |
| | धारा 2 (9)—फर्म का भागीदार—क्या वह फर्म का कर्मचारी है जिससे कि निधि में अंशदान के लिए बाध्य है। | 341 |
| 5. | **भारतीय वन अधिनियम, 1927 :** | |
| | धारा 38-ज (2)—वन भूमि पर वृक्षों के मालिकों (प्रत्यर्थियों) को सूचना देकर वन भूमि का प्रबन्ध ग्रहण करने की ईप्सा—प्रत्यर्थियों का भूमि में कोई हित न होना—क्या सूचना विधिमान्य है। | 342 |
| 6. | **निर्वचन :** | |
| | कल्याणकारी विधान—विधान की अपनी स्कीम—क्या न्यायालय विधान की परिधि बढ़ा सकता है। | 343 |
| | न्यायालयों के निर्णय—इनका अर्थान्वयन किस प्रकार किया जाए—क्या इन्हें कानूनों के रूप में माना जा सकता है। | 344 |
| | मण्डी समिति द्वारा लिया गया अधिक शुल्क अविधिमान्य घोषित—मण्डी समिति को वह अतिरिक्त शुल्क अपने पास रखने में समर्थ बनाने के लिए धारा अधिनियमित—क्या यह धारा विधायी क्षमता के अन्तर्गत है। | 346 |
| 7. | **भागीदारी अधिनियम, 1932 :** | |
| | धारा 4—भागीदार का मज़दूरी पर काम करना—क्या वह कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम, 1948 की धारा 2 (9) के प्रयोजन के लिए फर्म का कर्मचारी है। | 345 |


Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh


क्र० सं० अन्तर्वस्तु मद

8. पंजाब कृषि उपज मण्डी अधिनियम :

धारा 23क—मण्डी समिति द्वारा व्यापारियों से उद्ग्रहणीय शुल्क से अधिक शुल्क उद्गृहीत और संगृहीत किया जाना—ऐसा अधिक उद्ग्रहण उच्च न्यायालय द्वारा अविधिमान्य घोषित—ऐसेअधिक संग्रहण को अपने पास रखने में मण्डी समितियों को समर्थ बनाने के लिए धारा 23क अधिनियमित—राज्य विधानमण्डल—क्या उच्च न्यायालय विधिक दृष्टि में दोषपूर्ण घोषित उद्ग्रहण को विधिमान्य करने में सक्षम है। 346

9. लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 :

धारा 123 (3)—भ्रष्ट आचरण—अकाल तख्त द्वारा हुक्मनामा जारी करके सिखों से विपक्षी को मत न देने की अपील—दल के पत्रों में प्रकाशित लेखों और सदस्यों द्वारा दिए गए भाषणों का भी यही आशय—क्या यह भ्रष्ट आचरण है। 347

## निर्णय-सूची

| | | |
|---|---|---|
| 1. | अमर नाथ ओम प्रकाश बनाम पंजाब राज्य | 344, 346 |
| 2. | सहायक कलक्टर, केन्द्रीय उत्पाद-शुल्क बनाम डनलप इण्डिया लिमिटेड और अन्य | 337, 338 339 |
| 3. | हरचरण सिंह बनाम सज्जन सिंह और अन्य | 347 |
| 4. | मेर धाना सीदा बनाम गुजरात राज्य | 335 |
| 5. | नरेन्द्र कुमार बनाम पंजाब राज्य | 334, 345 |
| 6. | प्रादेशिक निदेशक, कर्मचारी राज्य बीमा निगम बनाम रामानुज मैच इंडस्ट्रीज | 341, 343 |
| 7. | सत्य नारायण सिंह बनाम इलाहाबाद उच्च न्यायालय और अन्य | 340 |
| 8. | उत्तर प्रदेश राज्य और एक अन्य बनाम डा० अब्दुल कुद्दूस | 342 |
| 9. | वैराइटी इम्पोरियम बनाम वी० आर० एम० मोहम्मद इब्राहीम नैना | 336 |

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



**शिक्षु अधिनियम, 1961 :**

334. धारा 22 (2)—नियुक्ति-पत्र में यह शर्त होना कि यदि रिक्तियां होंगी तो शिक्षु को खपाया जाएगा—क्या यह शर्त नियोजक को शिक्षु के शिक्षुता पूरी करने पर नियुक्त करने के लिए आबद्ध करती है ?

**अभिनिर्धारित**—उपधारा (2) बिलकुल स्पष्ट है कि नियोजक शिक्षु को उपयुक्त नियोजन देने के लिए बाध्य है, यदि शिक्षुता की संविदा में यह शर्त है कि शिक्षु प्रशिक्षण के सफलतापूर्वक पूरा करने के बाद नियोजक की सेवा करेगा । इस उपबंध में अन्तर्निहित उद्देश्य रिक्तियों की विद्यमानता की सीमा तक यह प्रत्याभूत करना है कि शिक्षु अपने प्रशिक्षण के बाद बेरोजगार नहीं रहेंगे । पारस्परिक अधिकार और बाध्यताएं अर्थात् सेवा करना और नियोजन देना रिक्ति होने पर उत्पन्न होते हैं, जिस पर शिक्षु को नियुक्त किया जा सकता है । प्रस्तुत मामले में धारा 22 (2) के उपबंधों के कारण और नियुक्ति पत्र में उत्पन्न सांविदिक बाध्यताओं के कारण शिक्षु उपलभ्य रिक्तियों में नियुक्त किए जाने के लिए हकदार हैं ।

**नरेन्द्र कुमार** बनाम **पंजाब राज्य :** सिविल अपील सं० 4720/84 जिसका विनिश्चय 29.11.84 को किया गया ।

मुख्य न्यायाधिपति वाई० वी० चन्द्रचूड़ और न्यायाधिपति ई० एस० वेंकटरामय्या ।

**दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 :**

335. धारा 428—1898 की संहिता के अधीन सिद्धदोष अभियुक्त—1973 की संहिता के प्रवृत्त होने के बाद अपील—क्या अभियुक्त धारा 428 के फायदे के लिए हकदार है ?

**अभिनिर्धारित**—जहां अभियुक्त व्यक्ति सिद्धदोष किया गया था और उस तारीख को जब 1973 की संहिता प्रवृत्त हुई थी, दण्डादेश भोग रहा था, वहां इस तथ्य के बावजूद कि दोषसिद्धि का आदेश 1973 की संहिता के पुरःस्थापन से पूर्व किया गया था, धारा 428 लागू होगी । अभियुक्त यह मांग करने के लिए हकदार है कि अन्वेषण आदि के दौरान वह जो निरोध में रहा है, वह अवधि उस पर अधिरोपित कारावास की अवधि में समायोजित की जानी चाहिए । ऐसा अर्थान्वयन करने से 1973 की संहिता का भूतलक्षी रूप से प्रवर्तन नहीं हो जाएगा ।

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh


**मैर धाना सोदा बनाम गुजरात राज्य :** दाण्डिक अपील सं० 46/73 जिसका विनिश्चय 29.11.84 को किया गया। (अप्रकाशनीय)

न्या० देसाई और रंगनाथ मिश्र।

**संविधान, 1950 :**

336. अनुच्छेद 136—निचले तीन न्यायालयों द्वारा तथ्य संबंधी एकसमान निष्कर्ष—उच्चतम न्यायालय अनुच्छेद 136 के अधीन फाइल की गई अर्जी में कब साक्ष्य का पुनर्विलोकन करेगा ?

**अभिनिर्धारित**—यह सुस्थिर विधि है कि उच्चतम न्यायालय को अनुच्छेद 136 के अधीन अपनी अधिकारिता का प्रयोग बहुत कम करना चाहिए। कदाचित्, इसका यह अर्थ नहीं है कि अन्याय को इसलिए शाश्वत् बनने दिया जाए कि यह किसी मामले में तीन बार किया जा चुका है। यह दर्शित करने का भार कि दो या अधिक न्यायालयों या अधिकरणों का एकसमान निष्कर्ष प्रत्यक्षत: अन्यायसंगत है, उस पक्षकार पर है जो ऐसा अभिकथन करता है। किन्तु जब एकबार इस भार का निर्वहन कर दिया जाए तो यह केवल अधिकार ही नहीं बल्कि अन्याय का उपचार करना उच्चतम न्यायालय का कर्तव्य है। प्रस्तुत मामले में, मकान-मालिक ने तात्विक दस्तावेजी साक्ष्य को जानबूझकर दबाया। विचारण न्यायालय ने साक्ष्य का वस्तुपरक और ध्यानपूर्वक मूल्यांकन किए बिना मकान-मालिक का पक्षकथन स्वीकार कर लिया। अपील न्यायालय ने ऐसा पक्षकथन अपनाया जो स्वयं मकान-मालिक ने अपनाना उचित नहीं समझा था। उच्च न्यायालय ने उन परिस्थितियों पर विचार नहीं किया जो पहली बार उसके समक्ष उत्पन्न हुई थीं।

**वैराइटी इम्पोरियम** बनाम **मोहम्मद इब्राहीम नैना :** सिविल अपील सं० 3358/79 जिसका विनिश्चय 27.11.1984 को किया गया।

मुख्य न्यायाधिपति वाई० वी० चन्द्रचूड़ और न्यायाधिपति ठक्कर।

337. अनुच्छेद 141—निचले स्तर के न्यायालयों को उच्चतर स्तर के न्यायालयों के विनिश्चय मानने होंगे—स्वीकृति की आवश्यकता दोहराई गई ?

**अभिनिर्धारित**—इस देश में विद्यमान वर्तमान न्याय-प्रणाली में प्रत्येक निचला न्यायालय, जिसके अन्तर्गत उच्च न्यायालय भी है, इस बात के लिए बाध्य है कि उच्चतर न्यायालयों के विनिश्चयों को निष्ठापूर्वक स्वीकार करे। न्यायालय

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

की पदानुक्रम प्रणाली में यह अपरिहार्य है कि उच्चतम अपील अधिकरण के ऐसे विनिश्चय होते हैं, जिन्हें न्यायपालिका के सभी सदस्यों का सर्वसम्मत अनुमोदन प्राप्त नहीं होता किन्तु न्यायप्रणाली तभी काम करती है जब किसी को अंतिम फैसला करने के लिए अनुज्ञात किया जाए और जब वह अंतिम फैसला एक बार कर दिया जाए तो उसे निष्ठापूर्वक स्वीकार किया जाता है। निचले न्यायालयों की बेहतर प्रज्ञा को वरिष्ठ न्यायालय की उच्चतर प्रज्ञा के सामने झुकना होगा (ब्रूम बनाम केसेल) 1972 ए० सी० 1027 (में लार्ड हेलशियम और डिप्लाक द्वारा व्यक्त किए गए मत सानुमोदन उद्धृत किए गए)।

(मद सं० 339 देखिए)।

338. क्या उच्च न्यायालय उच्चतम न्यायालय के विनिश्चय की अवधानता के कारण बताकर अवहेलना कर सकता है ?

**अभिनिर्धारित**—अवधानता के कारण और दोषारोपण अपील न्यायालय के अपने ही पूर्व विनिश्चयों का अनुसरण न करने के अधिकार के लिए ही सुसंगत है न कि उच्चतर अपील न्यायालय के विनिश्चय की अवहेलना करने के उसके अधिकार के लिए या उच्चतम न्यायालय के विनिश्चय की अवहेलना करने के उच्च न्यायालय के किसी न्यायाधीश के अधिकार के लिए।

[ब्रूम बनाम केसेल (1972) ए० सी० 1027 सानुमोदन उद्धृत]
(मद सं० 339 देखिए)।

339. अनुच्छेद 226—राजस्व मामलों में उच्च न्यायालय द्वारा एकपक्षीय कारणविहीन अंतरिम आदेश पारित—यह पद्धति अनुमोदित नहीं की गई ?

**अभिनिर्धारित**—अनुच्छेद 226 कानूनी प्रक्रियाओं को छोटा करने या सीमित करने के लिए अभिप्रेत नहीं है। संविधान के अनुच्छेद 226 का तभी सहारा लिया जा सकता है जब असाधारण स्थितियों से निपटने के लिए कानूनी उपचार पूर्णतः अनुपयुक्त हो, जैसे उदाहरण के लिए उस कानून की वैधता ही प्रश्नगत हो या जहां प्राइवेट या सार्वजनिक गलतियां इतनी मिश्रित हों कि जहां लोक क्षति निवारण और लोक न्याय करने के लिए ऐसा आवश्यक हो। लोक राजस्व से संबंधित मामलों में जहां कानूनी उपचार उपलब्ध हैं, अंतरिम आदेश पारित नहीं किया जाना चाहिए क्योंकि अंतरिम आदेश देने की परिपाटी व्यावहारिक दृष्टि से, सुविधा संतुलन का ध्यान रखे बिना, पिटीशन में मांगे गए प्रमुख अनुतोष प्रदान करती है।

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



**सहायक कलक्टर, केन्द्रीय उत्पाद-शुल्क, चन्दन नगर, पश्चिमी बंगाल** बनाम **डनलप इण्डिया लिमिटेड :** सिविल अपील सं० 4742/84 जिसका विनिश्चय 30.11.1984 को किया गया।

न्या० चिन्नप्पा रेड्डी, ए० पी० सेन और वेंकटरामय्या।

340. अनुच्छेद 233—व्याप्ति—अधीनस्थ न्यायिक-सेवा के सदस्यों का नियुक्ति से पूर्व अधिवक्ता के रूप में सात वर्ष का अनुभव—क्या वे सीधे भर्ती द्वारा उच्चतर न्यायिक सेवा में नियुक्ति के लिए पात्र हैं ?

**अभिनिर्धारित**—अनुच्छेद 233 के खण्ड (1) और (2) के अन्तर्गत भर्ती के दो स्रोतों में स्पष्ट अंतर किया गया है। पहला खण्ड जिला न्यायाधीशों के रूप में व्यक्तियों की नियुक्ति के बारे में है जबकि दूसरा खण्ड उन व्यक्तियों के बारे में लागू होता है जो पहले से संघ या राज्य की सेवा में नहीं हैं। उन अभ्यर्थियों की दशा में, जो न्यायिक सेवा के सदस्य नहीं हैं, वे कम से कम सात वर्ष अधिवक्ता या प्लीडर रहे हों और जिला न्यायाधीश के रूप में नियुक्त किए जाने से पूर्व उच्च न्यायालय ने उनकी सिफारिश की हो, जबकि उन अभ्यर्थियों की दशा में जो न्यायिक सेवा के सदस्य हैं, सात वर्ष का नियम लागू नहीं होता किन्तु उच्च न्यायालय से परामर्श करना होगा।

**सत्य नारायण सिंह** बनाम **उच्च न्यायालय, इलाहाबाद :** रिट पिटीशन सं० 1607/84 जिसका विनिश्चय 27.11.1984 को किया गया।

न्या० चिन्नप्पा रेड्डी, ए० पी० सेन और वेंकटरामय्या।

**कर्मचारी राज्य बीमा निगम अधिनियम, 1948 :**

341. धारा 2 (9)—फर्म का भागीदार—क्या वह फर्म का कर्मचारी है जिससे कि निधि में अंशदान करने का दायित्व उत्पन्न होता है ?

**अभिनिर्धारित**—अधिनियम की धारा 2 (9) के अर्थ में कोई व्यक्ति तभी कर्मचारी हो सकता है जब वह मजदूरी पर नियोजित किया गया हो। मजदूरी की संकल्पना से ही वह नियोजन की संविदा में आएगा। आम बोलचाल की भाषा में "कर्मचारी" की संकल्पना में उसका नियोजक के साथ संबंध अन्तर्निहित है। किंतु अधिनियम में "नियोजक" शब्द की परिभाषा नहीं दी गई है। नियोजक के बिना कोई कर्मचारी नहीं होगा। भागीदारी अधिनियम की धारा 4 के अनुसार और न्यायिक विचारधारा के अनुसार भागीदार अपनी फर्म का केवल इसलिए कर्मचारी नहीं हो जाता है कि वह फर्म के लिए किए गए काम के लिए मज़दूरी या पारिश्रमिक पाता है।

**प्रादेशिक निदेशक, कर्मचारी राज्य बीमा निगम, त्रिचूर** बनाम

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

की पदानुक्रम प्रणाली में यह अपरिहार्य है कि उच्चतम अपील अधिकरण के ऐसे विनिश्चय होते हैं, जिन्हें न्यायपालिका के सभी सदस्यों का सर्वसम्मत अनुमोदन प्राप्त नहीं होता किन्तु न्यायप्रणाली तभी काम करती है जब किसी को अंतिम फैसला करने के लिए अनुज्ञात किया जाए और जब वह अंतिम फैसला एक बार कर दिया जाए तो उसे निष्ठापूर्वक स्वीकार किया जाता है। निचले न्यायालयों की बेहतर प्रज्ञा को वरिष्ठ न्यायालय की उच्चतर प्रज्ञा के सामने झुकना होगा (ब्रूम बनाम केसेल) 1972 ए० सी० 1027 (में लार्ड हेलशियम और डिप्लाक द्वारा व्यक्त किए गए मत सानुमोदन उद्धृत किए गए)।

(मद सं० 339 देखिए)।

338. क्या उच्च न्यायालय उच्चतम न्यायालय के विनिश्चय की अवधानता के कारण बताकर अवहेलना कर सकता है ?

**अभिनिर्धारित**—अवधानता के कारण और दोषारोपण अपील न्यायालय के अपने ही पूर्व विनिश्चयों का अनुसरण न करने के अधिकार के लिए ही सुसंगत है न कि उच्चतर अपील न्यायालय के विनिश्चय की अवहेलना करने के उसके अधिकार के लिए या उच्चतम न्यायालय के विनिश्चय की अवहेलना करने के उच्च न्यायालय के किसी न्यायाधीश के अधिकार के लिए।

[ब्रूम बनाम केसेल (1972) ए० सी० 1027 सानुमोदन उद्धृत] (मद सं० 339 देखिए)।

339. अनुच्छेद 226—राजस्व मामलों में उच्च न्यायालय द्वारा एकपक्षीय कारणविहीन अंतरिम आदेश पारित—यह पद्धति अनुमोदित नहीं की गई ?

**अभिनिर्धारित**—अनुच्छेद 226 कानूनी प्रक्रियाओं को छोटा करने या सीमित करने के लिए अभिप्रेत नहीं है। संविधान के अनुच्छेद 226 का तभी सहारा लिया जा सकता है जब असाधारण स्थितियों से निपटने के लिए कानूनी उपचार पूर्णतः अनुपयुक्त हो, जैसे उदाहरण के लिए उस कानून की वैधता ही प्रश्नगत हो या जहां प्राइवेट या सार्वजनिक गलतियां इतनी मिश्रित हों कि जहां लोक क्षति निवारण और लोक न्याय करने के लिए ऐसा आवश्यक हो। लोक राजस्व से संबंधित मामलों में जहां कानूनी उपचार उपलब्ध हैं, अंतरिम आदेश पारित नहीं किया जाना चाहिए क्योंकि अंतरिम आदेश देने की परिपाटी व्यावहारिक दृष्टि से, सुविधा संतुलन का ध्यान रखे बिना, पिटीशन में मांगे गए प्रमुख अनुतोष प्रदान करती है।

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



**सहायक कलक्टर, केन्द्रीय उत्पाद-शुल्क, चन्दन नगर, पश्चिमी बंगाल** बनाम **डनलप इण्डिया लिमिटेड :** सिविल अपील सं० 4742/84 जिसका विनिश्चय 30.11.1984 को किया गया।

न्या० चिन्नप्पा रेड्डी, ए० पी० सेन और वेंकटरामय्या।

340. अनुच्छेद 233—व्याप्ति—अधीनस्थ न्यायिक-सेवा के सदस्यों का नियुक्ति से पूर्व अधिवक्ता के रूप में सात वर्ष का अनुभव—क्या वे सीधे भर्ती द्वारा उच्चतर न्यायिक सेवा में नियुक्ति के लिए पात्र हैं ?

**अभिनिर्धारित**—अनुच्छेद 233 के खण्ड (1) और (2) के अन्तर्गत भर्ती के दो स्रोतों में स्पष्ट अंतर किया गया है। पहला खण्ड जिला न्यायाधीशों के रूप में व्यक्तियों की नियुक्ति के बारे में है जबकि दूसरा खण्ड उन व्यक्तियों के बारे में लागू होता है जो पहले से संघ या राज्य की सेवा में नहीं हैं। उन अभ्यर्थियों की दशा में, जो न्यायिक सेवा के सदस्य नहीं हैं, वे कम से कम सात वर्ष अधिवक्ता या प्लीडर रहे हों और जिला न्यायाधीश के रूप में नियुक्त किए जाने से पूर्व उच्च न्यायालय ने उनकी सिफारिश की हो, जबकि उन अभ्यर्थियों की दशा में जो न्यायिक सेवा के सदस्य हैं, सात वर्ष का नियम लागू नहीं होता किन्तु उच्च न्यायालय से परामर्श करना होगा।

**सत्य नारायण सिंह** बनाम **उच्च न्यायालय, इलाहाबाद :** रिट पिटीशन सं० 1607/84 जिसका विनिश्चय 27.11.1984 को किया गया।

न्या० चिन्नप्पा रेड्डी, ए० पी० सेन और वेंकटरामय्या।

**कर्मचारी राज्य बीमा निगम अधिनियम, 1948 :**

341. धारा 2 (9)—फर्म का भागीदार—क्या वह फर्म का कर्मचारी है जिससे कि निधि में अंशदान करने का दायित्व उत्पन्न होता है ?

**अभिनिर्धारित**—अधिनियम की धारा 2 (9) के अर्थ में कोई व्यक्ति तभी कर्मचारी हो सकता है जब वह मजदूरी पर नियोजित किया गया हो। मजदूरी की संकल्पना से ही वह नियोजन की संविदा में आएगा। आम बोलचाल की भाषा में "कर्मचारी" की संकल्पना में उसका नियोजक के साथ संबंध अन्तर्निहित है। किंतु अधिनियम में "नियोजक" शब्द की परिभाषा नहीं दी गई है। नियोजक के बिना कोई कर्मचारी नहीं होगा। भागीदारी अधिनियम की धारा 4 के अनुसार और न्यायिक विचारधारा के अनुसार भागीदार अपनी फर्म का केवल इसलिए कर्मचारी नहीं हो जाता है कि वह फर्म के लिए किए गए काम के लिए मज़दूरी या पारिश्रमिक पाता है।

**प्रादेशिक निदेशक, कर्मचारी राज्य बीमा निगम, त्रिचूर बनाम**

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



**रामानुज मैच इण्डस्ट्रीज** : सिविल अपील सं० 3500/84 जिसका विनिश्चय 27.11.1984 को किया गया।

(मद सं० 343 और 345 भी देखिए)।

न्या० ए० एन० सेन और रंगनाथ मिश्र।

**भारतीय वन अधिनियम, 1927 :**

342. धारा 38 ज (2)—वन भूमि का प्रबन्ध ग्रहण करने के लिए वन भूमि पर वृक्षों के मालिकों (प्रत्यर्थियों) को सूचनाएं जारी—प्रत्यर्थियों का भूमि में हित—क्या सूचना विधिमान्य है ?

**अभिनिर्धारित**—वन भूमि का प्रबन्ध ग्रहण करने के बहाने वृक्षों का अभिग्रहण करने का प्रयास विधिक दृष्टि से दोषपूर्ण है। इन सब मामलों में प्रत्यर्थियों का केवल वृक्षों में हित था। वे भूमि में हित रखने वाले न तो दावेदार थे, न ही स्वामी और न ही काश्तकार थे। उन पर सूचना तामलि करना विधिमान्य है।

**उत्तर प्रदेश राज्य बनाम अब्दुल कुद्दूस** : सिविल अपील सं० 1602/73 जिसका विनिश्चय 22.11.1984 को किया गया।

(अप्रकाशनीय)

न्या० तुलजापुरकर, पाठक और आर० बी० मिश्र।

**निर्वचन :**

343. कल्याणकारी विधान—विधान की अपनी कोई स्कीम न होना—क्या न्यायालय विधान की व्याप्ति को बढ़ा सकता है ?

**अभिनिर्धारित**—इसमें कोई संदेह नहीं हो सकता कि कल्याणकारी विधान का उदार अर्थान्वयन किया जाना चाहिए जिससे कि विधानमण्डल के आशय को कार्यरूप दिया जा सके। किन्तु जहां ऐसे कल्याणकारी विधान की अपनी निजी स्कीम होती हैं, वहां न्यायालय को उस स्कीम से बाहर नहीं जाना चाहिए और उन लोगों को कानूनी फायदा देने के बहाने जो इस स्कीम के अन्तर्गत नहीं आते हैं, कानून की व्याप्ति का विस्तार नहीं करना चाहिए। प्रस्तुत मामले में कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम के अधीन निरीक्षक ने यह दावा किया कि यदि तीन भागीदार जो फर्म में नियमित रूप से मजदूरी पर काम करते थे, कर्मचारियों के रूप में माने जाएं तो वह फर्म अधिनियम की परिधि के अन्तर्गत आ जाएगी और निधि में अंशदार करने के दायित्वाधीन होगी।

**प्रादेशिक निदेशक, कर्मचारी राज्य बीमा निगम, त्रिचूर** बनाम **रामानुज मैच इण्डस्ट्रीज** : सिविल अपील सं० 3500/84 जिसका विनिश्चय 27.11.1984 को किया गया।

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



(मद सं॰ 341,345 भी देखिए)।

न्या॰ अमरेन्द्र नाथ सेन और रंगनाथ मिश्र।

344. न्यायालय के निर्णय—अर्थान्वयन कैसे किया जाए—क्या उन्हें कानूनों के रूप में माना जाए ?

**अभिनिर्धारित**—न्यायालयों के निर्णयों का अर्थान्वयन कानूनी रूप में नहीं किया जाएगा। कानूनों के शब्दों, पदों और उपबंधों का निर्वचन करने के लिए न्यायाधीशों के लिए यह आवश्यक हो सकता है कि वे सविस्तार विवेचन करें किन्तु विवेचन व्याख्या करने के लिए अभिप्रेत होता है न कि परिभाषित करने के लिए। न्यायाधीश कानूनों का निर्वचन करते हैं। वे निर्णयों का निर्वचन नहीं करते। वे कानूनों के शब्दों का निर्वचन करते हैं। उनके शब्दों का निर्वचन कानूनों के रूप में नहीं किया जाता।

**अमर नाथ ओम प्रकाश बनाम पंजाब राज्य** : सिविल अपील सं॰ 4500/84 जिसका विनिश्चय 19.11.1984 को किया गया।

(मद सं॰ 346 भी देखिए)।

न्या॰ चिन्नप्पा रेड्डी, ए॰ पी॰ सेन और वेंकटराभय्या।

**भागीदारी अधिनियम, 1932 :**

345. धारा 4—भागीदारों का मजदूरी पर काम करना—क्या वह कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम, 1948 की धारा 2 (9) के प्रयोजन के लिए फर्म के कर्मचारी हैं ?

**अभिनिर्धारित**—भागीदारी अधिनियम की धारा 4 के अनुसार और न्यायशास्त्र के अनुसार भागीदार अपनी फर्म का मात्र इसलिए कर्मचारी नहीं होता कि वह फर्म के लिए किए गए काम के लिए मजदूरी या पारिश्रमिक लेता है।

**प्रादेशिक निदेशक, कर्मचारी राज्य बीमा निगम बनाम रामानुज** : सिविल अपील सं॰ 3500/84 जिसका विनिश्चय 27.11.1984 को किया गया। (मद सं॰ 341 और 343 भी देखिए)।

न्या॰ अमरेन्द्र नाथ सेन और रंगनाथ मिश्र।

**पंजाब कृषि उपज मण्डी अधिनियम (पंजाब एग्रीकल्चरल प्रोड्यूस मार्केट्स ऐक्ट) :**

346. धारा 23क—मंडी समितियों द्वारा व्यापारियों से उद्ग्रहणीय शुल्क से अधिक शुल्क उद्ग्रहण और संग्रहण—आधिक्य उद्ग्रहण—उच्च

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



न्यायालय द्वारा अविधिमान्य घोषित—धारा 23क का अधिनियमन किया गया जिससे कि मण्डी समितियां उस आधिक्य संग्रहणन को अपने पास रख सकें—क्या राज्य विधान मण्डल द्वारा, न्यायालय द्वारा अवैध घोषित उद्ग्रहण को विधिमान्य किया जा सकता है ?

**अभिनिर्धारित**—राज्य विधानमण्डल धारा 23क अधिनियमित करने के लिए सक्षम है। यह धारा वस्तुतः ऐसी विधि है जो जनसाधारण को ही देने के लिए है जो उससे लिया गया है। बिचौलियों को गलत तरीके से प्राप्त की गई चीज का फायदा उठाने देने के बजाए विधानमण्डल ने मण्डी समिति को वह रकम उन्हीं व्यक्तियों के फायदे के लिए, जिनके फायदे के लिए विपणन विधान बनाया गया था, बाद में प्रयुक्त किए जाने के लिए रखे जाने के लिए अनुज्ञात करके उद्ग्रहण आधिक्य द्वारा जो चलती की गई थी, उसे दूर करने की प्रक्रिया खोजी है।

**अमर नाथ ओम प्रकाश** बनाम **पंजाब राज्य** : सिविल अपील सं० 4500/84 जिसका विनिश्चय 19.11.1984 को किया गया।

(मद सं० 344 भी देखिए)।

न्या० चिन्नप्पा रेड्डी, ए० पी० सेन और वेंकटरामय्या।

**लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 :**

347. धारा 123 (3)—भ्रष्ट आचरण—अकाल तख्त द्वारा हुक्मनामा जारी, जिसके द्वारा सिखों से कहा गया कि विरोधियों को वोट न दिया जाए—इसी आशय के दल के पत्रों में लेख और सभाओं में भाषण—क्या ये भ्रष्ट आचरण हैं ?

**अभिनिर्धारित**—मामलों में पेश किए गए साक्ष्य के परिशीलन से, जिसका प्रतिवाद नहीं किया गया है, स्पष्ट है कि विजयी अभ्यर्थी अधिनियम की धारा 123 (3) के अर्थ में भ्रष्ट आचरण का दोषी था।

**हरचरण सिंह** बनाम **सज्जन सिंह** : सिविल अपील सं० 3419/81 जिसका विनिश्चय 29.11.1984 को किया गया।

न्या० एस० मुर्तजा फजल अली, वरदराजन और सब्यसाची मुखर्जी।

———

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh


## 15 दिसम्बर, 1984 को समाप्त सप्ताह :

| क्र० सं० | अन्तर्वस्तु | मद |
|---|---|---|
| 1 | **अधिवक्ता अधिनियम, 1961 :** | |
| | अधिवक्ताओं को एक अधिनियम के अनुसार अधिकरण के समक्ष हाजिर होने से प्रतिषिद्ध करना (महाराष्ट्र रेस्टोरेशन आफ लैंड्स टू शेड्यूल्ड ट्राइब्स ऐक्ट)—क्या यह अनुच्छेद 19 (1) (छ) का उल्लंघनकारी है—क्या यह मुकदमा लड़ने वाले को किसी अधिवक्ता द्वारा प्रतिनिधित्व किए जाने के अधिकार से वंचित करता है। | 348 |
| 2. | **प्रशासनिक विधि :** | |
| | विधायी शक्ति का प्रत्यायोजन—तमिलनाडु रेंट कंट्रोल ऐक्ट--धारा 29, जिसके द्वारा कुछ वर्ग के व्यक्तियों को अधिनियम के प्रवर्तन से पूर्ण छूट देने के लिए राज्य सरकार को सशक्त किया जाना—क्या इसमें विधायी शक्ति के अत्यधिक प्रत्यायोजन का दोष है। | 349 |
| | तमिलनाडु रेंट कंट्रोल ऐक्ट की धारा 29 के अनुसार धार्मिक न्यासों के भवन को अधिनियम के सभी उपबन्धों से आंशिक छूट देना—क्या यह अत्यधिक और अनपेक्षित है। | 350 |
| 3. | **कोयला खान (राष्ट्रीयकरण) अधिनियम, 1973 :** | |
| | धारा 2 (ज) (xii)—केन्द्रीय सरकार द्वारा खानों के अर्जन से पूर्व कोयला खानों के प्रयोजन के लिए और कोयला खानों से भिन्न प्रयोजनों के लिए कार का प्रयोग किया जाना--क्या कार खानों से संबंधित आस्ति है। | 351 |
| 4. | **दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 :** | |
| | संदिग्ध परिस्थितियों में मृत्यु—हत्या का अभिकथन—पुलिस को सुनवाई का अवसर न दिया जाना—अन्वेषण के लिए उच्च न्यायालय के एक न्यायाधीश द्वारा केन्द्रीय अन्वेषण | |

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



| क्र० सं० | अंतर्वस्तु | मद |
|---|---|---|
| | ब्यूरो के विशेषाधिकारी की नियुक्ति—क्या यह अनुचित है। | 352 |
| | संदिग्ध परिस्थितियों में मृत्यु—हत्या का अभिकथन—अन्वेषण कार्य अभी तक पुलिस के हाथ में ही था कि उच्च न्यायालय द्वारा पुलिस के अन्वेषण कार्य में हस्तक्षेप—क्या यह अनुचित है। | 353 |
| 5. | **संविधान, 1950 :** | |
| | अनुच्छेद 46—सामाजिक न्याय-विधि बनाने में इसकी व्याप्ति—व्याख्या। | 354 |
| | अनुच्छेद 239—संघ राज्य क्षेत्र—क्या एक राज्य है—प्रशासक की स्थिति—क्या राज्य राज्यपाल की स्थिति जैसी है—औद्योगिक विवाद अधिनियम की धारा 10 के अधीन निर्देश करने के प्रयोजन के लिए समुचित सरकार कौन है। | 355 |
| | अनुच्छेद 311 (2) के परन्तुक (क) से (ग)—व्याप्ति—व्याख्या। | 356 |
| 6. | **विभागीय जांच :** | |
| | जांच के बिना कर्मकार की पदच्युति—यह स्थायी आदेश द्वारा महाप्रबंधक को सामान्य प्रक्रिया अपनाए बिना कर्मकार को पदच्युत करने के लिए सशक्त किया जाना यदि उसका समाधान हो गया है कि उस कर्मकार को नियोजन में जारी रखना असमीचीन है—क्या इससे नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन होता है। | 357 |
| 7. | **औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 :** | |
| | धारा 10—संघ राज्यक्षेत्र में औद्योगिक विवाद उत्पन्न—समुचित सरकार—औद्योगिक अधिकरण के पास विवाद निर्देशित करने के लिए 'समुचित सरकार' कौन है। | 358 |
| 8. | **निर्वचन :** | |
| | "किसी न्यायालय द्वारा.........कोई आदेश या डिक्री नहीं की जाएगी......" प्रथम अपील के लम्बित रहते हुए अधिनियम का संबंधित क्षेत्र तक विस्तार—क्या अपील | |


Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



क्र० सं० अन्तर्वस्तु मद

न्यायालय विधि प्रवर्तन को ध्यान में रखने और इस धारा के फायदे का विस्तार करने के लिए बाध्य है। 359

कल्याणकारी विधान—कल्याणकारी विधान में कार्यपालक को प्रदत्त शक्ति—क्या यह सभी मामलों में इसका कड़ाई से पालन किया जाना चाहिए। 360

9. **महाराष्ट्र रेस्टोरेशन आफ लैंड्स टू शिड्यूल्ड ट्राइब्स ऐक्ट, 1974 :**

धारा 3 और 4 - व्याप्ति—जनजातियों द्वारा जनजातियों को भूमि का अंतरण—अकृत किया जाना और उसका कब्जा जनजातियों को पुनः दिया जाना—क्या विधान-मंडल को प्रश्नगत विधि बनाने की क्षमता प्राप्त है। 361

अंतरण को अकृत करने की तारीख अपनाना—क्या मन-माना और शून्य है। 362

क्या यह अधिनियम समान के साथ असमान व्यवहार करता है। 363

10. **नैसर्गिक न्याय :**

संदिग्ध परिस्थितियों में मृत्यु—हत्या का अभिकथन—मुख्य न्यायाधिपति को भेजा गया पत्र रिट पिटीशन माना जाना—एकल न्यायाधीश द्वारा मृत्यु के कारणों के बारे में जांच करने के लिए केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो के एक विशेष अधिकारी को नियुक्त करने का निदेश—राज्य पुलिस अधिकारियों को सुनवाई का अवसर न दिया जाना—क्या इससे नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत का उल्लंघन होता है। 364

जांच के बिना कर्मकार की पदच्युति—स्थायी आदेश द्वारा कर्मकार को सामान्य प्रक्रिया अपनाए बिना पदच्युत करने के लिए महाप्रबंधक को सशक्त किया जाना यदि उसका समाधान हो गया है कि कर्मकार को नियोजन में जारी रखना असमीचीन है—क्या इससे नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत का उल्लंघन होता है। 365

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



क्र० सं० अन्तर्वस्तु पृष्ठ

**11. लोक हित मुकदमा :**

मुख्य न्यायाधिपति को सम्बोधित पत्र—क्या वह एक रिट पिटीशन माना जा सकता है—क्या न्यायालय को शपथ-पत्र फाइल करने का आग्रह करना चाहिए। 366

**12. किराया नियंत्रण :**

तमिलनाडु रेंट कंट्रोल ऐक्ट, धारा 29—कुछ वर्ग के व्यक्तियों को अधिनियम के प्रवर्तन से पूर्ण छूट देने के लिए राज्य सरकार को सशक्त किया जाना—क्या इसमें विधायी शक्ति के अत्यधिक प्रत्यायोजन का दोष है। 367

तमिलनाडु रेंट कंट्रोल ऐक्ट की धारा 29—धार्मिक न्यासों से संबंधित भवनों को अधिनियम के सम्पूर्ण उपबंधों से आंशिक छूट—क्या यह शक्ति का अत्यधिक और अनपेक्षित प्रत्यायोजन है। 368

तमिलनाडु बिल्डिंग्स—(लीज एंड रेंट कंट्रोल) ऐक्ट, 1960, धारा 29—क्या यह विभेदात्मक है—क्या यह धार्मिक न्यासों के भवनों के किरायेदारों को अधिनियम के कल्याणकारी उपबंधों के समान संरक्षण से वंचित करती है। 369

टी० एन० रेंट कंट्रोल ऐक्ट, धारा 29—सहकारी सोसाइटियों के स्वामित्वाधीन भवनों को अधिनियम के प्रवर्तन से पूर्ण छूट—क्या यह अत्यधिक और अनपेक्षित है। 370

वैस्ट बंगाल प्रेमिसेज टेनेंसी ऐक्ट, 1960—धारा 13 (1क)—व्याप्ति—किसी न्यायालय द्वारा कब्जे के प्रतियुद्धरण के लिए ·····कोई आदेश या डिक्री नहीं की जायेगी—व्याप्ति—प्रथम अपील के लम्बित रहते हुए अधिनियम का विस्तार—क्या अपील न्यायालय विधि परिवर्तन को ध्यान में रखने और फायदे का विस्तार करने के लिए बाध्य है। 371

**13. शब्द और पद :**

नियत आस्ति—अर्थ—खानों से संबंधित स्टाफ कार—सरकार द्वारा खान का प्रबंध ग्रहण—कार का उपयोग

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



| क्र० सं० | अन्तर्वस्तु | मद |
|---|---|---|
| | खान कार्य के अतिरिक्त पूर्ववर्ती मालिक के अन्य विभिन्न प्रयोजनों के लिए किया जाना—क्या कार खान से संबंधित नियत आस्ति है। | 372 |

## निर्णय सूची

| | | |
|---|---|---|
| 1. | गोवा सैम्पलिंग एम्प्लाईज एसोसिएशन बनाम मैसर्स जनरल सुपरिटेंडेंस कं० आफ इंडिया प्राइवेट लिमिटेड और अन्य | 355,358 |
| 2. | कंदस्वामी चेट्टियार बनाम तमिलनाडु राज्य | 349,360 367,368,369 |
| 3. | लक्ष्मी नारायण गुई बनाम निरंजन मोदक | 359,376 |
| 4. | लिंगप्पा पोचन्ना अपेलवर बनाम महाराष्ट्र राज्य | 348,350,353 361,362,363 |
| 5. | मै० महेन्द्रु एण्ड कम्पनी एस० एम० बनाम तमिलनाडु राज्य | 371 |
| 6. | पश्चिमी बंगाल राज्य बनाम सम्पत लाल | 352,353,364, 365,366 |
| 7. | पश्चिमी बंगाल राज्य बनाम सुधीर डे | 352,353,364 365,366 |
| 8. | भारत संघ बनाम यूनाइटेड कोलियरीज़ लिमिटेड | 351,372 |
| 9. | कर्मकार, हिन्दुस्तान स्टील लि० बनाम हिन्दुस्तान स्टील लिमिटेड, | 356,357 |

**अधिवक्ता अधिनियम :**

348. अधिवक्ताओं को एक अधिनियम (महाराष्ट्र रेस्टोरेशन आफ लैंड्स टू शेड्यूल्ड ट्राइब्स ऐक्ट) के अनुसार अधिकरण के समक्ष हाजिर होने से प्रतिषिद्ध करना—क्या यह अनुच्छेद 19(1) (छ) का उल्लंघनकारी है—क्या यह मुकदमा लड़ने वाले को किसी अधिवक्ता द्वारा प्रतिनिधित्व किए जाने के अधिकार से वंचित करता है ?

**अभिनिर्धारित**—यद्यपि अधिवक्ता अधिनियम की धारा 30 अधिवक्ता को सभी न्यायालयों और अधिकरणों के समक्ष विधि-व्यवसाय करने का अधिकार

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



प्रदान करती है, फिर भी यह धारा अब तक प्रवृत्त नहीं की गई है। जब तक ऐसा नहीं किया जाता, तब तक कोई अधिवक्ता साधिकार किसी न्यायालय या अधिकरण के समक्ष हाजिर होने के लिए अपने आप हकदार नहीं है। अतः धारा 9-क असांविधानिक नहीं है। (ii) किसी व्यक्ति का अधिकरण के समक्ष प्रतिनिधित्व किए जाने के लिए संविधान द्वारा मान्य एकमात्र मूल अधिकार अनुच्छेद 22 (1) के अन्तर्गत दिया गया है। अन्य सभी विषयों में मुकदमा लड़ने वाले व्यक्ति को विधि-व्यवसायी द्वारा प्रतिनिधित्व किए जाने का कोई मूल अधिकार नहीं है। प्रकट है कि विधान मण्डल ने यह सोचा था कि यदि वकीलों को गैर जनजातीय अन्तरतियों की ओर से, जो समृद्ध वर्ग हैं, हाजिर होने के लिए अनुज्ञात कर दिया गया तो इससे कार्यवाही में अनावश्यक विलम्ब या देरी हो सकती है।

(मद सं० 354,361 से 363 भी देखिए)।

**प्रशासनिक विधि :**

349. विधायी शक्ति का प्रत्यायोजन—तमिलनाडु रेंट कंट्रोल ऐक्ट की धारा 29, जिसके द्वारा कुछ वर्ग के व्यक्तियों को अधिनियम के प्रवर्तन से पूर्ण छूट देने के लिए राज्य सरकार को सशक्त किया जाना—क्या इसमें विधायी शक्ति के अत्यधिक प्रत्यायोजन का दोष है ?

(देखिए मद सं० 367 से 370)।

350. तमिलनाडु रेंट कंट्रोल ऐक्ट की धारा 29—धार्मिक न्यासों के भवनों को अधिनियम के सभी उपबंधों से आंशिक छूट देना—क्या यह अत्यधिक और अनपेक्षित है ?

(देखिए मद सं० 367 से 370)।

**कोयला खान (राष्ट्रीयकरण) अधिनियम, 1973 :**

351. धारा 2 (ज) (xii)—केन्द्रीय सरकार द्वारा खानों का अर्जन करने से पूर्व कोयला खानों के प्रयोजन के लिए और कोयला खानों से भिन्न प्रयोजनों के लिए कार का उपयोग किया जाना—क्या यह "खानों से संबंधित" आस्ति है ?

**अभिनिर्धारित**—कोई आस्ति विशेष इस धारा की परिधि के अन्तर्गत आती है या नहीं, यह इस बात पर निर्भर करता है कि क्या वह उस समय दिए गए वर्णन के अनुसार है। अर्जन से पूर्व कार खानों के अधीन मात्र इसलिए थी कि खानों का एक अधिकारी कार का प्रयोग कोयला खान के कार्य के अतिरिक्त खानों के भूतपूर्व स्वामी के अन्य विभिन्न कार्यों के लिए करता था,

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



इससे वास्तविक विधि की स्थिति में परिवर्तन नहीं हो जाएगा। खानों का प्रबंध ग्रहण किए जाने पर वह केन्द्र में निहित हो गई।

**भारत संघ** बनाम **यूनाइटेड कोलियरीज लिमिटेड** : सिविल अपील सं० 4512/84 जिसका विनिश्चय 3.12.1984 को किया गया।

(मद सं० 372 भी देखिए)।

न्या० चिनिप्पा रेड्डी, ए० पी० सेन और वेंकटरामय्या।

**दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 :**

352. संदिग्ध परिस्थितियों में मृत्यु—हत्या का अभिकथन—पुलिस को सुनवाई का अवसर न दिया जाना—अन्वेषण के लिए उच्च न्यायालय के एक न्यायाधीश द्वारा केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो के विशेष अधिकारी की नियुक्ति—क्या यह न्यायोचित है ?

**अभिनिर्धारित**—हत्या के संबंध में जांच करने के साथ केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो के एक विशेष अधिकारी की नियुक्ति उचित जांच के आधार पर ही की जा सकती है। जब संहिता में सुपरिभाषित पदानुक्रम की प्रशासनिक व्यवस्था और प्रक्रिया दी गई है, जो कि स्पष्ट और निश्चित है, तो जांच का एक नया स्रोत बनाने से यह धारणा उत्पन्न हो सकती है कि कानूनी अधिकरण की स्थिति ठीक नहीं है और इससे नियमित पुलिस पदानुक्रम पर एक कलंक लग सकता है। इस प्रक्रिया में भी उन्हीं स्रोतों की छानबीन करके तथ्य संबंधी निष्कर्ष की जांच की जाती है जो अन्वेषण अधिकरण से की जानी प्रत्याशित थी। इस प्रक्रम पर विशेष अधिकारी की नियुक्ति करने से न्याय के लक्ष्य की पूर्ति होना संभाव्य नहीं था।

**पश्चिमी बंगाल राज्य** बनाम **सम्पत लाल** : दाण्डिक अपील सं० 570/83 जिसका विनिश्चय 4.12.84 को किया गया।

(मद संख्या 353, 364 और 366 भी देखिए)।

न्या० भगवती, अमरेन्द्र नाथ सेन और रंगनाथ मिश्र।

353. संदिग्ध परिस्थितियों में मृत्यु—हत्या का अभिकथन—अन्वेषण कार्य अभी तक पुलिस के हाथ में—उच्च न्यायालय द्वारा पुलिस के कार्य में हस्तक्षेप—क्या यह न्यायोचित है।

**अभिनिर्धारित**—जब अन्वेषण कार्य पुलिस को सौंपा गया है तो अन्वेषण साधारणतया न्यायालय की सामान्य पर्यवेक्षणात्मक शक्ति के अधीन नहीं है

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



किन्तु न्यायालय को अन्वेषण अधिकरण को निदेश देने की अवशिष्ट अधिकारिता है। यदि उसका समाधान हो जाता है कि विधि की अपेक्षाओं का अनुपालन नहीं किया जा रहा है और अन्वेशण उचित रूप से या सम्यक् शीघ्रता और तत्परता से नहीं किया जा रहा है. प्रस्तुत मामले में अभिलेख की सामग्री से इस नियम का अपवाद लागू किया जाना न्यायोचित नहीं होता जब विशेष अधिकारी की नियुक्ति इस प्रक्रम पर अपेक्षित नहीं थी।

**पश्चिमी बंगाल राज्य** बनाम **सम्पत लाल** : दाण्डिक अपील सं० 570/83 जिसका विनिश्चय 4.12.84 को किया गया।

(मद सं० 352,364 और 366 भी देखिए)।

न्या० भगवती, अमरेन्द्र नाथ सेन और रंगनाथ मिश्र।

**संविधान, 1950 :**

354. अनुच्छेद 46—सामाजिक न्याय—विधि बनाने में इसकी व्याप्ति—व्याख्या ?

**अभिनिर्धारित**—विधि निर्माण के क्षेत्र में सामाजिक न्याय की संकल्पना से अन्य बातों के साथ-साथ आर्थिक असमानताओं का निवारण और समाज में असमानों के बीच व्यवहारों और संव्यवहारों से फलीभूत अन्याय को दूर करना भी लक्षित होता है। विधि का प्रयोग समाज के सदस्यों में धन के सही विभाजन के लक्ष्य की प्राप्ति हेतु सामाजिक अन्याय के उपकरण के रूप में किया जाना चाहिए। इसमें इस लक्ष्य की प्राप्ति से भी अधिक समाविष्ट है, जैसे असमानताओं को कम करना अथवा अन्य बातों में यह उल्लेखनीय है, जैसे एक व्यक्ति के स्वामित्वाधीन सम्पत्ति का उन अनेकों में, जिनके पास सम्पत्ति नहीं है, जोतों पर अधिकतम सीमा अधिरोपित करके या कुछ संव्यवहारों को वर्जित करके सांविदिक व्यवहारों के प्रत्यक्ष विनियमन द्वारा और सम्भवतः दूसरे लोगों से अपेक्षाएं करके सम्पत्ति का वितरण करना। इसका यह भी अर्थ है कि जिन लोगों को अत्यन्त सौदेबाजी द्वारा उनकी सम्पत्तियों से वंचित कर दिया गया है, उन्हें उनकी सम्पत्ति वापस दिलाई जानी चाहिए। ये सभी विधियां समाज के सदस्यों में भौतिक संसाधनों के निष्पक्ष विभाजन का लक्ष्य प्राप्त करने के साधन के रूप में धन के बलात् पुनर्वितरण का रूप ग्रहण कर सकती हैं या अनुचित करारों पर विधायी नियन्त्रण हो सकता है।

**लिंगप्पा पोचन्ना अपेलवर** बनाम **महाराष्ट्र राज्य** : सिविल अपील सं० 4384/84 जिसका विनिश्चय 4.12.84 को किया गया।

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



(मद सं० 348,361 से 363 भी देखिए)।

न्या० चिन्नप्पा रेड्डी, ए० पी० सेन और वेंकटरमय्या।

355. अनुच्छेद 239—संघ राज्यक्षेत्र—क्या यह "राज्य" है—प्रशासक की स्थिति—क्या वह राज्य के राज्पाल के समकक्ष है—औद्योगिक विवाद अधिनियम की धारा 10 के अधीन निर्देश करने के प्रयोजन के लिए "समुचित सरकार" कौन है ?

(मद सं० 358 देखिए)।

356. अनुच्छेद 311 (2) का परन्तुक (क) से (ग)—व्याप्ति—व्याख्या ?

[न्यायालय के समक्ष प्रश्न यह था कि क्या ऐसा कोई स्थायी आदेश जो पब्लिक सेक्टर कम्पनी के महाप्रबन्धक को स्थायी आदेशों में दी गई प्रक्रिया अपनाए बिना पदच्युत करने के लिए सशक्त करता है, यदि उसका समाधान हो जाता है कि कर्मकार को नियोजन में रखना असमीचीन है, नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन करता है। न्यायालय ने कहा था कि ऐसा ही उपबंध संविधान के अनुच्छेद 311 (2) के परन्तुक (ख) में विद्यमान है जो जांच करने से छूट प्रदान करता है। ऐसी स्थिति में भी एक रक्षोपाय के द्वारा प्राधिकारी को यह व्यादेश दिया गया है कि वह अपने विनिश्चय के कारणों का उल्लेख करे कि जांच करना युक्तियुक्त रूप से साध्य क्यों नहीं है। इसी सम्बन्ध में न्यायालय ने अनुच्छेद 311(2) के तीन परन्तुकों की व्याप्ति की व्याख्या की थी]।

**विभागीय जांच :**

357. जांच के बिना कर्मकार की पदच्युति—सामान्य प्रतिक्रिया अपनाए बिना कर्मकार को पदच्युत करने के लिए महाप्रबन्धक को सशक्त करने वाले स्थायी आदेश यदि उसका समाधान हो जाता है कि उस कर्मकार को नियोजन में रखना असमीचीन है—क्या इससे नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन होता है ?

**अभिनिर्धारित**—कोई स्थायी आदेश जो मात्र यह उल्लेख करके कि कर्मकार को नियोजन में रखना असमीचीन है, कर्मकार को पदच्युत करने के लिए नियोजक को ऐसी मनमानी शक्ति प्रदान करता है, नैसर्गिक न्याय के मूलभूत अपेक्षा का उल्लंघनकारी है। यदि कोई जांच नहीं की जाती है तो नियोजक को लिखित रूप में वे कारण विनिर्दिष्ट करने चाहिएं, जिनकी वजह से जांच करना युक्तियुक्त रूप से साध्य नहीं था। अनुच्छेद 311(2) के परन्तुक (ख) में भी जो जांच से विमुक्ति अनुज्ञात करता है, यह रक्षोपाय समाविष्ट है कि प्राधिकारी को वे कारण विनिर्दिष्ट करने चाहिएं, जिनकी वजह से जांच

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



करना युक्तियुक्त रूप से साध्य नहीं है। इस न्यूनतम अपेक्षा से विमुक्ति नहीं दी जा सकती। इस मामले में जांच से विमुक्त करने के कारणों में कर्मकार के विरुद्ध अभिकथित अवचार की प्रकृति और वह कारण, जिसकी वजह से महाप्रबन्धक ने जांच नहीं की है, उल्लिखित नहीं किए गए। (न्यायालय ने निदेश दिया कि कर्मकार को 1.5 लाख रुपए का प्रतिकर संदत्त किया जाए)।

**कर्मकार बनाम हिन्दुस्तान स्टील लिमिटेड :** सिविल अपील सं० 1137/81 जिसका विनिश्चय 12.12.1984 को किया गया।

(मद सं० 356 भी देखिए)।

न्या० देसाई और खालिद।

**औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 :**

358. धारा 10—संघ राज्यक्षेत्र में उत्पन्न औद्योगिक विवाद—औद्योगिक अधिकरण को विवाद निर्देशित करने के लिए समुचित सरकार कौन है?

**अभिनिर्धारित**—संविधान और संघ राज्यक्षेत्र अधिनियम, 1963 के उपबंधों की पृष्ठभूमि से पता चलता है कि सांविधानिक दृष्टि से संघ राज्यक्षेत्र राज्य से एक भिन्न चीज है और प्रशासक किसी भी अधिनियमिति में प्रयुक्त "राज्य सरकार" पद के अर्थ के अन्तर्गत नहीं आएगा। राज्य सरकार की संकल्पना संघ राज्यक्षेत्र के प्रशासन के लिए असंगत है। प्रशासक की स्थिति राज्य के राज्यपाल की स्थिति से भिन्न है। उसे राज्य सरकार के रूप में वर्णित नहीं किया जा सकता। अनुच्छेद 239 में उपबंधित है कि प्रत्येक संघ राज्यक्षेत्र का प्रशासन राष्ट्रपति अर्थात् केन्द्रीय सरकार द्वारा किया जाएगा। अतः औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 10 के अधीन निर्देश करने के लिए केन्द्रीय सरकार ही समुचित सरकार है।

**गोवा सैम्पलिंग एम्पलाईज़ एसोसिएशन बनाम मैसर्स जनरल सुपरिटेन्डेंस कं० आफ इंडिया प्राइवेट लिमिटेड :** सिविल अपील सं० 4904/84 जिसका विनिश्चय 11.12.1984 को किया गया।

न्या० देसाई और अमरेन्द्र नाथ सेन।

**निर्वचन :**

359. "कोई आदेश या डिक्री.........किसी भी न्यायालय में नहीं की जाएगी"—प्रथम अपील के लम्बित रहते हुए अधिनियम का क्षेत्र

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



तथा विस्तार—क्या अपील न्यायालय विधि के परिवर्तन को ध्यान में रखने के लिए और इस धारा का फायदा उस क्षेत्र तक विस्तारित करने के लिए आबद्ध है ?

**अभिनिर्धारित**—यह सुस्थिर है कि जब विचारण न्यायालय किसी वाद में डिक्री करता है और डिक्री को सक्षम अपील द्वारा चुनौती दी जाती है तो वह अपील वाद के क्रम में समझी जाती है तथा जब अपीली डिक्री गुणागुण के आधार पर उस डिक्री का अनुमोदन कर देती है, उपान्तरित कर देती है या उलट देती है तो विचारण न्यायालय की डिक्री के बारे में विधि की दृष्टि से यह कहा जाता है कि वह अपील न्यायालय की डिक्री में विलीन हो गई और तब अपीली डिक्री प्रभावी रहती है। प्रस्तुत मामले में, एक वाद किराया नियंत्रण अधिनियम के प्रश्नगत क्षेत्र तक विस्तारित होने से पहले संस्थित किया गया था। उपबंध का उद्देश्य किरायेदार द्वारा परिसर का कब्जा संरक्षित करना है। अत: विचारण न्यायालय की डिक्री के विरुद्ध फाइल की गई अपील के लम्बित रहते हुए किराएदार इस उपबंध का सहारा नहीं ले सकता। विधायी समादेश के अनुसार न्यायालय ऐसा आदेश या डिक्री करने की अपनी असीमित अधिकारिता से वंचित किया गया है। प्रथम अपील न्यायालय विधि के परिवर्तन को ध्यान में रखने और उसका फायदा किराए-दार को देने के लिए आबद्ध था।

**लक्ष्मी नारायण गुई** बनाम **निरंजन मोदक** : सिविल अपील सं० 439/77 जिसका विनिश्चय 3.12.84 को किया गया।

(मद सं० 371 भी देखिए)।

न्या० पाठक और चिन्नप्पा रेड्डी।

360. कल्याणकारी विधान—कल्याणकारी विधान में कार्यपालिका को प्रदत्त शक्ति—क्या ऐसी शक्ति का हर मामले में कड़ाई से प्रयोग किया जाना चाहिए ?

**अभिनिर्धारित**—कल्याणकारी राज्य के निर्वचन के विषय में ऐसे मामले होने अनिवार्य हैं, जिनमें अधिनियम के उपबंध के अनम्य प्रयोग से ऐसी अनावश्यक और असम्यक् समस्या उत्पन्न हो सकती है जो विधानमंडल के अनुध्यान में नहीं थी। अधिनियम के अधीन प्राधिकारी को प्रदत्त शक्ति का प्रयोग अधि-नियमिति की नीति और उद्देश्य के अनुसार करना होगा, जिसे उस अधिनियम की उद्देशिका एवं उसके प्रवर्तनशील उपबंधों से लिया जा सकता है अथवा अधिनियमिति के सामान्य प्रयोजनों को खण्डित किए बिना किया जाएगा।

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



**कंद स्वामी चेट्टियार एस० बनाम तमिलनाडु राज्य :** रिट पिटीशन सं० 4433/78 जिसका विनिश्चय 12.12.1984 को किया गया।

(मद सं० 367 से 370 भी देखिए)।

न्या० तुलज़ापुरकर, पाठक और सब्यसाची मुखर्जी।

**महाराष्ट्र रेस्टोरेशन आफ लैंड्स टू शैड्यूल्ड ट्राइब्स ऐक्ट, 1974 :**

361. धारा 3 और 4—व्याप्ति—जनजातियों द्वारा गैर जनजातियों को किया गया भूमि का अन्तरण अकृत तथा भूमि का कब्जा पुनः जनजातियों को वापस—क्या विधानमंडल को ऐसी विधि बनाने की क्षमता प्राप्त है ?

**अभिनिर्धारित**—इस अधिनियम का उद्देश्य जनजातियों और गैर जनजातियों के सदस्यों में किए गए कृषि भूमि के संव्यवहारों के बारे में है। समाज के समृद्ध और शक्तिशाली सदस्यों ने सामान्यतः जनजातियों का उनकी अज्ञानता और गरीबी के कारण शोषण किया। उन्होंने मामूली से प्रतिफल के लिए विक्रय, बंधक, विनिमय और दान आदि के रूप में कृषि भूमि का अन्तरण प्राप्त कर लिया। अधिकांश भूमि कर्जे की व्यवस्था के कारण अन्तरित की गई। जब जनजातियों और गैर जनजातियों में कोई संव्यवहार होता है तो हमेशा यह उपधारणा की जाती है कि असमान सौदा है। विधानमण्डल ने हस्तक्षेप किया और सब विल्लंगमों से मुक्त जनजाति अन्तरणकर्ताओं की भूमि बहाल करवा दी। संक्षेप में, अभिप्रायः यह है कि विधान का उद्देश्य जनजातियों की सम्पत्ति को पुनः स्थापित करवाना था, जो कि पक्षकारों में साम्याओं के नियोजन के अधीन रहते हुए था। यह विधि विधानमण्डल की विधायी क्षमता अर्थात् सूची 2 की प्रविष्टि 18 के अन्तर्गत है।

**लिंगप्पा पोचन्ना अपेलवर बनाम महाराष्ट्र राज्य :** सिविल अपील सं० 4384/84 जिसका विनिश्चय 4.12.84 को किया गया।

(मद सं० 348, 354, 362, 363 भी देखिए)।

न्या० चिन्नप्पा रेड्डी, ए० पी० सेन और वेंकटरामय्या।

362. अन्तरण को अकृत करने की तारीख का अपनाना—क्या मनमाना और शून्य है ?

**अभिनिर्धारित**—विधानमण्डल विधि प्रवर्तन के समय के आधार पर वर्गीकरण कर सकता है। 1 अप्रैल, 1957 की तारीख इसलिए अपनाई गई थी क्योंकि वह बाम्बे टेनेन्सी एण्ड एग्रीकल्चरल लैंड्स ऐक्ट, 1948 के प्रयोजनों के लिए

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



किसान दिवस था। ऐसी तारीख नियत करने और प्राप्तव्य उद्देश्य में युक्ति-युक्त संबंध था।

(मद सं० 354,361, 363, और 348 भी देखिए)।

363. —क्या यह अधिनियम समानों के साथ असमान व्यवहार करता है ?

**अभिनिर्धारित**—अन्तरितियों ने कृषि भूमि का अन्तरण जनजातियों से प्राप्त किया। चूंकि अन्तरिती अनुसूचित जाति के नहीं थे, इसलिए वे अनुसूचित जातियों के पक्षकथन की पैरवी नहीं कर सकते। दूसरे, जनजातियां एक सुभिन्न वर्ग है और उसे राज्य का संरक्षण चाहिए। विधियां कहां तक और कितने प्रक्रमों तक कार्यान्वित की जाएं, यह एक नीति का विषय है, अतः न्यायालयों की क्षमता के बाहर है।

(मद सं० 348,354,361 और 362 भी देखिए)।

**नैसर्गिक न्याय :**

364. संदिग्ध परिस्थितियों में मृत्यु—हत्या का अभिकथन—मुख्य न्यायाधिपति को लिखा गया पत्र रिट पिटीशन के रूप में माना जाना—एकल न्यायाधीश द्वारा यह निदेश जारी करना कि मृत्यु के कारणों के बारे में जांच करने के लिए केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो का एक विशेष अधिकारी नियुक्त किया जाए—राज्य पुलिस अधिकारियों को अवसर न दिया जाना—क्या इससे नैसर्गिक न्याय के सिद्धान्तों का उल्लंघन होता है ?

**अभिनिर्धारित**—एकल न्यायाधीश को राज्य सरकार और उसके अधिकारियों को पुलिस द्वारा की गई कार्रवाई की रिपोर्ट देने के लिए युक्तियुक्त अवसर देना चाहिए था। राज्य सरकार और उसके पुलिस अधिकारी ही प्राधिकृत रूप से यह बता सकते थे कि पत्र में किए गए अभिकथन सही हैं या नहीं और यदि सही हैं तो कहां तक सही हैं और उन्होंने उस पर क्या कार्रवाई की है। न्यायालय को पुलिस द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट के आधार पर स्थिति का जायज़ा लेना चाहिए था। किन्तु जब राज्य सरकार और पुलिस को कोई सूचना नहीं दी गई और कोई अवसर नहीं दिया गया तो न्यायालय एकपक्षीय आदेश पारित नहीं कर सकता था।

**पश्चिमी बंगाल राज्य बनाम सम्पत लाल** : दाण्डिक अपील सं० 570/83 जिसका विनिश्चय 4.12.1984 को किया गया।

(मद सं० 352, 353 और 366 भी देखिए)।

न्या० भगवती, अमरेन्द्र नाथ सेन और रंगनाथ मिश्र।

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



365. जांच के बिना कर्मकार की पदच्युति—स्थायी आदेश द्वारा महा-प्रबन्धक को कर्मकार को सामान्य प्रक्रिया अपनाए बिना पदच्युत करने के लिए सशक्त किया जाना यदि उसका समाधान हो जाता है कि कर्मकार को नियोजन में रखना असमीचीन है—क्या इससे नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन होता है ?

(मद सं० 357 भी देखिए) ।

**लोकहित मुकदमा :**

366. मुख्य न्यायाधिपति को संबोधित पत्र क्या रिट पिटीशन माने जा सकते हैं—क्या न्यायालय शपथ-पत्र फाइल करने का आग्रह कर सकता है?

**अभिनिर्धारित**—उच्च न्यायालय डाक द्वारा प्राप्त व्यथाओं को ग्रहण कर सकता है और उन्हें रिट पिटीशन के रूप में मान सकता है । यदि न्यायालय का प्रथमदृष्टया यह समाधान हो जाता है कि पत्र वास्तविक है तो वह शपथ पत्र फाइल करने का आग्रह किए बिना मामले में आगे कार्यवाही कर सकता है क्योंकि आरम्भिक प्रक्रम पर शपथ-पत्र के लिए आग्रह करने से अन्याय होता रहेगा या ऐसा गरीब और कमजोर वर्गों के लिए न्याय के द्वार बन्द करने के समान हो सकता है । यदि न्यायालय का प्रथमदृष्टया इस प्रकार समाधान नहीं हुआ है तो वह न्यायमित्र से सूचनादाता से सम्पर्क करने और शपथ-पत्र फाइल करने या नियमित रिट पिटीशन फाइल करने के लिए कह सकता है । उच्चतम न्यायालय में यह पद्धति अपनाई जा रही है और इसे उच्च न्यायालयों में भी आसानी से अपनाया जा सकता है ।

**पश्चिमी बंगाल राज्य बनाम सम्पत लाल** : दाण्डिक अपील सं० 570/83 जिसका विनिश्चय 4.12.1984 को किया गया ।

(मद सं० 352,353 और 364 भी देखिए) ।

न्या० भगवती, अमरेन्द्र नाथ सेन और रंगनाथ मिश्र ।

**किराया नियंत्रण :**

367. तमिलनाडु रेंट कंट्रोल ऐक्ट की धारा 29—कुछ वर्ग के व्यक्तियों को अधिनियम के प्रवर्तन से पूर्व छूट देने के लिए राज्य सरकार को सशक्त किया जाना—क्या इसमें विधायी शक्ति के अत्यधिक प्रत्या-योजन का दोष है ?

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



**अभिनिर्धारित**—अधिनियम की उद्देशिका और प्रभावी उपबंध अधिनियम के उपबंधों के प्रवर्तन से जहां आवश्यक है, छूट देने के विषय में सरकार में निहित वैवेकिक शक्ति के प्रयोग के लिए पर्याप्त मार्गदर्शन प्रदान करते हैं। यह नहीं कहा जा सकता कि विधायी शक्ति का प्रत्यायोजन अत्यधिक था। स्वयं विधानमण्डल ने सरकार के भवनों और धार्मिक न्यासों के भवनों का एक युक्तियुक्त वर्गीकरण किया है और उन्हें जो भिन्न-भिन्न रूप में माना गया है, वह इस धारणा पर आधारित है कि सरकार और ऐसे भवनों के मालिक किराए की ऊंची दरें लेने या अयुक्तियुक्त बेदखलियों में लगने प्रत्याशित नहीं हैं और वे ऐसा नहीं करेंगे।

**कंदस्वामी चेट्टियार एस० बनाम तमिलनाडु राज्य :** रिट पिटीशन सं० 4433/78 जिसका विनिश्चय 12.12.1984 को किया गया। (मद सं० 368, 369 और 370 भी देखिए)।

न्यायाधिपति तुलज़ापुरकर, पाठक और सब्यासची मुखर्जी।

368. तमिलनाडु रेंट कन्ट्रौल ऐक्ट की धारा 29—धार्मिक न्यासों के भवनों को अधिनियम के सभी उपबंधों से आंशिक छूट—क्या शक्ति का यह अत्यधिक और अनपेक्षित प्रत्यायोजन है ?

**अभिनिर्धारित**—पूर्ण छूट देना अत्यधिक या अनपेक्षित नहीं माना जा सकता। अधिनियम के दो उद्देश्य अर्थात् किराए का अंतरण और अयुक्तियुक्त बेदखलियों का निवारण परस्पर सम्बद्ध हैं। इन उद्देश्यों की पूर्ति हेतु किए गए उपबंध एक दूसरे के पूरक हैं। अधिनियम का आशय था कि न्यासियों को सामान्य बाजार किराया वसूल करने की स्वतंत्रता दी जानी चाहिए। इस स्वतन्त्रता को प्रभावी रूप देने के लिए सरकार ने सोचा कि उन्हें बाजार किराया संदत्त न करने पर किराएदारों को अन्य भारी शर्तों की पूर्ति करने की अपेक्षा किए बिना, जिनका अनुपालन प्राइवेट मकान-मालिकों द्वारा किया जाना चाहिए जब वे ऐसे प्रयोजनों के लिए बेदखली की मांग करते हैं, बेदखल करने का अधिकार दिया जाना चाहिए। छूट पूर्ण हो या आंशिक और छूट देने के निबंधन और शर्तें क्या हों, यह अधिनियम के उपबंधों की स्कीम के प्रकाश में विनिश्चय करना राज्य सरकार का काम है।

(मद सं० 367,369 और 370 भी देखिए)।

369. तमिलनाडु बिल्डिंग्स (लीज एण्ड रेंट कंट्रोल) ऐक्ट, 1960—धारा 29—क्या यह विभेदात्मक है— क्या यह धार्मिक न्यासों के भवनों के किराएदारों को अधिनियम के कल्याणकारी उपबंधों के समान संरक्षण से वंचित करती है ?

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



**अभिनिर्धारित**— यह धारा विभेदात्मक नहीं है। धार्मिक और खैराती विन्यासों या न्यासों के भवनों और प्राइवेट मकान-मालिकों के भवनों के वर्गीकरण का उस उद्देश्य से युक्तिसंगत संबंध है जो अधिनियम द्वारा प्राप्तव्य है। लोक धार्मिक विन्यास या न्यास एक सुमान्य सुभिन्न समूह में आते हैं क्योंकि वे लोक प्रयोजन की पूर्ति नहीं करते अपितु उनकी आय का संवितरण उस उद्देश्य से किया जाता है जिससे उनका सृजन किया जाता है। ऐसे भवन प्राइवेट मकान-मालिकों के भवनों से सुभिन्न वर्ग में आते हैं। अधिसूचना को सुग्राह्य अंतर पर आधारित मानना होगा।

(मद सं० 367,369 और 370 भी देखिए)।

370. तमिलनाडु रेंट कंट्रोल ऐक्ट—धारा 29—सहकारी सोसाइटियों के स्वामित्वाधीन भवनों को अधिनियम के प्रवर्तन से पूर्ण छूट—क्या यह अत्यधिक और अनपेक्षित है ?

**अभिनिर्धारित**—सहकारी सोसाइटियों की दशा में यह आशंका करने की आवश्यकता नहीं है कि वे किराए की ऊंची दरें वसूल करेंगे या किराएदारों को अयुक्तियुक्त ढंग से बेदखल करेंगे। इन सोसाइटियों के कार्यकरण से सम्बन्धित सिद्धांत ऐसे हैं जो उन्हें लाभ कमाने के हेतु से अलग रखते हैं। और ऐसे कानूनी उपबंध भी हैं। जो उनके लाभ तत्व को युक्तियुक्त स्तर पर रखते हैं उनकी दशा में विद्यमान सभी सुसंगत बातों का ध्यानपूर्वक अध्ययन करने के बाद राज्य सरकार ने राज्य में चल रही सभी सहकारी सोसाइटियों के भवनों को अधिनियम के प्रवर्तन से पूर्ण छूट दे दी। आक्षेपित अधिसूचना विधिमान्य है। पूर्ण छूट देना अत्यधिक या अनपेक्षित नहीं माना जा सकता।

**एस० एम० महेन्द्र एण्ड कंपनी** बनाम **तमिलनाडु राज्य** : रिट पिटीशन सं० 893/79 जिसका विनिश्चय 12.12.1984 को किया गया।

(मद सं० 367 से 369 तक देखिए)।

न्या० तुलज़ापुरकर, पाठक और सब्यसाची मुखर्जी।

371. वैस्ट बंगाल प्रेमिसेज़ टेनेन्सी ऐक्ट, 1956—धारा 13 (1) (क)—व्याप्ति—"......... कब्जे के प्रत्युद्धरण के लिए किसी न्यायालय द्वारा कोई आदेश या डिक्री.........नहीं की जाएगी"—व्याप्ति—प्रथम अपील के लम्बित रहते हुए अधिनियम का विस्तार—क्या अपील न्यायालय विधि के परिवर्तन को ध्यान में रखने और उसके फायदे का विस्तार करने के लिए आबद्ध है।

(मद सं० 359 देखिए)।

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



**शब्द और पद :**

372. "नियत आस्ति"—अर्थ—खान से सम्बन्धित कार—खान का सरकार द्वारा प्रबन्ध ग्रहण—उस आस्ति का प्रयोग खान के कार्य के अतिरिक्त पूर्ववर्ती मालिक के अन्य विभिन्न प्रयोजनों के लिए किया जाना—क्या कार खान की "नियत आस्ति" है ?

**अभिनिर्धारित**—साधारणतः—"नियत आस्ति" पद के अन्तर्गत वे आस्तियां आती हैं जो कारबार करने के प्रयोजन के लिए रखी जाती हैं और जो उन आस्तियों से भिन्न होती हैं, जिन्हें स्वत्वधारी रोकड़ में संपरिवर्तित करने के प्रयोजन के लिए रखता है और उन आस्तियों के अंतर्गत वास्तविक संपदा, भवन, मशीनरी आदि आती हैं। यद्यपि स्टाफ कार का प्रयोग सरकार द्वारा खानों का अर्जन करने से पूर्व कोयला खान के काम के अतिरिक्त खान मालिक के अन्य विभिन्न प्रयोजनों के लिए भी किया जाता था, फिर भी वह अधिनियम में प्रयुक्त "नियत आस्ति" पद के अर्थ में आस्ति है।

(मद सं० 371 देखिए)।

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Digitized by Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

# केरल राज्य और अन्य

बनाम

# एम० पद्मनाभन नायर

(17 दिसम्बर, 1984)

(न्यायाधिपति वी० डी० तुलजापुरकर और वी० बालकृष्ण एराडी)

—पेंशन अधिनियम, 1871 (1871 का 23)—धारा 5 और 6 —सेवा निवृत्त कर्मचारियों को पेंशन और उपदान का संदाय—कोषाधिकारी द्वारा सेवानिवृत्त कर्मचारी का अन्तिम वेतन प्रमाण पत्र और कोई दायित्व न होने का प्रमाण पत्र पेश करने में विलंब किया जाना—प्रत्यर्थी (सेवा निवृत्त कर्मचारी) द्वारा पेंशन और उपदान के विलम्ब से संदाय के लिए परिनिर्धारित नुकसानी के रूप में ब्याज की वसूली के लिए दावा—पिटीशनर द्वारा इसका विरोध किया जाना—पेंशन और उपदान सरकार द्वारा अपने कर्मचारियों को उनकी सेवा-निवृत्ति पर दिया जाने वाला उदारदान (बाउण्टी) नहीं, बल्कि मूल्यवान अधिकार और सम्पत्ति है और इसके संवितरण में किसी आपराधिक विलंब के लिए वर्तमान मार्केट दर पर इसका वस्तुतः संदाय करने की तारीख तक शास्ति के रूप में ब्याज का संदाय करना होगा।

ट्रेजरी कोड—नियम 186—कोषाधिकारी द्वारा सेवा निवृत्त कर्मचारी को अन्तिम वेतन प्रमाण पत्र और कोई दायित्व न होने का प्रमाण पत्र पेश करने में विलम्ब किया जाना—अपीलार्थी (राज्य सरकार) द्वारा विलम्ब के लिए प्रत्यर्थी को दोषी ठहराया जाना—सेवा निवृत्त होने वाले प्रत्येक सरकारी सेवक को अन्तिम वेतन प्रमाण पत्र प्रदान करना कोषाधिकारी का कर्तव्य है तथा विलम्ब के लिए औचित्य या स्पष्टीकरण न होने की दशा में यदि संबंधित राज्य सरकार चाहे तो दोषी अधिकारी को आपराधिक त्रुटियों द्वारा हुई नुकसानी की प्रतिपूर्ति करने का निदेश दे सकती है।

प्रस्तुत मामला प्रत्यर्थी को देय पेंशन और उपदान के दावे के परिनिर्धारण में विलम्ब का स्पष्ट आपराधिक उदाहरण है जो मई, 1973 में सेवा

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



निवृत्त हुआ था। लगभग सवा दो वर्ष से भी अधिक समय के पश्चात् उसका पेंशन और उपदान संदत्त किये गये। प्रत्यर्थी द्वारा विलम्ब से संदाय के लिए परिनिर्धारित नुकसानी के माध्यम से ब्याज वसूल करने के लिए वाद फाइल किया गया। अपीलार्थी-राज्य द्वारा यह आरोप लगाया गया कि उसके द्वारा ट्रेजरी संहिता के नियम 186 के अधीन ट्रेजरी कार्यालय से अपेक्षित अन्तिम वेतन प्रमाण पत्र प्रस्तुत नहीं किया गया। उच्च न्यायालय द्वारा यह मत व्यक्त किया गया कि सेवा निवृत्त होने वाले प्रत्येक सरकारी सेवक को अन्तिम वेतन प्रमाण पत्र प्रदान करने का कर्तव्य कोषाधिकारी को सौंपा गया है और संबंधित अधिकारी द्वारा इस मामले में विलंब किया गया है जिसके लिए कोई औचित्य नहीं है। उच्च न्यायालय के इसी निर्णय के विरुद्ध पिटीशनर (राज्य) द्वारा यह पिटीशन फाइल किया गया है। पिटीशन खारिज करते हुए,

**अभिनिर्धारित**—सरकार द्वारा अपने कर्मचारियों को पेंशन और उपदान उनकी सेवानिवृत्ति पर वितरित किया जाने वाला उपदान (बाउण्टी) नहीं है, बल्कि उच्चतम न्यायालय के विनिश्चयों के अधीन उनके मूल्यवान अधिकार और संपत्ति बन गए हैं और इसके परिनिर्धारण और संवितरण में कोई आपराधिक विलम्ब होने पर वर्तमान मार्किट दर पर वास्तविक संदाय किये जाने की तारीख तक ब्याज के संदाय की शास्ति दी जाएगी। (पैरा 1)

चूंकि प्रत्येक सरकारी सेवक की सेवानिवृत्ति की तारीख पहले ही भली भांति ज्ञात रहती है इसलिए अपेक्षित सूचना ग्रहण करने की और इन दो दस्तावेजों के जारी करने की प्रक्रिया सेवा निवृत्ति की तारीख से कम से कम दो सप्ताह पूर्व पूरी हो जानी चाहिए, जिससे कि उपदान की रकम का संदाय सरकारी सेवक को उस तारीख को, जिस तारीख से वह सेवानिवृत्त होता है, या उसके अगले दिन किया जा सके, और पेंशन का संदाय अगले मास के समाप्त होने पर किया जा सके। सरकारी सेवक को उसकी सेवा-निवृत्ति के तुरन्त पश्चात सेवानिवृत्ति से संबंधित शोध्यों का शीघ्रता से संदाय करने की आवश्यकता के बारे में अत्यधिक बल नहीं दिया जा सकता और यह निदेश दिया जाना अयुक्तियुक्त नहीं होगा कि वर्तमान मार्किट दर पर इन शोध्यों पर शास्ति से संबंधित ब्याज के संदाय का दायित्व सेवा-निवृत्ति की तारीख से दो मास के समापन पर आरम्भ होना चाहिए। (पैरा 2)

कोषाधिकारी को सेवा-निवृत्त होने वाले प्रत्येक सरकारी सेवक को अन्तिम वेतन प्रमाण पत्र प्रदान करने का दायित्व सौंपा गया है जिसे प्रदान करने में इस मामले में संबंधित अधिकारी द्वारा विलम्ब किया गया था जिसके

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



लिए न तो कोई औचित्य और न ही कोई स्पष्टीकरण दिया गया था। इसलिए ब्याज के लिए किया गया दावा प्रत्यर्थी के पक्ष में सही ही डिक्री किया गया था। (पैरा 2)

राज्य सरकार को अपने उस कर्तव्य के निर्वहन में आपराधिक उपेक्षा के लिए सही ही दायी ठहराया गया है जो जिला कोषाधिकारी द्वारा अन्तिम प्रमाण पत्र जारी करने में विलम्ब करके किया गया था, किन्तु, चूंकि संबंधित अधिकारी को वाद में पक्षकार के रूप में सम्मिलित नहीं किया गया था, इसलिए न्यायालय डिक्रीत रकम के लिए उसे दायी ठहराने में असमर्थ है। यह विचार करना राज्य सरकार का कार्य है कि भूल करने वाले पदधारी को राज्य सरकार द्वारा उठाई गई हानि की प्रतिपूर्ति के लिए निर्देश दिया जाना चाहिए अथवा नहीं। (पैरा 4)

**सिविल अपीली अधिकारिता : 1984 का विशेष इजाजत पिटीशन (सिविल) सं० 9425.**

1979 के अपील-वाद सं० 10 में केरल उच्च न्यायालय के तारीख 1.11.83 वाले निर्णय और आदेश के विरुद्ध पिटीशन।

**पिटीशनरों की ओर से** श्री पी० के० पिल्लै

न्यायालय का निर्णय न्यायाधिपति वी० डी० तुलजापुरकर ने दिया।

**न्यायाधिपति तुलजापुरकर—**

अब पेंशन और उपदान सरकार द्वारा अपने कर्मचारियों को उनकी सेवानिवृत्ति पर वितरित किए जाने वाला उपदा दान (बाउन्टी) नहीं है, बल्कि इस न्यायालय के विनिश्चयों के अधीन उनके मूल्यवान अधिकार और सम्पत्ति बन गया है और इसके परिनिर्धारण और संवितरण में कोई आपराधिक विलम्ब होने पर वर्तमान मार्किट दर पर वास्तविक संदाय किये जाने की तारीख तक ब्याज के संदाय की शास्ति दी जाएगी।

2. सामान्यत:, विलम्ब संबंधित विभागों द्वारा एल०पी०सी० (अन्तिम वेतन प्रमाण पत्र) और एन० एल० सी० (दायित्व न होने का प्रमाणपत्र) न पेश किए जाने के कारण किया जाना होता है किंतु ये दोनों दस्तावेज ऐसे विषय के अन्तर्गत आते हैं जिनके अभिलेख संबंधित सरकारी विभागों में होते हैं। चूंकि प्रत्येक सरकारी कर्मचारी की सेवानिवृत्ति की तारीख पहले से ही भली भांति ज्ञात रहती है इसलिए हम इस बात की विवेचना करने में असफल

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



रहे हैं कि क्यों नहीं अपेक्षित सूचना एकत्रित करने और इन दो दस्तावेजों के जारी करने की प्रक्रिया सेवानिवृत्ति की तारीख से कम से कम दो सप्ताह पूर्व पूरी कर ली जानी चाहिए जिससे कि उपदान की रकम का संदाय सरकारी कर्मचारी को उस तारीख को, जिससे कि वह सेवानिवृत्त होता है या उसके अगले दिन किया जा सके और पेंशन का संदाय अगले मास के समाप्त होने पर किया जा सके। सरकारी सेवक को उसकी सेवानिवृत्त के तुरन्त पश्चात सेवानिवृत्ति से संबंधित शोध्यों का शीघ्रता से संदाय करने की आवश्यकता के बारे में अत्यधिक बल नहीं दिया जा सकता और यह निदेश दिया जाना अयुक्तियुक्त नहीं होगा कि वर्तमान मार्किट दर पर इन शोध्यों पर शास्ति संबंधित ब्याज के संदाय का दायित्व सेवा-निवृत्ति की तारीख से दो मास के समापन पर आरम्भ होना चाहिए।

2. प्रस्तुत मामला, प्रत्यर्थी को, जो 19 मई, 1973 को सेवा निवृत्त हुआ, देय पेंशन और उपदान के दावे के परिनिर्धारण में विलंब का स्पष्ट अपराधिक उदाहरण है। उसका पेंशन और उपदान अन्ततः 14 अगस्त, 1975 को, अर्थात् उसकी सेवानिवृत्ति के 2 वर्ष और 3 मास से अधिक समय के पश्चात् संदत्त किया गया था और इस प्रकार वकील की सूचना (नोटिस) की तामील के पश्चात् उसने मुख्यतः विलम्ब से संदाय के लिए परिनिर्धारित नुकसानी के माध्यम से ब्याज बसूल करने के लिए वाद फाइल किया। अपीलार्थियों ने विलंबित संदाय के लिए इस आधार पर प्रत्यर्थी पर दोष लगाया गया कि उसने ट्रेजरी संहिता के नियम 186 के अधीन ट्रेजरी कार्यालय से अपेक्षित एल० पी० सी० (अन्तिम वेतन प्रमाण पत्र) प्रस्तुत नहीं किया था। किंतु नियम 186 के साधारण परिशीलन पर उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया—और हमारे मतानुसार वह सही था कि कोषाधिकारी को सेवानिवृत्त होने वाले प्रत्येक सरकारी सेवक को अन्तिम वेतन प्रमाण-पत्र प्रदान करने का दायित्व सौंपा गया है जिसके बारे में इस मामले में संबंधित अधिकारी द्वारा विलम्ब किया गया है या जिसके लिए न तो कोई औचित्य है और न ही कोई स्पष्टीकरण दिया गया था। इसलिए, ब्याज के लिए किया गया दावा प्रत्यर्थी के पक्ष में सही ही डिक्री किया गया था।

3. दुर्भाग्यवश ब्याज के लिए ऐसा दावा जैसा जिला न्यायालय द्वारा प्रत्यर्थी के पक्ष में मंजूर किया गया था और उच्च न्यायालय द्वारा उसकी पुष्टि की गई थी, 6 प्रतिशत प्रति वर्ष की दर से था, यद्यपि प्रत्यर्थी द्वारा उसके वाद में 12 प्रतिशत ब्याज के लिए दावा किया था। बहरहाल, चूंकि प्रत्यर्थी द्वारा उच्च न्यायालय में कोई प्रत्याक्षेप फाइल नहीं किया गया और

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



चूंकि उसने अपने वाद में 6 प्रतिशत पर डिक्री की उपमति दे दी, इसलिए प्रतिवर्ष 12 प्रतिशत की दर से वृद्धि करना हमारे लिए समुचित नहीं होगा जो कि हम अन्यथा प्रदान करना चाहते थे।

4. हमारी यह भी राय है कि चूंकि राज्य सरकार द्वारा ठीक ही जिला कोषाधिकारी, जिसने अन्तिम वेतन प्रमाणपत्र ज़ारी करने में विलम्ब किया था, अपने कर्तव्य के निर्वहन में आपराधिक उपेक्षा के लिए उत्तरदायी ठहराया गया है लेकिन संबंधित अधिकारी इस वाद में पक्षकार-वादी के रूप में सम्मिलित नहीं किया गया था, इसलिए यह न्यायालय उसे डिक्रीत रकम के लिए दायी ठहराने में असमर्थ है। बहरहाल, यह विचार करना राज्य सरकार का कार्य है कि क्या भूल करने वाले पदधारी को राज्य सरकार द्वारा उसके द्वारा उठाई गई हानि की प्रतिपूर्ति के लिए निदेश दिया जाना चाहिए जो उसके द्वारा आपराधिक त्रुटि के कारण हुई है। यदि ऐसी कार्यवाही की जाती है, तो राज्य सरकार के पदधारियों में ऐसी सरकार के प्रति कर्तव्य की भावना उत्पन्न होगी जिसके अधीन वें सेवा करते हैं तथा जनसाधारण के प्रति भी जवाबदेही उत्पन्न होगी।

पिटीशन खारिज किया गया।

प्र०/भू०

---

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



रहे हैं कि क्यों नहीं अपेक्षित सूचना एकत्रित करने और इन दो दस्तावेजों के जारी करने की प्रक्रिया सेवानिवृत्ति की तारीख से कम से कम दो सप्ताह पूर्व पूरी कर ली जानी चाहिए जिससे कि उपदान की रकम का संदाय सरकारी कर्मचारी को उस तारीख को, जिससे कि वह सेवानिवृत्त होता है या उसके अगले दिन किया जा सके और पेंशन का संदाय अगले मास के समाप्त होने पर किया जा सके। सरकारी सेवक को उसकी सेवानिवृत्त के तुरन्त पश्चात सेवानिवृत्ति से संबंधित शोध्यों का शीघ्रता से संदाय करने की आवश्यकता के बारे में अत्यधिक बल नहीं दिया जा सकता और यह निदेश दिया जाना अयुक्तियुक्त नहीं होगा कि वर्तमान मार्किट दर पर इन शोध्यों पर शास्ति संबंधित ब्याज के संदाय का दायित्व सेवा-निवृत्ति की तारीख से दो मास के समापन पर आरम्भ होना चाहिए।

2. प्रस्तुत मामला, प्रत्यर्थी को, जो 19 मई, 1973 को सेवा निवृत्त हुआ, देय पेंशन और उपदान के दावे के परिनिर्धारण में विलंब का स्पष्ट अपराधिक उदाहरण है। उसका पेंशन और उपदान अन्तत: 14 अगस्त, 1975 को, अर्थात् उसकी सेवानिवृत्ति के 2 वर्ष और 3 मास से अधिक समय के पश्चात् संदत्त किया गया था और इस प्रकार वकील की सूचना (नोटिस) की तामील के पश्चात् उसने मुख्यत: विलम्ब से संदाय के लिए परिनिर्धारित नुकसानी के माध्यम से ब्याज बसूल करने के लिए वाद फाइल किया। अपीलार्थियों ने विलंबित संदाय के लिए इस आधार पर प्रत्यर्थी पर दोष लगाया गया कि उसने ट्रेजरी संहिता के नियम 186 के अधीन ट्रेजरी कार्यालय से अपेक्षित एल० पी० सी० (अन्तिम वेतन प्रमाण पत्र) प्रस्तुत नहीं किया था। किंतु नियम 186 के साधारण परिशीलन पर उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया—और हमारे मतानुसार वह सही था कि कोषाधिकारी को सेवानिवृत्त होने वाले प्रत्येक सरकारी सेवक को अन्तिम वेतन प्रमाण-पत्र प्रदान करने का दायित्व सौंपा गया है जिसके बारे में इस मामले में संबंधित अधिकारी द्वारा विलम्ब किया गया है या जिसके लिए न तो कोई औचित्य है और न ही कोई स्पष्टीकरण दिया गया था। इसलिए, ब्याज के लिए किया गया दावा प्रत्यर्थी के पक्ष में सही ही डिक्री किया गया था।

3. दुर्भाग्यवश ब्याज के लिए ऐसा दावा जैसा जिला न्यायालय द्वारा प्रत्यर्थी के पक्ष में मंजूर किया गया था और उच्च न्यायालय द्वारा उसकी पुष्टि की गई थी, 6 प्रतिशत प्रति वर्ष की दर से था, यद्यपि प्रत्यर्थी द्वारा उसके वाद में 12 प्रतिशत ब्याज के लिए दावा किया था। बहरहाल, चूंकि प्रत्यर्थी द्वारा उच्च न्यायालय में कोई प्रत्याक्षेप फाइल नहीं किया गया और

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



चूंकि उसने अपने वाद में 6 प्रतिशत पर डिक्री की उपमति दे दी, इसलिए प्रतिवर्ष 12 प्रतिशत की दर से वृद्धि करना हमारे लिए समुचित नहीं होगा जो कि हम अन्यथा प्रदान करना चाहते थे।

4. हमारी यह भी राय है कि चूंकि राज्य सरकार द्वारा ठीक ही जिला कोषाधिकारी, जिसने अन्तिम वेतन प्रमाणपत्र जारी करने में विलम्ब किया था, अपने कर्तव्य के निर्वहन में आपराधिक उपेक्षा के लिए उत्तरदायी ठहराया गया है लेकिन संबंधित अधिकारी इस वाद में पक्षकार-वादी के रूप में सम्मिलित नहीं किया गया था, इसलिए यह न्यायालय उसे डिक्रीत रकम के लिए दायी ठहराने में असमर्थ है। बहरहाल, यह विचार करना राज्य सरकार का कार्य है कि क्या भूल करने वाले पदधारी को राज्य सरकार द्वारा उसके द्वारा उठाई गई हानि की प्रतिपूर्ति के लिए निदेश दिया जाना चाहिए जो उसके द्वारा आपराधिक त्रुटि के कारण हुई है। यदि ऐसी कार्यवाही की जाती है, तो राज्य सरकार के पदधारियों में ऐसी सरकार के प्रति कर्तव्य की भावना उत्पन्न होगी जिसके अधीन वे सेवा करते हैं तथा जनसाधारण के प्रति भी जवाबदेही उत्पन्न होगी।

पिटीशन खारिज किया गया।

प्र०/भू०

---

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

# मनमोहन सिंह जैटला

बनाम

# आयुक्त, संघ राज्य क्षेत्र चंडीगढ़ और अन्य

और

# अमीर सिंह

बनाम

# उपायुक्त और अन्य

**(19 दिसम्बर, 1984)**

(न्यायाधिपति डी० ए० देसाई और वी० खालिद)

**पंजाब एडेड स्कूल्स (सिक्योरिटी आफ सर्विस) ऐक्ट, 1969—धारा 3 (1) (2) (5) (सपठित संविधान—अनुच्छेद 311—सेवा समाप्ति—प्रत्यर्थी स्कूल के प्रबंधमंडल द्वारा अपीलार्थियों की सेवाएं दण्ड स्वरूप समाप्त की जानी—सेवा समाप्ति के लिए नियुक्ति-पत्र में उल्लिखित शर्त का आश्रय लिया जाना—अनुशासन संबंधी कार्यवाही को वापस लेना—असद्भाव के अभिवाक की जांच न किया जाना—सहायता प्राप्त किसी स्कूल के कर्मचारी को पदच्युत करने या हटाने या पदावनत करने से पूर्व अनुशासनात्मक कार्रवाई करना आवश्यक है।**

**संविधान, 1950—अनुच्छेद 227 और 12—उच्च न्यायालय की अधिकारिता—सरकारी सहायता प्राप्त स्कूल की प्रबंध समिति द्वारा पिटीशनर की सेवा समाप्त करना—पक्षकारों के बीच आयुक्त का विनिश्चय अन्तिम होना—आयुक्त के विनिश्चय को उच्च न्यायालय में चुनौती दिया जाना—उच्च न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप करने से मना करना—आयुक्त अनुच्छेद 12 के अधीन कानूनी प्राधिकारी होने के कारण उसके विनिश्चय उच्च न्यायालय की रिट अधिकारिता के भीतर आते हैं।**

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



स्कूल के प्रधान अध्यापक और कला अध्यापक की सेवाएं उनके द्वारा नियुक्ति-पत्र की शर्त के अनुसार किए गए समझौते के अधीन समाप्त कर दी गई। स्कूल सहायता प्राप्त संस्था है जिसका 95 प्रतिशत खर्च सरकारी अनुदान से चलता है। इन दोनों ही मामलों में अपीलार्थियों की नियुक्ति विज्ञापन के अनुसार आवेदन देकर साक्षात्कार के पश्चात् की गई थी। उनकी नियुक्ति चण्डीगढ़ प्रशासन के विहित प्राधिकारी द्वारा पुष्ट भी कर दी गई थी। उनको अच्छी सेवा के लिए प्रमाण पत्र भी दिया गया था। इसी बीच स्कूल में नई प्रबंध समिति का चुनाव हुआ और नई प्रबंध समिति ने उक्त कार्यवाही आरंभ की जिसके परिणामस्वरूप अपीलार्थियों की सेवा समाप्त कर दी गई। आयुक्त और उपायुक्त को किए गए अभ्यावेदन में उन्होंने प्रबंधमंडल के पक्ष में निर्णय दिया और पदच्युति को किए गए करार के अनुकूल माना। अपील किए जाने पर उच्च न्यायालय ने भी इस आधार पर अपीलार्थी को कोई अनुतोष देने से मना कर दिया कि सहायता प्राप्त स्कूल संविधान के अनुच्छेद 12 के अधीन अन्य प्राधिकरण नहीं है। विशेष इजाज़त लेकर की गई अपील को मंजूर करते हुए,

**अभिनिर्धारित**—उपायुक्त प्रबंधमंडल द्वारा किए गए आदेश के प्रति केवल जबानी हमदर्दी दिखाकर ही अपना आसान रास्ता नहीं बना सकता और आदेश के असद्भावपूर्ण होने के आरोप तथा आक्षेपित आदेश की सही प्रकृति और स्वरूप की परीक्षा करने से इन्कार नहीं कर सकता। इस मामले में करार के निबंधनों को प्रवृत्त करने के बहाने सेवा समाप्ति की शास्ति अधिरोपित की गई है और अभिलेख पर पर्याप्त सामग्री उपलब्ध है जिससे यह कार्यवाही द्वेषपूर्ण दर्शित होती है। (पैरा 5)

जिस क्षण प्रबंध समिति में परिवर्तन हुआ उसी क्षण उन व्यक्तियों में जो पूर्णतः लोक निधि पोषित स्कूल के प्रबंधमंडल के नियंत्रण पर हावी होने का प्रयास कर रहे थे आपस में छीनाझपटी शुरु हो गयी और यह कार्य उन लोगों के साथ बदले की भावना से किया गया जो अतिष्ठित होने वाले प्रबंध मण्डल द्वारा नियुक्त किए गए थे जो मतदान में परास्त हो गया था और करार का आश्रय लेकर उनकी सेवाएं समाप्त कर दी गयीं। जिस क्षण रिक्ति होती हैं उसी क्षण भाई-भतीजावाद और भ्रष्टाचार आरम्भ हो जाता है। चूंकि नए प्रबंध मण्डल ने कुछ ही मास के भीतर चुप-चाप कार्यभार संभाल लिया इसलिए इस आधार पर प्रधानाध्यपक की सेवा समाप्त कर दी गयी कि अब उसकी सेवा की अपेक्षा नहीं रही। (पैरा 6)

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



जांच को बीच में रोक देने से अवचार के मामले में सम्भावित दंड देने वाले आदेश की दण्डात्मक प्रकृति स्पष्टतः उपदर्शित होती है और यह भी पता चलता है कि करार का सहारा लेकर शक्ति का आभासी प्रयोग किया गया है। कोई ऐसा करार जो ऐसे कानूनी उपबंधों के अनुरूप न हो, जो किसी वर्ग की प्रतिरक्षा के लिए लाभदायक है, प्रभावी किया जा सकता है चाहे वह उपविधि के आज्ञापक उपबंधों के प्रतिकूल हो। धारा 3 द्वारा किसी सहायता प्राप्त स्कूल के किसी कर्मचारी की पदच्युति, सेवा से हटाए जाने या पंक्ति में अवनत किए जाने से पूर्व अनुशासनिक जांच कराना बाध्यकर किया गया है। इस आज्ञापक उपबंध को अनुकूल बनाने के लिए इस तथ्य के संबंध में करार के उपबंधों का आश्रय लेना कि कोई जांच करायी गई थी और उसे बीच में छोड़ दिया गया था स्पष्टतः आदेश की प्रकृति को और शक्ति के आभासी प्रयोग को उपदर्शित करता है और नई प्रबंध समिति द्वारा ऐसा किया गया था जो अपदस्थ होने वाली प्रबंध समिति द्वारा नियुक्त किए गए व्यक्तियों की सेवा समाप्त करने के लिए कटिबद्ध थी। इसमें द्वेषपूर्ण होने की गंध आती है। (पैरा 6)

## अनुसरित निर्णय

| | | पैरा |
|---|---|---|
| [1981] | [1981] 4 उम० नि० प० 419=[1981] 2 एस० सी० आर० 79 : **अजय हसिया बनाम खालिद मुजीब सेहराबर्दी और अन्य.** | 8 |

**सिविल अपीली अधिकारिता : 1984 की सिविल अपील सं० 2137.**

(1983 की सिविल रिट सं० 1086 में पंजाब-हरियाणा उच्च न्यायालय के तारीख 24-2-1983 के आदेश के विरुद्ध अपील) तथा

**आरम्भिक अधिकारिता : 1983 का रिट पिटीशन सं० 11238.**

(संविधान के अनुच्छेद 32 के अधीन रिट पिटीशन)

| | |
|---|---|
| **अपीलार्थी की ओर से** (1984 की सिविल अपील सं० 2137 में) | श्री के० ज० भगत, अपर महा सालिसीटर और श्री विमल दुबे |
| **पिटीशनर की ओर से** (1983 के रिट पिटीशन सं० 1238 में) | श्री के० जा० भगत, अपर महा सालिसीटर और श्रीमती आशारानी जैन |

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



**प्रत्यर्थियों की ओर से** सर्वश्री पृथ्वीराज और आर० सी० पाठक

न्यायालय का निर्णय न्यायाधिपति डी० ए० देसाई ने दिया ।

**न्यायाधिपति देसाई—**

गुरुनानक खालसा हाई स्कूल (संक्षेप में स्कूल) ने जो एक सहायता प्राप्त स्कूल है और इसलिए दि पंजाब एडेड स्कूल्स (सिक्योरिटी आफ सर्विस) ऐक्ट, 1969 (संक्षेप में 1969 का अधिनियम) से नियंत्रित है और जो संघ राज्य-क्षेत्र चण्डीगढ़ को लागू है स्कूल के प्रधानाध्यपक अपीलार्थी, मनमोहन सिंह जेटला और कला अध्यापक अमीर सिंह की सेवाएं उनमें से प्रत्येक द्वारा स्कूल के प्रबंधतंत्र के साथ निष्पादित करार के अधीन शक्ति के प्रयोग का दावा करते हुए समाप्त कर दी गई। स्वीकार्यत: स्कूल अपने खर्च का 95 प्रतिशत सरकारी अनुदान के रूप में प्राप्त करता है और खर्च के 5 प्रतिशत के अभिदाय के लिए पूर्णत: मनमानी शक्तियों का दावा करता है जिनका उल्लेख इस समय किया जा रहा है और जो अत्यन्त अराजकतापूर्ण प्रतीत होती हैं। इन दोनों मामलों में स्कूल की प्रबंध समिति द्वारा पूर्वोक्त दोनों व्यक्तियों की सेवा समाप्त करने की कार्यवाही को लगभग समान आधारों पर प्रश्नगत किया गया हैं और इसलिंए उनकी सुनवाई साथ-साथ की गयी और इस निर्णय द्वारा उनका निपटान किया जा रहा है ।

**1984 की सिविल अपील सं० 2137.**

2. अपीलार्थी, मनमोहन सिंह जैटला ने स्कूल के प्रधानाध्यापक के पद के लिए आमंत्रित करते हुए दिए गए विज्ञापन के अनुसरण में उस पद के लिए आवेदन किया था । उनका साक्षात्कार 28 मार्च, 1976 को किया गया और उसी दिन उसी तारीख को किए गए आदेश के द्वारा उन्हें सहायता प्राप्त स्कूल के लिए चंडीगढ़ प्रशासन के शिक्षा विभाग द्वारा विहित वेतनमान और सामान्य भत्तों पर हैडमास्टर का पद देने का प्रस्ताव किया गया । नियुक्ति पत्र में यह उपबंध किया गया था कि नियुक्त व्यक्ति एक वर्ष की परिवीक्षा पर रहेगा और उसे इस स्कूल के साथ एक करार करना पड़ेगा । अपीलार्थी ने नियुक्ति-पत्र स्वीकार कर लिया और कार्यभार संभाल लिया । चण्डीगढ़ प्रशासन के शिक्षा विभाग के विनियमों की अपेक्षानुसार उसकी नियुक्ति निदेशक लोक शिक्षा द्वारा पुष्ट किए जाने के अधीन था। उसकी पुष्टि 11 अगस्त, 1976 के आदेश द्वारा कर दी गयी । स्कूल की प्रबंध समिति द्वारा 2 जून, 1977 को किए गए प्रस्ताव द्वारा अपीलार्थी प्रधान अध्यापक के अध्यापन कार्य/पाठ्यक्रम से सहबद्ध क्रियाकलाप और प्रशासन के क्षेत्र में अद्वितीय

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



कार्यों को ध्यान में रखते हुए वर्ष 1980-81 के दौरान उन्हें वित्त और शिक्षा सचिव संघ राज्य क्षेत्र चंडीगढ़ द्वारा 10 अगस्त, 1981 को सम्मान पत्र दिया गया। ऐसा प्रतीत होता है कि पूर्ववर्ती प्रबंध समिति का कार्यकाल समाप्त हो गया और नई प्रबंध समिति ने 24 मार्च, 1982 से अपना कार्यभार सम्भाला। 31 जनवरी, 1983 को स्कूल की शिक्षा-प्रबंध-समिति ने अपीलार्थी को यह सूचित किया कि उसी तारीख अर्थात् 31 जनवरी, 1983 से उसकी सेवाओं की आवश्यकता नहीं रह गयी है और उसके द्वारा किए गए करार की शर्त सं० (iii) के निबंधनों के अनुसार वह स्कूल के नियोजन में नहीं रह जाएगा और उसे निदेश दिया गया कि वह श्रीमती गुरचरण कौर को कार्यभार सौंप दे। अपीलार्थी द्वारा 1969 वाले अधिनियम की धारा 3 की उपधारा (2) के अधीन उपायुक्त को अनुतोष के लिए किया गया आवेदन नामजूर कर दिया गया। आयुक्त को की गयी अपील में असफल रहने के पश्चात अपीलार्थी ने संविधान के अनुछेद 227 के अधीन पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय में समावेदन किया। उच्च न्यायालय ने रिट पिटीशन को आरंभतः नामंजूर कर दिया किन्तु यह मत व्यक्त करते हुए एक संकारण आदेश दिया कि चूंकि स्कूल को संविधान के अनुच्छेद 12 के अधीन "अन्य प्राधिकारी" नहीं कहा जा सकता यह उच्च न्यायालय की रिट अधिकारिता के अधीन नहीं आता। इसलिए विशेष इजाजत लेकर यह अपील की गयी हैं।

**1983 का रिट पिटीशन सं० 11238.**

3. पिटीशनर अमीर सिंह को स्कूल की प्रबंध समिति द्वारा 21 मार्च, 1976 को 21 मार्च 1976 के नियुक्ति पत्र सं० 1265 द्वारा कला अध्यापक के रूप में नियुक्त किया गया था। यह नियुक्ति पिटीशनर द्वारा किए गए आवेदन पर और स्कूल की सम्बद्ध समिति द्वारा साक्षात्कार किए जाने के पश्चात की गयी थी। नियुक्ति-पत्र में नियुक्ति की कुछ शर्तें उल्लिखित की गई थीं जिनमें से एक का उल्लेख किया जा सकता है। नियुक्त किए गए व्यक्ति को स्कूल के प्रबंध-तंत्र के साथ एक करार करना था। पिटीशनर को 28 फरवरी, 1983 के एक पत्र द्वारा यह सूचित किया गया कि स्कूल की प्रबंध समिति द्वारा अपनाए गए संकल्प के अनुसार पिटीशनर की सेवा समाप्त की जाने का निर्णय किया गया है चूंकि पिटीशनर और प्रबंध-तंत्र के बीच किए गए करार के प्रथम भाग के खंड (6) के अनुसार 4 मार्च, 1983 की पूर्वाह्न से उसकी सेवा की आवश्यकता नहीं रही है। पिटीशनर ने उपायुक्त और आयुक्त से सम्पर्क किया किन्तु कोई सफलता नहीं मिली। तत्पश्चात उसने संविधान के अनुच्छेद 32 के अधीन वर्तमान पिटीशन फाइल किया।

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



4. इस पर कोई विवाद नहीं है कि स्कूल 1969 वाले अधिनियम द्वारा नियंत्रित है। यह एक सहायता प्राप्त स्कूल है जिसे उसके खर्चों का 95 प्रतिशत राज्य सरकार से प्राप्त होता है। 1969 वाले अधिनियम की धारा 3 में यह उपबंध किया गया है कि किसी भी कर्मचारी को उसमें विहित रीति में जांच किए बिना पदच्युत नहीं किया जाएगा या सेवा से हटाए जाने या पंक्ति में अवनत किए जाने का आदेश तब तक प्रभावी नहीं होगा जब तक वह उपायुक्त द्वारा पुष्ट नहीं कर दिया जाता जो यदि उसकी राय में उपधारा (1) का अनुपालन नहीं किया गया है तो ऐसा करने से इन्कार कर सकता है उपधारा (5) के अधीन कोई व्यथित व्यक्ति उस धारा के अधीन 30 दिन की अवधि के भीतर उपायुक्त के विनिश्चय या आदेश के विरुद्ध आयुक्त को अपील कर सकता है। उपधारा (6) में यह उपबंध किया गया है कि आयुक्त का आदेश अन्तिम होगा और पक्षकारों पर बाध्यकारी होगा।

5. उपायुक्त और आयुक्त ने दोनों ही मामलों में यह अभिनिर्धारित किया कि दोनों ही अध्यापकों द्वारा स्कूल के प्रबंधतन्त्र के साथ किए गए करार के निबंधनों के कारण उन्हें यह छूट नहीं है कि वे किए गए आदेश को चुनौती दें और आदेश की सही प्रकृति का पता लगाएं। प्रत्यर्थी की ओर से यह भी दलील दी गई कि चण्डीगढ़ प्रशासन के शिक्षा विभाग के सुसंगत विनियमों के अधीन सहायता प्राप्त स्कूल के प्रत्येक कर्मचारी को स्कूल के प्रबंत्र-तंत्र के साथ एक करार करना होता है। अब यदि स्कूल का प्रबंध-तंत्र 1969 वाले अधिनियम की धारा 3 के आज्ञापक उपबंधों को वंचित करना चाहता है तो उसे करार में यथा उपबंधित दो माह का नोटिस देकर ही सेवा समाप्त करनी होगी और सेवा में रखो और निकाल दो के प्रबंध-तंत्र की मनमानी शक्तियों को नियंत्रित करने वाले उपबंधों को विफल किया जा सकता है। उपायुक्त प्रबंध तंत्र द्वारा किए गए आदेश के प्रति केवल जबानी हमदर्दी दिखाकर ही अपना आसान रास्ता नहीं बना सकता और आदेश के द्वेषपूर्ण होने के आरोप तथा आक्षेपित आदेश को सही प्रकृति और स्वरूप की परीक्षा करने से इन्कार नहीं कर सकता। इस मामले में करार के निबंधनों की प्रवृत्त करने के बहाने सेवा समाप्ति की शास्ति अधिरोपित की गई है और अभिलेख पर पर्याप्त सामग्री उपलब्ध है जिससे यह कार्यवाही द्वेषपूर्ण दर्शित होती है।

6. प्रधानाध्यापक मनमोहन सिंह जैटला वाले मामले पर वापस आते हुए इसमें इससे पूर्व बताए गए तथ्यों से सकारात्मक रूप से यह दर्शित होगा

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



कि वह पूर्णतः अर्हता प्राप्त था और यह कि उसकी नियुक्ति साक्षात्कार और चयन के पश्चात की गई थी। उसे पुष्ट कर दिया गया था। उसने चण्डीगढ़ प्रशासन से योग्यता प्रमाण-पत्र प्राप्त किया था। जिस क्षण प्रबंध समिति में परिवर्तन हुआ उसी क्षण उन व्यक्तियों में जो पूर्णतः लोक निधि से पोषित स्कूल के प्रबंध-तंत्र के नियंत्रण पर हावी होने का प्रयास कर रहे थे आपस में छीना-झपटी शुरु हो गई और यह कार्य उन लोगों के विरुद्ध बदले की भावना से किया गया जो अपदस्थ होने वाले प्रबंध-तंत्र द्वारा नियुक्त किए गए थे जो मतदान में परास्त हो गया था और करार का आश्रय लिया गया तथा सेवाएं समाप्त कर दी गईं। अपदस्थ होने वाले प्रबंध-तंत्र द्वारा नियुक्त किए गए व्यक्तियों को बाहर निकाल फेंकना सिक्के का एक पहलू है। जिस क्षण रिक्ति होती हैं उसी क्षण भाई-भतीजावाद और भ्रष्टाचार आरंभ हो जाता है। चूंकि नए प्रबंध-तंत्र ने कुछ ही मास के भीतर चुप-चाप कार्यभार संभाल लिया इसलिए इस आधार पर प्रधानाध्यापक की सेवा समाप्त कर दी गयी कि अब उसकी सेवा की आवश्यकता नहीं रही है। हमने स्कूल के प्रबंध-तंत्र के विद्वान काउन्सेल श्री पृथ्वी राज से बारम्बार यह पूछा कि प्रधान अध्यापक के बिना स्कूल को कैसे चलाएंगे। हमने हठात् इस प्रश्न पर जोर दिया कि 31 जनवरी, 1983 को स्पष्टतः पदावधि के मध्य में प्रधान अध्यापक और कला अध्यापक की इस आधार पर सेवा समाप्त करने की आवश्यकता क्यों पड़ी कि अब उसकी आवश्यकता नहीं रही। हमने व्यर्थ में उत्तर की प्रतीक्षा की। स्पष्ट है कि इसका कोई उत्तर नहीं हो सकता और इससे यह सबूत मिलता है यदि उसकी आवश्यकता है, कि इससे नवनिर्वाचित प्रबंध समिति का दुर्भावपूर्ण होना अपने आप प्रकट हो जाता है। हम इस अनुभूति को नहीं छिपा सकते कि 7 वर्ष तक दक्षतापूर्वक सेवा करने के पश्चात अपीलार्थी की सेवा ऐसे कारण से समाप्त कर दी गयी जो पूर्णतः अमान्य है और मात्र इसलिए कि उसकी-नियुक्ति अपदस्थ होने वाली प्रबंध समिति द्वारा की गयी थी और इस तथ्य की भी उपेक्षा कर दी गयी कि उसकी नियुक्ति चंडीगढ़ प्रशासन के सक्षम प्राधिकारी द्वारा पुष्ट कर दी गयी थी। इसके साथ ही साथ यह तथ्य भी जुड़ा हुआ है कि अपीलार्थी को 9 अप्रैल, 1979 को एक आरोप पत्र तामील किया गया और स्कूल के प्रबंध-तन्त्र द्वारा अनुशासनिक जांच आरंभ की गयी किन्तु उसे वापस ले लिया गया और करार के अधीन सेवा समाप्त करने की कार्रवाई आरम्भ की गयी और उसे लागू किया गया इससे अवचार के मामले में संभावित दंड देने वाले आदेश की दंडात्मक प्रकृति स्पष्टतः उपदर्शित होती है और यह भी पता चलता है कि करार का सहारा लेकर शक्ति का आभासी

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Digitized by Agamnigam Foundation, Chandigarh



प्रयोग किया गया है। कोई ऐसा करार जो ऐसे कानूनी उपबंधों के अनुरूप न हो जो किसी वर्ग की प्रतिरक्षा के लिए लाभदायक है तभी प्रभावी किया जा सकता है यदि वे उपविधि के आज्ञापक उपबंधों के प्रतिकूल है। धारा 3 द्वारा किसी सहायता प्राप्त स्कूल के किसी कर्मचारी की पदच्युत, सेवा से हटाए जाने या पंक्ति में अवनत किए जाने से पूर्व अनुशासनिक जांच कराना बाध्यकर किया गया है। इस आज्ञापक उपबंध को अनुकूल बनाने के लिए इस तथ्य के संबंध में करार के उपबंधों का आश्रय लेना कि कोई जांच करायी गयी थी और उसे बीच में छोड़ दिया गया था स्पष्टतः आदेश की प्रकृति को और शक्ति के आभासी प्रयोग को उपदर्शित करता है और नई प्रबंध समिति द्वारा ऐसा किया गया था जो ऐसा प्रतीत होता है कि अपदस्थ होने वाली प्रबंध समिति द्वारा नियुक्त किए गए व्यक्तियों की सेवा समाप्त करने के लिए कटिबद्ध थी। इसमें द्वेषपूर्ण होने की गंध आती है। इन सभी कारणों से अपीलार्थी की सेवा समाप्ति के आदेश गलत हैं और आरंभतः शून्य हैं।

7. उच्च न्यायालय ने इस आधार पर कोई भी अनुतोष देने से इनकार कर दिया कि सहायता प्राप्त स्कूल संविधान के अनुच्छेद 12 के अधीन 'अन्य प्राधिकारी' नहीं है और इसलिए वह उच्च न्यायालय की रिट अधिकारिता के भीतर नहीं आ सकता उच्च न्यायालय ने इस प्रश्न को स्पष्टतः नजर अन्दाज कर दिया कि उपायुक्त और आयुक्त 1969 वाले अधिनियम के अधीन कार्य कर रहे कानूनी प्राधिकारी हैं। वे न्यायिक-कल्प प्राधिकारी हैं और इसमें कोई विवाद नहीं था। इसलिए वे संविधान के अनुच्छेद 227 में प्रयुक्त 'अधिकरण' पद में समेकित होंगे जो उस सीमा-क्षेत्र के भीतर स्थित समस्त न्यायालयों और अधिकरणों पर जिनकी बाबत अधिकारिता का प्रयोग किया जाता है उच्च न्यायालय को अधीक्षण की शक्ति प्रदान करता है। इसलिए स्पष्टतः कानूनी न्यायिक कल्प प्राधिकारियों का विनिश्चय जिन्हें प्रकटतः अधिकरण कहा जा सकता है न्यायिक पुनर्विलोकन अर्थात संविधान 227 के अधीन उच्च न्यायालय द्वारा उत्प्रेक्षा की रिट के अधीन होगा। उच्च न्यायालय के समक्ष जिस विनिश्चय को प्रश्नगत किया गया था वह 1969 वाले अधिनियम की धारा 3 के अधीन अपनी शक्तियों का प्रयोग करते हुए उपायुक्त और आयुक्त द्वारा किया गया था और यह कानूनी प्राधिकरण निश्चित रूप से उच्च न्यायालय की रिट अधिकारिता के भीतर आते हैं।

8. इस मामले को जरा सा भिन्न दृष्टिकोण से भी देखा जा सकता है। इस न्यायालय के सांविधानिक न्यायापीठ द्वारा अजय हासिया आदि ब० खालिद

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



**मुजीब सेहराबर्दी और अन्य**[1] वाले मामले में दिए गए विनिश्चय के पश्चात ऐसे स्कूल जिन्हें लोक निधि से उनके खर्चों के रूप में 95 प्रतिशत अनुदान प्राप्त होता है और जिनके कर्मचारियों को 1969 वाले अधिनियम के अधीन कानूनी सुरक्षा प्राप्त है और जो संघ राज्य क्षेत्र चंडीगढ़ के शिक्षा विभाग द्वारा बनाए गए विनियमों के अधीन है और चूंकि प्रधान अध्यापक की नियुक्ति को वैध बनाने के लिए निदेशक लोक शिक्षण द्वारा अनुमोदित किया जाना चाहिए इसलिए वह उच्च न्यायालय की रिट अधिकारिता के भीतर निश्चित रूप से आयेंगे। दुर्भाग्यवश उच्च न्यायालय द्वारा सांविधानिक न्यायपीठ द्वारा 1983 में रिट पिटीशन का निपटान करते समय 13 नवम्बर, 1980 को किए गए **अजय हासिया**[1] वाले विनिश्चय के प्रति भी निर्देश नहीं किया गया **अजय हासिया**[1] वाले मामले में सांविधानिक न्यायपीठ की ओर से निर्णय देते समय न्यायाधिपति भगवती ने अन्य बातों के साथ-साथ यह भी अवलोकन किया कि "राज्य द्वारा दी गयी वित्तीय सहायता इतनी हो जिससे कि निगम के लगभग सभी व्यय पूरे हो सकें तो उससे यह पर्याप्त उपदर्शित होगा कि निगम की सरकारी प्रकृति संसेचित हो रही है।" इसके साथ यह जोड़ा जा सकता है कि राज्य द्वारा पूर्ण और प्रभावशाली नियंत्रण से यह उपदर्शित होता है कि निगम राज्य का अधिकरण या साधन है।" "निगम" शब्द के स्थान पर "लोक न्यास" शब्द को प्रतिस्थापित करते हुए वही कारण आवश्यक परिवर्तनों सहित स्कूल को भी लागू होंगे। इसलिए उच्च न्यायालय ने भी यह अभिनिर्धारित करने में गलती की है कि तृतीय प्रत्यर्थी स्कूल उच्च न्यायालय की रिट अधिकारिता के भीतर नहीं आता।

9. इस प्रकार यह प्रकट होगा कि सेवा समाप्त किए जाने का आदेश एक से अधिक कारणों से चलने योग्य नहीं है और इसलिए सेवा समाप्ति का आदेश सं० 58/83/20 तारीख 31 जनवरी, 1983 को अभिखंडित किया जाता है और अपास्त किया जाता है तथा अपीलार्थी मनमोहन सिंह जैटला को उसकी सेवा की निरंतरता को कायम रखते हुए और पिछले पूर्ण वेतन सहित सेवा में पुनः स्थापित किया जाता है। यदि इस न्यायालय के 2 मार्च, 1983, 2 मई, 1983और पश्चातवर्ती आदेशों के अधीन अपीलार्थी प्रधान अध्यापक को उसका मासिक वेतन दिया जा चुका है तो उसे लेखे में लिया जाएगा।

---

[1] [1981] 4 उम० नि० प० 419=(1981) 2 एस० सी० सी० 79.

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



10. कला अध्यापक अमीर सिंह के साथ भी यही हुआ उसकी नियुक्ति भी कला अध्यापक के रिक्त पद पर उसके द्वारा दिए गए आवेदन पर हुई थी। सेवा में प्रवेश के साथ ही वह पुष्ट कर्मचारी हो गया क्योंकि उसे परिवीक्षा पर नहीं रखा गया था। अचानक अन्य प्रबंध समिति के सत्ता में आ जाने से उसकी सेवा 4 मार्च, 1983 से इस आधार पर समाप्त कर दी गयी कि अब उसकी अपेक्षा नहीं रही। हमारे समक्ष इस अमान्य आधार पर आदेश को कायम रखने का प्रयास नहीं किया गया। प्रधान अध्यापक मनमोहन सिंह जैटला के मामले और इस मामले के बीच अंतर स्पष्ट करने वाली एक ही विशेषता है जो यह है कि पिटीशनर कला अध्यापक को कोई आरोप-पत्र तामील नहीं कराया गया था। इस अन्तर के सिवाय और भिन्न हमारे समक्ष हैडमास्टर श्री जैटला की सेवा समाप्ति के आदेश को अभिखण्डित करने के लिए जिन कारणों पर जोर दिया गया वे अन्य बातों के साथ-साथ कला अध्यापक के मामले में भी लागू होंगे। कारणों को दोहराने से मात्र इस निर्णय इनका विस्तार ही होगा। परिणामस्वरूप 28 फरवरी, 1983 वाले सेवा समाप्ति के आदेश को अभिखण्डित और अपास्त करने के पश्चात आदेश को आत्यंतिक बना दिया जाएगा तथा कला अध्यापक अमीर सिंह को सेवा की निरन्तरता और पिछले पूर्ण वेतन के साथ पद पर पुनः स्थापित करने का निदेश दिया जाता है।

11. तदनुसार सिविल अपील सं० 2137/84 मंजूर की जाती है और प्रधान अध्यापक श्री मनमोहन सिंह जैटला की सेवा समाप्ति के आदेश को अभिखंडित और अपास्त किया जाता है और साथ ही उपायुक्त तथा आयुक्त और उच्च न्यायालय के निर्णय को भी अभिखंडित और अपास्त किया जाता है। अपीलार्थी हैडमास्टर श्री मनमोहन सिंह जैटला को सेवा की निरंतरता और पिछले वेतन देते हुए इस तथ्य के अधीन सेवा में पुनः स्थापित किया जाता है कि यदि इस न्यायालय के आदेश के अनुसार उन्हें पिछला वेतन संदत्त किया गया है तो उसे लेखे में लिया जाएगा।

12. कला अध्यापक श्री अमीर सिंह द्वारा फाइल किए गए रिट पिटीशन में आदेश को आत्यंतिक किया जाता है तथा उसकी सेवा समाप्त करने वाले 28 फरवरी, 1983 वाले आदेश को अभिखंडित और अपास्त किया जाता है और साथ ही साथ उपायुक्त और आयुक्त के आदेश भी अपास्त किए जाते हैं

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



और उन्हें सेवा में निरंतरता और पिछले पूर्ण वेतन देते हुए सेवा में पुन: स्थापित किया जाता है।

13. प्रत्यर्थी स्कूल का प्रबन्ध-तंत्र दोनों ही कर्मचारियों को अलग-अलग खर्चे संदत्त करेगा जिसकी रकम प्रत्येक के लिए 1,500 रु० होगी।

अपील मंजूर की गयी।

द्वि०/सरोहा

---

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Digitized by Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

# महिन्दर सिंह और अन्य

वनाम

# पंजाब राज्य और एक अन्य

(20 दिसम्बर, 1984)

(न्यायाधिपति एस० मुर्तजा फजल अली और ए० वरदराजन)

भारतीय दंड संहिता, 1860 (1860 का 45)—धारा 302/34 तथा 307/34 [सपठित आयुध अधिनियम, 1959 (1959 का 54) धारा 27]—चार व्यक्तियों का पूर्वोक्त धाराओं के अधीन सेशन न्यायालय द्वारा विचारण किया जाना—मुख्य अभियुक्त को सात वर्ष के कठिन कारावास से दंडादिष्ट किया जाना—शेष तीन अभियुक्तों को दोषमुक्त कर दिया जाना—मुख्य अभियुक्त द्वारा दोषसिद्धि के विरुद्ध अपील की जाना—दूसरी ओर मुक्त किए गए तीन व्यक्तियों के संबंध में सरकार द्वारा अपील किया जाना—उच्च न्यायालय द्वारा मामले को नए सिरे से लिखे जाने और समुचित निर्णय दिए जाने के लिए सेशन न्यायालय को वापस भेज दिए जाने का आदेश दिया जाना—उच्च न्यायालय ने ऐसा करके अनुचित कदम उठाया था—उच्च न्यायालय स्वयं तथ्यों सम्बन्धी अन्तिम न्यायालय होता है और उसका यह कर्त्तव्य था कि वह साक्ष्य के सही होने तथा ग्राह्य होने के बारे में अपना समाधान कर लेता और अपील का विनिश्चय स्वयं करता, बजाय इसके कि वह उसे सेशन न्यायालय, को प्रतिप्रेषित करता।

इस मामले में चार व्यक्तियों का विचारण सेशन न्यायाधीश द्वारा भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 302/34 तथा 307/34 के अधीन एवं आयुध अधिनियम, 1959 की धारा 27 के अधीन किया गया था विचारण न्यायालय ने मुख्य अभियुक्त को भारतीय दंड संहिता की धारा 304 के भाग 1 के अधीन सिद्धदोष किया और उसे सात वर्ष के कठिन कारावास से दंडादिष्ट किया। उपरोक्त अभियुक्त ने पंजाब-हरियाणा उच्च न्यायालय के समक्ष दोषसिद्धि तथा दण्डादेश के विरुद्ध एक अपील दायर की। दूसरी ओर राज्य सरकार ने भी शेष तीन व्यक्तियों के विरुद्ध, जहां तक कि भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन उनकी दोषमुक्ति का सम्बन्ध है, अपील फाइल कर दी। उच्च न्यायालय ने अभियोजन पक्ष के समर्थन में पेश किए गए साक्ष्य का

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



विश्लेषण भली-भांति न करते हुए यह सामान्य निष्कर्ष निकाला कि सेशन न्यायाधीश का विनिश्चय विधि के अनुकूल नहीं था और उसमें कुछ मुद्दों पर तो विचार तक नहीं किया गया था। इस प्रकार उच्च न्यायालय ने न्यायोचित समझा कि निर्णय को सेशन न्यायालय के पास पुनः विचारण किए जाने तथा फिर से निर्णय लिखने के लिए वापस भेज दिया जाए। जहां तक दोष-मुक्त मुख्य अभियुक्त का सम्बन्ध है, लोक अभियोजक को यह निदेश दिया गया कि उसके विरुद्ध अपील फाइल की जाए। उच्चतम न्यायालय द्वारा अपील सं० 523/82 को पूर्णतः और अन्य अपीलों को भागतः मंजूर करते हुए,

**अभिनिर्धारित**—उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित करके गलती की थी कि राज्य द्वारा प्रस्तुत की गई अपील समुचित रूप से, जहां तक कि तीन अभियुक्त व्यक्तियों का सम्बन्ध है, उनके विरुद्ध प्रस्तुत नहीं की गई थी और उसे चाहिए था कि वह मुख्य अभियुक्त के मामले के साथ-साथ गुणागुण के आधार पर अपील की सुनवाई करता। उच्च न्यायालय ने साक्ष्य का विश्लेषण तथा उसकी सराहना करने की बजाय समुचित रूप से निर्णय लिखने हेतु उसे सेशन न्यायाधीश को प्रतिप्रेषित कर दिया था। एक तो यह उपधारणा करते हुए कि उच्च न्यायालय द्वारा यह विचार किया जाना उचित था कि निर्णय में कुछ त्रुटियां रह गई थीं और कतिपय ऐसे तथ्य थे जिन पर विचार नहीं किया गया था—ये ऐसे आधार गठित नहीं करेंगे जिन पर कि मामले को सेशन न्यायाधीश को प्रतिप्रेषित कर दिया जाए, ताकि वह समुचित निर्णय लिखे। स्वयं उच्च न्यायालय तथ्यों सम्बन्धी अन्तिम न्यायालय था और उसका यह कर्त्तव्य था कि वह साक्ष्य के सही होने तथा उसके ग्राह्य होने के बारे में अपना समाधान कर लेता। इस प्रकार उच्च न्यायालय को इस बात की पूर्ण स्वतन्त्रता थी कि वह एक बार फिर साक्ष्य का पुनः मूल्यांकन करता ताकि उन तथ्यों पर विचार किया जा सकता जिनके बारे में हो सकता है कि उन्हें सेशन न्यायाधीश द्वारा नजरअंदाज कर दिया गया था और उसे चाहिए था कि वह सेशन न्यायालय को मामला प्रतिप्रेषित करने की बजाय स्वयं अपील का विनिश्चय करता। चूंकि यह एक मूल मुद्दा है, अतः इस प्रश्न के बारे में कोई राय अभिव्यक्त नहीं की गई कि क्या तथ्य सम्बन्धी प्रथम अपील न्यायालय किसी दांडिक मामले में मामले को नए सिरे से निर्णय लिखने के लिए सेशन न्यायालय को प्रतिप्रेषित कर सकता है। ऐसे मामले में उचित आदेश यह होना चाहिए कि या तो वह स्वयं मामले का विनिश्चय करे अथवा वह उसे पुनः विचारण हेतु वापस भेज दे। यहां इस दृष्टिकोण को ध्यान में रखते हुए पुनः विचारण सम्बन्धी प्रश्न उद्भूत नहीं होता है। (पैरा 3)

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

**दाण्डिक अपीली अधिकारिता : 1982 की दाण्डिक अपील सं० 335-36 और 523.**

1980 के दाण्डिक पुनरीक्षण सं० 977 में पंजाब-हरियाणा उच्च न्यायालय के तारीख 31 मार्च, 1982 वाले निर्णय और आदेश के विरुद्ध की गई अपीलें।

| | |
|---|---|
| **अपीलार्थियों की ओर से** | सर्वश्री आर० एल० कोहली, एस० के० मेहता, पी० एन० पुरी, आर० सी० कोहली और एस० के० दुआ |
| **प्रत्यर्थियों की ओर से** | श्री एम० के० बग्गा |

न्यायालय का निर्णय न्यायाधिपति एस० मुर्तज़ा फज़ल अली ने दिया।

**न्यायाधिपति फज़ल अली**—

विशेष इजाज़त लेकर की गई इन अपीलों में चार व्यक्तियों अर्थात् महिन्दर सिंह, गुरचरण सिंह, भरपूर सिंह और जगविन्दर सिंह का विचारण सेशन न्यायाधीश द्वारा भारतीत दण्ड संहिता की धारा 302/34 तथा 307/34 के अधीन तथा आयुध अधिनियम की धारा 27 के अधीन किया गया था। समस्त साक्ष्य अभिलिखित करने के पश्चात् विचारण न्यायालय ने महिन्दर सिंह को भारतीय दण्ड संहिता की धारा 304 के भाग 1 के अधीन सिद्धदोष किया और उसे सात वर्ष के कठिन कारावास से दण्डादिष्ट किया। अन्य तीन अभियुक्तों को सेशन न्यायाधीश द्वारा दोषमुक्त कर दिया गया। महिन्दर सिंह ने पंजाब-हरियाणा उच्च न्यायालय के समक्ष दोषसिद्धि तथा दण्डादेश के विरुद्ध एक अपील फाइल की। राज्य सरकार ने भी गुरचरण सिंह, भरपूर सिंह और जगविन्दर सिंह के विरुद्ध, जहां तक कि उनकी दोषमुक्ति का सम्बन्ध है, और महिन्दर सिंह के विरुद्ध, जहां तक कि भारतीय दण्ड संहिता की धारा 302 के अधीन उसकी दोषमुक्ति का सम्बन्ध है, अपील फाइल कर दी। उच्च न्यायालय ने अभियोजन के समर्थन में पेश किए गए साक्ष्य का विश्लेषण तथा उसकी सराहना करने का कोई वास्तविक प्रयत्न किए बिना यह सामान्य निष्कर्ष निकाला कि विद्वान् सेशन न्यायाधीश का निर्णय विधि के अनुकूल नहीं था और यह कि उसने कुछ मुद्दों की बाबत विचार नहीं किया था अथवा कुछ मुद्दों पर विचार करने से लोप कर दिया था और मामले को नए सिरे से तथा समुचित निर्णय लिखने के लिए विचारण न्यायालय को वापस भेज दिया था। जहां तक दोषमुक्त अभियुक्त का सम्बन्ध है, हालांकि अपील लोक अभियोजक द्वारा राज्य सरकार द्वारा यथा-निदिष्ट रूप में फाइल की गई थी, तथापि उच्च न्यायालय ने स्वप्रेरणा से अथवा संभवतः अभियुक्तों द्वारा फाइल किए गए पिटीशन के आधार पर दोषमुक्त किए गए अभियुक्तों की प्रेरणा पर यह

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh


अभिनिर्धारित किया कि सरकार द्वारा महिन्दर सिंह के मामले को छोड़कर कोई अपील करने का समुचित आदेश नहीं दिया गया था।

2. निस्सन्देह, लोक अभियोजक को यह निदेश दिया गया था कि वह, जैसा कि ऊपर उपदर्शित किया गया है, दोषमुक्त अभियुक्त के विरुद्ध अपील फाइल करे। तथापि उच्च न्यायालय ने दोषमुक्त किए गए अभियुक्तों के निवेदन पर मामले पर पुनर्विचारण प्रारम्भ किया जिससे कि उस रीति तथा उन विभिन्न प्रक्रमों का पता लगाया जा सके जिनके माध्यम से अपील फाइल करने के लिए मंजूरी सरणीबद्ध की गई थी। विद्वान् न्यायमूर्तियों के प्रति सादर व्यक्त करते हुए हम यह महसूस करते हैं कि उच्च न्यायालय के लिए ऐसा करना सर्वथा समुचित नहीं था। जब-कभी सरकार मत जानने की ईप्सा करती है तो वह विभिन्न अभिकरणों अर्थात् महाधिवक्ता, लोक अभियोजक, विधि परामर्शी तथा अन्य अधिकारियों से परामर्श करती है और तत्पश्चात् सरकार द्वारा भारसाधक सचिव की मार्फत आदेश पारित किया जाता है। प्रस्तुत मामले में इस बारे में कोई विवाद नहीं किया गया था कि लोक अभियोजक को सरकार के भारसाधक अवर सचिव द्वारा यह निदेश दिया गया था कि वह सभी अपीलार्थियों के विरुद्ध अपील फाइल करे। किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि उच्च न्यायालय ने इस मामले पर गहराई से विचार किया जिसके लिए कि उसने इस बारे में व्यापक जांच की कि उस समय क्या घटित हुआ था जबकि मामला सरकार के विचाराणाधीन था और इस संबंध में तथ्यों ने क्या स्वरूप धारण किया था और यह व्यापक जांच करने के पश्चात् यह अभिनिर्धारित किया कि लोक अभियोजक को दिया गया प्राधिकार केवल महिन्दर सिंह की बाबत था, न कि अन्य अभियुक्तों की बाबत। इसलिए उच्च न्यायालय की यह राय थी कि दोषमुक्त अभियुक्तों अर्थात् गुरचरण सिंह, भरपूर सिंह और जगविन्दर सिंह के विरुद्ध अपील फाइल करने के लिए निदेश अस्तित्वहीन था और इसीलिए राज्य द्वारा जो अपील फाइल की गई थी, वह जहां तक कि उनका सम्बन्ध है, समुचित रूप से पेश नहीं की गई थी। ऐसा प्रतीत होता है कि लोक अभियोजक को यह स्पष्ट निदेश दिया गया है कि वह सभी चार अभियुक्तों के विरुद्ध अपील फाइल करे जिनमें से तीन अपीलें दोषमुक्ति के विरुद्ध फाइल की जाएं और जहां तक महिन्दर सिंह का सम्बन्ध है, उसके विरुद्ध अपील भारतीय दण्ड संहिता की धारा 302 के अधीन उसकी दोषमुक्ति के सम्बन्ध में फाइल की जाए।

3. सम्पूर्ण अभिलेख का परिशीलन करने के पश्चात् हम उच्च न्यायालय से सहमत होने में असमर्थ हैं कि दोषमुक्त अभियुक्त की बाबत कोई अन्तः-

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

स्थापन किया गया था। हो सकता है कि विभिन्न अभिकरणों ने भिन्न-भिन्न दृष्टिकोण अभिव्यक्त किए हों, किन्तु मोटे तौर पर अवर सचिव द्वारा अपनाया गया अन्तिम विनिश्चय अभिभावी हुआ जिसके परिणामस्वरूप लोक अभियोजक को सभी दोषमुक्त अभियुक्तों के विरुद्ध उच्च न्यायालय के समक्ष अपील फाइल करने के लिए प्राधिकृत किया गया था। इसलिए ऐसी स्थिति में उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित करके गलती की थी कि राज्य द्वारा प्रस्तुत की गई अपील समुचित रूप से जहां तक कि तीन अभियुक्त व्यक्तियों का सम्बन्ध है, उनके विरुद्ध प्रस्तुत नहीं की गई थी और उसे चाहिए था कि वह महिन्दर सिंह के मामले के साथ-साथ गुणागुण के आधार पर अपील की सुनवाई करता। चूंकि हमारा यह आशय है कि हम इस मामले को इस तथ्य पर विचार करने के पश्चात् कि राज्य द्वारा की गई अपील समुचित रूप से सम्पन्न की गई थी, नए सिरे से विधि के अनुसार विनिश्चय करने के लिए उच्च न्यायालय को प्रतिप्रेषित कर दें, इसलिए हमारे लिए यह आवश्यक नहीं है कि हम इसके बारे में अतिरिक्त ब्यौरे दें। किन्तु हमारे लिए यह उल्लेख करना उचित होगा कि उच्च न्यायालय ने साक्ष्य का विश्लेषण तथा उसकी सराहना करने की बजाय समुचित रूप से निर्णय लिखने हेतु उसे सेशन न्यायाधीश को प्रतिप्रेषित कर दिया था। एक तो यह उपधारणा करते हुए कि उच्च न्यायालय द्वारा यह विचार किया जाना उचित था कि निर्णय में कुछ त्रुटियां रह गई थीं और कतिपय ऐसे तथ्य थे जिन पर विचार नहीं किया गया था—ये ऐसे आधार गठित नहीं करेंगे जिन पर कि मामले को सेशन न्यायाधीश को प्रतिप्रेषित कर दिया जाए, ताकि वह समुचित निर्णय लिखे। स्वयं उच्च न्यायालय तथ्यों सम्बन्धी अन्तिम न्यायालय था और उसका यह कर्त्तव्य था कि वह साक्ष्य के सही होने तथा उसके ग्राह्य होने के बारे में अपना समाधान कर लेता। इस प्रकार उच्च न्यायालय को इस बात की पूर्ण स्वतन्त्रता थी कि वह एक बार फिर साक्ष्य का पुनः मूल्यांकन करता ताकि उन तथ्यों पर विचार किया जा सकता जिनके बारे में हो सकता है कि उन्हें सेशन न्यायाधीश द्वारा नज़रअन्दाज़ कर दिया गया था और उसे चाहिए था कि वह सेशन न्यायालय को मामला प्रतिप्रेषित करने की बजाय स्वयं अपील का विनिश्चय करता। चूंकि यह एक मूल मुद्दा है, अतः हम इस प्रश्न के बारे में कोई राय अभिव्यक्त नहीं करेंगे कि क्या तथ्य सम्बन्धी प्रथम अपील न्यायालय किसी दाण्डिक मामले में मामले को नए सिरे से निर्णय लिखने के लिए सेशन न्यायालय को प्रतिप्रेषित कर सकता है। ऐसे मामले में उचित आदेश यह होना चाहिए कि या तो वह स्वयं मामले का विनिश्चय करे अथवा वह उसे पुनः विचारण हेतु वापस भेज दे। यहां इस दृष्टिकोण को ध्यान में रखते हुए, जो कि हमने इस मामले में अपनाया है, पुनः विचारण सम्बन्धी प्रश्न उद्भूत नहीं होता है।

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



4. इसलिए हम अपील सं० 523/82 को मंजूर पूर्णतः करते हैं और अन्य अपीलों को भागतः मंजूर करते हैं, उच्च न्यायालय के आदेश को अपास्त करते हैं तथा यह निदेश देते हैं कि अपीलों की सुनवाई विधि के अनुसार गुणागुण के आधार पर की जाए। हम न्याय के हित में यह समुचित तथा समीचीन समझते हैं कि इस अपील की सुनवाई उच्च न्यायालय की किसी भिन्न न्यायपीठ द्वारा की जानी चाहिए।

अपील सं० 523/82 पूर्णतः और अन्य अपीलें भागतः मंजूर की गईं।

भू०

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

## सेयाजी मिल्स लिमिटेड

वनाम

## क्षेत्रीय भविष्य निधि आयुक्त

(21 दिसम्बर, 1984)

(न्यायाधिपति ई० एस० वेंकटरामय्या और आर० बी० मिश्र)

**कर्मचारी भविष्य निधि और प्रकीर्ण उपबन्ध अधिनियम, 1952 (1952 का 19)—धारा 16 (1) (ख)—भविष्य निधि में अभिदाय करने विषयक उपबन्धों का लागू होना—अपीलार्थी द्वारा परिसमापन में कारखाने का खरीदा जाना—नए सिरे से कारबार में पूंजी लगाना और नई संविदाओं पर लगभग 70 प्रतिशत उस कारखाने के कर्मकारों को नियोजित करना—नया लाइसेंस प्राप्त करने के पश्चात् कारखाने में नए किस्म के माल का उत्पादन शुरु करना—यह दावा किया जाना कि कारखाने को प्रारम्भ हुए तीन वर्ष की कालावधि समाप्त नहीं हुई है—अधिनियम द्वारा पहले से ही शासित कारखाने के चलने में किसी प्रकार के व्यवधान का अर्थान्वयन कारखाने के बन्द होने के रूप में नहीं किया जाना चाहिए और व्यवधान के पश्चात् यह नहीं समझा जाना चाहिए कि नया कारखाना स्थापित हो चुका है अतः कारखाने में विनिर्माण कार्य के पुनः शुरू होने पर उक्त अधिनियम के उपबन्ध लागू होंगे और कारखाने का मालिक अभिदाय करने के दायित्वाधीन होगा।**

दिसम्वर, 1954 से पूर्व 'हीरजी मिल्स लिमिटेड' नामक कंपनी अपने कारखाने में कपड़े के माल के विनिर्माण और विक्रय का कारबार कर रही थी। उस कंपनी के बारे में मुम्बई उच्च न्यायालय द्वारा परिसमापन का आदेश कर दिया गया था और उसकी आस्तियों के बारे में शासकीय समापक द्वारा वेचे जाने के आदेश कर दिये गए थे। शासकीय समापक द्वारा किए गए विक्रय में अपीलार्थी ने जो कि एक पब्लिक लिमिटेड कंपनी थी, उपरोक्त कारखाने को खरीद लिया। यह कहा गया है कि कर्मकारों को पहले सेवोन्मुक्त कर दिया गया था और समापन के अधीन कम्पनी का गुडविल अपीलार्थी ने अर्जित नहीं किया था। समय-समय पर कारखांने का काम बन्द रहा। अपीलार्थी ने 12 नवम्बर, 1955 को कारखाना फिर से शुरु कर दिया। अपीलार्थी का यह दावा है कि उसने कारबार में नए सिरे से पूँजी का विनिधान किया, मशीनरी को नवीकृत किया और नई संविदाओं पर कर्मकारों को भी नियोजित किया। यद्यपि लगभग 70 प्रतिशत कर्मकार पहले उस कारखाने में काम कर रहे थे। अपीलार्थी ने उसे चलाने के लिए नया लाइसेंस अभि-

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



प्राप्त करने के पश्चात् कारखाने में नए किस्म के माल का उत्पादन करना शुरु कर दिया था। जब फरवरी, 1956 के अन्त में क्षेत्रीय भविष्य निधि आयुक्त ने उसके विरुद्ध अधिनियम को प्रवृत्त करने के लिए कारखाने के कार्यकरण के बारे में कतिपय पूछताछ की, अपीलार्थी ने यह कहते हुए लिखा कि कारखाना अभी नया कारखाना था चूंकि वह केवल 12 नवम्बर, 1955 को स्थापित हुआ था और तीन वर्ष की कालावधि उस तारीख से अभी समाप्त नहीं हुई थी। अपीलार्थी ने उसकी धारा 16 (1) (ख) का अवलम्ब लेते हुए अधिनियम के प्रवर्तन से छूट का दावा किया। जब क्षेत्रीय भविष्य निधि आयुक्त को उसके स्पष्टीकरण से विश्वास नहीं हुआ तो अपीलार्थी ने संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन मुम्बई उच्च न्यायालय के समक्ष एक रिट पिटीशन फाइल किया जिसमें कारखाने को अधिनियम के लागू होने को चुनौती दी गई। तथापि वह आवेदन वापस ले लिया गया। बाद में अपीलार्थी ने सिटी सिविल न्यायालय, मुम्बई के समक्ष इस बात की घोषणा करने के लिए संक्षिप्त हेतुक वाद फाइल किया कि अधिनियम और तद्धीन बनाई गई स्कीम को जब तक कारखाने के विरुद्ध प्रवृत्त नहीं किया जा सकता जब तक कि 12 नवम्बर, 1955 से 3 वर्ष समाप्त नहीं हो जाते और कि अपीलार्थी अधिनियम के अधीन कोई अभिदाय करने के अध्यधीन नहीं था। अपीलार्थी ने क्षेत्रीय भविष्य निधि आयुक्त के विरुद्ध उसे कारखाने के विरुद्ध अधिनियम को प्रवृत्त करने से रोकने के लिए आदेश का भी अनुरोध किया। इस वाद का भविष्य निधि आयुक्त ने विरोध किया। उसने यह दलील दी कि अधिनियम कारखाने को लागू होता था जबकि यह हीरजी मिल्स लिमिटेड (समापन के अधीन कम्पनी) के हाथों में था और इसलिए यह मात्र इसलिए लागू होना सम्भव नहीं हुआ था क्योंकि कारखाने का कार्यकरण संक्षिप्त कालावधि के लिए बन्द रहा और उसके स्वामित्व में परिवर्तन था। यह भी अभिवाक् किया गया कि कारखाने को नए सिरे से 12 नवम्बर, 1955 को स्थापित हुआ नहीं माना जा सकता और इसलिए अधिनियम की धारा 16 (1) (ख) के अधीन छूट उपलब्ध नहीं थी। विचारण न्यायालय ने वाद खारिज कर दिया। विचारण न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि मामले में सिद्ध कई तथ्यों के दृष्टिकोण से इस बात की उपधारणा नहीं की जा सकती कि एक नया कारखाना अपीलार्थी द्वारा 12 नवम्बर, 1955 को स्थापित किया गया था। उसने यह भी अभिनिर्धारित किया कि पुराने कारखाने की सततता टूटी नहीं थी और इसलिए अपीलार्थी अधिनियम के अधीन अभिदाय करने के दायित्वाधीन है। विचारण न्यायालय के निर्णय को मुम्बई उच्च न्यायालय ने पुष्ट कर दिया। उच्च न्यायालय के निर्णय के विरुद्ध विशेष इजाज़त लेकर उच्चतम न्यायालय में अपील की गई। अपील खारिज करते हुए,

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



अभिनिर्धारित—चूंकि कर्मचारी भविष्य निधि और प्रकीर्ण अधिनियम, 1952 एक फायदाप्रद कानून है और उसकी धारा 16 ऐसा खंड है जो नियोजक को अभिदाय करने के दायित्व से छूट अनुदत्त करता है, धारा 16 का कठोर अर्थान्वयन किया जाना चाहिए। यदि तीन वर्षों की कालावधि कारखाने के स्थापन की तारीख से समाप्त हो चुकी है तो अधिनियम लागू होगा बशर्ते कि अन्य शर्तें पूरी हो गई हों। अधिनियम की धारा 16 (1) (ख) के अधीन छूट प्राप्त करने के लिए माप दण्ड यह है कि तीन वर्षों की कालावधि प्रश्नगत कारखाने के स्थापन की तारीख से अभी समाप्त नहीं हुई हो। इसका उस तारीख से कोई निर्देश नहीं है जिसको नियोजक ने जो अभिदाय करने के दायित्वाधीन है, कारखाने का हक अर्जित किया है। अधिनियम में यह भी नहीं कहा गया है कि कारखाने के कार्यकरण में किसी प्रकार कीं रुकावट छूट नई कालावधि उद्भूत करेगी। कारखाने में जो एक बार स्थापित हो चुका है, कार्य कारखाने की छुट्टियों, हड़तालों, तालाबंदियों, मशीनरी के अस्थायी रूप से ठप्प हो जाने, कालिक मरम्मत के कारण जो कारखाने की मशीनरी की करनी होती है उसके कारण कच्चे माल की अनुपलब्धता के कारण या वित्त की कमी आदि के कारण रुकावट आ सकती है। इसमें न्यायालय के आदेश के कारण व्यवधान पड़ सकता है। ऐसे कारखाने के चलाने में जो अधिनियम द्वारा शासित है, ऊपर उल्लिखित कारणों में से किसी कारण द्वारा किए गए अवरोध का अर्थान्वयन इस प्रकार से नहीं किया जा सकता कि उसके परिणामस्वरूप अधिनियम द्वारा शासित कारखाना बन्द हो गया है और उसके पुनः शुरु होने पर यह नहीं कहा जा सकता कि नया कारखाना स्थापित किया गया है या स्थापित हो गया है। इस कारखाने में विनिर्माण कार्य के पुनः शुरु करने पर यह अधिनियम द्वारा शासित होता रहेगा। (पैरा 6)

कारखाना परिसमापन के आदेश के द्वारा बन्द हुआ था और कारखाना शासकीय समापक द्वारा अपीलार्थी को उसके बेचे जाने के पश्चात् फिर से शुरु हुआ था। इस मामले में विचारण न्यायालय द्वारा अभिकथित तथ्य का निष्कर्ष जिसे उच्च न्यायालय द्वारा पुष्ट कर दिया गया है, स्पष्ट रूप से यह सिद्ध करता है कि यह वही कारखाना था जिसमें 12 नवम्बर, 1955 से फिर से उत्पादन शुरु हुआ था। महत्वपूर्ण बात यह है कि काफी कर्मकार और कर्मचारी जो पूर्व प्रबन्ध मण्डल के अधीन कार्यरत थे अपीलार्थी द्वारा नियोजित किए गए थे यद्यपि इस बात का दावा किया गया है कि उन्होंने नियोजन की नई संविदाएं की थीं। अतिरिक्त पूंजी का भी विनिधान मात्र या उसके पुनः शुरु करने से पूर्व विद्यमान मशीनरी की मरम्मत करने से या उत्पादन

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



में विविधता लाने से या स्वामित्व में बदली करने से नया कारखाना स्थापित नहीं हो जाता जिससे कि तीन वर्षों की नई कालावधि के लिए अधिनियम की धारा 16 (1) (ख) के अधीन छूट लागू होती हो। (पैरा 9)

प्रभेदित निर्णय

| | | पैरा |
|---|---|---|
| [1970] | [1970] 2 एस० सी० आर० 481 : भविष्य निधि निरीक्षक, त्रिवेन्द्रम बनाम सचिव, एन० एस० एस० कोआपरेटिव सोसाइटी, छगनछेरी; | 10 |
| [1965] | ए० आई० आर० 1965 मद्रास 508 : विठलदास जगन्नाथदास और एक अन्य बनाम क्षेत्रीय भविष्य निधि आयुक्त, मद्रास और एक अन्य; | 10 |

अवलम्बित निर्णय

| | | |
|---|---|---|
| [1968] | ए० आई० आर० 1968 गुजरात 71 : दि न्यू अहमदाबाद बंसीदर मिल्स प्राइवेट लिमिटेड, अहमदाबाद बनाम भारत संघ और अन्य; | 7 |
| [1966] | ए० आई० आर० 1966 मद्रास 416 : मैसर्स आर० एल० साहनी एण्ड कम्पनी बनाम भारत संघ जिसका प्रतिनिधित्व क्षेत्रीय भविष्य निधि आयुक्त, मद्रास ने किया, और एक अन्य; | 7 |
| [1966] | (1966) 1 लेबर ला जर्नल 741 : लक्ष्मी रतन इंजीनियरिंग वर्क्स बनाम क्षेत्रीय भविष्य निधि आयुक्त, पंजाब और अन्य; | 8 |
| [1963] | ए० आई० आर० 1963 कलकत्ता 513 : जमनादास अग्रवाल और एक अन्य बनाम क्षेत्रीय भविष्य निधि आयुक्त, पश्चिमी बंगाल और अन्य; | 7 |
| [1962] | ए० आई० आर० 1962 पंजाब 507 : क्षेत्रीय भविष्य निधि आयुक्त, पंजाब और एक अन्य बनाम लक्ष्मी रतन इंजीनियरिंग वर्क्स लिमिटेड | 7 |
| [1959] | ए० आई० आर० 1959 कलकत्ता 783 : वेजीटेबल प्रोड्क्ट्स लिमिटेड बनाम क्षेत्रीय भविष्य निधि आयुक्त, पश्चिमी बंगाल और अन्य; | 7 |
| [1959] | ए० आई० आर० 1959 पंजाब 27 : हिन्दुस्तान इलैक्ट्रिक कंपनी लिमिटेड बनाम क्षेत्रीय भविष्य निधि आयुक्त, पंजाब और एक अन्य | 7 |

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



[1959] ए० आई० आर० 1959 केरल 3 :
**कुन्नत टैक्सटाइल्स** बनाम क्षेत्रीय भविष्य निधि आयुक्त; 7

[1958] ए० आई० आर० 1958 पंजाब 55 :
**रवीन्द्र टैक्सटाइल मिल्स** बनाम सचिव, श्रम मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली और एक अन्य; 7

[1957] ए० आई० आर० 1957 कलकत्ता 702 :
**मैसर्स भारत बोर्ड मिल्स लिमिटेड** बनाम क्षेत्रीय भविष्य निधि आयुक्त और अन्य; 7, 10

[1956] 5 नवम्बर, 1956 को निपटाया गया 1956 का प्रकीर्ण आवेदन सं० 289 :
**छगनलाल टैक्सटाइल मिल्स प्राइवेट लिमिटेड** बनाम पी० ए० भास्कर; 6

**सिविल अपीली अधिकारिता : 1970 की सिविल अपील सं० 2130.**

(मूल डिक्री से 1984 की अपील सं० 406 में बम्बई उच्च न्यायालय के तारीख 25 अगस्त, 1969 के निर्णय और डिक्री के विरुद्ध अपील)

**अपीलार्थी की ओर से** — श्री एन० एच० हिंगोरानी, श्रीमती के० हिंगोरानी और श्रीमती रेखा पाण्डे

**प्रत्यर्थी की ओर से** — श्री ओ० पी० शर्मा और कु० ए० सुभाषिणी

न्यायालय का निर्णय न्यायाधिपति ई० एस० वेंकटरामय्या ने दिया ।

**न्यायाधिपति वेंकटरामय्या**—

विशेष इजाजत लेकर की गयी इस अपील में यह प्रश्न अन्तर्वलित है कि क्या कर्मचारी भविष्य निधि और प्रकीर्ण उपबन्ध अधिनियम, 1952 (1952 का अधिनियम सं० 19 जिसे इसमें इसके आगे अधिनियम कहा गया है) के उपबंध वाद की तारीख को जिसको यह अपील उद्भूत होती है ऐसे कारखाने पर लागू होते हैं जो अपीलार्थी द्वारा कतिपय समापन कार्यवाहियों में सन् 1955 में खरीदा गया था ।

2. दिसम्बर, 1954 से पूर्व हीरजी मिल्स लि० नामक कम्पनी फरगुसन रोड लोअर पारेल, बम्बई में स्थित अपने कारखाने में कपड़े के माल के विनिर्माण और विक्रय का कारबार कर रही थी उस कम्पनी के बारे में बम्बई उच्च न्यायालय द्वारा परिसमापन का आदेश कर दिया गया था और उसकी आस्तियों के बारे में शासकीय समापक द्वारा बेचे जाने के आदेश कर दिए गए थे। शासकीय समापक द्वारा किए गए विक्रय में अपीलार्थी ने जो कि एक पब्लिक लिमिटेड कम्पनी थी उपरोक्त कारखाने को खरीद लिया। यह कहा

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



गया है कि कर्मकारों को पहले सेवोन्मुक्त कर दिया गया था और समापन के अधीन कम्पनी का गुड-विल अपीलार्थी ने अर्जित नहीं किया था। समय-समय पर कारखाने का काम बंद रहा। अपीलार्थी ने 12 नवम्बर, 1955 को कारखाना फिर से शुरु कर दिया। अपीलार्थी का यह दावा है कि उसने कारबार में नए सिरे से पूंजी का विनिधान किया, मशीनरी को नवीकृत किया और नई संविदाओं पर कर्मकारों को भी नियोजित किया। यद्यपि लगभग 70 प्रतिशत कर्मकार पहले उस कारखाने में काम कर रहे थे। यह भी दलील दी गयी है कि अपीलार्थी ने उसे चलाने के लिए नया लाइसेंस अभिप्राप्त करने के पश्चात् कारखाने में नए किस्म के माल का उत्पादन करना शुरु कर दिया था। जब फरवरी, 1956 के अंत में क्षेत्रीय भविष्य निधि आयुक्त ने उसके विरुद्ध अधिनियम को प्रवृत्त करने के लिए कारखाने के कार्यकरण के बारे में कतिपय पूछ-ताछ की अपीलार्थी ने यह कहते हुए लिखा कि कारखाना अभी नया कारखाना था चूँकि यह केवल 12 नवम्बर, 1955 को स्थापित हुआ था और तीन वर्ष की कालावधि उस तारीख से अभी समाप्त नहीं हुई थी। अपीलार्थी ने उसकी धारा 16(1) (ख) का अवलम्ब लेते हुए अधिनियम के प्रवर्तन से छूट का दावा किया। जब क्षेत्रीय भविष्य निधि आयुक्त को उसके स्पष्टीकरण से विश्वास नहीं हुआ तो अपीलार्थी ने संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन बम्बई उच्च न्यायालय के समक्ष 1957 का प्रकीर्ण वाद सं० 76 में एक रिट पिटीशन फाइल किया जिसमें कारखाने को अधिनियम के लागू होने को चुनौती दी गयी। तथापि, वह आवेदन वापस ले लिया गया। बाद में अपीलार्थी ने सिटी सिविल कोर्ट, बम्बई के समक्ष इस बात की घोषणा करने के लिए 1958 का संक्षिप्त हेतुक वाद सं० 2088 फाइल किया कि अधिनियम और तद्धीन बनायी गयी स्कीम को तब तक कारखाने के विरुद्ध प्रवृत्त नहीं किया जा सकता जब तक कि 12 नवम्बर, 1955 से 3 वर्ष समाप्त नहीं हो जाते और कि अपीलार्थी अधिनियम के अधीन कोई अभिदाय करने के अध्यधीन नहीं था। अपीलार्थी ने क्षेत्रीय भविष्य निधि आयुक्त के विरुद्ध उसे कारखाने के विरुद्ध अधिनियम को प्रवृत्त से रोकने के लिए व्यादेश का भी अनुरोध किया। इस वाद का भविष्य निधि आयुक्त ने विरोध किया। उसने यह दलील दी कि अधिनियम कारखाने को लागू होता था जबकि यह हीरजी मिलस लि० (समापन के अधीन कम्पनी) के हाथों में था और इसलिए यह मात्र इसलिए लागू होना सम्भव नहीं हुआ था क्योंकि कारखाने का कार्यकरण संक्षिप्त कालावधि के लिए बंद रहा और उसके स्वामित्व में परिवर्तन था। यह भी अभिवाक किया गया कि कारखाने को नए सिरे से 12 नवम्बर, 1955 को स्थापित हुआ नहीं माना जा सकता और इसलिए अधिनियम की धारा

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



16(1)(ख) के अधीन छूट उपलब्ध नहीं थी। विचारण न्यायालय ने खर्चों सहित वाद को खारिज कर दिया। विचारण न्यायालय ने अपीलार्थी की दलील को नकारते हुए इस प्रकार मत व्यक्त किया—

"यदि कोई कारखाना बंद हो जाता है और यदि इसका समापन हो जाता है तो कारखाने को समापक द्वारा खोल दिया जाता है और उसकी विभिन्न आस्तियों को स्क्रैप के रूप में समापक द्वारा बेच दिया जाता है तो यह एक भिन्न मामला बन जाता है किन्तु प्रस्तुत मामले में 5 दिसम्बर, 1955 के हस्तांतरण अभिलेख प्रदर्श (क) में परिवर्णनों को ध्यान में रखते हुए इस बात पर विवाद नहीं हो सकता कि वादियों ने वास्तव में सभी आस्तियों को (क) भूमि, चल-सम्पत्ति और परिसर (ख) भवन, गोदाम, निर्मित और शेड और (ग) संयंत्र और मशीनरी और अन्य जंगम सम्पत्तियां हीरजी मिल्स लिमिटेड (समापन के अधीन) और शासकीय समापक और अन्य लोगों से खरीदी थी और ऐसी खरीद करने के पश्चात् वे उन्हीं आस्तियों को विशेष रूप से उसी कारखाना परिसरों में उसी संयंत्र और मशीनरी के साथ जिसमें कुछ और जोड़ दिया गया था उसी कारबार के लिए प्रयोग कर रहे थे अर्थात् वस्त्र, वस्तुओं के विनिर्माण का कार्य कर रहे थे जो कार्य उस कारखाने द्वारा उस समय चलाया जा रहा था जबकि यह हीरजी मिल्स लिमिटेड द्वारा धारित थी जिसमें 65 से 70 प्रतिशत के हीरजी मिल्स लिमिटेड के कर्मचारी और कर्मकार थे। इन तथ्यों से यह नहीं कहा जा सकता कि नए स्वामियों को पुराने स्वामियों से सभी आस्तियों में से कई का अंतरण करते समय यह आशय था कि पुराना कारखाना निष्क्रिय या अविद्यमान हो जाना चाहिए और एक नया कारखाना स्थापित करने का आशय था। इसके प्रतिकूल ये तथ्य स्थापित कारखाने की सतता इस तथ्य के होते हुए भी पुष्ट करते हैं कि वादियों ने इसे चालू समुत्थान के रूप में नहीं खरीदा था।"

3. विचारण न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि मामले में सिद्ध कई तथ्यों के दृष्टिकोण से इस बात की उपधारणा नहीं की जा सकती कि एक नया कारखाना अपीलार्थी द्वारा 12 नवम्बर, 1965 को स्थापित किया गया था। दूसरी ओर, उसने यह अभिनिर्धारित किया कि पुराने कारखाने की सतता टूटी नहीं थी और इसलिए अपीलार्थी अधिनियम के अधीन अभिदाय करने के दायित्वाधीन है। विचारण न्यायालय के निर्णय को 1964 की अपील सं० 406 में बम्बई उच्च न्यायालय ने पुष्ट कर दिया। विशेष इजाजत द्वारा यह अपील उच्च न्यायालय के निर्णय के विरुद्ध फाइल की गयी है।

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

4. इस मामले में सिद्ध तथ्य ये हैं कि हीरजी मिल्स लि० सन् 1931 में परिसमापन के आदेश की तारीख तक जो कि 17 दिसम्बर, 1954 को किया गया था। कारखाने में वस्त्र माल का विनिर्माण करने का कारबार चला रहा था और कारखाने में 12 नवम्बर, 1955 तक जिस तारीख को अपीलार्थियों ने इसे फिर से चालू किया था विनिर्माण कार्यवाहियां रुकी हुई थीं। विचाराधीन प्रश्न ये हैं कि क्या इन परिस्थितियों में जिनमें कि अपीलार्थी ने कारखाना अर्जित किया है पुराना कारखाना निर्वापित हो गया था और 12 नवम्बर, 1955 को नया कारखाना स्थापित हो गया था और क्या यह कहा जा सकता है कि अधिनियम परिसमापन आदेश के कारण उसमें विनिर्माण प्रक्रिया के रुकने पर कारखाने को लागू नहीं रहा था।

5. प्रारम्भ में यह कहना होगा कि अधिनियम को कारखानों और स्थापनों में कर्मचारियों के लाभ के लिए भविष्य निधियों के स्थापन के उपबंध करने के लिए प्रवृत्त किया गया था। संविधान का अनुच्छेद 43 राज्य से इस बात की अपेक्षा करता है कि वह सभी कर्मकारों कृषि, औद्योगिक या अन्य लोगों के लिए उपयुक्त विधान या आर्थिक संगठन के द्वारा कार्य की अन्य शर्तों में से श्रेष्ठ जीवन-स्तर और अवकाश के पूर्ण उपभोग को सुनिश्चित करने का प्रयत्न करे। भविष्य निधि स्कीम के उपबंध का आशय कर्मचारियों में मितव्ययता की आदत को बढ़ावा देने और उन्हें या तो उनकी सेवा निवृत्ति के समय, या उससे पूर्व जो भी आवश्यक हो, भविष्य निधि रकम से, जो उनके खाते में जमा हो, जो नियोजितियों द्वारा अभिदाय तथा संबंधित कर्मचारियों के अभिदाय से बनाया जाता है, काफी रकम उपलब्ध कराना था। इसलिए अधिनियम का अर्थान्वयन इस प्रकार से किया जाना चाहिए जिससे कि उस उद्देश्य को बढ़ावा मिल सके जिसके लिए यह पारित किया गया था। ऐसे किसी अर्थान्वयन से जो अधिनियम के उपबंधों के अपवंचन को सुकर करेगा, जहां तक हो, बचना चाहिए। अधिनियम की धारा 1 (3) सुसंगत कालावधि के दौरान इस बात की घोषणा करती है कि उसकी धारा 16 के अधीन यह ऐसे प्रत्येक स्थापन को लागू होती है जो एक कारखाना हो जो उसकी अनुसूची 1 में विनिर्दिष्ट किसी उद्योग में लगा हुआ हो और जिसमें 50 या अधिक व्यक्ति नियोजित हों। अधिनियम की धारा 16 का तात्विक भाग जैसा कि यह सुसंगत समय में था उसके उपान्त टिप्पण के साथ निम्न प्रकार पठित है :—

"16. अधिनियम का सरकारी या स्थानीय प्राधिकरण से सम्बन्धित कारखानों तथा हाल ही में प्रारम्भ कारखानों को लागू न होना—

16(1) अधिनियम का कतिपय स्थापनों को लागू न होना—

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

16(1) यह अधिनियम —

(क) सरकार या स्थानीय प्राधिकरण से सम्वन्धित किसी कारखाने और

(ख) किसी अन्य कारखाने को, चाहे इस अधिनियम के प्रारम्भ के पूर्व या पश्चात् स्थापित हुआ हो तब तक लागू नहीं होगा जब तक कि उसके स्थापन से तीन वर्ष समाप्त नहीं हो जाते ।

**स्पष्टीकरण :** शंकाओं के निवारण के लिए एतद्द्वारा यह घोषणा की जाती है कि किसी कारखाने के स्थापन की तारीख केवल कारखाने के परिसर के बदल जाने के कारण बदली नहीं समझी जाएगी······ ।"

6. चूंकि अधिनियम एक फायदेप्रद कानून है ऐसे अधिनियम की धारा 16 ऐसा खंड है जो नियोजक को अभिदाय करने के दायित्व से छूट अनुदत्त करता है । धारा 16 का कठोर अर्थान्वयन किया जाना चाहिए । यदि तीन वर्षों की कालावधि कारखाने के स्थापन की तारीख स समाप्त हो चुकी है तो अधिनियम लागू होगा बशर्ते कि अन्य शर्तें पूरी हो गई हों । अधिनियम की धारा 16(1) (ख) के अधीन छूट प्राप्त करने के लिए मापदंड यह है कि तीन वर्षों की कालावधि प्रश्नगत कारखाने के स्थापन की तारीख से अभी समाप्त नहीं हुई हो । इसका उस तारीख से कोई निर्देश नहीं है जिसको नियोजक ने जो अभिदाय करने के दायित्वाधीन है कारखाने का हक अर्जित किया है । अधिनियम में यह भी नहीं कहा गया है कि कारखाने के कार्यकरण में किसी प्रकार की रुकावट छूट की नई कालावधि उद्भूत करेगी । कारखाने में जो एक बार स्थापित हो चुका है कार्य कारखाने की छुट्टियों, हड़तालों, तालाबंदियों, मशीनरी के अस्थायी रूप से ठप्प हो जाने, कालिक मरम्मत के कारण जो कारखाने की मशीनरी की करनी होती है उसके कारण कच्चे माल की अनुपलब्धता के कारण या वित्त की कमी आदि के कारण रुकावट आ सकती है । इसमें इस प्रकार के न्यायालय के आदेश के कारण व्यवधान पड़ सकता है जैसाकि इस मामले में हमारे सामने है । ऐसे कारखाने के चलाने में जो अधिनियम द्वारा शासित है ऊपर उल्लिखित कारणों में से किसी कारण द्वारा किए गए अवरोध का अर्थान्वियन इस प्रकार से नहीं किया जा सकता कि उसके परिणामस्वरूप अधिनियम द्वारा शासित कारखाना बंद हो गया है और उसके पुन: शुरु होने पर यह नहीं कहा जा सकता कि नया कारखाना स्थापित किया गया है या स्थापित हो गया है । इस कारखाने में विनिर्माण कार्य के पुनः शुरु करने पर यह अधिनियम द्वारा शासित होता रहेगा । **छगन लाल**

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

टैक्सटाइल मिल्स प्राइवेट लिमिटेड ब० पी० ए० भास्कर[1] जो बम्बई उच्च न्यायालय की फाइल में था के मामले में जो उपरोक्त प्रश्न पर दिए गए पूर्वतर विनिश्चयों में से एक है (जो रिपोर्ट नहीं किया गया) न्यायमूर्ति तंदोलकर ने निम्न प्रकार मत व्यक्त किया—

"इस उपबंध के बारे में देखने की महत्वपूर्ण बात यह है कि अधिनियम कारखानों को लागू किया गया है न कि उसके स्वामियों को या दूसरे शब्दों में यह इस बात के होते हुए भी कि समय-समय पर कौन से स्वामी रहे हैं कारखानों को लागू होता है।"

विद्वान् न्यायमूर्ति ने आगे यह कहा—

"प्रश्न यह है कि क्या समापन के आदेश और कोटक और कम्पनी को पट्टा अनुदत्त किए जाने तक कारबार के अस्थायी रूप से बंद होनें का परिणाम उस कारखाने का जो स्थापित किया गया था, बंद होना है। मेरी राय में इस प्रश्न का उत्तर नकारात्मक में होना चाहिए स्थापित कारखाने की कार्यवाहियों का स्थायी रूप से रुकने का यह परिणाम हो सकता है कि कारखाना कर्मचारी भविष्य निधि अधिनियम के प्रयोजनों के लिए स्थापित होना बंद हो गया है क्योंकि यदि यह स्थापित होना बंद हो गया है तो नियोजकों की उस श्रेणी को जो कर्मचारियों को उन्हें प्रदत्त सभी लाभों से वंचित करने में पटु है आसान हथकंडे मिल जाएंगे जिसके द्वारा स्थापित कारखाने की कार्रवाइयां कर्मचारी भविष्य निधि अधिनियम के अधीन लाभों से कर्मचारियों को वंचित करने के लिए कुछ महीने के लिए बंद करनी होंगी। मैं यह समझता हूं कि किसी कारखाने के स्थापन में यह बात अन्तर्वलित है कि कारखाना उत्पादन करने लगा है और इससे अधिक कोई बात नहीं......। किन्तु एक बार जब यह उत्पादन शुरु कर देता है तो किन्हीं भी कारणों से जिनके लिए समाप्ति होती है इसके क्रियाकलापों की अस्थायी समाप्ति मेरी राय में कारखाने को कर्मचारी भविष्य निधि अधिनियम के प्रयोजनों के लिए स्थापित करने की श्रेणी से बाहर नहीं ले जाएगी।"

अपने निर्णय की समाप्ति की ओर विद्वान् न्यायमूर्ति ने यह कहा—

"यहां तक कि कर्मचारियों के सम्पूर्ण निकाय में पूर्ण परिवर्तन भी किसी कारखाने को, जो स्थापित हो चुका है, स्थापित होने से बंद नहीं करेगा। किसी भी दशा में कर्मचारी भविष्य निधि अधिनियम कर्मचारियों के लाभ के लिए एक लाभप्रद विधान है और इसके

---

1 5 नवम्बर, 1956 को निपटाया गया प्रकीर्ण आवेदन सं० 289.

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

उपबंधों के प्रत्येक अर्थान्वियन को जो विधान के उद्देश्य को विफल करेगा और उसका अपवंचन करेगा नामंजूर किया जाना चाहिए जब तक कि अधिनियम की स्पष्ट भाषा न्यायालय के पास ऐसे निर्वचन को स्वीकार करने के अलावा और विकल्प न छोड़ती हो।"

7. हमें ऐसा प्रतीत होता है कि उपरोक्त कथन विधि को सही रूप से अधिकथित करता है। हमें पता चला है कि इस दृष्टिकोण का **मै० भारत बोर्ड मिल्स लि० व० क्षेत्रीय भविष्य निधि आयुक्त और अन्य**[1], **वेजीटेबल प्रोड्क्ट्स लि० ब० क्षेत्रीय भविष्य निधि आयुक्त, पश्चिमी बंगाल और अन्य**[2], **जमनादास अग्रवाल और एक अन्य व० क्षेत्रीय भविष्य निधि आयुक्त पश्चिमी बंगाल और अन्य**[3], **रवीन्द्र टैक्सटाइल मिल्स लि० व० सचिव, श्रम मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली और एक अन्य**[4] और **हिन्दुस्तान इलैक्ट्रिक कम्पनी लि० बनाम क्षेत्रीय भविष्य निधि आयुक्त पंजाब और एक अन्य**[5] (जिसकी **क्षेत्रीय भविष्य निधि आयुक्त पंजाब और एक अन्य व० लक्ष्मी रतन इंजीनियरिंग वर्क्स लि०**[6] के मामले में पुष्टि की गयी थी) का अनुसरण किया गया था। इसी प्रकार का दृष्टिकोण मद्रास उच्च न्यायालय द्वारा **मैसर्स आर० एल० साहनी एण्ड कम्पनी** बनाम **भारत संघ जिसका प्रतिनिधित्व क्षेत्रीय भविष्य निधि आयुक्त, मद्रास ने किया और एक अन्य**[7] मामले में भी अपनाया गया था जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया था कि इस बात की उपधारणा नहीं की जा सकती कि प्रत्येक बार जबकि कर्मचारियों की बदली होगी एक नया स्थापन अस्तित्व में आ जाएगा। **कुन्नत टैक्सटाइल** बनाम **क्षेत्रीय भविष्य निधि आयुक्त**[8] और **दि न्यू अहमदाबाद बंसीदर मिल्स प्राइवेट लि० अहमदाबाद** बनाम **भारत संघ और अन्य**[9] के मामले में भी यही दृष्टिकोण अपनाया गया था।

8. **लक्ष्मी रतन इंजीनियरिंग वर्क्स** बनाम **क्षेत्रीय भविष्य निधि आयुक्त पंजाब और अन्य**[10] के मामले में जो पंजाब उच्च न्यायालय के समक्ष

---

1 ए० आई० आर० 1957 कलकत्ता 702.
2 ए० आई० आर० 1959 कलकत्ता 783.
3 ए० आई० आर० 1963 कलकत्ता 513.
4 ए० आई० आर० 1958 पंजाब 55.
5 ए० आई० आर० 1959 पंजाब 27.
6 ए० आई० आर० 1962 पंजाब 507.
7 ए० आई० आर० 1966 मद्रास 416.
8 ए० आई० आर० 1959 केरल 3.
9 ए० आई० आर० 1968 गुजरात 71.
10 1966 1 लेबर लॉ जनरल 741.

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



अपील में पक्षकारों में से एक पक्षकार द्वारा फाइल किया गया था **क्षेत्रीय भविष्य निधि आयुक्त पंजाब और एक अन्य** बनाम **लक्ष्मी रतन इंजीनियरिंग** वर्क्स लि.[1] के मामले में उसमें दिए गए निर्णय के विरुद्ध था। इस न्यायालय ने उक्त निर्णय को पुष्ट करते समय यह अभिनिर्धारित किया था कि अधिनियम की धारा 16(1)(ख) में शब्द काफी स्पष्ट थे और उनमें संदेह की कोई गुंजाइश नहीं थी कि तीन वर्षों की कालावधि उस तारीख से गिनी जानी चाहिए जिसको कि कारखाना पहले स्थापित हुआ था और यह तथ्य कि स्वामित्व का परिवर्तन हुआ था उस कालावधि को गिनने में कोई प्रभेद नहीं करता।

9. यह ऐसा मामला नहीं है जहां कि पुराने कारखाने का स्क्रैप बन गया था और नया कारखाना उसकी जगह पर बनाया गया था। न ही यह कहा जा सकता कि पुराने कारखाने और उस कारखाने के बीच बिलकुल समाप्ति हो गयी थी जो कि अपीलार्थी के उसे खरीदने के पश्चात् फिर से शुरु किया गया था। उत्पादन अस्थायी रूप से बंद हुआ था···जैसा कि पहले कहा गया है कि परिसमापन के आदेश के द्वारा बंद हुआ था और कारखाना शासकीय समापक द्वारा अपीलार्थी को उसके बेचे जाने के पश्चात् फिर से शुरू हुआ था। इस मामले में विचारण न्यायालय द्वारा अभिकथित तथ्य का निष्कर्ष जिसे उच्च न्यायालय द्वारा पुष्ट कर दिया गया है स्पष्ट रूप से यह सिद्ध करता है कि यह वही कारखाना था जिसमें 12 नवम्बर, 1955 से फिर से उत्पादन शुरु हुआ था। महत्वपूर्ण बात यह है कि काफी कर्मकार और कर्मचारी जो पूर्व प्रबंध तंत्र के अधीन कार्यरत थे अपीलार्थी द्वारा नियोजित किए गए थे यद्यपि इस बात का दावा किया गया है कि उन्होंने नियोजन की नई संविदाएं की थीं। अतिरिक्त पूंजी का भी विनिधान मात्र या उसके पुनः शुरु करने से पूर्व विद्यमान मशीनरी की मरम्मत करने से या उत्पादन में विविधता लाने से या स्वामित्व में बदली करने से नया कारखाना स्थापित नहीं हो जाता जिससे कि तीन वर्षों की नई कालावधि के लिए अधिनियम की धारा 16(1)(ख) के अधीन छूट लागू होती हो।

10. अपीलार्थी की ओर से **भविष्य निधि निरीक्षक, त्रिवेन्द्रम** ब० **सचिव एन०एस०एस० कोआपरेटिव सोसाइटी, छगन छेरी**[2] के मामले में इस न्यायालय के विनिश्चय का अवलम्ब लिया गया। यह ऐसा मामला था जिसमें सहकारी समिति के सचिव ने जो एक प्रेस का मालिक था मजिस्ट्रेट द्वारा अधिनियम के उपबन्धों का अनुपालन न करने के आरोप से मुक्त कर दिया गया था। उच्च

[1] [1966] 1 लेबर ला० जर्नल 741.

[2] [1970] 2 एस० सी० आर० 481.

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



न्यायालय ने दोषमुक्ति के आदेश को पुष्ट कर दिया था। अपील पर इस न्यायालय का यह मत था कि दोषमुक्ति के आदेश में हस्तक्षेप करने का कोई आधार नहीं था। उस मामले में अभियुक्त का परिवाद यह था कि सहकारी समिति जिसका कि वह सचिव था ने मार्च, 1961 में प्रश्नगत प्रैस अर्जित की थी और बाद में एक नई प्रैस स्थापित कर ली थी और इसलिए अधिनियम उस प्रैस को लागू नहीं होता चूंकि 3 वर्षों की कालावधि जो अधिनियम की धारा 16 (1) (ख) द्वारा विहित है समाप्त नहीं हुई थी। उस मामले में साक्ष्य यह दर्शाता है कि खरीदने के पश्चात् एक-एक नया स्वामी पुराने स्वामी के स्थान पर आ गया था। प्रैस का कार्य उसकी बिक्री की तारीख को बन्द हो गया था और तीन माह के अन्तराल के पश्चात् यह फिर शुरु हुआ था। प्रैस में मशीनरी भी बदली गई थी और इससे पूर्व नियोजित व्यक्ति सेवा में नहीं थे। जबकि कर्मकारों की नए सिरे से भर्ती की गई थी। उन कर्मकारों में से केवल 6 पूर्व कर्मकार थे और पहले स्वामी द्वारा बिक्री के समय कर्मकारों को प्रतिकर का संदाय कर दिया गया था। इन तथ्यों पर यह अभिनिर्धारित किया गया था कि एक नया स्थापन अस्तित्व में आ गया था। हमारे समक्ष मामले में यह देखा गया है कि लगभग 70 प्रतिशत पहले कर्मकार अपीलार्थी द्वारा नियोजित किए गए थे और मशीनरी में कोई परिवर्तन नहीं किया गया था। फिर यह एक ऐसा मामला है जहां कि कार्य का अवरोध परिसमापन कार्यवाहियों के कारण हुआ था। यहां पर यह कहना सुसंगत होगा कि न्यायालय ने उपरोक्त मामले में अपने निर्णय के क्रम में मै० भारत बोर्ड मिल्स लि० के मामले में कलकत्ता उच्च न्यायालय के विनिश्चयों को बदला नहीं था। किन्तु उसे केवल प्रभेदित किया था। उस मामले के तथ्य लगभग हमारे समक्ष मामले के तथ्यों के समान हैं। यह बात सत्य है कि इस न्यायालय ने उपरोक्त विनिश्चय में **विठल दास जगन्नाथ दास और एक अन्य** बनाम **क्षेत्रीय भविष्य निधि आयुक्त मद्रास और एक अन्य**[1] के मामले में मद्रास उच्च न्यायालय के विनिश्चय को अनुमोदित किया था। किन्तु इससे कोई अन्तर नहीं पड़ता जहां तक कि हमारे समक्ष मामले का सम्बन्ध है चूंकि मद्रास के मामले में यह निष्कर्ष था कि वास्तव में पुराना स्थापन समाप्त हो गया था और एक नया स्थापन अस्तित्व में आ चुका था। हमारे समक्ष मामले में विचारण न्यायालय के तथ्यों का निष्कर्ष इसके प्रतिकूल है। विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने यह अभिनिर्धारित किया इस मामले में आशय पुराने कारखाने की सतता को बनाए रखना था इसलिए वह

---

1 ए० आई० आर० 1965 मद्रास 508.

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



विनिश्चय जिसका अवलम्ब लिया गया है तथ्यों पर प्रभेदनीय होने के कारण अपीलार्थी के किसी काम का नहीं है।

11. इन परिस्थितियों में हम यह नहीं समझते कि अपीलाधीन निर्णय में कोई कमी है इसलिए अपील असफल होती है और एतद्द्वारा खर्चों सहित खारिज की जाती है।

अपील खारिज की गई।

सरोह०

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

# बामर लारी कर्मकार संघ, मुम्बई और अन्य

वनाम

# बामर लारी एण्ड कम्पनी लिमिटेड और अन्य

(21 दिसम्बर, 1984)

(न्यायाधिपति डी० ए० देसाई और वी० खालिद)

**महाराष्ट्र रिकगनीशन ऑफ ट्रेड यूनियंज एण्ड प्रीवेन्शन ऑफ अनफेयर ट्रेड प्रेक्टिसिस ऐक्ट, 1971—धारा 20 (2) (ख) [सपठित संविधान 1950, अनुच्छेद 19 (1) (क) और 19 (1) (ग)] औद्योगिक विवाद में कर्मकारों के प्रतिनिधित्व का स्वतन्त्रता के मूल अधिकारों पर प्रभाव—1971 के अधिनयम की उक्त धारा द्वारा कर्मकारों के मान्यता प्राप्त संघ को कर्मकारों की ओर से औद्योगिक विवाद सम्बन्धी कार्यवाही में हाजिर होने या प्रतिनिधित्व करने का अनन्य अधिकार दिया जाना—ऐसा अनन्य अधिकार संविधान के अनुच्छेद 19 (1) (क) और 19 (1) (ग) के अधीन उन कर्मकारों की मूल स्वतन्त्रताओं का अतिक्रमण नहीं करता जो मान्यता प्राप्त संघ के सदस्य नहीं हैं।**

**महाराष्ट्र रिकगनीशन ऑफ ट्रेड यूनियंज एण्ड प्रीवेंशन ऑफ अनफेयर ट्रेड प्रेक्टिसिस ऐक्ट, 1971 – धारा 20 (2) (ख) (सपठित संविधान, 1950, अनुच्छेद 14) कर्मकारों का प्रतिनिधित्व और समता का मूल अधिकार—1971 के अधिनियम की उक्त धारा द्वारा कर्मकारों के मान्यता प्राप्त संघ को नियोजक से समझौता करने का अनन्य अधिकार दिया जाना और ऐसे समझौते का सभी कर्मकारों पर, जो संघ के सदस्य हैं और जो संघ के सदस्य नहीं हैं, आबद्धकर होना – ऐसे समझौते के अधीन की गई कटौती संविधान के अनुच्छेद 14 का अतिक्रमण नहीं करती, अतः यह कटौती न तो अनुचित है और न अयुक्तियुक्त और न अवैध है।**

बामर लारी कं० लि० नामक एक औद्योगिक उपक्रम में कर्मकारों के दो व्यापार संघ थे। एक मान्यता प्राप्त संघ और दूसरा मान्यता रहित संघ। मान्यता प्राप्त संघ ने उक्त उपक्रम के नियोजकों के साथ 18 जून, 1984 को एक समझौता किया था जिसके खंड 17 के अनुसार नियोजक को उपक्रम के सभी कर्मचारियों को बकाया के रूप में प्राप्त होने वाली रकम में से 15 प्रतिशत रकम की कटौती करके मान्यता प्राप्त संघ की निधि में संदाय करनी थी।

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



मान्यता रहित संघ ने इसे अनुचित और अनिवार्य कटौती बताया और दोनों संघों के बीच इसी कारण विवाद उठ खड़ा हुआ। कर्मकारों के मान्यता रहित संघ ने महाराष्ट्र रिकगनीशन ऑफ ट्रेड यूनियंज एण्ड प्रीवेन्शन ऑफ अनफेयर लेबर प्रक्टिसिज ऐक्ट, 1971 की धारा 20 (2) (ख) को चुनौती देते हुए, जिसके परिणामस्वरूप प्रत्यर्थी मान्यता प्राप्त संघ ने उक्त समझौता किया था, मुम्बई उच्च न्यायालय में रिट पिटीशन फाइल किया था। किन्तु इसे खारिज कर दिया गया। इसी के विरुद्ध विशेष इजाज़त से यह अपील उच्चतम न्यायालय में फाइल की गई है।

अपीलार्थी की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउन्सेल ने, यह दलील दी है कि यदि धारा 20 (2) का इस प्रकार निर्वचन किया जाता है जिससे यह अभिप्रेत हो कि नियोजक या मान्यता प्राप्त संघ, मान्यता रहित संघ और मान्यता प्राप्त संघ के सदस्यों के बीच भेद-भाव कर सकते हैं, यद्यपि ये सब एक ही नियोजक के कर्मकार हैं, तो ऐसा निर्वचन अनुच्छेद 14 का अतिक्रमणकारी है और यदि यह मान्यता प्राप्त संघ में शामिल होने के लिए कर्मकारों को बाध्य करती है तो यह धारा संविधान के अनुच्छेद 19(1) (क) और (ग) की अतिक्रमणकारी है।

उन्होंने यह दलील दी कि धारा 20(2) निर्विवाद रूप से उन कर्मकारों को जो मान्यता प्राप्त संघ के सदस्य नहीं हैं संविधान के अनुच्छेद 19(1) (क) और (ग) के अधीन गारंटीकृत मूल स्वतन्त्रता से वंचित करती है। यह कहा गया कि अधिनियम के उपबन्धों में कर्मकारों को उस संघ में शामिल होने के लिए मजबूर करने की एक बुरी प्रवृत्ति अन्तरनिहित है जिस संघ ने मान्यता प्राप्त संघ की हैसियत अर्जित कर ली है, भले ही यह संघ उन सदस्यों के सामाजिक और राजनैतिक दर्शन के प्रतिकूल दर्शन का अनुसरण करता है और यह कि ऐसी बाध्यता संगम बनाने की स्वतन्त्रता से वंचित करती है। यह भी निवेदन किया गया था कि संगम बनाने का अधिकार एक खोखली औपचारिकता होगी, यदि इस प्रकार बनाए गए संगम किसी औद्योगिक उपक्रम के उन कर्मकारों से सम्बन्धित किसी कार्यवाही में प्रभावी रूप से भाग लेने की स्थिति में नहीं हैं जिन्होंने कुछ पृथक व्यापार संघ बना लिए हैं। यह कहा गया कि या तो कर्मकारों के सभी संघों को एक समान माना जाए या कम से कम मान्यता प्राप्त संघ की इच्छा के अधिरोपण के विरुद्ध मान्यता रहित संघ के सदस्यों के अधिकारों की सुरक्षा के लिए उन्हें मान्यता प्राप्त संघ की कार्यवाही से आबद्ध न रहने के लिए स्वतन्त्र रहने दिया जाना चाहिए। यह कहा गया था कि 1971 के अधिनियम की धारा 20 (2) इन सभी सुरक्षा उपायों से वंचित करती है और इसलिए इसे असांविधानिक घोषित किया जाना चाहिए।"

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अपीलार्थी द्वारा एक यह गम्भीर शिकायत की गई थी कि समझौते के आक्षेपित खंड 17 द्वारा वे कर्मकार भी, जो संघ के सदस्य नहीं हैं, उस प्रतिनिधि संघ के लाभ के लिए अनिवार्य आहरण (कटौती) के अधीन हो जाते हैं जिसके राजनैतिक दर्शन से वे कर्मकार, जो सदस्य नहीं हैं, सहमत नहीं हैं और इस प्रकार से उन्हें एक प्रतिद्वंद्वी राजनैतिक दर्शन को अग्रसर करने के लिए संदाय करने के लिए बाध्य किया जाता है। यह और दलील दी गई कि ऐसे राजनैतिक दर्शन की अभिवृद्धि के लिए यह संदाय एक प्रकार का कर है, जिस दर्शन को अपीलार्थी संघ के सदस्य सामान्य कर्मकारों के लिए हानिकर और अहितकर समझते हैं। दलील यह भी है कि जहां वे सदस्य जो संघ बनाते हैं, सदस्यता फीस संदाय करते हैं तथा संघ के सदस्य होने के नाते सुविधाएं और लाभ प्राप्त करते हैं, किन्तु वे व्यक्ति जो संघ के सदस्य नहीं हैं, बिना अपनी सहमति के अपने अर्जित धन में से कुछ देने के लिए इस प्रकार बाध्य किए जाते हैं, मानो कि वे एक ऐसा कर संदाय कर रहे हैं जो अनिवार्य है। यदि इसे धारा 20 (2) (ख) के अधीन अनुज्ञेय अभिनिर्धारित कर दिया जाता है तो या तो यह धारा संवैधानिक रूप से अविधिमान्य होगी या समझौते का वह भाग पृथक करने योग्य होने के कारण, उन व्यक्तियों के संदर्भ में जो सदस्य नहीं हैं, अविधिमान्य और अवैध होगी।

मुख्य प्रश्न यह कि क्या 1971 के अधिनियम की धारा 20 (2) जो किसी उपक्रम के कर्मकारों का प्रतिनिधित्व करने का अनन्य अधिकार ऐसे संघ को प्रदान करती है जिसने 1971 के अधिनियम के अधीन एक मान्यता प्राप्त संघ की हैसियत प्राप्त कर ली है, और साथ ही साथ जो औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 के अधीन किसी कार्यवाही में किसी कर्मकार को हाजिर होने या कार्य करने या प्रतिनिधित्व करने के अधिकार से वंचित करती है, संविधान के अनुच्छेद 19 (1) (ग) द्वारा संगम गठित करने की गारन्टीकृत मूल स्वतन्त्रता का अतिक्रमण करती है? संक्षेप में प्रश्न यह है: यदि नियोजक और कर्मकारों के बीच औद्योगिक सम्बन्धों को विनियमित करने से सम्बन्धित कोई विधि सौदेबाजी करने वाले किसी एकमात्र अभिकर्त्ता जैसे कि मान्यता प्राप्त संघ, के लिए उपबंध करती है और साथ ही यह विधि 1947 के औद्योगिक विवाद अधिनियम के अधीन किसी कार्यवाही में किसी एक कर्मकार को हाजिर होने या प्रतिनिधित्व करवाए जाने के अधिकार से वंचित करती है तो क्या ऐसी विधि अनुच्छेद 19 (1) (क) और 19 (1) (ग) द्वारा गारन्टीकृत मूल स्वतन्त्रताओं का उल्लंघन करेगी? अपील खारिज करते हुए,

**अभिनिर्धारित**—औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 2(क)

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



के अत:स्थापन से पूर्व न्यायालयों का झुकाव इस मत के पक्ष में था कि व्यक्तिगत विवाद को औद्योगिक विवाद 1947 में यथा परिभाषित "औद्योगिक विवाद" अभिव्यक्ति की परिभाषा में शामिल नहीं समझा जा सकता। जो विवाद सभी कर्मकारों या कर्मकारों के एक बड़े समूह के सामान्य फायदों के लिए संघ द्वारा समर्थित नहीं किया जाता है, ऐसा कोई भी विवाद 'औद्योगिक विवाद' अभिव्यक्ति में शामिल नहीं समझा जायेगा—ऐसा न्यायालयों का यह मत था। प्राय: इस विधिक प्रतिपादना से बहुत रोषजनक स्थिति उत्पन्न हुई है। कोई एक कर्मकार, यदि उसे नियोजक द्वारा दंडित किया गया है और यदि वह मान्यता प्राप्त संघ का सदस्य नहीं था तो मान्यता प्राप्त संघ ऐसे इक्के-दुक्के कर्मकार के हेतुक का समर्थन करने में सहमत नहीं होता था और ऐसा अकेला कर्मकार इस प्रकार से बिना किसी उपचार के रह जाता था। ऐसे भी मामले प्रकाश में आये हैं जहां कि मान्यता प्राप्त संघ ने कुटिल तरीकों से ऐसे कर्मकारों को, इससे पूर्व कि उनके हितों का समर्थन किया जाए, अपना सदस्य बनाने के लिए बाध्य किया। इस प्रकार का व्यापार संघीय अत्याचार विधान मण्डल के ध्यान में आया और औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 में धारा 2 (क) अंत:स्थापित की गई जिसके द्वारा यह बिल्कुल स्पष्ट कर दिया गया कि किसी एक कर्मकार की सेवा से पदच्युति, उन्मोचन, छटनी या सेवा की समाप्ति इस बात के बावजूद भी एक औद्योगिक विवाद कहलायेगी कि कोई और कर्मकार या कर्मकारों का कोई संघ इस विवाद का पक्षकार नहीं है। महाराष्ट्र रिकगनीशन आफ ट्रेड यूनियन एण्ड प्रीवेन्शन आफ अनफेयर ट्रेड प्रेक्टिसिस ऐक्ट, 1971 की धारा 20 की उपधारा (2) ने, मान्यता प्राप्त संघ को औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 के अधीन किसी कार्यवाही में कर्मकारों का प्रतिनिधित्व करने का अनन्य अधिकार प्रदान करते हुए और साथ ही किसी एक कर्मकार द्वारा अपना प्रतिनिधित्व करने के अधिकार से उसे वंचित करते हुए, उस अपवाद को बनाये रखने का प्रयत्न किया है जो 1947 के अधिनियम की धारा 2 (क) में अधिनियमित किया गया है। यहां विधिक स्थिति धारा 20 (2) (ख) में दोहराई गई है। अत: धारा 20 (2) (ख) का निर्वचन करते समय इस बात को ध्यान में रखना चाहिए कि कोई अकेला कर्मकार जिसका उसकी अपनी पदच्युति, उन्मोचन, छंटनी या सेवा की समाप्ति से उद्भूत होने वाला कोई व्यक्तिगत विवाद उसके नियोजक के साथ है तो उसे कोई नुकसान नहीं होने दिया जायेगा—यदि कोई मान्यता प्राप्त संघ उसके मामले का समर्थन नहीं करता है और वह स्वयं ही औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 के अधीन अपना उपचार प्राप्त करने के लिए कार्यवाही करने में समर्थ होगा। (पैरा 15)

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कतिपय पूर्वापेक्षाओं को पूरा करने वाले संघ को मान्यता प्राप्त संघ की हैसियत प्रदान करना, जिनको दूसरा संघ पूरा करने की स्थिति में नहीं है, संगम बनाने के अधिकार से वंचित नहीं करता। वस्तुतः अपीलार्थी संघ को व्यापार संघ अधिनियम के अधीन रजिस्ट्रीकृत किया गया है और सदस्यों ने किसी की ओर से भी किसी प्रकार की बाधा अथवा रुकावट के बिना अपना संगम बना लिया है। इतना ही नहीं जब अपीलार्थी संघ नियोजक से बातचीत कर सकता है तो यह कहना सही नहीं है कि मान्यता प्राप्त संघ में शामिल होने के बारे में कर्मकारों की अनिच्छा संगम बनाने की मूल स्वतन्त्रता का अतिक्रमण करती है। यह कहना भी सही नहीं है कि नियोजक द्वारा मान्यता, संगम बनाने की मूल स्वतन्त्रता में विवक्षित है। संगम बनाना, इसकी मान्यता से बिलकुल ही एक स्वतन्त्र और भिन्न बात है। किसी संघ को मान्यता देना, उसे अधिकार, कर्त्तव्य और बाध्यताएं प्रदान करना है। मान्यता प्राप्त संघ से भिन्न किसी दूसरे संघ को ऐसे अधिकार, कर्त्तव्य और बाध्यताएं प्रदान न करना, इस संघ को न तो निम्नत्तर कोटि में लाना है और न इसके प्रति भेदभाव के आरोप को ग्रहण किया जा सकता है। मान्यता रहित संघ के सदस्य वाणी और अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता तथा संगम बनाने की मूल स्वतन्त्रता का भी पूरी तरह से लाभ उठा सकते हैं। वस्तुतः विधान मण्डल ने ऐसे व्यापार संघों में विद्यमान स्थिति पर ध्यान दिया है जहां किसी उपक्रम या उद्योग में, मान्यता प्राप्त संघ से भिन्न ऐसे संघ भी हैं जो उपक्रम या उद्योग में कर्मकारों का प्रतिनिधित्व करने का दावा करते हैं। 1971 के अधिनियम की धारा 22 मान्यता रहित ऐसे संघों को विनिर्दिष्ट अधिकार प्रदान करती है—इनमें से एक अधिकार एक अकेले कर्मकार की शिकायत के बारे में नियोजक से भेंट करने और विचार-विमर्श करने का अधिकार है। विधान मण्डल ने कर्मकार की व्यक्तिगत शिकायत के तथा सभी या अनेक कर्मकारों को प्रभावित करने वाले विवाद के बीच स्पष्ट भेद किया है। मान्यता रहित संघ की दशा में भी, ऐसे संघ को नियोजक के साथ अकेले एक कर्मकार की शिकायत के बारे में भेंट करने और विचार विमर्श करने के कानूनी अधिकार का लाभ है। ऐसे मान्यता रहित संघ को ऐसी आंतरिक या विभागीय जांच में हाजिर होने और भाग लेने का कानूनी अधिकार है जिसमें ऐसे संघ के सदस्य अंतर्वलित हों। मान्यता रहित संघ की यह कानूनी मान्यता है। इसका अपवर्जन आंशिक है तथा ऐसे मान्यता रहित संघ द्वारा या एक अकेले कर्मकार द्वारा कर्मकारों का प्रतिनिधित्व करने के अधिकार पर लगाई गई रोक उद्योग के, जनता के और राष्ट्र के व्यापक हित में है। ऐसे उपबन्ध को संविधान के अनुच्छेद 19 (1) (क) अथवा 19 (1) (ग) के

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



अधीन गारन्टीकृत मूल स्वतन्त्रता का अतिक्रमणकारी नहीं कहा जा सकता। (पैरा 16 और 17)

जहां एक प्रतिनिधि संघ 1971 के अधिनियम की धारा 20 (2) द्वारा प्रदत्त शक्तियों के प्रयोग में कार्य करता है तो वह इस प्रकार की बाध्यता के अधीन हो जाता है कि वह अपने सदस्यों तथा उपक्रम के उन अन्य कर्मकारों के बीच विभेद न करे जो इस संघ के सदस्य नहीं हैं। तथापि, जब औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 के अधीन किसी कार्यवाही में एक समझौता हो जाता है जिसमें प्रतिनिधि संघ हाजिर हुआ है तो ऐसा समझौता उपक्रम के सभी कर्मकारों पर आबद्धकर होता है। इसका अर्थ यह कि न तो प्रतिनिधि संघ ही और न नियोजक ही प्रतिनिधि संघ के सदस्यों तथा उन अन्य कर्मकारों के बीच भेदभाव कर सकता है जो संघ के सदस्य नहीं हैं। किन्तु फायदे, लाभ, अलाभ या ऐसे दायित्व जो औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की किसी ऐसी कार्यवाही में किए गए समझौते से उद्भूत होते हैं, जिस कार्यवाही में प्रतिनिधि संघ एक पक्षकार है, उपक्रम के प्रत्येक कर्मकार पर समान रूप से लागू होंगे। जहां तक लाभों का, और बाध्यताओं तथा दायित्वों का भी सम्बन्ध है सदस्यों तथा उन कर्मकारों के बीच, जो सदस्य नहीं हैं, मामूली सा भेदभाव भी नहीं होगा। धारा 20 (2) (ख) का इससे भिन्न निर्वचन इस धारा को अनुच्छेद 14 का अतिक्रमणकारी होने के कारण असंवैधानिक और अविधिमान्य बना देगा। सदस्यों तथा उन कर्मकारों, जो सदस्य नहीं हैं, के साथ समान व्यवहार इस धारा में विवक्षित है और इसके निर्वचन के द्वारा हम इसे केवल स्पष्ट ही कर रहे हैं। (पैरा 25)

जब हड़ताल समाप्त होने के परिणामस्वरूप कोई समझौता हो जाता है या जहां बिना हड़ताल के भी कोई समझौता हो जाता है तो समझौते के अधीन निश्चित किए गए लाभ भूतलक्षी रूप से प्रभावी बनाये जाते हैं और समझौते के अधीन जब बकाया रकम का संदाय किया जाता है तो स्वाभाविकत: वित्तीय प्रतिबन्धों से स्वतन्त्र होकर अपने क्रियाकलाप दृढ़ता से चलाने के लिए संघ उन कर्मकारों से कुछ प्रतिपूर्ति की आशा करेगा जिनके फायदे के लिए विवाद उठाया गया था और समझौता करने पर जिसके परिणामस्वरूप कर्मकारों को वित्तीय लाभ प्राप्त होते हैं। चूंकि वे कर्मकार जो सदस्य हैं तथा जो सदस्य नहीं हैं, दोनों ही समान रूप से समझौते के अधीन समान व्यवहार के लिए हकदार हैं तो दोनों को समझौते की शर्त के रूप में अपने फायदों का एक भाग संघ के क्रियाकलापों के लिए छोड़ देने के लिए कहा जा सकता है। ऐसी कटौतियों को न तो अनिवार्य कटौती कहा जा सकता है और न अनिवार्य कर। अतः संघ को संदाय करने के लिए पक्षकारों के बीच उस दर पर,

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

जिसके बारे में सहमति हो गयी है, कटौती का ऐसा उपबन्ध—चूंकि इस बारे में सहमति हो गयी है और जो सम्पूर्ण समझौते का एक भाग है, न तो अनुचित होगा और न अननुज्ञेय और न अवैध। (पैरा 27)

इधर-उधर की-तड़क-भड़क को छोड़कर, ऐसे उपबन्ध से यह दर्शित होगा कि फायदों और दायित्वों को समान रूप से बांटा जाना चाहिए। यदि एक प्रतिनिधि संघ के साथ किसी समझौते में कर्मकारों के लिए कुछ लाभ प्रोद्भूत होते हैं और धारा 20 (2) (ख) के सही निर्वचन पर, जो सर्वांगीण मानी गई है और इस प्रकार से कर्मकारों और नियोजक दोनों पर समान रूप से बाध्यकर मानी गई है, सभी फायदे उन कर्मकारों को भी उपलब्ध होंगे जो प्रतिनिधि संघ के सदस्य नहीं हैं और जिन्होंने एक प्रतिद्वन्द्वी संघ बना लिया है। यदि इन कर्मकारों को फायदों से वंचित नहीं किया जा सकता है तो ये कर्मकार उस दशा में अनुचित लाभ उठाएंगे, यदि समझौते के अन्तर्गत किए गए समग्र सौदे से वे लाभ तो प्राप्त करते हैं और दायित्वों को त्याग देते हैं। अन्तर्संघीय विवादों को तय करने की दिशा में यह कोई उचित और न्यायसंगत बात नहीं है। अतः समझौते के खण्ड 17 जैसे खण्ड को व्यापार संघ आन्दोलन को सुदृढ़ करने तथा व्यापार संघ को वित्तीय निबंधनों से स्वतन्त्र करने के सन्दर्भ में समझना होगा। वे कर्मकार जो संघ के सदस्य हैं, सदस्यता फीस का संदाय कर सकते हैं तथा सदस्यता के फायदों का लाभ उठा सकते हैं किन्तु प्रतिनिधि संघ की कार्यवाही से सभी कर्मकार लाभ या धन सम्बन्धी फायदे अर्जित करते हैं तो व्यापार संघ आन्दोलन के व्यापक हित में उन सभी कर्मकारों को जो सदस्य हैं तथा जो सदस्य नहीं हैं एक समान रूप से सामान्य बलिदान करने के लिए वाध्य किया जा सकता है और उस व्यापार संघ को सुदृढ़ बनाने के लिए बाध्य किया जा सकता है जिस संघ ने अपने कार्यों के द्वारा सभी कर्मकारों के लिए फायदे अर्जित किए हैं। ऐसी परिस्थितियों में व्यापार संघ की निधि में किए गए संदाय को अर्जित किए लाभों के संदर्भ में तत्प्रतित के नाम से उल्लिखित किया जा सकता है। अतः समझौते के खण्ड 17 में ऐसी कोई आपत्तिजनक बात नज़र नहीं आती जो खण्ड नियोजक को समझौते के अधीन प्रत्येक कर्मचारी को संदेय सकल बकाया राशि में से 15 प्रतिशत व्यापार संघ निधि के लिए अभिदाय के रूप में कटौती करने का निदेश देता है। इसी प्रकार से कर्मकार-प्रतिद्वन्द्वी संघ के राजनैतिक दर्शन में योगदान नहीं कर रहा है अपितु वह केवल प्राप्त किए गए फायदों की कीमत का संदाय कर रहा है। इससे प्रतिकूल दृष्टिकोण संघ के सदस्यों को हानि पहुंचाने और उन कर्मकारों को लाभ पहुंचाने में सहायक होगा, जो सदस्य नहीं हैं और यह ऐसी स्थिति है जिस से हर कीमत पर बचना

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



चाहिए । अत: समझौते का खण्ड 17 उन सदस्यों की सम्मति के अभाव में भी अविधिमान्य नहीं होगा जो अपीलार्थी संघ के सदस्य हैं। प्रतिनिधि संघ द्वारा चूंकि समझौता किया गया है इसलिए सभी कर्मकारों का प्रतिनिधित्व करने के इसके अधिकार में प्रतिद्वन्द्वी संघ के सदस्यों की सम्मति भी विवक्षित होगी। सभी कर्मकारों का प्रतिनिधित्व करने के लिए प्रतिनिधि संघ के अधिकार का यही विधिक परिणाम है और इसकी कार्यवाही का यह बाध्यकारी प्रभाव है। (पैरा 28)

**अवलम्बित निर्णय**

| | | पैरा |
|---|---|---|
| [1978] | [1978] 2 एस० सी० आर० 387 : **संतुराम खुदाई बनाम कीमत राय प्रिंटर्स एण्ड प्रोसेसर्स प्राइवेट लि० और अन्य.** | 22 |

**प्रभेदित निर्णय**

| | | |
|---|---|---|
| [1962] | [1962] 2 सप्ली० एस० सी० आर० 890 : **गिरजाशंकर काशीराम बनाम गुजरात स्पिनिंग एण्ड वीविंग मिल्स लि०;** | 21 |
| [1961] | [1961] 3 एस० सी० आर० 196 : **राम प्रसाद विश्वकर्मा बनाम दि चेयरमैन इण्डस्ट्रियल ट्रिब्यूनल;** | |
| [1954] | [1954] एस० सी० आर० 384 : **राजा कुलकर्णी और अन्य बनाम मुम्बई राज्य.** | 19 |

**सिविल अपीली अधिकारिता : 1984 की सिविल अपील सं० 3527.**

1984 की अपील सं० 660 में मुम्बई उच्च न्यायालय के 27 जुलाई, 1984 के निर्णय और आदेश/डिक्री के विरुद्ध की गई अपील।

| | |
|---|---|
| **अपीलार्थियों की ओर से** | सर्वश्री दानियाल लतीफी, बी० एस० देसाई, आर० एस० सोढी, के० वी० श्रीकुमार, एम० एल० श्रॉफ और श्रीमती राधा डी० डिसूजा |
| **प्रत्यर्थियों की ओर से** | श्री के० के० राममूर्ति, श्रीमती उर्मिला सिरूर, सर्वश्री एफ० डी० दामनिया, ए० एम० दित्तिया और डी० एन० मिश्र |
| **महाराष्ट्र राज्य की ओर से** | श्री एम० एन० श्रॉफ |

न्यायालय का निर्णय न्यायाधिपति डी० ए० देसाई ने दिया।

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

न्यायाधिपति देसाई—

प्रथम प्रत्यर्थी कम्पनी अर्थात् मैसर्स बामर लारी एण्ड कम्पनी लि० (जिसे संक्षेप में 'नियोजक' कहा गया है) में नियोजित कर्मकारों के दो संघों में परस्पर झगड़ा है और उनकी पारस्परिक प्रतिद्वन्द्विता ने उन्हें इस न्यायालय में लाकर खड़ा कर दिया है। अपीलार्थी, बामर लारी कर्मकार संघ (जिसे संक्षेप में 'मान्यता रहित संघ' कहा गया है) ने मुम्बई उच्च न्यायालय में 1984 का रिट पिटीशन सं० 1518 महाराष्ट्र रिकगनीशन आफ ट्रेड यूनियन्स एण्ड प्रीवेन्शन आफ अनफेयर लेबर प्रैक्टिसिस ऐक्ट, 1971 (महाराष्ट्र व्यापार संघों को मान्यता तथा अनुचित श्रम आचरण निवारण अधिनियम—जिसे इसमें इसके पश्चात् संक्षेप में '1971 का अधिनियम' कहा गया है) की अनुसूची I सपठित धारा 20(2) की सांविधानिक विधिमान्यता को चुनौती देते हुए मुम्बई उच्च न्यायालय में (1984 का रिट पिटीशन सं० 1518) फाइल किया। इस पिटीशन में उन्होंने नियोजक कम्पनी तथा बामर लारी कर्मचारी संघ (जिसे संक्षेप में "मान्यता प्राप्त संघ" कहा गया है) को भी पक्षकार बनाया है।

2. इस रिट पिटीशन के कुछ तथ्यों का यहां उल्लेख किया जा सकता है। नियोजक तथा 'मान्यता प्राप्त संघ' के बीच, उन दोनों के बीच लंबित कुछ औद्योगिक विवादों को हल करने के लिए, एक समझौता किया गया था। इस समझौते का खण्ड 17 इस प्रकार है—

*"समझौते पर हस्ताक्षर किये जाने की तारीख से दो मास के भीतर बकाया रकम का संदाय किया जायेगा। इसके अतिरिक्त, कम्पनी प्रत्येक कर्मकार से इस समझौते के अधीन प्रत्येक कर्मचारी को संदेय निबल बकाया रकम के 15 प्रतिशत के बराबर रकम संघ निधि के अभिदाय के रूप में एकत्रित करेगी और यह रकम आदाता लेखा चैक द्वारा बकाया रकम के संदाय किये जाने के 3 दिन के भीतर संघ को संदत्त कर दी जायेगी।"

*अंग्रेजी में इस प्रकार है—

"17. Arrears will be paid within two months from the date of signing of the Settlement. Further, the company shall collect from each workman an amount equivalent to 15%of the gross arrears payable to each employee under this settlement as contribution to the Union Fund and this amount shall be paid to the Union within 3 days of the payment of arrears by Payee's A/c cheque."

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



अपीलार्थी, मान्यता रहित संघ ने यह आशंका करते हुए कि यदि और जब कभी नियोजक और मान्यता प्राप्त संघ के बीच कोई समझौता हो जायेगा तो मान्यता प्राप्त संघ के फायदे के लिए, समझौते के अधीन कर्मकारों को संदेय रकम में से कटौती का उक्त खण्ड लागू हो जायेगा। अतः मान्यता रहित संघ नियोजक को यह सूचित किया कि वह समझौते के परिणामस्वरूप मान्यता रहित संघ के सदस्यों को संदेय बकाया रकम में से, जब कभी भी समझौता लागू किया जाता है, कोई कटौती न करे। पक्षकारों के बीच कुछ पत्र व्यवहार हुआ जिसके परिणामस्वरूप 1984 का रिट पिटीशन सं० 473 फाइल किया गया। यह रिट पिटीशन समझौते के अधीन, जब कभी भी वह लागू किया जाता है, संदत्त रकम से किसी भी प्रकार की कटौती के समझौते को रोकने के लिए फाइल किया गया था। उच्च न्यायालय के समक्ष यह वचन दिया गया था कि नियोजक समझौते के बारे में नोटिस देगा, यदि ऐसा समझौता अंतिम रूप से किया जाता है तो वह इस समझौते को एक सप्ताह के पश्चात् ही कार्यान्वित करेगा। इसी वचन के आधार पर रिट पिटीशन वापस ले लिया गया था। तत्पश्चात् समझौता कर लिया गया था। जिसमें अन्य बातों के साथ-साथ, पहले उद्धृत खण्ड 17 शामिल था। मान्यता रहित संघ ने अन्य बातों के साथ-साथ यह दलील देते हुए एक नया रिट पिटीशन फाइल किया कि खण्ड 17 ने नियोजक द्वारा कर्मकारों को संदेय बकाया रकम में से मजदूरी संदाय अधिनियम, 1936 द्वारा अननुज्ञात अनिवार्य कटौती, उन कर्मकारों की सम्मति के बिना, अनुज्ञात कर दिया है, जो कर्मकार मान्यता प्राप्त संघ के सदस्य नहीं हैं। पिटीशन में यह भी कथन किया गया था कि यदि 1971 के अधिनियम की धारा 20(2)(ख) सही अर्थान्वयन करने पर संबंधित कर्मकारों की सम्मति के बिना ऐसी अनिवार्य कटौती अनुज्ञात करती है तो ऐसी कटौती इसलिए असंवैधानिक होगी क्योंकि ऐसा संघीय उद्ग्रहण कर्मकारों को अपनी इच्छा के विरुद्ध उस संघ में शामिल होने के लिए बाध्य और मजबूर करेगा जिसने मान्यता प्राप्त संघ की हैसियत प्राप्त कर ली है। विनिर्दिष्ट अभिकथन यह था कि धारा 20(2) संविधान के अनुच्छेद 19(1)(ग) द्वारा संगम बनाने की गारंटीकृत मूल स्वतन्त्रता का अतिक्रमण करता है। इस पिटीशन में कुछ और भी प्रासंगिक शिकायतें थीं किन्तु पिटीशन का मुख्य जोर पूर्वोक्त धारा की सांविधानिक विधिमान्यता के विरुद्ध था। विद्वान् एकल न्यायाधीश ने रिट पिटीशन को खारिज कर दिया था तो उच्च न्यायालय की खण्ड न्यायपीठ के समक्ष असफल अपील के पश्चात् विशेष इजाजत से यह अपील इस न्यायालय में फाइल की गई है।

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

3. अपीलार्थी की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान काउन्सेल श्री दानियाल लतीफी ने, जिनकी सहायता मान्यता रहित संघ की अध्यक्ष श्रीमती राधा डी० डिसूजा ने की है और मान्यता रहित संघ की ओर से हाजिर होने वाले काउन्सेल ने भी यह दलील दी है कि यदि धारा 20(2) का इस प्रकार निर्वचन किया जाता है जिससे यह अभिप्रेत हो कि नियोजक या मान्यता प्राप्त संघ, मान्यता रहित संघ और मान्यता प्राप्त संघ के सदस्यों के बीच भेदभाव कर सकते हैं, यद्यपि ये सब एक ही नियोजक के कर्मकार हैं, तो ऐसा निर्वचन अनुच्छेद 14 का अतिक्रमणकारी है और यदि यह मान्यता प्राप्त संघ में शामिल होने के लिए कर्मकारों को बाध्य करती है तो यह धारा संविधान के अनुच्छेद 19(1)(क) और (ग) की अतिक्रमणकारी है।

4. 1971 के अधिनियम की धारा 20 में मान्यता प्राप्त संघ के अधिकार प्रगणित किये गये हैं। धारा 20(2) इस प्रकार है—

*"20(2) : जहां किसी उपक्रम के लिए एक मान्यता प्राप्त संघ है, वहां —

(क) मात्र उस संघ को ही केन्द्रीय अधिनियम की धारा 3 के अधीन कठित 'कर्म समिति' में कर्मकारों का प्रतिनिधित्व करने के लिए अपने नाम निर्दिष्ट व्यक्ति नियुक्त करने का अधिकार होगा;

(ख) किसी भी कर्मचारी को केन्द्रीय अधिनियम के अधीन किसी कार्यवाही में (जो ऐसी कार्यवाही नहीं है जिसमें किसी कर्मचारी की पदच्युति, उन्मोचन, हटाया जाना, छंटनी, सेवा की समाप्ति या

---

*अंग्रेजी में यह इस प्रकार है—

"20 (2) : Where there is a recognised union for any undertaking—

(a) that union alone shall have the right to appoint its nominees to represent workmen on the works committee constituded under Section 3 of the Central Act ;

(b) no emoloyee shall be allowed to appear or act or be allowed to be represented in any proceeding under the Central Act (not being a proceeding in which the legality or propriety of an order of dismissal, removal, retrenchment termination of service or suspension of an emoloyee is under consideration), except through the recognised union ; and the decision arrived at or order

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



निलंबन के आदेश की वैधता या औचित्य विचाराधीन नहीं है) मान्यता प्राप्त संघ के माध्यम के सिवाय, हाजिर होने या कार्य करने या प्रतिनिधित्व करवाने के लिए अनुज्ञात नहीं किया जायेगा; और ऐसी कार्यवाही में विया गया विनिश्चय या किया गया आदेश ऐसे उपक्रम के सभी कर्मचारियों पर आबद्ध होगा;

और तद्नुसार केन्द्रीय अधिनियम के उपबंध अर्थात् औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 के उपबंध अनुसूची I में विनिर्दिष्ट रीति और सीमा तक संशोधित हो जाएंगे।"

5. क्या धारा 20(2) जो किसी उपक्रम के कर्मकारों का प्रतिनिधित्व करने का अनन्य अधिकार ऐसे संघ को प्रदान करती है जिसने 1971 के अधिनियम के अधीन एक मान्यता प्राप्त संघ की हैसियत प्राप्त कर ली है, और साथ ही साथ जो औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 के अधीन किसी कार्यवाही में किसी कर्मकार को हाजिर होने या कार्य करने या प्रतिनिधित्व करने के अधिकार से वंचित करती है, संविधान के अनुच्छेद 19(1)(ग) द्वारा संगम गठित करने की गारंटीकृत मूल स्वतन्त्रता का अतिक्रमण करती है ?

6. 1971 का अधिनियम जैसा कि इसका दीर्घ शीर्षक दर्शाता है, व्यापार संघों की मान्यता के लिए, कतिपय उपक्रमों के लिए सामूहिक सौदेबाजी सुकर बनाने के लिए, ऐसे संघों के अधिकार और बाध्यताएं अधिकथित करने के लिए, मान्यता रहित संघों को कतिपय शक्तियां प्रदान करने के लिए, कतिपय हड़तालों और तालाबंदियों को अवैध हड़ताल और तालाबंदी घोषित करने के लिए, कतिपय अनुचित श्रम आचरणों को परिभाषित करने और उनके निवारण के लिए, व्यापार संघों को मान्यता प्रदान करने के प्रयोजनों को कार्यान्वित करने तथा अनुचित आचरण आदि से संबंधित उपबंधों को लागू करने के लिए स्वतंत्र अधिकरण के रूप में न्यायालय गठित करने के उपबंध करने के लिए अधिनियमित किया गया था। महाराष्ट्र राज्य में मुम्बई इण्डस्ट्रियल रिलेशन्स ऐक्ट, 1946 के रूप में एक सर्वांगीण विधान जो लगभग सभी उद्योगिक संबंधों के पहलुओं को छूता है, प्रवृत्त है किन्तु यह विधान केवल

---

made, in proceeding shall be binding on all the emloyees in such undertaking ;

and accordingly the provisions of the Central Act, that is to say, the Industrial Disputes Act, 1947 shall stand amended in the manner and to the extent specified in schedule I."

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

विनिर्दिष्ट उद्योगों को ही लागू होता है। विनिर्दिष्ट उद्योगों से भिन्न अन्य उद्योगों को औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 लागू होता है। इस पश्चात्वर्ती अधिनियम की प्रकृति सर्वांगीण नहीं है। किसी उपक्रम या उद्योग के संबंध में किसी संघ को मान्यता देने के बारे में इसमें कोई उपबंध नहीं है। किसी उपक्रम/उद्योग के संबंध में संघ को मान्यता देने का इसमें कोई उपबन्ध नहीं है। मुम्बई इण्डस्ट्रियल रिलेशन्स ऐक्ट जिन उपक्रमों को लागू नहीं है, उनके द्वारा नियोजित कर्मकारों के संघों ने 1947 के अधिनियम में इस विभेदकारी व्यवहार और त्रुटि के प्रति अपना असंतोष प्रकट किया था। दोनों अधिनियमों के कुछ विनिर्दिष्ट विषयों से संबंधित उपबन्धों को समान स्तर पर लाने के लिए 1971 का अधिनियम राज्य विधान मण्डल द्वारा अधिनियमित किया गया था।

7. 1971 के अधिनियम की स्कीम का संक्षिप्त पुनर्विलोकन करना लाभकर रहेगा। यह अधिनियम व्यापार संघों की मान्यता के लिए विनिर्दिष्टतः उपबंध करता है। "व्यापार संघों की मान्यता" शीर्षक वाले अध्याय 3 में सम्मिलित उपबंधों का संक्षिप्त विवरण यह व्यवस्था करता है कि प्रत्येक ऐसे उपक्रम को जिसमें 50 या अधिक कर्मचारी नियोजित हैं या पिछले 12 महीनों के दौरान किसी भी दिन नियोजित थे, इसमें उल्लिखित उपबंध लागू होंगे। धारा 11 संघ को मान्यता के लिए आवेदन करने का उपबंध करती है। मान्यता प्राप्त करने की पात्रता का मानदण्ड यह है कि मान्यता प्राप्त संघ की हैसियत के लिए आवेदन करने वाले संघ में उस कलैण्डर मास से, जिसमें संघ आवेदन करता है, तुरंत पूर्व 6 कलैण्डर मासों की संपूर्ण अवधि में किसी उपक्रम में नियोजित कर्मचारियों की कुल संख्या के 30 प्रतिशत से अन्यून कर्मचारियों की सदस्यता होनी चाहिए। आवेदन मुम्बई इण्डस्ट्रियल रिलेशन्स ऐक्ट, 1946 के अधीन स्थापित "औद्योगिक न्यायालय" को किया जाना होता है। आवेदन प्राप्त होने पर औद्योगिक न्यायालय को उपक्रम के सूचना पट्ट पर एक नोटिस प्रदर्शित करना होता है जिसमें, नोटिस में विनिर्दिष्ट तारीख को उक्त आवेदन पर विचार करने का इसका आशय घोषित किया जायेगा तथा दूसरे संघ या संघों से, यदि कोई हैं, जिन्हें उस उपक्रम के कर्मचारियों की सदस्या प्राप्त है, उन्हें बुलाते हुए और प्रस्ताव से प्रभावित नियोजकों तथा कर्मचारियों से यह पूछा जायेगा कि (उक्त संघ को) मान्यता क्यों न दे दी जाए। यदि उन सभी आक्षेपों पर विचार करने के बाद जो कि इसमें इससे पूर्व उपदर्शित नोटिस के परिणामस्वरूप पेश किये गये हों, औद्योगिक न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि रजिस्ट्रीकरण के लिए अपेक्षित शर्तें पूरी हो गई हैं और संघ धारा 19 में विनिर्दिष्ट शर्तों को पूरा करता है तो औद्योगिक न्यायालय आवेदक संघ को अधिनियम के अधीन मान्यता प्रदान कर देगा 'तथा यह विहित प्ररूप में एक

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



प्रमाण-पत्र भी जारी करेगा। एक समय में उसी उपक्रम के बारे में एक से अधिक मान्यता प्राप्त संघ नहीं होंगे। धारा 13 औद्योगिक न्यायालय को उस दशा में मान्यता रद्द करने की शक्ति प्रदान करती है, यदि उसमें उल्लिखित परिस्थितियों में से कोई परिस्थिति समाधानपूर्वक सिद्ध हो जाती है। धारा 14 मान्यता प्राप्त संघ तथा मान्यता की मांग करने वाले किसी दूसरे संघ के बीच परस्पर विवाद का निपटारा करने के लिए उपबंध करती है। मान्यता प्राप्त संघ के अधिकार और बाध्यताएं अध्याय 4 की धारा 19 और 20 में उल्लिखित हैं।

8. विद्वान् काउन्सेल श्री दानियाल लतीफी ने यह कहा कि 1947 के औद्योगिक विवाद अधिनियम के अधीन किसी कार्यवाही में, विनिर्दिष्टत: अपवर्जित कार्यवाहियों को छोड़कर, हाजिर होने या मान्यता प्राप्त संघ के माध्यम के सिवाय प्रतिनिधित्व करवाए जाने के बारे में, किसी कर्मकार पर धारा 20(2) (ख) द्वारा अधिरोपित रोक संविधान के अनुच्छेद 19(1) (क) और (ग) के अधीन नागरिकों को गारंटीकृत मूल स्वतंत्रता का उल्लंघन करती है। अनुच्छेद 19(1) (क) नागरिकों को वाणी और अभिव्यक्ति की मूल स्वतंत्रता की गारंटी देती है तथा अनुच्छेद 19(1) (ग) संगम (एसोसिऐशन) बनाने की मूल स्वतंत्रता की गारंटी देती है। संक्षेप में प्रश्न यह है: यदि नियोजक और कर्मकारों के बीच औद्योगिक संबंधों को विनियमित करने से संबंधित कोई विधि सौदेबाजी करने वाले किसी एक मात्र अभिकर्ता, जैसे कि मान्यता प्राप्त संघ, के लिए उपबंध करती है और साथ ही यह विधि 1947 के औद्योगिक विवाद अधिनियम के अधीन किसी कार्यवाही में किसी एक कर्मकार को हाजिर होने या प्रतिनिधित्व करवाए जाने के अधिकार से वंचित करती है तो क्या ऐसी विधि अनुच्छेद 19(1) (क) और 19(1) (ग) द्वारा गारंटीकृत मूल स्वतंत्रताओं का उल्लंघन करेगी ?

9. नियोजक और नियोजित व्यक्तियों के बीच समानता के आधार पर एक लंबे असमान संघर्ष का इतिहास साक्षी है। इसका संक्षिप्त वर्णन सहायक होगा।

10. औद्योगिक क्रांति के प्रारम्भ पर, जिसका लक्ष्य वस्तुओं का ढेर सारा उत्पादन था, बहुत अधिक औद्योगिक इकाइयां स्थापित की गईं जिसके परिणामस्वरूप एक ही नियोजक के अधीन एक स्थान पर बहुत सारे कर्मकार एकत्रित हो गये। व्यक्तिगत नियोजक का स्थान अब निगमों ने ले लिया है जो बहुत अधिक आर्थिक शक्ति रखती हैं। अत: यह कहना कि कर्मकार नियोजक की दया पर निर्भर करते थे, एक सही बात होगी। नियोजक की तुलना में कर्मकार के अधिकार के बारे में सोचना भी एक पाप था। जब तक स्वछंद

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

व्यापार का सिद्धांत समाज में प्रचलित रहा तब तक राज्य उद्योग में विशेषाधिकार विहीन और निर्बल भागीदार की रक्षा करने में स्वयं हस्तक्षेप नहीं करता था और कर्मकारों को स्वयं अपनी रक्षा करने के लिए छोड़ दिया जाता था क्योंकि राज्य केवल उस दशा में विधि और व्यवस्था की समस्या से ही संबंध रखता था जब नियोजक और कर्मकारों के बीच कोई संघर्ष उत्पन्न हो जाता था। इसके साथ यह और शर्त भी लगाई गई थी, जो यदि पूर्णतः गलत धारणा नहीं थी तो कम से कम चलने योग्य धारणा तो नहीं थी कि समाज हैसियत की अवस्था से चलकर संविदा की अवस्था में पहुंच गया है इसलिए नियोजक और कर्मकार परस्पर बातचीत के द्वारा दोनों के लिए लाभकर संविदा पर गढ़ लेंगे। इस बात की पूर्णतः अनदेखी कर दी गई थी कि संविदा के विषय में पक्षकारों में कोई समानता नहीं थी। उदार, यद्यपि पूंजीवादी इंग्लिश समाज ने कर्मकारों द्वारा सामूहिक रूप से काम करने से इन्कार को एक षड्यंत्र माना और जैसे कि जर्मी बैन्थम ने लिखा है: "षड्यंत्र शब्द न्यायाधीशों के लिए उन सभी व्यक्तियों को भरपूर दण्ड देने का एक बहाना था जिन व्यक्तियों द्वारा कोई ऐसा (आपराधिक) कार्य किया जाता था जो प्रश्नगत कार्य से संबंधित न्यायाधीशों की धारणा के अनुरूप नहीं था।" **सम्राट** बनाम **ड्यूफील्ड**[1] के मामले में न्या० अरले ने ज्यूरी के समक्ष निम्नलिखित कथन पेश किया :—

> "पक्षकारों के आचरण से विधि-विरुद्ध गठजोड़ और संघर्ष का ही अनुमान लगाया जाना होता है। यदि बहुत से लोग कई कदम उठाते हैं, जिन सबका आशय एक ही स्पष्ट प्रयोजन है तो न्यायालय के लिए यह बताना आवश्यक है कि क्या इन लोगों ने प्रयोजनों को पूरा करने के लिए गठबंधन नहीं किया है और जिस प्रयोजन को प्रभावी बनाने के लिए उनका आचरण सुनियोजित किया गया प्रतीत होता है।"

इंग्लिश कॉमन ला ने सदैव ही एक सामान्य उद्देश्य प्राप्त करने के लिए कर्मकारों के गठबंधन के प्रति अप्रसन्नता प्रकट की है; कॉमन ला में ऐसे गठबंधन को दाण्डिक प्रकृति का गठबंधन माना गया। यूनाइटिड किंगडम में ट्रेड यूनियन ऐक्ट, 1913 के अधिनियमित किये जाने पर रजिस्ट्रीकृत व्यापार संघों को निगम की हैसियत प्राप्त हो गई थी जो अपने रजिस्ट्रीकृत नाम से वाद ला सकते थे और उनके विरुद्ध वाद लाया जा सकता था तथा अपने सदस्यों से अलग, एक पृथक् निकाय के रूप में संविदाएं कर सकते थे। व्यापार संघों द्वारा प्राप्त यह हैसियत नियोजक और संघ के बीच किये गये सामूहिक करार

---

[1] 5, कौक्स क्रिमिनल केस पृष्ठ 404.

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



को विधिमान्यता का आभास प्रदान कर देती थी—यद्यपि बहुत समय तक कॉमन ला ने इसे प्रवर्तनीय संविदा के रूप में मान्यता देने से इन्कार किया है। लार्ड डानुवान की अध्यक्षता के अधीन "ट्रेड यूनियन एण्ड एम्प्लायर्स एसोसियेशन्स" के रायल कमीशन ने, (जिसे संक्षेप में 'डानूवान आयोग' कहा गया है) जिसने अपनी रिपोर्ट सन् 1968 में पेश कर दी थी, इस आधार पर कार्यवाही की थी कि सामूहिक सौदेबाजी विधिक प्रवर्तन के अधीन नहीं होती है और इस प्रतिपादना के समर्थन में अनेक दलीलें दी गई थीं। यद्यपि आयोग ने अपने रिपोर्ट के अंतिम पैरा सं० 472 में यह मत व्यक्त किया था कि "उद्योगवार सौदेबाजी तथा कर्मशाला अथवा संयंत्रवार सौदेबाजी वस्तुतः एक दूसरे से घनिष्ठतः मिली जुली होती हैं। एक को दूसरे के बिना प्रवर्तित करना हमारी सामूहिक पद्धति के प्रभाव को विरूपित करने की कोटि में आता है। आज यह पद्धति औपचारिक करारों, अनौपचारिक करारों, रूढ़ि और प्रथा का एक जोड़तोड़ ही है। सामूहिक करारों को प्रवर्तित कराने के लिए यदि किसी न्यायालय को कहा जाता तो कोई भी न्यायालय उस अस्फुट पद्धति/आचरण से, जो कि इसकी पृष्ठभूमि है, करार को पृथक् नहीं कर सकता था।" निगमों जैसे व्यक्तित्वहीन विधिक व्यक्तियों द्वारा बहुत समय तक मानव शोषण के शिकार, श्रमिकों द्वारा न्याय की खोज के परिणामस्वरूप विधायी अधिनियमिति द्वारा औद्योगिक मानदण्ड रचित किये गये जिन्हें सामान्यतः श्रम विधि कहा गया है। श्रम विधि का मुख्य उद्देश्य सौदेबाजी की शक्ति की उस असमानता का प्रतिविरोध करने के लिए एक प्रतिकारक शक्ति/बल था, जो असमानता नियोजन के संबंधों में अंतरनिहित है और अंतरनिहित होनी चाहिए, जैसा कि हैमलिन के भाषण में श्री आटोकान्फ्राइड ने कहा है : "वस्तुतः यह आदेश और आज्ञाकारिता के संबंधों में विधि का तत्त्व अंतःस्थापित करने का एक प्रयास था अर्थात् दूसरे शब्दों में ऐसे क्षेत्र में जहां एक पक्षकार को आज्ञा देने की शक्ति थी तथा दूसरे को आज्ञा पालन का कर्तव्य सहना होता था। जिस सीमा तक विधि कर्मकारों के आज्ञापालन के कर्त्तव्य के क्षेत्र को सीमित करती है और कर्मकारों की स्वतंत्रता के क्षेत्र को बढ़ाती है, वहां तक श्रम विधि अपने उद्देश्यों में से एक उद्देश्य को पूरा करती है।" (देखिये—श्रम विधि पुनर्विलोकन समिति की रिपोर्ट, गुजरात राज्य प्रकाशन, 1974, पृष्ठ 5)

11. राजनैतिक समाज के संदर्भ में जिस समाज की स्थापना स्वातंत्रोत्तर भारत में स्थापित करने का हमने संकल्प लिया है, संविधान के अनुच्छेद 326 द्वारा वयस्क मताधिकार के प्रारंभ किये जाने पर संगठित श्रमिकों का प्रतिनिधित्व करने वाले व्यापार संघ आन्दोलन का विकास राजनैतिक दल के अनुलग्नक के रूप में हुआ है। राजनैतिक पार्टियों ने मतदाताओं के समूह के

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



रूप में संगठित श्रमिकों को सप्रयास जीतने का प्रयत्न किया है। प्रत्येक राजनैतिक पार्टी ने मतदाता समूह को नियन्त्रित करने की दृष्टि से अपने-अपने श्रमिक खण्ड स्थापित किये। राजनैतिक पार्टियों की बहुलता के कारण औद्योगिक यथा स्थिति, उपक्रम या उद्योग में कर्मकारों का प्रतिनिधित्व करने की दृष्टि से व्यापार संघों में भी बहुलता उत्पन्न हुई। व्यापार संघों की बहुलता का एक परिणाम अंतरसंघीय और आन्तरसंघीय प्रतिद्वन्द्विता थी जिसने औद्योगिक उपक्रम या उद्योग के शांतिपूर्ण कार्यकरण को खतरा पैदा कर दिया। जैसा कि दुर्भाग्यपूर्ण अनुभव से पता लगता है, प्रत्येक व्यापार संघ ने समय-समय पर बड़ी-बड़ी और अनुचित मांगें करने वाले अपने प्रतिद्वन्द्वी संघ से अपने आपको बढ़ा चढ़ा कर रखने का प्रयत्न किया। इससे उत्पन्न होने वाली स्थिति के परिणामस्वरूप परस्पर विवाद और संघर्ष पैदा हो गया जिसके कारण औद्योगिक शांति और समरसता विक्षुब्ध हो गई जिससे उत्पादन पर सीधा प्रभाव पड़ा। प्रथम पंचवर्षीय योजना में यह मत व्यक्त किया गया था कि --

> "वर्ग शत्रुता और विश्व संघर्ष का उत्तर तब तुरन्त प्राप्त होगा यदि हम उद्योग में मानव सम्बन्धों के लिए एक दृढ़ आधार का पता लगाने में सफल हो जाते हैं। अत: औद्योगिक सम्बन्ध केवल नियोजकों और कर्मचारियों के बीच का ही विषय नहीं है अपितु यह उस समुदाय के लिए भी गम्भीर चिन्ता का विषय है जिन्हें समुदाय के बृहत्तर हितों की सुरक्षा के लिए अनेक उपायों में व्यक्त किया जा सकता है।"

12. अत: यह आवश्यकता महसूस की गई कि जहां किसी उद्योग में कर्मकारों के प्रतिनिधित्व की मांग करने वाले अनेक व्यापार संघ हैं, वहां मान्यता प्राप्त संघ की विचारधारा का विकास किया जाना चाहिए। भारत संघ की स्थायी श्रम समिति में जुलाई, 1970 में अपने 29वें सत्र में नियोजक द्वारा व्यापार संघ की मान्यता के प्रश्न पर ही विचार किया था। वस्तुत: व्यापार संघ नेताओं के बीच भी इस बारे में परस्पर सहमति थी कि सौदे-बाजी करने वाले एक मात्र अभिकर्ता के रूप में मान्यता प्राप्त संघ की विचार-धारा औद्योगिक शांति और समरसता के बृहत्तर हित में विकसित की जानी चाहिए। भारत के भूतपूर्व न्यायमूर्ति, स्व० मु० न्या० पी० बी० गजेन्द्रगडकर की अध्यक्षता में राष्ट्रीय श्रम आयोग ने मान्यता प्राप्त संघ की विचारधारा के पक्ष में एक मत से और तय दिल से अपना विचार व्यक्त करने के पश्चात् और यह मत व्यक्त करते हुए कि मान्यता प्राप्त संघ को सौदेबाजी करने वाले एक मात्र अभिकर्त्ता की शक्तियों से (जिसमें कर्मकारों का प्रतिनिधित्व करने का अनन्य अधिकार भी शामिल है) सन्नद्ध किया जाए, उस रीति को

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



सुनिश्चित करने के प्रश्न पर ही विचार किया जिसके द्वारा अनेक प्रतिद्वन्द्वी व्यापार संघों में से किसी व्यापार संघ को मान्यता प्राप्त संघ की हैसियत प्रदान की जानी चाहिए। प्रजातांत्रिक सिद्धांत के पक्ष में अपने आप को दृढ़ता-पूर्वक स्थापित करते हुए इस बात पर सहमति हो गई थी कि उस व्यापार संघ को मान्यता प्राप्त संघ की हैसियत प्रदान की जानी चाहिए जो व्यापार संघ किसी उपक्रम में काम करने वाले कर्मकारों की अधिकतम संख्या का प्रतिनिधित्व करता है क्योंकि यही बात औद्योगिक प्रजातन्त्र की विचारधारा के अनुरूप होगी। सदस्यता की संख्या का पता लगाने की रीति के बारे में कुछ मतभेद उत्पन्न हुए। श्रम आयोग के समक्ष सदस्यता की संख्या सुनिश्चित करने के लिए दो आनुकल्पिक सुझाव थे: (i) रजिस्ट्रों के माध्यम से सदस्यता का सत्यापन, और (ii) गुप्त मतदान द्वारा विनिश्चय। चूंकि इस प्रश्न के सम्बन्ध में व्यक्त की गई रायों के बीच तीव्र अन्तर था इसलिए आयोग ने किसी मामले विशेष में एक या दूसरे रीति को अपनाने के प्रश्न को प्रस्तावित औद्योगिक सम्बन्ध आयोग के ऊपर छोड़ दिया गया था जिसके स्थापित करने की सिफारिश की गई थी, यदि आयोग की सिफारिशों को स्वीकार कर लिया जाता है। हमारे लिए जो महत्व की बात है वह यह कि हममें से प्रत्येक इस बात के लिए सहमत हो गया था कि जहां कहीं किसी औद्योगिक उपक्रम या उद्योग में अनेक व्यापार संघ हैं वहां कर्मकारों की अधिकतम सदस्यता वाले संघ को ही मान्यता प्राप्त संघ की हैसियत प्रदान की जानी चाहिए और परिणामतः उसे ही सौदेबाजी करने वाला एक मात्र अभिकर्ता माना जाना चाहिए। अंतरनिहित अनुमान यह था कि मान्यता प्राप्त संघ औद्योगिक उपक्रम या उद्योग में सभी कर्मकारों का प्रतिनिधित्व करता है।

13. साथ ही साथ इस बात का भी उल्लेख किया जा सकता है कि मुम्बई इण्डस्ट्रियल रिलेशन्स ऐक्ट, 1946 में मान्यता प्राप्त संघ की हैसियत प्रदान करने वाले उपबन्ध शामिल किए गए थे और सदस्यता सुनिश्चित करने की रीति की भारी आलोचना के बावजूद भी, यह पद्धति ठीक काम कर रही प्रतीत होती है। अधिनियम में इससे भी अधिक उपबन्ध किया गया और इसमें ऐसे मान्यता प्राप्त संघ की विचारधारा विकसित की गई जिसको न्यायनिर्णयन के लिए सुसंगत प्राधिकरण को औद्योगिक विवाद का निर्देश करने की शक्तियां भी प्रदान की गई थीं। यह ऐसी शक्ति है जिस पर केन्द्रीय अधिनियम के अधीन समुचित सरकार का ही एकाधिकार है। सभी कर्मकारों का प्रतिनिधित्व करने के हकदार मान्यता प्राप्त संघ की विचारधारा के विरोधियों द्वारा प्रायः जो शिकायत की गई थी वह यह थी कि ऐसी हैसियत मान्यता प्राप्त संघ के हाथों में इतनी शक्तियां केन्द्रित कर देगा कि यह संघ उन व्यक्तियों के नुकसान-

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



के लिए कार्य कर सकता है जो इसके सदस्य नहीं बनते हैं तथा जो मान्यता प्राप्त संघ के राजनैतिक और सामाजिक दर्शन के विरुद्ध हैं और इसलिए वे इससे दूर रहना चाहेंगे। इस समस्या की झनझनाहट उस समय प्रकट हुई जब यह पाया गया कि ऐसे कर्मकार को, जो अपनी सेवा की समाप्ति को मुख्यत: व्यक्तिगत दण्ड के आधार पर प्रश्नगत कर रहा था और इस प्रकार से एक व्यक्तिगत वाद हेतुक पेश कर रहा था, किन्तु चूंकि मान्यता प्राप्त संघ का सदस्य नहीं था इसलिए उसे मान्यता प्राप्त संघ द्वारा न्यायालय से बाहर कर देने का प्रयत्न पिटीशन को खारिज कराने के इस मुख्य आधार पर न्यायालय में किया कि मात्र वह संघ ही कर्मकारों का प्रतिनिधित्व करने का हकदार है। विधान मंडल तुरन्त ही इस खतरे के प्रति जागरूक हो गया और औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 और धारा 2 (क) अन्तःस्थापित करके इस स्थिति को सुधार दिया जो यह उपबन्ध करती है कि ऐसा कर्मकार जो सेवा से पदच्युत कर दिया जाता है, मुक्त कर दिया जाता है या हटा दिया जाता है अथवा जिसकी सेवा अन्यथा समाप्त कर दी जाती है, वह अपना वाद हेतुक मान्यता प्राप्त संघ की सहायता के बिना भी न्यायालय में चला सकता है और ऐसा होने पर भी ऐसा विवाद एक औद्योगिक विवाद ही होगा। यही सुरक्षा धारा 20 (2) (ख) के आक्षेपित उपबन्ध में बनाए रखी गई है। मान्यता प्राप्त संघ के रूप में सौदेबाजी करने वाले एक मात्र अभिकर्ता की हैसियत बड़े भारी संघर्ष के पश्चात् जीता गया युद्ध है और इसे इस भावुक दृष्टिकोण के कारण नष्ट नहीं होने दिया जाना चाहिए कि जहां व्यापार संघ आन्दोलन के कुछ वैचारिक मतभेद हों तो ऐसा उपबन्ध कर्मकारों को या तो ऐसे संघ का सदस्य बनने के लिए बाध्य करेगा जिस संघ का सामाजिक और राजनैतिक दर्शन उसके अपने दर्शन और दृष्टिकोण के अनुरूप नहीं है अथवा वह अकेला पड़ जायेगा क्योंकि ऐसा कर्मकार कोई दूसरा व्यापार संघ नहीं बना सकता और यदि वह ऐसा कोई दूसरा व्यापार संघ बनाता भी है तो नियोजक बड़ी धृष्टता के साथ इसकी अनदेखी कर सकता है। क्या इस दलील या व्यक्त किए गए इस भय में किसी प्रकार का कोई सार है ? इस विषय की विवेचना इसी पृष्ठभूमि के परिप्रेक्ष में भी की जा सकती किन्तु इसकी परीक्षा उद्योग में शांति और समरसता के लोक हित के, स्वस्थ्य औद्योगिक सम्बन्धी और ऐसे व्यापक राष्ट्रीय हितों के परिप्रेक्ष में की जानी है जो हड़तालों, तालाबंदियों, मतभेदों और परस्पर संघर्षों से परहेज करते हैं।

14. इस प्रकार से व्यापार संघों के विकास के इतिहास के प्रति संक्षिप्त निर्देश करने के पश्चात् अब हम इस मामले में दी गई चुनौती पर विचार करते हैं। श्री दानियाल लतीफी ने यह दलील दी कि धारा 20

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



निर्विवाद रूप से उन कर्मकारों को जो मान्यता प्राप्त संघ के सदस्य नहीं हैं संविधान के अनुच्छेद 19 (1) (क) और (ग) के अधीन गारंटीकृत मूल स्वतन्त्रता से वंचित करती है। यह कहा गया कि अधिनियम के उपबन्धों में कर्मकारों को उस संघ में शामिल होने के लिए मजबूर करने की एक बुरी प्रवृत्ति अन्तरनिहित है जिस संघ ने मान्यता प्राप्त संघ की हैसियत अर्जित कर ली है, भले ही वह संघ उन सदस्यों के सामाजिक और आर्थिक अथवा सामाजिक और राजनैतिक दर्शन के प्रतिकूल दर्शन का अनुसरण करता है और यह कि ऐसी बाध्यता संगम बनाने की स्वतन्त्रता से वंचित करती है। यह भी निवेदन किया गया था कि संगम बनाने करने का अधिकार एक खोखली औपचारिकता होगी, यदि इस प्रकार बनाए गए संगम किसी औद्योगिक उपक्रम के उन कर्मकारों से सम्बन्धित किसी कार्यवाही में प्रभावी रूप से भाग लेने की स्थिति में नहीं हैं, जिन्होंने कुछ पृथक व्यापार संघ बना लिए हैं। यह कहा गया था कि या तो कर्मकारों के सभी संघों को एक समान माना जाए या कम से कम मान्यता प्राप्त संघ की इच्छा के अधिरोपण के विरुद्ध मान्यता रहित संघ के सदस्यों के अधिकारों की सुरक्षा के लिए उन्हें मान्यता प्राप्त संघ की कार्यवाही से आबद्ध न रहने के लिए स्वतन्त्र रहने दिया जाना चाहिए। यह कहा गया था कि 1971 के अधिनियम की धारा 20 (2) इन सभी सुरक्षा उपायों से वंचित करती है और इसलिए इसे असांविधानिक घोषित किया जाना चाहिए।

15. औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 2(क) के अंतः-स्थापन से पूर्व न्यायालयों का झुकाव इस मत के पक्ष में था कि व्यक्तिगत विवाद को औद्योगिक विवाद, 1947 में यथा परिभाषित "औद्योगिक विवाद" अभिव्यक्ति की परिभाषा में शामिल नहीं समझा जा सकता। जो विवाद सभी कर्मकारों या कर्मकारों के एक बड़े समूह के सामान्य फायदों के लिए संघ द्वारा समर्थित नहीं किया जाता है, ऐसा कोई भी विवाद "औद्योगिक विवाद" अभिव्यक्ति में शामिल नहीं समझा जायेगा—ऐसा न्यायालयों का यह मत था। प्रायः इस विधिक प्रतिपादन से बहुत रोषजनक स्थिति उत्पन्न हुई है। कोई एक कर्मकार, यदि उसे नियोजक द्वारा दण्डित किया गया है और यदि वह मान्यता प्राप्त संघ का सदस्य नहीं था तो मान्यता प्राप्त संघ ऐसे इक्के-दुक्के कर्मकार के हेतुक का समर्थन करने में सहमत नहीं होता था और ऐसा अकेला कर्मकार इस प्रकार से बिना किसी उपचार के रह जाता था। ऐसे भी मामले प्रकाश में आये हैं जहां कि मान्यता प्राप्त संघ ने कुटिल तरीकों से ऐसे कर्मकारों को, इससे पूर्व कि उनके हितों का समर्थन किया जाए, अपना सदस्य बनाने के लिए बाध्य किया। इस प्रकार का व्यापार संघीय अत्याचार विधान

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



मण्डल के ध्यान में आया और औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 में धारा 2(क) अंतःस्थापित की गई जिसके द्वारा यह बिलकुल स्पष्ट कर दिया गया कि किसी एक कर्मकार की सेवा से पदच्युति, उन्मोचन, छंटनी या सेवा की समाप्ति इस बात के बावजूद भी एक औद्योगिक विवाद कहलायेगी कि कोई और कर्मकार या कर्मकारों को कोई संघ इस विवाद का पक्षकार नहीं है। धारा 20 की उपधारा (2) ने, मान्यता प्राप्त संघ को औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 के अधीन किसी कार्यवाही में कर्मकारों का प्रतिनिधित्व करने का अनन्य अधिकार प्रदान करते हुए और साथ ही किसी एक कर्मकार द्वारा अपना प्रतिनिधित्व करने के अधिकार से उसे वंचित करते हुए, उस अपवाद को बनाए रखने का प्रयत्न किया है जो 1947 के अधिनियम की धारा 2(क) में अधिनियमित किया गया है। यहां विधिक स्थिति धारा 20(2)(ख) में दोहराई गई है। अतः धारा 20(2)(ख) का निर्वचन करते समय इस बात को ध्यान में रखना चाहिए कि कोई अकेला कर्मकार जिसका उसकी अपनी पदच्युति, उन्मोचन, छंटनी या सेवा की समाप्ति से उद्भूत होने वाला कोई व्यक्तिगत विवाद उसके नियोजक के साथ है तो उसे कोई नुकसान नहीं होने दिया जायेगा—यदि कोई मान्यता प्राप्त संघ उसके मामले का समर्थन नहीं करता है और वह स्वयं ही औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 के अधीन अपना उपचार प्राप्त करने के लिए कार्यवाही करने में समर्थ होगा। जब एक बार यह सुरक्षा सुनिश्चित कर दी गई है तो अब हम यह देखेंगे कि क्या किसी मान्यता प्राप्त संघ को, किसी एक कर्मकार अथवा दो ऐसे कर्मकारों का अपवर्जन करते हुए जो मान्यता प्राप्त संघ के सदस्य नहीं हैं, कर्मकारों का प्रतिनिधित्व करने के लिए प्रदान की गई हैसियत ऐसे कर्मकारों को संविधान के अनुच्छेद 19(1)(क) और 19(1)(ग) के अधीन गारंटीकृत मूल स्वतन्त्रता से वंचित करती है अथवा नहीं।

16. हम यह देखने में असमर्थ हैं कि औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 के अधीन किसी कार्यवाही में ऐसे कर्मकार के ऐसे विवाद के बारे में जो केवल उसका व्यक्तिगत विवाद नहीं है, जैसे कि उसकी सेवा से समाप्ति, हाजिर होने और भाग लेने पर लगाया गया निर्बंधन, जो कर्मकार मान्यता प्राप्त संघ के द्वारा प्रतिनिधित्व कराने के लिए तैयार नहीं है—वाणी और अभिव्यक्ति तथा संघ बनाने की स्वतन्त्रता से उसे कैसे वंचित करता है। कतिपय पूर्वापेक्षाओं को पूरा करने वाले संघ को मान्यता प्राप्त संघ की हैसियत प्रदान करना, जिनको दूसरा संघ पूरा करने की स्थिति में नहीं है, संगम बनाने के अधिकार से वंचित नहीं करता। वस्तुतः अपीलार्थी संघ को व्यापार संघ अधिनियम के अधीन रजिस्ट्रीकृत किया गया है और

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



सदस्यों ने किसी की ओर से भी बाधा अथवा रुकावट के बिना अपना संगम बना लिया है। इतना ही नहीं जब अपीलार्थी संघ नियोजक से बातचीत कर सकता है तो यह कहना सही नहीं है कि मान्यता प्राप्त संघ में शामिल होने के बारे में कर्मकारों की अनिच्छा संगम बनाने की मूल स्वतन्त्रता का अतिक्रमण करती है। यह कहना भी सही नहीं है कि नियोजक द्वारा मान्यता, संगम बनाने की मूल स्वतंत्रता में विवक्षित है। संगम बनाना, इसकी मान्यता से बिल्कुल ही एक स्वतंत्र और भिन्न बात है। किसी संघ को मान्यता देना, उसे अधिकार, कर्त्तव्य और बाध्यताएं प्रदान करना है। मान्यता प्राप्त संघ से भिन्न किसी दूसरे संघ को ऐसे अधिकार, कर्त्तव्य और बाध्यताएं प्रदान न करना, इस संघ को न तो निम्नत्तर कोटि में लाना है और न इसके प्रति भेदभाव के आरोप को ग्रहण किया जा सकता है। मान्यता रहित संघ के सदस्य वाणी और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता तथा संगम बनाने की मूल स्वतंत्रता का भी पूरी तरह से लाभ उठा सकते हैं।

17. वस्तुतः विधान मण्डल ने ऐसे व्यापार संघों में विद्यमान स्थिति पर ध्यान दिया है जहां किसी उपक्रम या उद्योग में मान्यता प्राप्त संघ से भिन्न ऐसे संघ भी हैं जो उपक्रम या उद्योग में कर्मकारों का प्रतिनिधित्व करने का दावा करते हैं। 1971 के अधिनियम की धारा 22 मान्यता रहित ऐसे संघों को विनिर्दिष्ट अधिकार प्रदान करती है—इनमें से एक अधिकार एक अकेले कर्मकार की शिकायत के बारे में नियोजक से भेंट करने और विचार-विमर्श करने का अधिकार है। विधान-मण्डल ने कर्मकार की व्यक्तिगत शिकायत तथा सभी या अनेक कर्मकारों को प्रभावित करने वाले विवाद के बीच स्पष्ट भेद किया है। मान्यता रहित संघ की दशा में भी, ऐसे संघ को नियोजक के साथ अकेले एक कर्मकार की शिकायत के बारे में भेंट करने और विचार-विमर्श करने के कानूनी अधिकार का लाभ है। ऐसे मान्यता रहित संघ को ऐसी आंतरिक या विभागीय जांच में हाजिर होने और भाग लेने का कानूनी अधिकार है जिसमें ऐसे संघ के सदस्य अंतर्वलित हों। मान्यता रहित संघ की यह कानूनी मान्यता है। इसका अपवर्जन आंशिक है तथा ऐसे मान्यता रहित संघ द्वारा या एक अकेले कर्मकार द्वारा कर्मकारों का प्रतिनिधित्व करने के अधिकार पर लगाई गई रोक उद्योग के, जनता के और राष्ट्र के व्यापक हित में है। ऐसे उपबंध को संविधान के अनुच्छेद 19(1)(क) अथवा 19(1)(ग) के अधीन गारंटीकृत मूल स्वतंत्रता का अतिक्रमणकारी नहीं कहा जा सकता।

18. सिद्धांत की दृष्टि से इस दलील की परीक्षा करने के पश्चात् अब हम, हमारे ध्यान में लाये गये पूर्व विनिश्चयों पर विचार कर सकते हैं।

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



19. **राजा कुलकर्णी और अन्य** बनाम **मुम्बई राज्य**[1] के मामले में संविधान न्यायपीठ के समक्ष दी गई दलीलों में से एक दलील यह था कि मुम्बई इण्डस्ट्रियल रिलेशन्स ऐक्ट, 1946 की धारा 13, जैसी कि यह तब थी, में यह उपबंध किया गया था कि किसी स्थानीय क्षेत्र में किसी उद्योग के लिए किसी संघ को एक प्रतिनिधि संघ के रूप में उस दशा में रजिस्ट्रीकृत किया जा सकता है, यदि मान्यता के लिए इसके आवेदन की तारीख से ठीक पूर्व तीन महीनों की संपूर्ण अवधि में इसके सदस्यों की संख्या किसी स्थानीय क्षेत्र के किसी उद्योग में नियोजित कर्मचारियों की कुल संख्या के 15 प्रतिशत से कम नहीं है ; यदि संघ इस शर्त को पूरा नहीं करता है और 5 प्रतिशत से अन्यून इसकी सदस्यता है तो यह एक अर्हित संघ के रूप में रजिस्ट्रीकृत किया जा सकता है। राष्ट्रीय मिल मजदूरी सभा संघ का रजिस्ट्रीकरण एक प्रतिनिधि संघ के रूप में था जब कि मिल मजदूर सभा एक अर्हित संघ के रूप में रजिस्ट्रीकृत थी। उस मिल मजदूर सभा की ओर से, जिसके पदाधिकारी इस न्यायालय के समक्ष अपीलार्थी थे, यह दलील दी गई थी कि वे उपबंध जो कर्मकारों का प्रतिनिधित्व करने के लिए केवल एक ही प्रतिनिधि संघ को अनन्य अधिकार प्रदान करते हैं, ऐसे उपबंध अनुच्छेद 19(1)(क) और (ग) के अधीन मिल मजदूर सभा के सदस्यों या ऐसे अन्य सदस्य को जो प्रतिनिधि यूनियन का सदस्य नहीं था गारंटीकृत मूल स्वतंत्रता के अतिक्रमणकारी थे, तथा यह उपबंध अनुच्छेद 14 के भी अतिक्रमणकारी थे क्योंकि कर्मकारों के दो प्रतिनिधियों को विधि के समक्ष समता या विधियों के समान संरक्षण से वंचित किया गया था। संविधान पीठ ने यह मत व्यक्त करते हुए इस दलील का खण्डन कर दिया था कि ऐसा उपबंध न तो वाणी और अभिव्यक्ति की मूल स्वतंत्रता से और न संगम बनाने के अधिकार की मूल स्वतंत्रता से वंचित करता है। न्यायालय ने यह कहा कि वे कर्मकार जो किसी प्रतिनिधि यूनियन के सदस्य नहीं हैं अपना संगम या संघ बनाने तथा सदस्यों के उच्चत्तर प्रतिशत का दावा करने के लिए सदैव स्वतंत्र हैं ताकि प्रतिद्वन्द्वी संघ को पदच्युत करके इसका स्थान ले सकें। इस निर्णय से इस मामले का अंतिम विनिश्चय हो जाना चाहिए था, तथापि, श्री लतीफी ने यह दलील दी कि यह विनिश्चय इसलिए सहायक नहीं है क्योंकि यह ऐसे समय में दिया गया था जब कि मुम्बई इण्डस्ट्रियल रिलेशन्स ऐक्ट, 1946 की धारा 114 की उप-धारा (2) में यह उपबंध किया गया था कि जहां प्रतिनिधि संघ किसी रजिस्ट्रीकृत करार या समझौते, निवेदन या पंचाट का पक्षकार है वहां प्रान्तीय सरकार शासकीय राजपत्र में अधिसूचना द्वारा प्रभावित पक्षकारों को सुनवाई का अवसर देने के पश्चात् यह निदेश दे सकती है कि ऐसा करार,

---

[1] [1954] एस० सी० आर० 384.

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



समझौता, निवेदन या पंचाट उस स्थानीय क्षेत्र में किसी उद्योग या उपजीविका में ऐसे अन्य नियोजकों और कर्मचारियों पर आबद्ध होगा, जैसे अधिसूचना में निर्दिष्ट किए जाएं। उपधारा (2) का एक परन्तुक था जिसमें यह उपबंध किया गया था कि उप-धारा (2) के अधीन निदेश देने से पूर्व प्रांतीय सरकार ऐसे मामलों में, जैसे वे ठीक समझे, औद्योगिक न्यायालय को उसकी राय के लिए निर्देश करेगा। यह कहा गया था कि किसी उद्योग या उपक्रम के ऐसे कर्मकार जो किसी प्रतिनिधि संघ के सदस्य नहीं हैं, ऐसे समझौते, निवेदन या पंचाट द्वारा आबद्ध नहीं होंगे जिसका केवल प्रतिनिधि संघ ही पक्षकार है— जब तक कि प्रान्तीय सरकार ने धारा 114 की उपधारा (2) के अधीन कार्यवाही न कर ली हो : तथा इसमें एक और भी यह पक्षोपाय था कि सभी कर्मकारों पर ऐसे समझौते, निवेदन या पंचाट को बाध्यकर बनाने से पूर्व औद्योगिक न्यायालय की राय जानने के लिए उसके समक्ष एक निर्देश किया जा सकता था। यह भी दलील दी गई थी कि यह रक्षोपाय प्रस्तुत मामले में नहीं है क्योंकि धारा 20(2) ऐसे समझौते, या पंचाट को, जिसका केवल प्रतिनिधि संघ ही पक्षकार है यथा स्थिति, उपक्रम या उद्योग के सभी कर्मकारों पर बाध्यकर बना देगी और इस प्रकार से पूर्वोक्त विनश्चय को प्रभेदित किया जा सकता है। हमें इस दलील में कोई गुणता नजर नहीं आती। इस न्यायालय ने सुसंगत उपबंधों की शक्ति को इस आधार पर कायम नहीं रखा था कि इनमें उन व्यक्तियों के लिए रक्षोपाय थे जो (मान्यता प्राप्त संघ के) सदस्य नहीं थे। यह उपबंध इन तथ्यों के आधार पर शक्ति के अधीन अभिनिर्धारित किया गया था कि यह अनुच्छेद 19(1)(क) और 19(1)(ग) के अधीन गारंटीकृत मूल स्वतंत्रता से वंचित नहीं करते हैं।

20. **रामप्रसाद विश्वकर्मा** बनाम **दि चेयरमैन इण्डस्ट्रियल ट्रिब्युनल**[1] के मामले में अपीलार्थी की सेवा की समाप्ति से उद्भूत होने वाले औद्योगिक विवाद का समर्थन संघ द्वारा किया गया था और यह विवाद अधिकरण को न्यायनिर्णयन के लिए निर्दिष्ट किया गया था। जब यह मामला अधिकरण के समक्ष था तो अपीलार्थी कर्मकार ने यह आवेदन किया था कि उसे अपने मामले का प्रतिनिधित्व अपने दो सहयोगियों के द्वारा करवाए जाने के लिए अनुज्ञात किया जाए और कम से कम संघ के सचिव को उसके मामले का प्रतिनिधित्व न करने दिया जाए। अधिकरण ने इस आवेदन को नामंजूर कर दिया था और एक असफल रिट पिटीशन के पश्चात् यह मामला इस न्यायालय में आया। यह दलील दी गई थी कि यद्यपि अपीलार्थी के मामले का समर्थन संघ द्वारा किया गया था, फिर भी वह पृथक् रूप से प्रतिनिधित्व कराने का हकदार था।

[1] [1961] 3 एस० सी० आर० 196.

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



इस दलील का खण्डन करते हुए इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि कोई 'व्यक्तिगत शिकायत' यथा परिभाषित 'औद्योगिक विवाद' अभिव्यक्ति के अंतर्गत नहीं समझी जा सकती और कोई विवाद तभी औद्योगिक विवाद की प्रकृति अर्जित करता है, जबकि वह संघ द्वारा समर्थित किया जाए और इसलिए कर्मकार पृथक् रूप से प्रतिनिधित्व कराने का हकदार नहीं होगा। यह विनिश्चय औद्योगिक विवाद अभिव्यक्ति के निर्वचन पर आधारित था और औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 में धारा 2-क के अंत:स्थापन से पूर्व किया गया था। अत: यह विनिश्चय विचाराधीन विवाद्यक पर कोई प्रकाश नहीं डालता।

21. **गिरजा शंकर काशीराम** बनाम **गुजरात स्पिनिंग एण्ड वीविंग मिल्स लि०**[1] के मामले में मुम्बई इण्डस्ट्रियल रिलेशन्स ऐक्ट, 1946 के अधीन एक कार्रवाई में न्यायालय के विनिश्चय द्वारा कुप्रभावित होने वाले कर्मकारों के अधिकार को अपवर्जित करते हुए, प्रतिनिधि संघ के हाजिर होने के अधिकार पर विचार किया गया था। प्रतिनिधि संघ और नियोजक ने कर्मकारों को बोनस दिये जाने के बारे में एक समझौता कर लिया था और इसके प्रतिफलस्वरूप प्रतिनिधि संघ नियोजक द्वारा उन्मोचित कर्मकारों के लिए किसी भी प्रतिकर पर जोर न डालने के लिए सहमत हो गया था। बाद में उन 376 व्यक्तियों ने, जो कम्पनी के बंद होने से पूर्व कम्पनी के नियोजन में थे, मुम्बई इण्डस्ट्रियल रिलेशन्स ऐक्ट, 1946 की धारा 42(1) के अधीन नोटिस दिया और कम्पनी के बंद होने की अवधि के लिए प्रतिकर का दावा किया। चूंकि पक्षकार कोई समझौता नहीं कर सकते थे इसलिए धारा 42(4) के अधीन श्रम न्यायालय में आवेदन किया गया था। इस आवेदन के लंबित रहने के दौरान प्रतिनिधि संघ न्यायालय के समक्ष हाजिर हुआ और यह दलील दी कि उस समझौते को देखते हुए जो श्रम अपील अधिकरण के समक्ष किया जा चुका था, उक्त आवेदन को खारिज कर दिया जाना चाहिए। श्रम न्यायालय ने इस दलील को स्वीकार कर लिया और आवेदन खारिज कर दिया। औद्योगिक न्यायालय को की गई अपील में यह दलील दी गई थी कि इस बात को ध्यान में रखते हुए कि कोई भी कर्मकार ऐसी किसी कार्यवाही में हाजिर होने के लिए अनुज्ञात नहीं किया जा सकता जहां कि प्रतिनिधि संघ कर्मचारियों के प्रतिनिधि के रूप में हाजिर होता है, फिर भी यदि प्रतिनिधि संघ की कार्यवाही असद्भावपूर्ण थी तो श्रम न्यायालय को प्रतिनिधि संघ को हाजिर होने के लिए अनुज्ञात नहीं करना चाहिए था और इस प्रकार से कुप्रभावित कर्मकारों को अपना प्रतिनिधित्व करने से वंचित नहीं करना चाहिए था और तत्पश्चात् प्रतिनिधि संघ की प्रेरणा पर वाद को खारिज नहीं करना

1 [1962] 2 सप्ली० एस० सी० आर० 890.

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



चाहिए था। औद्योगिक न्यायालय ने अपील को खारिज कर दिया। उच्च न्यायालय में किया गया रिट पिटीशन असफल हो गया था और तत्पश्चात् यह मामला इस न्यायालय में लाया गया। मुम्बई इण्डस्ट्रियल रिलेशन्स ऐक्ट, 1946 के विभिन्न उपबंधों का सर्वांगीण पुनर्विलोकन करने के पश्चात् इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया था कि प्रतिनिधि संघ की सद्भावना और असद्भावना का मुम्बई इण्डस्ट्रियल रिलेसन्स ऐक्ट, 1946 के अधीन किसी कार्यवाही में प्रतिनिधि संघ से भिन्न किसी अन्य के हाजिर होने पर अधिरोपित रोक से कोई संबंध नहीं हो सकता। विनिश्चय में यहां तक सुझाव दिया गया कि जहां प्रतिनिधि संघ की कार्यवाही ऐसी भी हो जो कि कुछ कर्मकारों के लिए अलाभकर प्रतीत हो, फिर भी इसकी कार्यवाही की परीक्षा इस तथ्य की दृष्टि से की जानी होती है कि इस कार्यवाही का आशय कर्मकारों के एक भाग की आवश्यकता को पूरा करना नहीं है अपितु उन सभी कर्मकारों की आवश्यकता को पूरा करना है जिनका संघ प्रतिनिधित्व करता है। संयोगवश यह और बता दिया जाना चाहिए कि इस मामले में शक्तियों का प्रश्न नहीं उठाया गया था।

22. गिरजा शंकर के मामले में अपनाया गया मत **संतुराम खुदाई बनाम कीमत राय प्रिंटर्स एण्ड प्रोसेसर्स प्रा० लि० और अन्य**[1] के मामले में अभिपुष्ट और अनुमोदित कर दिया गया था, जिसमें इस न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया था कि विधान मण्डल ने मुम्बई इण्डस्ट्रियल रिलेशन्स ऐक्ट, 1946 के अधीन किसी कार्यवाही में कर्मकारों की ओर से हाजिर होने और कार्य करने के अनन्य अधिकार से प्रतिनिधि यूनियन को सशक्त कर दिया था और साथ ही साथ किसी अकेले कर्मचारी या कर्मकार को अधिनियम के अधीन किसी कार्यवाही में उस समय हाजिर होने या कार्य करने के अधिकार से वंचित कर दिया था जहां कि प्रतिनिधि संघ कर्मचारियों के प्रतिनिधि संघ के रूप में हाजिर होता है या कार्य करता है। शक्तियों का प्रश्न यहां भी नहीं उठाया गया था।

23. प्रथम दृष्ट्या, दी गई दलीलों और विवेचित विनिश्चयों को देखते हुए हमारा यह समाधान हो गया है कि इस चुनौती में कोई सार नहीं है कि सही अर्थान्वयन करने पर धारा 20(2) (ख) संविधान के अनुच्छेद 19(1) (क) और (ग) का अतिक्रमण करती है। तथापि, हमें यह स्पष्ट कर देना चाहिए कि हम संवैधानिकता के इस प्रश्न को और विस्तृत दलीलों तथा गंभीर परीक्षा के लिए खुला रख सकते हैं क्योंकि दलीलों के अंतिम क्षणों में इस मामले में पक्षकारों ने अपने मतभेदों को लगभग समाप्त कर दिया था तथा उनमें परस्पर सहयोग की भावना थी, जिसके प्रति हम अभी निर्देश करेंगे।

24. औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 में धारा 2(क) के

---

[1] [1978] 2 एस० सी० आर० 387.

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



अंत:स्थापन द्वारा विधि में किये गये परिवर्तन पर विधानमण्डल द्वारा भी धारा 20(2)(ख) के रूप में यह रक्षोपाय अंत:स्थापित करके दिया गया है, कि एक ऐसा अकेला कर्मकार जो या तो पदच्युत कर दिया गया है या उन्मोचित कर दिया गया है या हटा दिया गया है या जिसकी छंटनी कर दी गई है या जिसकी सेवा किसी और प्रकार से समाप्त कर दी गई है या जिसे निलंबित कर दिया गया है, किसी भी प्रकार से अपनी सेवा की समाप्ति स संबंधित औद्योगिक विवाद उठने का स्वयं ही हकदार होगा और उसकी सेवा की समाप्ति के आदेश की वैधता या विधिमान्यता से उद्भूत होने वाली कार्यवाही में अपने उपचार के लिए प्रयत्न करने में समर्थ होगा। प्रतिनिधि संघ, (उस कर्मकार के विरुद्ध) हाजिर होकर या कार्य करके कर्मकार को अतिष्ठित नहीं कर सकेगा या उसके प्रतिकूल कार्य नहीं कर सकेगा। ऐसे भी मामले हैं जहां कि एक ऐसे अकेले कर्मकार की संघ द्वारा न केवल अनदेखी ही कर दी गई थी जिसकी सेवा समाप्त कर दी गई थी और जो संघ द्वारा अपने मामले का समर्थन कराना चाहता था, अपितु प्राय: कार्यवाही से कर्मकार को अपवर्जित कराने के लिए प्रतिनिधि संघ की शक्ति, कार्यवाही में हाजिर होकर कर्मकार के नुकसान के लिए प्रयोग की गई थी और कर्मकार को अपवर्जित कराने के पश्चात् कार्यवाही को इस प्रकार निपटाने का प्रयत्न किया गया जिससे कि वह कर्मकार के लिए पूर्णत: अलाभकर हो सके और इस प्रकार से कर्मकार के पास कोई उपचार ही नहीं रह गया था। प्रतिनिधि संघ को ऐसी दमनकारी शक्ति से वंचित रखने के लिए सावधानी बरती गई है और इस स्थिति को 1971 के अधिनियम की धारा 22 में अंतर्विष्ट उपबंधों द्वारा और सशक्त किया गया है, जो धारा मान्यता रहित संघों को कुछ अधिकार प्रदान करती है - विशेषकर एक अकेले सदस्य के निलंबन, हटाये जाने, छंटनी, सेवा की समाप्ति या उन्मोचन से संबंधित सदस्य की शिकायतों के बारे में नियोजक से मिलने और विचार-विमर्श करने का अधिकार तथा नियोजक द्वारा आयोजित आंतरिक या विभागीय किसी जांच में उपक्रम में नियोजित सदस्यों की ओर से हाजिर होने का अधिकार भी प्रदान करती है। निस्संदेह यह व्यवस्था मुम्बई इण्डस्ट्रियल रिलेशन्स ऐक्ट, 1946 के ऐसे ही उपबंधों की तुलना में और अच्छा उपबंध है।

25. धारा 20 (2) (ख) और बम्बई इंडस्ट्रियल रिलेशन्स ऐक्ट, 1946 के उपबंध लगभग समविषयक है। प्रतिनिधि संघ की हैसियत, प्रकृति, शक्तियों और बाध्यताओं से संबंधित उपबंध, जैसे कि उपबंध बम्बई इंडस्ट्रियल रिलेशन्स ऐक्ट, 1946 में अनुष्ठापित किए गए हैं, उन उद्योगों को लागू करने के लिए भी विस्तारित कर दिए गए हैं जो उद्योग इस अधिनियम के अधीन नहीं

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



आते हैं किन्तु औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 के अन्तर्गत आते हैं। जहां एक प्रतिनिधि संघ धारा 20 (2) द्वारा प्रदत्त शक्तियों के प्रयोग में कार्य करता है तो वह इस प्रकार की बाध्यता के अधीन हो जाता है कि वह अपने सदस्यों तथा उपक्रम के उन अन्य कर्मकारों के बीच विभेद न करे जो इस संघ के सदस्य नहीं हैं। तथापि, जब औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 के अधीन किसी कार्यवाही में एक समझौता हो जाता है जिसमें प्रतिनिधि संघ हाज़िर हुआ है तो ऐसा समझौता उपक्रम के सभी कर्मकारों पर आबद्ध कर होता है। इसका अर्थ यह कि न तो प्रतिनिधि संघ ही और न नियोजक ही प्रतिनिधि संघ के सदस्यों तथा उन अन्य कर्मकारों के बीच भेदभाव कर सकता है जो संघ के सदस्य नहीं हैं। किन्तु फायदे, लाभ, अलाभ या ऐसे दायित्व जो औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की किसी ऐसी कार्यवाही में किए गए समझौते से उद्भूत होते हैं, जिस कार्यवाही में प्रतिनिधि संघ एक पक्षकार है, उपक्रम के प्रत्येक कर्मकार पर समान रूप से लागू होंगे। जहां तक लाभों का, और बाध्यताओं तथा दायित्वों का भी, संबंध है सदस्यों तथा उन कर्मकारों के बीच जो सदस्य नहीं हैं, मामूली सा भेदभाव भी नहीं होगा। धारा 20 (2) (ख) का इससे भिन्न निर्वचन इस धारा को अनुच्छेद 14 का अतिक्रमणकारी होने के कारण असंवैधानिक और अविधिमान बना देगा। सदस्यों तथा उन कर्मकारों जो सदस्य नहीं हैं, के साथ समान व्यवहार इस धारा में विवक्षित है और इसके निर्वचन के द्वारा हम इसे केवल स्पष्ट ही कर रहे हैं।

26. श्री लतीफी द्वारा एक यह गम्भीर शिकायत की गयी थी कि समझौते के आक्षेपित खंड 17 द्वारा वे कर्मकार भी जो संघ के सदस्य नहीं हैं, उस प्रतिनिधि संघ के लाभ के लिए अनिवार्य आहरण (कटौती) के अधीन हो जाते हैं जिसके राजनैतिक दर्शन से वे कर्मकार, जो सदस्य नहीं हैं, सहमत नहीं है और इस प्रकार से उन्हें एक प्रतिद्वंद्वी राजनैतिक दर्शन को अग्रसर करने के लिए संदाय करने के लिए बाध्य किया जाता है। यह और दलील दी गयी थी कि ऐसे राजनैतिक दर्शन की अभिवृद्धि के लिए यह संदाय एक प्रकार का कर है, जिस दर्शन को अपीलार्थी संघ के सदस्य सामान्य कर्मकारों के लिए हानिकर और अहितकर समझते हैं। समझौते का खंड 17 पहले ही उद्धृत किया जा चुका है। हड़ताल के पश्चात प्रथम प्रत्यर्थी, नियोजक और द्वितीय प्रत्यर्थी, प्रतिनिधि संघ के बीच एक समझौता किया गया था जिसके खंड 17 ने नियोजक को, प्रत्येक कर्मचारी को समझौते के अधीन संदेय सकल बकाया की 15 प्रतिशत रकम की, संघ की निधि में संदाय के रूप में, कटौती करने के लिए आदेश दिया है। यह भली-भांति ज्ञात है कि मजदूरी संदाय अधिनियम के अधीन आने वाले कर्मकार को संदेय मजदूरी और वेतन में से कोई भी कटौती

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



तब तक नहीं की जा सकती जब तक कि यह उक्त अधिनियम द्वारा प्राधिकृत न कर दी जाए। तथापि, पक्षकारों की सम्मति से किए गए समझौते ऐसी कटौती को अनुज्ञात कर सकते हैं क्योंकि यह कटौती पक्षकारों के बीच सहमति का परिणाम हैं, भले ही ऐसी कटौती मज़दूरी संदाय अधिनियम द्वारा प्राधिकृत न हो या इस अधिनियम के अधीन विधितः अनुज्ञेय न हो।

27. दलील यह है कि जहां वे सदस्य जो संघ बनाते हैं, सदस्यता फीस संदाय करते हैं तथा संघ के सदस्य होने के नाते प्रसुविधाएं और लाभ प्राप्त करते हैं, किन्तु वे व्यक्ति जो संघ के सदस्य नहीं हैं, बिना अपनी सहमति के अपने अर्जित धन में से कुछ देने के लिए इस प्रकार बाध्य किए जाते हैं, मानो कि वे एक ऐसा कर संदाय कर रहे हैं जो अनिवार्य है। यदि इसे धारा 20 (2) (ख) के अधीन अनुज्ञेय अभिनिर्धारित कर दिया जाता है तो या तो यह धारा संवैधानिक रूप से अविधिमान्य होगी या समझौते का वह भाग पृथक करने योग्य होने के कारण, उन व्यक्तियों के संदर्भ में जो सदस्य नहीं हैं, अविधिमान्य और अवैध होगी। देखने में यह दलील बहुत आकर्षक प्रतीत होती है किन्तु कोई भी व्यक्ति जिसे व्यापार संघ के कार्यकरण का कुछ भी ज्ञान और कुछ भी समझ है, वह विचारधीन उपबंध जैसे इस उपबंध के महत्व को भली भांति समझ जाएगा। यद्यपि यह दुर्भाग्यपूर्ण है किन्तु यह भलीभांति कुख्यात बात है कि कुछ मामलों में हड़ताल करवाना ही अपने आप में एक उद्योग बन गया है और व्यापार संघ कर्मकारों के मनोबल को उस अवस्था में बनाए रखने के लिए हड़ताल में धन लगाते हैं, जबकि हड़ताल के दौरान नियोजक कर्मकारों को मजदूरी नहीं देता। उचित शिकायत और बाध्यकारी हड़ताल की दशा में जब कर्मकार सामग्री और सहायता के अभाव में हड़ताल को सहन करने में असमर्थ हो जाते है तो व्यापार संघ उनके मनोबल को हड़ताल की अवधि के दौरान कुछ धन सहायता के द्वारा बनाए रखने में सहायता करते हैं। जब हड़ताल समाप्त होने के परिणामस्वरूप कोई समझौता हो जाता है या जहां बिना हड़ताल के भी कोई समझौता हो जाता है तो समझौते के अधीन निश्चित किए गए लाभ भूतलक्षी रूप से प्रभावी बनाए जाते हैं और समझौते के अधीन जब बकाया रकम का संदाय किया जाता है तो स्वभाविकतः वित्तीय प्रतिबंधों से स्वतंत्र होकर अपने क्रियाकलाप दृढ़ता से चलाने के लिए संघ उन कर्मकारों से कुछ प्रतिपूर्ति की आशा करेगा जिनके फायदे के लिए विवाद उठाया गया था और समझौता करने पर जिसके परिणामस्वरूप कर्मकारों को वित्तीय लाभ प्राप्त होते हैं। चूंकि वे कर्मकार जो सदस्य हैं तथा जो सदस्य नहीं हैं, दोनों ही समान रूप से समझौते के अधीन समान व्यवहार के लिए हकदार हैं तो दोनों को समझौते की शर्त के रूप में अपने फायदों का एक

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



भाग संघ के क्रियाकलापों के लिए छोड़ देने के लिए कहा जा सकता है। ऐसी कटौतियों को न तो अनिवार्य कटौती कहा जा सकता है और न अनिवार्य कर। अतः संघ को संदाय करने के लिए पक्षकारों के बीच उस दर पर, जिसके बारे में सहमति हो गयी है, कटौती का ऐसा उपबंध—चूंकि इस बारे में सहमति हो गयी है और जो सम्पूर्ण समझौते का एक भाग है—न तो अनुचित होगा और न अननुज्ञेय और न अवैध।

28. तथापि, श्री दानियाल लतीफी ने यह दलील दी कि उन कर्मकारों की दशा में जो सदस्य नहीं है, यह कटौती उनकी सहमति के बिना होगी और इसलिए इसमें प्रतिद्वंद्वी संघ के लाभ के लिए संदाय करने के लिए उन कर्मकारों को, जो सदस्य नहीं हैं, बाध्य करने की एक बुरी प्रवृत्ति है। अपनी इस दलील को और स्पष्ट करते हुए उन्होंने यह कहा कि व्यापार संघ आंदोलन कमोबेश रूप में राजनैतिक दलों के एक उपांग के रूप में विकसित हुआ है और इसलिए प्रत्येक संघ अपने अभिभावक दल द्वारा प्रभावित होता है और इसलिए प्रतिद्वंद्वी संघ से भी निस्संदेह एक प्रतिद्वंद्वी राजनैतिक दल का सहारा लेने की आशा की जाएगी, और भले ही प्रतिद्वंद्वी संघ ने एक प्रतिनिधि संघ की हैसियत प्राप्त न भी की हो फिर भी वह समझौते के द्वारा प्रतिनिधि संघ की निधियों में संदाय करने के लिए बाध्य होगा, जो धन प्रतिद्वंद्वी संघ को हानि पहुंचाते हुए, प्रतिनिधि संघ अपने दर्शन को प्रचारित करने के लिए खर्च करेगा। यह दलील दी गयी थी कि यह बात किसी कर्मकार को अपने विरोधी की विचारधारा के प्रचार के लिए अपनी इच्छा के विरुद्ध संदाय करने के लिए बाध्य करने की कोटि में आती है। हो सकता है इस दलील में कुछ कटु सत्य हों। तथापि, इसकी परीक्षा एकतरफा दृष्टिकोण से नहीं की जा सकती। इस दलील की परीक्षा व्यापार संघ आंदोलन के उचित परिप्रेक्ष्य में की जानी है। इधर-उधर की तड़क-भड़क को छोडकर, ऐसे उपबंध से यह दर्शित होगा कि फायदों और दायित्वों को समान रूप से बांटा जाना चाहिए। यदि एक प्रतिनिधि संघ के साथ किसी समझौते में कर्मकारों के लिए कुछ लाभ प्रोद्भूत होते हैं और धारा 20 (2) (ख) के सही निर्वचन पर, जो सर्वांगीण मानी गई है और इस प्रकार से कर्मकारों और नियोजक दोनों पर समान रूप से बाध्यकर मानी गई है, सभी फायदे उन कर्मकारों को भी उपलब्ध होंगे जो प्रतिनिधि संघ के सदस्य नहीं हैं और जिन्होंने एक प्रतिद्वंद्वी संघ बना लिया है। यदि इन कर्मकारों को फायदों से वंचित नहीं किया जा सकता है तो ये कर्मकार उस दशा में अनुचित लाभ उठाएंगे, यदि समझौते के अन्तर्गत किए गए समग्र सौदे से वे लाभ तो प्राप्त करते हैं और दायित्वों को त्याग देते हैं। अन्तर्संघीय विवादों को तय करने की दिशा में यह कोई उचित और न्यायसंगत बात नहीं

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



है । अतः समझौते के खंड 17 जैसे खंड को व्यापार संघ आंदोलन को सुदृढ़ करने तथा व्यापार संघ को वित्तीय निर्बंधनों से स्वतंत्र करने के संदर्भ में समझना होगा । वे कर्मकार जो संघ के सदस्य हैं, सदस्यता फीस का संदाय कर सकते हैं तथा सदस्यता के फायदों का लाभ उठा सकते हैं किन्तु प्रतिनिधि संघ की कार्यवाही से सभी कर्मकार लाभ या धन संबंधी फायदे अर्जित करते हैं तो व्यापार संघ आंदोलन के व्यापक हित में उन सभी कर्मकारों को जो सदस्य हैं तथा जो सदस्य नहीं हैं एक समान रूप से सामान्य बलिदान करने के लिए बाध्य किया जा सकता है और उस व्यापार संघ को सुदृढ़ बनाने के के लिए बाध्य किया जा सकता है जिस संघ ने अपने कार्यों के द्वारा सभी कर्मकारों के लिए फायदे अर्जित किए हैं । ऐसी परिस्थितियों में व्यापार संघ की निधि में किए गए संदाय को अर्जित किए लाभों के संदर्भ में तत्प्रतित के नाम से उल्लिखित किया जा सकता है । अतः हमें समझौते के खंड 17 में ऐसी कोई आपत्तिजनक बात नज़र नहीं आती जो खंड नियोजक को समझौते के अधीन प्रत्येक कर्मचारी को संदेय सकल बकाया राशि में से 15 प्रतिशत व्यापार संघ निधि के लिए अभिदाय के रूप में कटौती करने का निदेश देता है । इसी प्रकार से कर्मकार प्रतिद्वंद्वी संघ के राजनैतिक दर्शन में योगदान नहीं कर रहा है अपितु वह केवल प्राप्त किए किए गए फायदों की कीमत का संदाय कर रहा है । इससे प्रतिकूल दृष्टिकोण संघ के सदस्यों को हानि पहुंचाने और उन कर्मकारों को लाभ पहुंचाने में सहायक होगा जो सदस्य नहीं हैं और यह ऐसी स्थिति है जिस से हर कीमत पर बचना चाहिए । अतः समझौते का खंड 17 उन सदस्यों की सम्मति के अभाव में भी अविधिमान्य नहीं होगा जो अपीलार्थी संघ के सदस्य हैं । प्रतिनिधि संघ द्वारा चूंकि समझौता किया गया है इसलिए सभी कर्मकारों का प्रतिनिधित्व करने के इसके अधिकार में प्रतिद्वंद्वी संघ के सदस्यों की सम्मति भी विवक्षित होगी । सभी कर्मकारों का प्रतिनिधित्व करने के लिए प्रतिनिधि संघ के अधिकार का यही विधिक परिणाम है और इसकी कार्यवाही का यह बाध्यकारी प्रभाव है ।

29. श्रीमती राधा डी० डिसूजा ने, जो अपीलार्थी यूनियन की ओर से श्री दानियाल लतीफी के साथ हाजिर हुई हैं यह कहा कि प्रथम प्रत्यर्थी औद्योगिक उपक्रम के सभी सदस्यों को संघ में प्रवेश देने से प्रतिनिधि संघ के इन्कार ने उन कर्मकारों को अपीलार्थी संघ बनाने के लिए बाध्य कर दिया था जिन्हें सदस्यता से वंचित किया गया था द्वितीय प्रत्यर्थी प्रतिनिधि संघ के अध्यक्ष भी न्यायालय में उपस्थित थे और उनसे विचार-विमर्श करने के पश्चात् विद्वान काउन्सेल श्री एम० के० राममूर्ति ने न्यायालय में यह कहा कि प्रथम प्रत्यर्थी औद्योगिक उपक्रम के सभी

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



कर्मकार प्रतिनिधि संघ के सदस्य बनने के लिए हकदार हैं और पात्र हैं और द्वितीय प्रत्यर्थी प्रतिनिधि संघ के सदस्य बनने के लिए उचित आवेदन करने पर बिना किसी बाधा और रुकावट के उन्हें प्रवेश दे दिया जाए। श्रीमती राधा डिसूजा ने यह कहा कि अपीलार्थी संघ के सभी सदस्य यथासंभव शीघ्र आवेदन करेंगे और द्वितीय प्रत्यर्थी प्रतिनिधि संघ के अध्यक्ष ने यह कहा कि उन सबको किसी प्रकार की जांच के बिना संघ में प्रवेश दे दिया जाएगा। ऐसी सदस्यता दिए जाने पर अपीलार्थी संघ विघटित हो जाएगा। निस्संदेह यह प्रक्रिया व्यापार संघ आंदोलन को और सुदृढ़ करने में बहुत सहायक होगी।

30. मामले के सभी पहलुओं पर विचार करने तथा धारा 20(2) (ख) और 18 जून, 1984 के समझौते के खंड 17 के उस निर्वचन को देखते हुए जो हमने ऊपर किया है, यह अपील असफल होती है और खर्चों के बारे में किसी भी आदेश के बिना खारिज की जाती है।

31. पूर्वोल्लिखित समझौते के अधीन अपीलार्थी संघ के सदस्य को भी जिन लाभों का संदाय अभी किया जाना है वे आज से लेकर 2 मास के भीतर संदत्त कर दिए जाएंगे।

अपील खारिज की गई।

**शर्मा**

---

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

# बिहार राज्य

बनाम

# विष्णु चन्द लाल चौधरी और अन्य

(8 जनवरी, 1985)

(न्यायाधिपति ई० एस० वेंकटरामय्या और आर० बी० मिश्र)

**बिहार स्टेट मैनेजमेंण्ट आफ एस्टेट्स एड टेन्योर्स ऐक्ट, 1949 (1949 का 21)—धारा 31—संपदा का ले लिया जाना—धारा 3 (1) के अधीन राज्य द्वारा वादी-प्रत्यर्थी की संपदा के प्रबन्ध को अपने अधीन लेते हुए अधिसूचना का निकाला जाना—वादी द्वारा इस आधार पर वाद फाइल किया जाना कि वादगत संपदा के एक भाग का प्रबन्ध ग्रहण करते हुए उस अधिसूचना के निकालने के और भिन्न-भिन्न तौजियों की पृथक् संग्रहण विवरणियां तैयार न करने के कारण वादी को हानि हुई है—बाद में संपदा के अनधिसूचित भागों की बाबत भी अधिसूचना का निकाला जाना—चूंकि इस बात का कोई भी सबूत नहीं है कि राज्य या उसके अधिकारियों ने जानबूझकर व्यतिक्रम किया है या घोर उपेक्षा की है अथवा वादी के सांपत्तिक हितों में अप्राधिकृत रूप से मध्यक्षेप किया है, इसलिए वादी द्वारा राज्य और उसके अधिकारियों के विरुद्ध किया गया नुकसानी का दावा स्वीकार नहीं किया जायेगा।**

वादी हिन्दू अविभक्त कुटुम्ब का कर्ता था, जिसके स्वामित्व में इतनी अधिक संपत्तियां थीं, जो "राज नजरगंज" के रूप में ज्ञात थीं। उक्त संपत्तियां बिहार राज्य के पूर्णिया जिले और कुछ अन्य जिलों में तथा पश्चिम बंगाल राज्य में फैली हुई थीं। वादी पूर्णिया और मुंगेर जिले स्थित अनेक तौज़ियों का अभिलिखित स्वत्वधारी था और वह उक्त जिलों के भीतर अनेक भूधृतियों और पटनीसों का भी स्वत्वधारी था। वादी कर, उपकर आदि के रूप में लगभग 2,50,000/- रुपये वार्षिक का संदाय करने के दायित्वाधीन था। 1949 वाले वर्ष में बिहार विधान मण्डल ने बिहार स्टेट मैनेजमेंट आफ एस्टेट्स एण्ड टेन्योर्स ऐक्ट (बिहार राज्य संपदा और भूधृतियों का प्रवंधन अधिनियम), 1949 के रूप में ज्ञात विधि पारित की थी, जिससे कि बिहार प्रांत में संपदाओं और भूधृतियों के प्रबन्ध के लिए उपबंध किया जा सके। अधिनियम का आशय समुदाय के साधारण फायदे के लिए बिहार की भूमि वितरण पद्धति में सुधार लाना था। प्रबन्ध को हाथ में लेने और भूमि पर

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



नियंत्रण करने के सम्बन्ध में यह पाया गया था कि वह राज्य नीति के निदेशक तत्वों के कार्यान्वयन के लिए प्रारम्भिक कदम के रूप में आवश्यक है। अधिनियम की धारा 3 (1) के अधीन निकाली गई तारीख 19 नबम्वर, 1949 वाली अधिसूचना द्वारा वादी की संपदा राज्य सरकार के प्रबंधनाधीन ला दी गई। प्रतिवादी सं० 2, जो कि दरभंगा का अपर कलक्टर था, उक्त संपदा का प्रबन्धक नियुक्त किया गया। उसी बीच दरभंगा के महाराजाधिराज ने अधिनियम की विधिमान्यता को चुनौती देते हुए सिविल न्यायालय में वाद फाइल किया, क्योंकि उनकी संपदा भी अधिनियम की धारा 3 (1) के अधीन उसी प्रकार अधिसूचित कर दी गई थी। पटना उच्च न्यायालय ने अपनी असाधारण आरम्भिक सिविल अधिकारिता के प्रयोग में विचारण किए जाने के लिए वह वाद वापस ले लिया। वह वाद 5 जून, 1950 को विनिश्चित किया गया। उस निर्णय द्वारा पटना उच्च न्यायालय ने यह घोषित किया कि अधिनियम अधिकारातीत है और पूर्णतः शून्य है और उसने राज्य सरकार को अधिनियम प्रवृत्त करने से अवरुद्ध करते हुए व्यादेश जारी किया। उस निर्णय के विरुद्ध बिहार राज्य ने इस न्यायालय के समक्ष अपील की। तथापि, हमारे समक्ष इस मामले में जो वादी है, उसने उच्च न्यायालय के निर्णय के आधार पर 9 जून, 1950 को यह मांग की कि वह संपदा जिसका प्रबन्ध उससे ले लिया गया है, उसके कब्जे में वापस दे दी जानी चाहिए। 3 जुलाई, 1950 को तत्समय कलक्टर ने अपने पत्र द्वारा वादी को यह इत्तिला दी कि सरकार ने वादी की संपदाओं और भू-धृतियों का कार्यभार त्याग करने का विनिश्चय किया है और यह कि वादी को चाहिए कि वह 15 जुलाई, 1950 तक कार्यभार सम्भालने में सहयोग करे। 6 जुलाई, 1950 को सरकार ने अधिनियम की धारा 3 (1) के अधीन निकाली गई अधिसूचनाओं को पहले ही रद्द कर दिया था। जुलाई, 1950 के मध्य तक संग्रहण विषयक कागज-पत्र दे दिए गए। लेखा के सार और सारांश 7 अगस्त, 1950 को दे दिए गए। सरकार के प्रबन्ध के दौरान संपदा के सम्बन्ध में लगभग 1,46,000/- रुपए संगृहीत किए गए। उस प्रकार संपदा सौंप दिए जाने के पश्चात् वादी ने 21 सितम्बर, 1951 को पूर्णिया के अधीनस्थ न्यायाधीश के न्यायालय में वादी की संपदाओं और भू-धृतियों में दोषपूर्ण और अवैध हिसाब के लिए 2,00,000/- रुपए की नुकसानी के लिए तथा अन्य पारिणामिक अनुतोष के लिए वाद फाइल किया। वाद-पत्र इस आधार पर था कि वह अधिनियम असांविधानिक है, जैसा कि उच्च न्यायालय ने पहले ही घोषित कर दिया है और यह कि संपदा आदि के कब्जे और प्रबन्ध को हाथ में लेने का कार्य अवैध है। वादी ने यह अभिवचन किया कि चूंकि वह अधिनियम

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

शून्य घोषित किया जा चुका है, इसलिए प्रतिवादी न केवल वादी द्वारा वस्तुतः उठाई गई हानि की रकम के लिए ही दायी है, बल्कि वे उस रकम की पूर्ति के दायित्वाधीन भी है, जो कि वे संपदा के अपने प्रबन्ध के दौरान, जो कि दोषपूर्ण था, खर्च कर चुके थे। यह अभिकथन किया गया कि प्रतिवादियों की कार्यवाही में उपेक्षा, असद्भाव और दुर्भावना का दोष मौजूद है। लिखित कथन में प्रतिवादियों ने वाद-पत्र में किए गए सभी तात्विक कथनों का प्रतिवाद किया। यह बताया गया कि सरकार ने उन्हीं को संग्रहण करने वाला अभिकर्ता नियुक्त किया था जो कि वादी के अधीन कार्य कर रहे थे और प्रबन्ध का कार्य वापस कर दिए जाने के बाद उसने उन्हीं को ही अपने संग्रहण अभिकर्ताओं के रूप में नियुक्त किया था। वादी ने किसी आपत्ति के बिना अन्तिम लेखा स्वीकार कर लिया था जो कि प्रबन्ध की कालावधि की समाप्ति पर तैयार किए गए थे। तौजीज सं० 7/8, 30 और 38 जिनके बारे में कुछ विवाद था, प्रारम्भ से अन्त तक वादी के पास ही रहे थे और उनसे सम्बन्धित संग्रहण विषयक कागज-पत्र प्रतिवादी सं० 2 को अप्रैल, 1950 के बाद वाले भाग में सौंप दिये गए थे और यदि उक्त क्षेत्र में उससे पूर्व कोई भी संग्रहण नहीं किया जा सका, तो इसके लिए प्रतिवादियों को दोषी नहीं ठहराया जा सकता। प्रतिवादियों ने यह अभिवचन किया कि उन्होंने सद्भाविक रूप से अपने कर्त्तव्यों का पालन किया है। विचारण न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि प्रतिवादियों को चाहिए कि वे वादी को उस रकम की प्रतिपूर्ति करें जो उसने उनके प्रबन्ध की कालावधि के दौरान उन तौजियों से संग्रह की होती। उसी प्रकार से प्रतिवादी उस हानि को पूरा करने के दायित्वाधीन हैं जो कि बकाया या उन डिक्रियों के कारण हुई थी, जिन्हें वर्जित होने दिया गया। तदनुसार प्रारम्भिक डिक्री पारित की गई। उक्त प्रारम्भिक डिक्री के विरुद्ध प्रतिवादियों ने उच्च न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की। जब कि उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ के समक्ष अपील फाइल की गई, उस समय प्रतिवादियों ने यह दलील दी कि उच्च न्यायालय के उस विनिश्चय पर, जिसमें वह अधिनियम असांविधानिक घोषित कर दिया गया था, उच्चतम न्यायालय के बाद में दिए गए विनिश्चयों को देखते हुए उच्च न्यायालय को पुनर्विचार करने की जरूरत है। तदनुसार, खंड न्यायपीठ ने वह मामला 24 जुलाई, 1962 को बृहत्तर न्यायपीठ को निर्देशित कर दिया। उसके बाद पटना उच्च न्यायालय के पांच न्यायधीशों की पूर्ण न्यायपीठ ने उस मामले की सुनवाई की और यह घोषित किया कि अधिनियम असांविधानिक है। उसके बाद वह अपील पूर्ण न्यायपीठ की राय के अनुसार निपटारा किए जाने के लिए खंड न्यायपीठ को वापस निर्देशित कर दी गई। खंड न्यायपीठ का

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



यह मत था कि यद्यपि राज्य को यह अधिकार है कि वह अधिनियम की धारा 3 (1) के अधीन किसी संपदा के एक भाग को ही अधिसूचित करे, तथापि प्रतिवादी तौजी सं० 7/8 और 30 में अधिसूचित भागों के सम्बन्ध में संग्रहण विषयक उपयुक्त कागज-पत्रों को तैयार करने के लिए समुचित कदम उठाने के कर्त्तव्य से मुक्त नहीं थे। उसने यह अभिनिर्धारित किया कि प्रतिवादी समय पर संग्रहण विषयक कागज-पत्र न तैयार करने के लिए वादी को प्रतिकर देने के दायित्वाधीन हैं। उच्च न्यायालय द्वारा पारित डिक्री से व्यथित होकर बिहार राज्य ने उच्चतम न्यायालय के समक्ष अपील फाइल करने के लिए संविधान के अनुच्छेद 133 (1) (क) के अधीन उच्च न्यायालय से प्रमाण-पत्र लेकर उच्चतम न्यायालय में अपील फाइल की। वादी ने भी वैसा ही प्रमाण-पत्र प्राप्त किया, किन्तु वह बाद में रद्द कर दिया गया। अपील भागतः मंजूर करते हुए।

**अभिनिर्धारित**—बिहार राज्य संपदा और भू-धृतियों का प्रबन्धन अधिनियम, 1949 की धारा 31 में यह उपबन्ध किया गया था कि इस अधिनियम के अधीन सद्भाविक रूप से की गई या की जाने के लिए तात्पर्यित किसी बात के लिए या के कारण या के सम्बन्ध में या प्रान्तीय सरकार पर या उसके अधीनस्थ या इस अधिनियम के अधीन कार्य करने वाले अधिकारियों में से किसी पर न्यागत होने वाले किसी कर्त्तव्य का पालन करने में की गई किसी अभिकथित उपेक्षा या लोप के सम्बन्ध में या प्रान्तीय सरकार या उसके अधीनस्थ या इस अधिनियम के अधीन कार्य करने वाले किसी अधिकारी को इस अधिनियम द्वारा प्रदत्त किसी शक्ति के प्रयोग या प्रयोग में हुई असफलता के सम्बन्ध में, प्रान्तीय सरकार के किसी अधिकारी के जानबूझ कर किए गए व्यतिक्रम या की गई घोर उपेक्षा के कारण हुई हानि या हुए दुरुपयोग के कारण करने के सिवाय, राज्य सरकार या राज्य सरकार के किसी सेवक के विरुद्ध या राज्य सरकार के किसी सेवक के आदेशाधीन कार्य करने वाले किसी व्यक्ति के विरुद्ध किसी न्यायालय में न तो कोई वाद लाया जाएगा और न ही विधिक कार्यवाही की जाएगी"। बिहार एवं उड़ीसा जनरल क्लाजेज ऐक्ट, 1917 (बिहार और उड़ीसा साधारण खंड अधिनियम, 1917) की धारा 4 की उपधारा (22) के अधीन कोई भी बात "सद्भाविक रूप से" वहां की गई समझी जाएगी, जहां कि वह वास्तव में ईमानदारी के साथ की जाती है, चाहे वह उपेक्षा के साथ की गई हो या नहीं। यह अभिनिर्धारित करने के लिए कोई भी आधार नहीं है कि या तो राज्य सरकार या उसके अधीन कार्य करने वाले अधिकारियों में से किसी ने अधिनियम के अधीन अपने कर्त्तव्यों का निर्वहन करते हुए 19 नबम्बर, 1949 को अधिनियम की

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

धारा 3 (1) के अधीन अधिसूचना निकालने में, जिसके द्वारा केवल तौजी सं० 7/8 और 30 के भाग ही अधिसूचित किए गए थे, अप्रैल, 1950 के पहले अलग से संग्रहण सम्बन्धी विवरणी तैयार न करने में ईमानदारी के साथ कार्य नहीं किया था। ऐसा प्रतीत होता है कि गलती इसलिए हुई थी, क्योंकि स्वयं वादी ने उक्त तौजी, किश्तों में अर्जित की थी। इसके अलावा जैसे ही गलती बताई गई, प्रतिवादी सं० 2 ने अनधिसूचित हिस्से को भी अधिसूचित करने के सम्बन्ध में कदम उठाए और सरकार ने तदनुसार लगभग चार मास के भीतर अधिसूचना निकाली। चूंकि वादी ने किसी कारण से ही अप्रैल, 1950 तक समेकित संग्रहण विवरणी भी नहीं सौंपी थी, इसलिए पृथक् संग्रहण विवरणी अप्रैल, 1950 तक प्रतिवादी सं० 2 द्वारा तैयार नहीं करवाई जा सकी और स्वयं वादी के मतानुसार भी समेकित विवरणियों के आधार पर पृथक् संग्रहण विवरणियां तैयार करने में छह मास लगते। यह दर्शित नहीं किया गया है कि या तो राज्य सरकार को या उसके अधिकारियों में से किसी को पहले से यह ज्ञान था कि वादी ने समेकित लेखा विवरणी बनाए रखी और यह कि वादी को जानबूझकर नुकसान पहुंचाने की दृष्टि से, पहली अधिसूचना तौजी सं० 7/8 और 30 के एक प्रभाग के सम्बन्ध में ही निकाली गई। ये तथ्य किसी अभिकथित उपेक्षा या लोप पर आधारित किसी दावे के विरुद्ध अधिनियम की धारा 31 के अधीन वैध प्रतिरक्षा गठित करते थे, क्योंकि प्रतिवादियों की ओर से जानबूझकर किए गए किसी व्यतिक्रम या की गई घोर उपेक्षा का कोई भी सबूत नहीं था। कानूनी शक्ति के जानबूझकर किए गए किसी दुरुपयोग का कोई भी सबूत नहीं था और न ही उस शक्ति के हड़पे जाने का कोई सबूत था, जिसकी बावत प्राधिकारियों को ज्ञान था कि उनके पास वह शक्ति नहीं है। इन परिस्थितियों में 8000/- रुपए के दावे, जो कि विधि द्वारा प्राधिकृत रकम से अधिक प्रबन्ध करने की लागत के रूप में उपगत किए गए थे, के सम्बन्ध में सफल होने के सिवाय, सभी बातों के लिए किए गए नुकसानी के दावों को असफल होना चाहिए। (पैरा 28)

## निर्दिष्ट निर्णय

| | | पैरा |
|---|---|---|
| [1952] | [1952] एस० सी० आर० 889 :<br>**बिहार राज्य बनाम बिहार के महाराजाधिराज सर कामेश्वर सिंह और अन्य;** | 5 |
| [1950] | [1950] आई० एल० आर० 29 पटना 790 = ए० आई० आर० 1950 पटना 392 :<br>**महाराजाधिराज सर कामेश्वर सिंह बनाम बिहार राज्य;** | 11, 14 |

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



सिविल अपीली अधिकारिता : 1970 की सिविल अपील सं० 2296.

1955 की मूल डिक्री संख्या 248 के विरुद्ध पटना उच्च न्यायालय के तारीख 17 अगस्त, 1963 वाले निर्णय और डिक्री के विरुद्ध प्रमाण-पत्र लेकर की गई अपील।

**अपीलार्थी की ओर से** श्री डी० गोवर्धन

**प्रत्यर्थियों की ओर से** सर्वश्री जे० पी० गोयल और आर० ए० गुप्ता

न्यायालय का निर्णय न्यायाधिपति ई० एस० वेंकटरामय्या ने दिया।

**न्यायाधिपति वेंकटरामय्या**—

संविधान के अनुच्छेद 133(1)(क) के अधीन प्रमाण-पत्र लेकर की गई यह अपील वादी के साम्पत्तिक हित के साथ-साथ प्रतिवादियों द्वारा किए गए अतिचार और अप्राधिकृत हस्तक्षेप के कारण हुई नुकसानी के लिए अपकृत्य-स्वरूप की गई कार्रवाई से उद्भूत हुई है। प्रतिवादी बिहार राज्य और बिहार सरकार की सेवा में के अधिकारी जे० पी० मुखर्जी थे।

2. वादी, पृथ्वी चन्द लाल चौधरी हिन्दू अविभक्त कुटुम्ब का कर्ता था, जिसके स्वामित्व में इतनी अधिक सम्पत्तियां थीं, जो "राज नज़रगंज" के रूप में सामूहिक रूप में ज्ञात थीं। उक्त सम्पत्तियां बिहार राज्य के पूर्णिया जिले और कुछ अन्य ज़िलों में तथा पश्चिम बंगाल राज्य में भी फैली हुई थीं। वादी पूर्णिया और मुंगेर जिले स्थित अनेक **तौजियों** का अभिलिखित स्वत्वधारी था और वह उक्त जिलों के भीतर अनेक भू-धृतियों और **पटनीसों** का भी स्वत्वधारी था। वादी कर, उपकर आदि के रूप में लगभग 2,50,000/- रुपए वार्षिक का संदाय करने के दायित्वाधीन था।

3. 1949 वाले वर्ष में बिहार विधानमण्डल ने बिहार स्टेट मैनेजमेंट ऑफ एस्टेट्स एण्ड टेन्योर्स ऐक्ट (बिहार राज्य सम्पदा और भूधृतियों का प्रबंधन अधिनियम), 1949 (1949 का बिहार अधिनियम सं० 21) (जिसे इसमें इसके पश्चात् अधिनियम के रूप में निर्दिष्ट किया गया है) के रूप में ज्ञात विधि पारित की थी, जिससे कि बिहार प्रांत में सम्पदाओं और भूधृतियों के प्रबन्ध के लिए उपबंध किया जा सके। उसे 29 सितम्बर, 1949 को गवर्नर-जनरल की अनुमति मिली और वह 17 अक्तूबर, 1949 के बिहार राज्य के असाधारण राजपत्र में प्रकाशित किया गया। 26 जनवरी, 1950 को संविधान के प्रवृत्त होने पर, राष्ट्रपति ने उस अधिनियम को संविधान के अनुच्छेद 31(6) द्वारा प्रदत्त अपनी शक्तियों का प्रयोग करते हुए प्रमाणित किया। उक्त प्रमाण-पत्र, जो तारीख 11 मार्च, 1950 वाले अधिसूचना सं० 43/3/50-न्यायिक में प्रकाशित किया गया था, निम्नलिखित रूप में है—

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

"यह कि उक्त अधिनियम किसी भी न्यायालय में इस आधार पर प्रश्नगत नहीं किया जाएगा कि उससे अनुच्छेद 31 के खण्ड (2) के उपबंधों का उल्लंघन होता है या उससे भारत शासन अधिनियम, 1935 की धारा 299 की उपधारा (2) के उपबंधों का उल्लंघन हुआ है।"

4. अनुच्छेद 31 के खण्ड (2) और (6), जोकि इन मामलों के लिए सुसंगत हैं और जैसा कि वे संविधान के प्रारम्भ पर थे, निम्नलिखित रूप में हैं—

*"31. (1)......................................

(2) कोई स्थावर और जंगम सम्पत्ति, जिसके अन्तर्गत किसी वाणिज्यिक या औद्योगिक उपक्रम में या उसकी स्वामिनी किसी कम्पनी में कोई हित भी है, ऐसी विधि के अधीन जो ऐसा कब्जा या अर्जन करने का प्राधिकार देती है, लोक प्रयोजनों के लिए तब तक कब्जाकृत या अर्जित नहीं की जायेगी जब तक कि वह विधि कब्जाकृत या अर्जित सम्पत्ति के लिए प्रतिकर का उपबंध न करती हो और या तो प्रतिकर की रकम को नियत न कर दे या वे सिद्धांत और वह रीति विनिर्दिष्ट न कर दे जिनके आधार पर और जिससे प्रतिकर निर्धारित होना हैं और दिया जाना है।

... ... ... ...

(6) राज्य की कोई विधि, जो इस संविधान के प्रारम्भ से

* अंग्रेजी में यह इस प्रकार है—

"31. (1)......................................

(2) No property, moveable or immovable, including any interest in, or in any company owning any commercial or industrial undertaking, shall be taken possession of or acquired for public purposes under any law authorising the taking of such possession or such aquisition unless the law provides for compensation for the property taken possession of or acquired and either fixes the amount of the compensation, or specifies the principles on which, and the manner in which, the compensation is to be determined and given.

... ... ... ...

(6) Any law of the State enacted not more than

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



अठारह महीने से अनधिक पूर्व अधिनियमित की गई हो, ऐसे प्रारम्भ से तीन महीने के अन्दर राष्ट्रपति के समक्ष उसके प्रमाणन के लिये रखी जा सकेगी, तथा ऐसा होने पर यदि लोक-अधिसूचना द्वारा राष्ट्रपति ऐसा प्रमाणित करता है, तो किसी न्यायालय में वह इस आधार पर प्रश्नगत नहीं की जायेगी कि वह खंड (2) के उपबंधों का उल्लंघन करती है अथवा उससे भारत-शासन अधिनियम, 1935 की धारा 299 की उपधारा (2) के उपबंधों का उल्लंघन हुआ है।"

5. अधिनियम के उपबंधों का पुनर्विलोकन करने से यह दर्शित होता है कि उसका आशय समुदाय के साधारण फायदे के लिए बिहार की भूमि वितरण पद्धति में सुधार लाना था। प्रबंध को हाथ में लेने और भूमि पर नियंत्रण करने के संबंध में यह पाया गया था कि वह राज्य नीति के निदेशक तत्वों के कार्यान्वयन के लिए प्रारम्भिक कदम के रूप में आवश्यक है जहां तक अधिनियम की प्रकृति का संबंध है, वह बिहार भूमि सुधार अधिनियम, 1950 (1950 का अधिनियम सं० 30) के समरूप था, जिसकी सांविधानिक विधिमान्यता पर इस न्यायालय ने **बिहार राज्य** बनाम **बिहार के महाराजाधिराज सर कामेश्वर सिंह और अन्य**[1] वाले मामले में विचार किया था। अधिनियम का उद्देश्य सरकार को कृषकों के सामने इस दृष्टि से ला खड़ा करना था जिससे कि जमींदारी के उत्पादन में और अधिक सुधार सुविधाजनक हो सके। उसका आशय सिंचाई की और अधिक अच्छी सुविधाओं के लिए उपबंध करना और कृषकों से अधिक लगान या राजस्व की वसूली को निवारित करना भी था। अधिनियम के उद्देश्यों और कारणों का कथन, जोकि बिहार के राजपत्र में प्रकाशित किया गया था, यह बताया गया था—

"विगत कुछ वर्षों से प्रांत के कृषकों के बीच जमीदारी विरोधी आन्दोलन व्यापक रूप से फैला हुआ है, जिसके परिणामस्वरूप कृषि क्षेत्र में प्रायः परेशानियां उत्पन्न हुई हैं। जैसा कि भली-भांति

---

eighteen months before the commencement of this Constitution may within three months from such commencement be submitted to the President for his certification. and thereupon, if the President by public notification so certifies, it shall not be called in question in any court on the ground that it contravenes the provisions of clause (2) of this article or has contravened the provisions of sub-section (2) of section 299 of the Government of India act, 1935".

[1] [1952] एस० सी० आर० 889.

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

ज्ञात है, वे परेशानियां असंतोष की उस भावना से अंकुरित होती हैं, जो कि अभिधारी सिंचाई संबंधी सुविधाओं को बनाए रखने की व्यवस्था करने की ज़मीदारों की असफलता के कारण अबवाब की वसूली के कारण, लगान में अभिवृद्धि होने के कारण और जोतों से बेदखली के कारण और उसी प्रकार के अन्य कारणों से उनके विरुद्ध रखते हैं। सिंचाई संबंधी सुविधाओं के बनाए रखने के प्रति ज़मीदारों की उदासीनता वस्तुरूप में दिए जाने वाले लगानों को नकद लगान में बड़े पैमाने पर परिवर्तित कर दिए जाने के कारण अभी हाल में बहुत बढ़ गई है। सभी संबंधित व्यक्तियों के हित में और विशिष्टत: "अधिक खाद्य पदार्थ उपजाओ" कार्यक्रम को अग्रसर करने की दृष्टि से संपदाओं और भू-धृतियों के, सरकार द्वारा, प्रबन्ध को अपने हाथ में लिया जाना आवश्यक हो गया। इसी कारण से यह विधेयक पुर:स्थापित किया गया है। उस परेशानी से, जोकि ज़मीदारों के कारकुन इस समय किसानों के लिए उत्पन्न करते हैं, उन्हें बचाने के लिए पर्याप्त प्रबन्ध करने की दृष्टि से, लगान की बकाया की वसूली के लिए की जाने वाली मुकदमेबाजी में विनाशकारी रूप से धन का व्यय करने से उन्हें बचाने की दृष्टि से और उन सभी बातों के अलावा सिंचाई संबंधी सुविधाओं की व्यवस्था करके उन्हें फायदा पहुंचाने की दृष्टि से सरकार के प्रबन्ध के अधीन ऐसा करने का प्रस्ताव है। विधेयक में विनिर्दिष्ट उद्देश्यों के लिए संदाय करने और प्रबन्ध की लागत के लिए युक्तियुक्त अतिशेष आरक्षित करने के बाद, शुद्ध अधिशेष स्वत्वधारियों को संदत्त कर दिया जाएगा।"

6. अधिनियम की धारा 3 से लेकर 5 अधिनियम के अध्याय II में थीं। धारा 3 में निम्नलिखित रूप में उपबंध किया गया था—

*"3. (1) प्रान्तीय सरकार, अधिसूचना द्वारा, यह घोषित कर सकेगी कि अधिसूचना में विनिर्दिष्ट किसी स्वत्वधारी या भूधृतिधारक की सम्पदाएं या भू-धृतियां प्रान्तीय सरकार के प्रबन्धनाधीन रखी जाएंगी और उक्त अधिसूचना के प्रकाशन पर, ऐसे स्वत्वधारी या

---

* अंग्रेजी में यह इस प्रकार है :—

"3. (1) The Provincial Government, may by notification declare that the estates or tenures of a proprietor or tenure-holder, specified in the notification, shall be placed under the management of the Provincial Govern-

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



भूधृतिधारक की सम्पदाओं या भू-धृतियों की बाबत उस समय तक जब तक कि वह अधिसूचना प्रवृत्त बनी रहती है, यह समझा जाएगा कि वे प्रबन्ध के प्रारम्भ की तारीख से प्रान्तीय सरकार के प्रबन्धनाधीन रखी गई हैं।

(2) उपधारा (1) के अधीन अधिसूचना—

(क) सम्पदाओं या भू-धृतियों की ऐसी विशिष्टियां विनिर्दिष्ट करेगी जो विहित की जाएं;

(ख) वह कालावधि विनिर्दिष्ट करेगी, जिसके लिए सम्पदाएं या भू-धृतियां प्रान्तीय सरकार के प्रबन्धनाधीन रखी जाएंगी; और

(ग) ऐसी सम्पदाओं या भू-धृतियों का प्रबन्ध ऐसे व्यक्ति में निहित करेगी जो डिप्टी कलक्टर (जिसे इसमें इसके पश्चात् प्रबन्धक कहा गया है) की पंक्ति के नीचे का अधिकारी नहीं होगा।

(3) उपधारा (1) के अधीन अधिसूचना राजपत्र में प्रकाशित की जाएगी और ऐसी अधिसूचना की प्रति रसीदी रजिस्ट्रीकृत डाक

---

ment and on the publication of the said notification, the estates or tenures of such proprietor or tenure-holder shall, so long as the notification remains in force, be deemed to have been placed under the management of the Provincial Government with effect from the date of the commencement of management.

(2) The notification under sub-section (1) shall—

(a) specify such particulars of the estates or tenures as may be prescribed;

(b) specify the period for which the estates or tenures shall be placed under the management of the Provincial Government; and

(c) vest the management of such estates or tenures in a person who shall be an officer not below the rank of Deouty Collector (hereinafter called the Manager).

(3) The notification under sub-section (1) shall be published in the Official Gazettee and a copy of such

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

द्वारा, उन सम्पदाओं के स्वत्वधारी को, जो ऐसी भूमियों के जिनकी बाबत राजस्व का संदाय किया जाता है या जो राजस्व के संदाय से मुक्त हों, उन साधारण रजिस्टरों में दर्ज की गई हों, जोकि लैंड रजिस्ट्रेशन ऐक्ट, 1876 के अधीन रखे गए हों या उस दशा में, जिसमें कि ऐसी सम्पदाएं किन्हीं ऐसे रजिस्टरों में दर्ज नहीं की जाती हैं और भू-धृतिधारकों की दशा में, यथास्थिति, सम्पदाओं या भू-धृतियों के स्वत्वधारी या भू-धृतिधारक को उस दशा में भेजी जाएगी, यदि जिले के कलक्टर के कब्जे में ऐसे स्वत्वधारियों या भू-धृतिधारकों की उनके पते सहित, सूची हो।

(4) जहां कि ऐसी अधिसूचना उपधारा (3) में उपबंधित रीति से डाक से भेजी जाती है, वहां ऐसी अधिसूचना का प्रकाशन और उसे डाक में डालना ऐसे स्वत्वधारी या भू-धृतिधारक को, जिसकी सम्पदाएं या भू-धृतियों पर उपधारा (1) के अधीन निकाली गई अधिसूचना का प्रभाव पड़ता है, घोषणा की सूचना का और स्वत्वधारी या भू-धृतिधारक पर ऐसी सूचना तामील करने का निश्चायक साक्ष्य होगा।"

7. अधिनियम की धारा 4 में किसी सम्पदा या भू-धृति के संबंध में अधिसूचना निकालने के परिणाम अधिकथित किए गए हैं। उसमें अन्य बातों

---

notification shall be sent by registered post, with an acknowledgement due, to the proprietor of the estates recorded in the general registers of revenue paying or revenue-free lands maintained under the Land Registration Act, 1876, or in case such estates are not recorded in any such registers, and in the case of tenure-holders, to the proprietor or tenure-holder of the estates or tenures, as the case may be, if the Collector of the district is in possession of a list of such proprietors or tenure-holders together with their addresses.

(4) The publication and positing of such notification, where such notification is sent by post, in the manner provided in sub-section (3), shall be conclusive evidence of the notice of the declaration to the proprietor or tenure-holder whose estates or tenures are affected by the notification under sub-section (1) and of the service of such notice on the proprietor or tenure-holder."

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



के साथ-साथ यह उपबंध किया गया है कि (क) स्वत्वधारी या भू-धृतिधारक को अपनी सम्पदाओं या भू-धृतियों के प्रबन्ध की कोई भी शक्ति नहीं रह जाएगी और (2) धारा 7, 8, 9, 10, 11 और 12 के उपबंधों के अध्यधीन रहते हुए, प्रबन्धक सम्पदाओं या भू-धृतियों, ऐसे भवनों, सम्पदाओं या भू-धृतियों से संबंधित कागज़-पत्र और अन्य सम्पत्तियों के साथ-साथ ऐसी सम्पदाओं या भू-धृतियों का भारसाधन करेगा, जैसा कि प्रवन्धक की राय में, सम्पदाओं या भू-धृतियों के उचित प्रबन्ध के लिए आवश्यक हैं ।

8. अधिनियम की धारा 5 निम्नलिखित रूप में है—

*"5. प्रबन्धक, ऐसे लिखित आदेश द्वारा, स्वत्वधारी या भू-धृतिधारक या अपने अभिकर्ताओं से और कर्मचारियों से उस तारीख को जो ऐसे आदेश में विनिर्दिष्ट की जाए, ऐसे स्वत्वधारी या भू-धृतिधारक की सम्पदाओं या भू-धृतियों से संबंधित ऐसी दस्तावेज़ें, कागज़-पत्र या रजिस्टर उसके समक्ष पेश करने की या उसे ऐसी सूचना, जैसी कि प्रबन्धक सम्पदाओं या भू-धृतियों के प्रबन्ध के लिए आवश्यक समझे, देने की अपेक्षा कर सकेगा :

परन्तु स्वत्धारी या भू-धृतिधारक को या तो स्वयं या अपने प्राधिकृत अभिकर्ता के ज़रिए ऐसे लिखित आदेश का अनुपालन करने का विकल्प होगा ।"

9. अधिनियम के अध्याय III में प्रान्तीय सरकार के प्रबन्धनाधीन रखी गई न्यास से सम्पदाओं या भू-धृतियों, वास-भूमियों और कृषि तथा उद्यान-कर्म विषयक प्रयोजनों के लिए प्रयुक्त भूमियों से तथा सम्पदाओं या भू-धृतियों में समाविष्ट कतिपय भवनों से संबंधित विशेष उपबंध अंतर्विष्ट थे। अधिनियम के अध्याय IV के अधीन ऐसे बंधकदारों और पट्टेदारों को हटाने के लिए प्राधिकृत किया गया है, जिनके कब्जे में ऐसी कोई सम्पदा या भू-धृति

---

* अंग्रेजी में यह इस प्रकार है—

"5. The Manager may, by a written order, require the propietor tenure-holder or his agents and employees on a date to be specified in such order to produce before him such documents, papers or registers relating to the estates or tenures of such proprietor or tenure-holder or to furnish him with such information as the Manager may deem necessary for the management of the estates or tenures :

Provided that the proprietor or tenure-holder shall have the option to comply with snch written order either himself or through his authorised agent."

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



हो। अध्याय V में प्रत्याभूत लेनदारों और ऐसे अन्य व्यक्तियों द्वारा, जिनके कब्जे में ऐसी सम्पदा या भू-धृतियां हैं, किए गए दावों के फाइल करने के दायित्वों के अवधारण के उनके समापन के लिए प्रस्तुत की जाने वाली स्कीम को तैयार करने के सम्बन्ध में उपबंध अंतर्विष्ट थे। अधिनियम के अध्याय VI में प्रत्याभूत लेनदारों से भिन्न लेनदारों द्वारा किए गए दावों के फाइल न करने के सम्बन्ध में उपबंध किया गया था। अध्याय VII में कतिपय सम्पदाओं के विक्रय से संरक्षा देने के सम्बन्ध में उपबंध किए गए थे। अधिनियम के अध्याय VIII में प्रबन्धक द्वारा सम्पदाओं का प्रबन्ध करने के सम्बन्ध में विस्तृत उपबंध अन्तर्विष्ट थे। अधिनियम की धारा 22 में जोकि अध्याय VIII में थी, यह उपबंध किया गया था कि "प्रत्येक प्रबन्धक उसको सौंपी गई सम्पत्ति का प्रबन्ध तत्परतापूर्वक और ईमानदारी के साथ करेगा और प्रत्येक बात के सम्बन्ध में अपने सर्वोत्तम निर्णय के अनुसार कार्य करेगा।" अधिनियम के अध्याय IX में प्रबन्धक के आदेशों के विरुद्ध विहित प्राधिकारी को अपील करने के लिए उपबंध किया गया था। अध्याय X में सम्पदा और भू-धृति प्रबन्ध सलाहकार समिति के गठन के लिए और उनके कृत्यों के लिए उपबन्ध किया गया था। अधिनियम की धारा 30 और 31 के अधीन, जोकि अध्याय XI में थीं, उनमें विनिर्दिष्ट विषयों के सम्बन्ध में न्यायालय की अधिकारिता को वर्जित किया गया था। वे निम्नलिखित रूप में हैं :—

> *"30. किसी विधि में अंतर्विष्ट किसी बात के या विधि का बल रखने वाली किसी बात के होते हुए भी, धारा 3 की उपधारा (1) के अधीन प्रान्तीय सरकार की घोषणा और धारा 13 की उपधारा (1) के अधीन प्रबन्धक का आदेश या जहां अपील की गई हो, धारा 27 के अधीन अपील प्राधिकारी का आदेश, इस अधिनियम के उपबंधों के अध्यधीन रहते हुए, अंतिम होगा और किसी भी न्यायालय में प्रश्नगत नहीं किया जाएगा, और जब तक प्रान्तीय सरकार ऐसी सम्पदाओं

---

* अंग्रेजी में यह इस प्रकार है—

"30. Notwithstanding anything contained in any lawor anything having the force of law, the declaration of the Provincial Government under sub-section (1) of Section 3 and the order of the Manager under sub-section (1) of the section 13 or where an appeal has been preferred, the order of the appellate authority under section 27, shall, subject to the provision of this Act be final and shall not be questioned in any Court; and s o-

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



और भू-धृतियों का प्रबन्ध करती रहती है, तब तक न्यायालय के लिए ऐसा आदेश करना या ऐसी कोई बात करना विधिपूर्ण नहीं होगा, जो किसी भी रीति से प्रान्तीय सरकार द्वारा किए जाने वाले ऐसे प्रबन्ध में हस्तक्षेप करे या जिसका प्रभाव हस्तक्षेप करने के समान हो।"

31. इस अधिनियम के अधीन सद्भाविक रूप से की गई या की जाने के लिए तात्पर्यित किसी बात के लिए या के कारण या के सम्बन्ध में या प्रान्तीय सरकार पर या उसके अधीनस्थ या इस अधिनियम के अधीन कार्य करने वाले अधिकारियों में से किसी पर न्यागत होने वाले किसी कर्तव्य का पालन करने में की गई किसी अभिकथित उपेक्षा या लोप के सम्बन्ध में या प्रान्तीय सरकार या उसके अधीनस्थ या इस अधिनियम के अधीन कार्य करने वाले किसी अधिकारी को इस अधिनियम द्वारा प्रदत्त किसी शक्ति के प्रयोग या प्रयोग में हुई असफलता के सम्बन्ध में, प्रान्तीय सरकार के किसी अधिकारी के जानबूझकर किए गए व्यतिक्रम या की गई घोर उपेक्षा के कारण हुई हानि या हुए दुरुपयोजन के कारण करने के सिवाय क्राउन या क्राउन के किसी सेवक के विरुद्ध या क्राउन के किसी सेवक के आदेशाधीन कार्य करने वाले किसी व्यक्ति के विरुद्ध किसी

---

long as the management of the estates and tenures by the Provincial Government continues, it shall not be lawful for any court to pass any order or do anything which may in any way interfere or have the effect of interfering with such management by the Provincial Government.

31. No suit or other legal proceeding shall lie in any court against the Crown or any servant of the Crown or against any person acting under the orders of a servant of the Crown for, or on account of, or in respect of anything done or purporting to be done in good faith under this Act or in respect of any alleged neglect or omission to perform any duty devolving on the Provincial Government or any of the officers subordinate to it and acting under this Act or in respect of the exercise of, or the failure to exercise, any power conferred by this Act on the Provincial Government or any officer subordinate to it and acting under this Act, except for the loss or the

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

न्यायालय में न तो वाद लाया जाएगा और न ही विधिक कार्यवाही की जाएगी ।"

10. अधिनियम के अध्याय XII में सरकार द्वारा किए गए प्रबन्ध की कालावधि के दौरान स्वत्वधारी या भू-धृतिधारक द्वारा या के विरुद्ध लाए गए वाद और की गई अपीलों से सम्बन्धित कुछ प्रकीर्ण उपबंध अंतर्विष्ट हैं। अधिनियम के अध्याय XIII में आई हुई धारा 33 में सरकार द्वारा हाथ में ली गई सम्पदा के प्रबन्ध के त्यजन के लिए और अन्य पारिणामिक विषयों के लिए उपबंध किया गया है। अधिनियम के अन्य भागों में अन्य प्रकीर्ण विषयों के सम्बन्ध में उपबंध किया गया है।

11. अधिनियम की धारा 3(1) के अधीन निकाली गई तारीख 19 नवम्बर, 1949 वाली अधिसूचना द्वारा वादी की सम्पदा अर्थात् "राज नज़रगंज एस्टेट" राज्य सरकार के प्रबंधनाधीन ला दी गई। प्रतिवादी सं० 2, जे०पी० मुखर्जी, जोकि दरभंगा का अपर कलक्टर था, उक्त सम्पदा का प्रबन्धक नियुक्त किया गया। उसी बीच दरभंगा के महाराजाधिराज, सर कामेश्वर सिंह ने अधिनियम की विधिमान्यता को चुनौती देते हुए सिविल न्यायालय में वाद फाइल किया क्योंकि उनकी सम्पदा भी अधिनियम की धारा 3(1) के अधीन उसी प्रकार अधिसूचित कर दी गई थी। पटना उच्च न्यायालय ने अपनी असाधारण आरम्भिक सिविल अधिकारिता के प्रयोग में विचारण किए जाने के लिए वह वाद वापस ले लिया। वह वाद 5 जून, 1950 को विनिश्चित किया गया। उस वाद में उच्च न्यायालय का निर्णय **महाराजाधिराज सर कामेश्वर सिंह** बनाम **बिहार राज्य**[1] वाले मामले के रूप में प्रतिवेदित है। उस निर्णय द्वारा पटना उच्च न्यायालय ने यह घोषित किया कि अधिनियम अधिकारातीत है और पूर्णतः शून्य है और उसने राज्य सरकार को अधिनियम प्रवृत्त करने से अवरुद्ध करते हुए व्यादेश जारी किया गया। उस निर्णय के विरुद्ध बिहार राज्य ने इस न्यायालय के समक्ष अपील की। तथापि, हमारे समक्ष इस मामले में जो वादी है, उसने उच्च न्यायालय के निर्णय के आधार पर 9 जून, 1950 को यह मांग की कि वह सम्पदा जिसका प्रबन्ध उससे ले लिया गया है, उसके कब्जे में वापस दे दी जानी चाहिए। 3 जुलाई, 1950 को तत्समय कलक्टर ने अपने पत्र द्वारा वादी को यह इत्तिला दी कि सरकार ने वादी की सम्पदाओं और भू-धृतियों का कार्य-भार त्याग करने का विनिश्चय किया है और यह कि वादी को चाहिए कि वह 15 जुलाई, 1950

---

misapplication occasioned by the wilful default or gross negligence of any officer of the Provincial Government."

[1] [1950] आई० एल० आर० 29 पटना 790=ए० आई० आर० 1950 पटना 392.

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh


तक कार्य-भार संभालने में सहयोग करे। 6 जुलाई, 1950 को सरकार ने अधिनियम की धारा 3(1) के अधीन निकाली गई अधिसूचनाओं को पहले ही रद्द कर दिया था। जुलाई, 1950 के मध्य तक संग्रहण विषयक कागज-पत्र दे दिए गए। लेखा के सार और सारांश 7 अगस्त, 1950 को दे दिए गए। सरकार के प्रबन्ध के दौरान सम्पदा के सम्बन्ध में लगभग 1,46,000/- रुपए संगृहीत किए गए। उस प्रकार सम्पदा सौंप दिए जाने के पश्चात् वादी ने 21 सितम्बर, 1951 को पूर्णिया के अधीनस्थ न्यायाधीश के न्यायालय में वादी की सम्पदाओं और भू-धृतियों में दोषपूर्ण और अवैध हिसाब के लिए 2,00,000/- रुपए की नुकसानी के लिए तथा अन्य पारिणामिक अनुतोष के लिए वाद फाइल किया।

12. वाद-पत्र इस आधार पर था कि वह अधिनियम असांविधानिक है, जैसा कि उच्च न्यायालय ने पहले ही घोषित कर दिया है और यह कि सम्पदा आदि के कब्जे और प्रबन्ध को हाथ में लेने का कार्य अवैध है। वादी ने यह अभिवचन किया कि चूंकि वह अधिनियम शून्य घोषित किया जा चुका है, इसलिए प्रतिवादी न केवल वादी द्वारा वस्तुतः उठाई गई हानि की रकम के लिए ही दायी हैं, बल्कि वे उस रकम की पूर्ति के दायित्वाधीन भी हैं, जो कि वे सम्पदा के अपने प्रबन्ध के दौरान, जो कि दोषपूर्ण था खर्च कर चुके थे। यह अभिकथन किया गया कि प्रतिवादियों की कार्यवाही में उपेक्षा, असद्भाव और दुर्भावना का दोष मौजूद है। वादी ने यह दावा किया कि प्रतिवादी उसके द्वारा उठाई गई सभी हानियों के लिए अपकृत्य-कर्त्ताओं के रूप में, संयुक्ततः और पृथक्तः दायित्वाधीन हैं। वाद के पैरा 27 में वादी ने मोटे तौर पर अपने दावे के आधार इस प्रकार प्रस्तुत किए : (क) यह कि प्रतिवादियों ने घोर उपेक्षा और जानबूझकर किए गए व्यतिक्रम के कारण सम्पदाओं और भू-धृतियों में वादियों के हित के एक भाग को अधिसूचित करके तथा उसका कब्जा लेकर और पहले ही अवसर पर अपनी सम्पदाओं और भू-धृतियों के अन्य भाग को अधिसूचित करने में लोप करके धारा 3(1) के उपबंधों का उल्लंघन किया है, जबकि तारीख 19 नवम्बर, 1949 वाली अधिसूचना निकाली गई, तो सरकार सभी लगानों और अन्य देय रकमों की वसूली करने में असमर्थ थी, (ख) यह कि गलत अधिसूचनाओं में उसकी सम्पदाओं और भू-धृतियों के सभी भागों को अधिसूचित करने में हुए लोप के कारण तथा वादी द्वारा अपनी सम्पदाओं और भू-धृतियों के सम्बन्ध में उसके द्वारा रखी गई समामेलित जमाबन्दी के कारण अधिसूचित सम्पदाओं और भू-धृतियों के शेष अंश की पूरी तरह से वसूली नहीं कर सका, (ग) यह कि कतिपय लगान और डिक्रियां समय द्वारा वर्जित होने दी गईं और (घ) यह

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कि कृषिक आयकर के संदाय के कारण और शास्ति के पारिणामिक अधिरोपण के कारण जोकि अपील करने पर निस्सन्देह कम करके 2000 रुपए कर दी गई थी, सम्पदा को 2000 रुपए की हानि हुई। उसने यह भी अभिवचन किया कि प्रतिवादी सं० 2 और उसके कर्मचारिवृन्द द्वारा संग्रहण विषय गलत प्रमाण-पत्र देने के कारण वादी को कुछ हानि उठानी पड़ी, जो कि अभी भी अभिनिश्चित नहीं की जा सकी है।

13. लिखित कथन में प्रतिवादियों ने वाद-पत्र में किए गए सभी तात्विक कथनों का प्रतिवाद किया। उन्होंने अन्य बातों के साथ-साथ यह अभिवचन किया कि अधिसूचना नवम्बर, 1949 में कलक्टर पी० के० जे० मैनन की अध्यपेक्षा के आधार पर निकाली गई थी और यह कि प्रतिवादी सं० 2 को उस अधिसूचना द्वारा प्रबन्धक नियुक्त किया गया था। उपेक्षा, असद्भाव और दुर्भावना विषयक कथनों से इंकार किया गया। प्रतिवादियों ने यह अभिवचन किया कि सरकार के अभिलेख में उपलभ्य जानकारी के आधार पर अधिसूचना नवम्बर, 1949 में निकाली गई और वादी के निवेदन पर सत्यापन करने के बाद 16 मार्च, 1950 को दूसरी अधिसूचना निकाली गई और यह कि वादी ने दूसरी अधिसूचना निकालने का निवेदन इसलिए किया था जिससे कि वह विधि की उस आदेशिका से जोकि उसके लेनदारों ने उसके विरुद्ध प्राप्त की थी, बच सके और लेनदारों से अपनी समस्त सम्पत्तियों को बचा सके। वास्तव में सरकार ने उन्हीं को संग्रहण करने वाला अभिकर्ता नियुक्त किया था जोकि वादी के अधीन कार्य कर रहे थे और प्रबन्ध का कार्य वापस कर दिए जाने के बाद, उसने उन्हीं को ही अपने संग्रह अभिकर्ताओं के रूप में नियुक्त किया था। वादी ने किसी आपत्ति के बिना अंतिम लेखा स्वीकार कर लिया था जोकि प्रबन्ध की कालावधि की समाप्ति पर तैयार किए गए थे। तौज़ीज़ सं० 7/8, 30 और 38 जिनके बारे में कुछ विवाद था, प्रारम्भ से अंत तक वादी के पास ही रहे थे और उनसे सम्बन्धित संग्रहण विषय कागज-पत्र प्रतिवादी सं० 2 को अप्रैल, 1950 के बाद वाले भाग में सौंप दिए गए थे और यदि उक्त क्षेत्र में उससे पूर्व कोई भी संग्रहण नहीं किया जा सका, तो इसके लिए प्रतिवादियों को दोषी नहीं ठहराया जा सकता। प्रतिवादियों ने यह अभिवचन किया कि उन्होंने सद्भाविक रूप से अपने कर्तव्यों का पालन किया था।

14. यहां पर जिस एक तथ्य की ओर ध्यान देने की आवश्यकता है, वह यह है कि वाद पत्र में अधिनियम की धारा 31 के जोकि ऊपर उपवर्णित की गई है, प्रभाव के प्रति कोई भी निर्देश नहीं किया गया, किन्तु वह इस आधार पर पेश किया गया है कि अधिनियम असांविधानिक है। विचारण

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



समाप्त होने पर, विचारण न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि सकल संग्रहण के 12-1/2% से ऊपर प्रतिवादी सं० 2 द्वारा उपगत प्रबन्ध की लागत अत्यधिक है और प्रतिवादियों को ऐसी आधिक्यपूर्ण रकम लौटा देनी चाहिए। दूसरी बार उसने यह अभिनिर्धारित किया कि तौजी सं० 7/8 और 30 में वादी द्वारा धृत सभी हिस्सों को अधिसूचित न करके जो गलती हुई, उसके परिणामस्वरूप प्रथमतः देय रकमों का संग्रहण नहीं हुआ और उसके कारण वादी को नुकसान उठाना पड़ा। विचारण न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि चूंकि प्रतिवादी अतिचारी हैं, इसलिए वादी का उनके प्रति ऐसा कोई कर्त्तव्य नहीं था कि वह उन्हें पृथक् की गई जमाबन्दी इस दृष्टि से उपलभ्य कराता जिससे कि उक्त तौज़ी में देय रकमों के संग्रहण में सुविधा हो सके। अतः विचारण न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि प्रतिवादियों को चाहिए कि वे वादी को उस रकम की प्रतिपूर्ति करें जो उसने उनके प्रबन्ध की कालावधि के दौरान उन तौज़ियों से संग्रह की होती। उसी प्रकार से प्रतिवादी उस हानि को पूरा करने के दायित्वाधीन हैं जो कि बकाया या उन डिक्रियों के कारण हुई थीं, जिन्हे वर्जित होने दिया गया। विचारण न्यायालय ने यह निदेश दिया कि आयुक्त को उपर्युक्त मदों की जांच करनी चाहिए। तदनुसार, प्रारम्भिक डिक्री पारित की गई। उक्त प्रारम्भिक डिक्री के विरूद्ध, प्रतिवादियों ने उच्च न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की। जबकि उच्च न्यायालय की खण्ड न्यायपीठ के समक्ष अपील फाइल की गई, उस समय प्रतिवादियों ने यह दलील दी कि उच्च न्यायालय के उस विनिश्चय पर, जिसमें वह अधिनियम असांविधानिक घोषित कर दिया गया था, इस न्यायालय के बाद में दिए गए विनिश्चयों को देखते हुए उच्च न्यायालय को पुनर्विचार करने की जरूरत है। तदनुसार, खण्ड न्यायपीठ ने वह मामला 24 जुलाई, 1962 को बृहत्तर न्यायपीठ को निर्देशित कर दिया। उसके बाद पटना उच्च न्यायालय के पांच न्यायाधीशों की पूर्ण न्यायपीठ ने उस मामले की सुनवाई की। पूर्ण न्यायपीठ ने तारीख 15 फरवरी, 1963 वाले अपने निर्णय द्वारा **महाराजाधिराज सर कामेश्वर सिंह** बनाम **बिहार राज्य**[1] वाले मामले में पहले वाले विनिश्चय को उलट दिया और यह घोषित किया कि अधिनियम असांविधानिक है। उसके बाद वह अपील पूर्ण न्यायपीठ की राय के अनुसार निपटारा किए जाने के लिए खण्ड न्यायपीठ को वापस निर्देशित कर दी गई।

15. खण्ड न्यायपीठ का, जिसने अपील की अन्तिम रूप से सुनवाई की थी, यह मत था कि यद्यपि राज्य को यह अधिकार है कि वह अधिनियम

---

[1] [1950] आई० एल० आर० 29 पटना 790 = ए० आई० आर० 1950 पटना 392.

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



की धारा 3 (1) के अधीन किसी सम्पदा के एक भाग को ही अधिसूचित करे, तथापि, प्रतिवादी, तौज़ी सं० 7/8 और 30 में अधिसूचित भागों के सम्बन्ध में संग्रहण विषयक उपयुक्त कागज-पत्रों को तैयार करने के लिए समुचित कदम उठाने के कर्त्तव्य से मुक्त नहीं थे। उसने यह अभिनिर्धारित किया कि प्रतिवादी समय पर संग्रहण विषयक कागज-पत्र न तैयार करने के लिए वादी को प्रतिकर देने के दायित्वाधीन हैं।

16. इसके अलावा, खण्ड न्यायपीठ ने यह अभिनिर्धारित किया कि यद्यपि वादी को यह निदेश दिया गया था कि वह सम्पदा के अनधिसूचित हिस्से के सम्बन्ध में लगान के लिए वाद फाइल करे, तथापि प्रतिवादियों ने वसूली के लिए प्रमाण-पत्र देने के मामले में, जिनमें से कुछ बाद में रद्द कर दिए गए थे, उपेक्षा बरती। खण्ड न्यायपीठ ने यह भी अभिनिर्धारित किया कि अभिलेख पर की सामग्री से यह उपदर्शित नहीं होता कि लम्बित वादों और निष्पादन सम्बन्धी कार्यवाहियों के सम्बन्ध में प्रतिवादी सं० 2 ने कोई भी आवश्यक कदम नहीं उठाए थे और ऐसी अधिसंभाव्यता थी कि वादी को उन लम्बित कार्यवाहियों को जारी रखने के सम्बन्ध में निष्क्रियता या असफलता के कारण जोकि जानबूझकर किए गए व्यतिक्रम और घोर उपेक्षा की कोटि में थी, नुकसान हुआ था। खण्ड न्यायपीठ ने विचारण न्यायालय के इस बारे में सहमति व्यक्त की कि प्रतिवादी कृषिक आयकर के असंदाय के कारण शास्ति के रूप में उद्गृहीत 2,000/- रुपए तक वादी की प्रतिपूर्ति करने के दायित्वाधीन हैं। जहां तक प्रबन्ध करने की लागत अर्थात् 43,507/- रुपए का सम्बन्ध है, जोकि सकल संग्रहण का 30 प्रतिशत के बराबर थी, जबकि विचारण न्यायालय ने 12-1/2 प्रतिशत अनुज्ञात किया था, खण्ड न्यायपीठ ने सकल संग्रहण का 25 प्रतिशत अनुज्ञात किया था। अन्य शब्दों में खण्ड न्यायपीठ ने यह निष्कर्ष निकाला कि प्राधिकृत रकम से अधिक थे, प्रबन्ध करने की लागत के रूप में लगभग 8,000/- रुपए उपगत कर दिए गए थे। खण्ड न्यायपीठ ने यह निष्कर्ष निकाला कि वादी उसे प्राप्त करने का हकदार है। खण्ड न्यायपीठ ने यह अभिनिर्धारित किया कि अधिनियम की धारा 31 से उस हानि के सम्बन्ध में कोई भी संरक्षा प्राप्त नहीं होती, जोकि जानबूझ कर किए गए व्यतिक्रम और घोर उपेक्षा के कारण हुई थी। तदनुसार, प्रतिवादियों की अपील खारिज कर दी गई। विचारण न्यायालय द्वारा अनुज्ञात कतिपय विषयों के सम्बन्ध में वादी के प्रत्याक्षेप भी खारिज कर दिए गए।

17. उच्च न्यायालय द्वारा पारित की गई डिक्री से व्यथित होकर बिहार राज्य ने इस न्यायालय के समक्ष अपील फाइल करने के लिए विशेष सिविल अपील सं० 137/63 में संविधान के अनुच्छेद 133 (1) (क) के

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



अधीन उच्च न्यायालय के प्रमाण-पत्र के लिए आवेदन किया। तदनुसार, 10 दिसम्बर, 1964 को उच्च न्यायालय द्वारा प्रमाण-पत्र अनुदत्त कर दिए जाने के बाद, बिहार राज्य ने उपर्युक्त अपील फाइल की। वादी ने भी डिक्री के विरुद्ध अपील फाइल करने के लिए, जहां तक कि वह उसके विरुद्ध है, विशेष सिविल अपील सं० 1/64 में उच्च न्यायालय के समरूप प्रमाण-पत्र के लिए आवेदन किया। उच्च न्यायालय ने उसके मामले में भी 10 दिसम्बर, 1964 वाले अपने आदेश द्वारा वैसा ही प्रमाण-पत्र दिया किन्तु उच्च न्यायालय ने बाद में उक्त प्रमाण-पत्र 6 जुलाई, 1965 को रद्द कर दिया। इस प्रकार उक्त कार्यवाहियां समाप्त हो गईं। अब हमारा सम्बन्ध केवल उस अपील से है, जो बिहार राज्य ने फाइल की थी।

18. इस अपील में अधिनियम की सांविधानिकता को हमारे समक्ष प्रश्नगत नहीं किया गया है।

19. इस मामले के अभिलेख का परिशीलन करने के बाद हमारा निष्कर्ष यह है कि निम्नलिखित तथ्य साबित हो गए हैं। अधिनियम की धारा 3 (1) के अधीन 19 नवम्बर, 1949 को निकाली गई अधिसूचना में स्वत्वधारी के नाम, सम्पदा के नाम, सम्पदा के तौज़ी के संख्याकों और तौजियों में स्वत्वधारी के हिस्से के प्रति निर्देश किया गया था। जे०पी० मुखर्जी, प्रतिवादी सं० 2, जोकि उस समय पूर्णिया का अपर कलक्टर था, सम्पदा के प्रबन्धक के रूप में नियुक्त किया गया। 14 दिसम्बर, 1949 को पूर्णिया के कलक्टर ने वादी को यह इत्तिला दी कि सम्पदा का प्रबन्ध 30 दिसम्बर, 1949 से प्रारम्भ होना है और यह कि उसे प्रबन्धक के समक्ष सम्पदा में सम्मिलित ग्रामों की सूची और 27 दिसम्बर, 1949 के पूर्व तक की जमाबन्दियों, करचाओं और वासिल वाकी को भी प्रबन्धक के समक्ष पेश करना चाहिए और उन कागज-पत्रों की पूरी और स्पष्ट सूची भी देनी चाहिए, जिनमें प्रत्येक ग्राम की जमाबन्दी, संगृहीत बकाया रकम और इस अधिनियम के अधीन प्रबन्ध के प्रारम्भ होने से पूर्व परादेय बकाया रकम दर्शित की गई हों। उससे यह कहा गया कि वह इस मामले में सहयोग करे और इस बात की भी इत्तिला दी गई कि यदि वह ऐसा नहीं करता है, तो किसी भी हानि का उत्तरदायित्व उसका ही होगा। 27 दिसम्बर, 1949 को वादी ने कलक्टर के कार्यालय एक को पत्र लिखा। उसमें उसने यह कथन किया कि बहुत बड़ी और जटिल सम्पदा के कागज-पत्रों को उचित रूप से सौंपने का काम सरल काम नहीं है और निश्चित रूप से उसे पूरा करने में काफी दिन लगेंगे। उसने यह बताया कि सरकार ने अधिसूचना के अधीन तौजी सं० 7/8 में से केवल 2ए—11 ए—2 सी—2 के प्रबन्ध को ही अपने हाथ में लेकर

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



गलती की थी, क्योंकि संग्रहण विषयक कागज-पत्र उक्त तौज़ी के सम्बन्ध में 5-12 1/2 और कुछ हिस्सों के लिए ही रखे गए थे। उसने यह अभिवचन किया कि जब तक सम्पूर्ण 5-12 1/2 हिस्सा अधिसूचित नहीं कर दिया जाता, तब तक अनधिसूचित हिस्से से अधिसूचित हिस्से के पृथक् करने का कार्य छह मास की कालावधि के भीतर भी पूरा नहीं किया जा सकता। अतः उसने अधिसूचना में उपान्तरण करने के लिए कहा। उसके बाद हम यह पाते हैं कि वादी अनेक बार कलक्टर से तब मिला था, जबकि सम्पदा से सम्बन्धित कार्यकलापों का विवेचन किया गया था। 11 मार्च, 1950 को कलक्टर के कार्यालय ने वादी को निम्नलिखित पत्र लिखा—

जिला कार्यालय
पूर्णिया
11 मार्च, 1950

प्रिय राजा साहब,

7 मार्च, 1950 को हुए हमारे विचार-विमर्श के प्रति निर्देश करते हुए आपकी सम्पदा के अधिसूचित और अनधिसूचित प्रभागों के सम्बन्ध में निम्नलिखित कार्रवाई उसी प्रकार की जा सकती है, जैसी कि हमारे बीच सहमति हुई है।

2. हम उस समय तक, जब तक कि अधिसूचना न निकाल दी जाए, अनधिसूचित प्रभाग को अपने हाथ में नहीं लेंगे। जैसे ही अधिसूचना निकाल दी जाएगी, हम उन प्रभागों को अपने हाथ में ले लेंगे। इसी बीच यह सुनिश्चित करने की दृष्टि से कि आपको संदेय किसी भी लगान के सम्बन्ध में कोई भी परिसीमा की वाधा सामने नहीं आती है, आपसे यह निवेदन है कि आप अनधिसूचित प्रभागों के लिए बकाया की सूची की प्रति तैयार करें।

3. तौज़ी सं० 7 के सम्बन्ध में अपेक्षित तहसीलदार और अन्य कर्मचारिवृन्द पर्याप्त संख्या में अपर कलक्टर द्वारा और आपके सर्कल अधिकारी द्वारा किशनगंज में 14 मार्च, 1950 को चयन किए जाने के बाद नियोजित किए जा सकते हैं। उस प्रभाग के अनुसार जो कि अधिसूचित किया गया है इनका कतिपय संख्या में अपर कलक्टर द्वारा चयन किया जाएगा और सरकार संदत्त करेगी। आपसे यह निवेदन है कि आप अनधिसूचित हित के प्रभाग के अनुसार कुछ लोगों को नियोजित कर लें। इन कर्मचारियों को साथ-साथ बकाया की सूची तैयार करने के काम में लगाया जा सकता है।

4. यदि अधिसूचना तमादी दिन के पूर्व निकाल दी जाएगी तो हम देय बकाया के सम्बन्ध के प्रमाण-पत्र देने की व्यवस्था करेंगे। तथापि, यदि वह अधिसूचना इस या उस कारण से नहीं निकाली जाती है, तो हम तमादी

Agamnigam Digital Preservation F...

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



दिन के पूर्व इन बकाया रकमों के लिए संयुक्त रूप से वाद फाइल करने की व्यवस्था करेंगे ।

भवदीय

ह०—[अपठनीय] 13/3

राजा पी० सी० लाल चौधरी, सी० बी० ई०,

नजरगंज पैलेस, शहर पूर्णिया ।''

20. जैसा कि वादी ने चाहा था, 16 मार्च, 1950 को अनुपूरक अधिसूचना निकाल दी गई । उसके बाद हम यह पाते हैं कि वादी और प्रबन्धक के बीच इसके आगे कुछ विचार-विमर्श और पत्राचार हुआ । प्रबन्धक ने वादी को यह लिखा कि मैंने सम्पदा को देय लगान की वसूली के लिए फाइल किए जाने वाले वादों के व्यय की पूर्ति करने के लिए 35,000/- रुपए अग्रिम देने के लिए सरकार को राज़ी कर लिया है । वादी ने उस पत्र का उत्तर उसी तारीख को दे दिया, जिसमें उसने सरकार द्वारा सम्पदा को ऋण के रूप में 35,000/- रुपए अग्रिम देने के लिए उठाए गए कदम की प्रशंसा की थी । 14 अप्रैल, 1950 को प्रबन्धक ने वादी के पास यह कथन करते हुए तार भेजा कि चूंकि आपने तौज़ी सं० 7/8 के संबंध में समय पर उन मामलों के पहले वाले अभिलेख भेजने में सहयोग नहीं किया है, इसलिए अधिसूचित और अनधिसूचित हिस्से, दोनों के संबंध में बाद फाइल करना संभव नहीं है और यह कि आप तौज़ी सं० 7/8 में अनधिसूचित हिस्से में तमादी फाइल करने के लिए उत्तरदायी हैं । प्रतिवादी सं० 2 ने अपने साक्ष्य में यह कहा है कि आप दूसरी अधिसूचना के पूर्व तौज़ी सं० 7/8 और 30 में कोई (रकम) भी संगृहीत नहीं कर सकते हैं, क्योंकि संग्रहण करने विषयक कागज-पत्र वादी के पास हैं और उसने उन कागज-पत्रों को 24 अप्रैल, 1950 को वास्तव में प्राप्त किया था । प्रतिवादी सं० 2 की लम्बी प्रति-परीक्षा में हमें ऐसी कोई सामग्री दिखाई नहीं पड़ती है, जिससे कि उसके साक्ष्य पर अविश्वास हो या जिससे यह दर्शित हो कि उसने या तो अपनी शक्ति से अधिक या असद्भाविक रूप से कार्य किया है । हम यह भी पाते हैं कि सम्पदा को देय बकाया रकमों की वसूली के लिए बहुत से वाद फाइल किए गए थे और मात्र इसलिए क्योंकि कुछ वाद गुणागुण के आधार पर और इस आधार पर भी खारिज कर दिए गए थे कि कुछ ऐसे लोग जिन पर वाद लाया गया है, या तो मर चुके हैं या लापता हो गए हैं, यह नहीं कहा जा सकता है कि प्रबन्धक की ओर से सद्भाव की कोई कमी थी । जुलाई, 1950 के मध्य तक सम्पदा का प्रबन्ध ही त्याग दिया गया था । पूर्वगामी वात से हमारा निष्कर्ष यह है कि यह नहीं कहा जा सकता था कि या तो सरकार की ओर से या प्रतिवादी सं० 2 की ओर से जोकि प्रबन्धक

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



था, सद्भाव की कमी थी। यदि तौज़ी का कतिपय हिस्सा प्रथम बार में अधिसूचित नहीं किया गया था, तो यह नहीं कहा जा सकता है कि वह बात वादी को नुकसान पहुंचाने के लिए असद्भाविक रूप से या जानबूझकर की गई थी।

21. अब हम उच्च न्यायालय की खण्ड न्यायपीठ द्वारा निकाले गए विनिर्दिष्ट निष्कर्षों पर विचार करेंगे।

22. जिस प्रथम आधार पर खण्ड न्यायपीठ ने यह अभिनिर्धारित किया है कि प्रत्यर्थी नुकसानी का संदाय करने के दायित्वाधीन हैं, वह यह है कि प्रतिवादी सं० 2 तौज़ी संख्या 7/8 और 30 के संबंध में तैयार किए गए संग्रहण संबंधी कागज-पत्र समय से प्राप्त करने में असफल रहे हैं और इस प्रकार से उन्होंने वादी को नुकसान पहुंचाया। यहां पर यह बताया जा सकता है कि खण्ड न्यायपीठ ने अधिनियम की धारा 2 (ट) में "भूधृति" अभिव्यक्ति की परिभाषा को देखते हुए यह स्वीकार किया था, और हम समझते हैं कि ठीक तौर पर ही स्वीकार किया था, कि राज्य सरकार को यह अधिकार है कि वह अधिनियम की धारा 3 (1) के अधीन भू-धृति के एक प्रभाग के संबंध में ही अधिसूचना निकाले। तथापि उसने इस बात की ओर ध्यान नहीं दिया कि वादी अधिनियम की धारा 5 के अधीन उस पर अधिरोपित अपने कर्तव्य का निर्वहन करने में असफल रहा है, जिसमें यह उपबंध किया गया है कि प्रवन्धक लिखित आदेश द्वारा स्वत्वधारी या भू-धृतिधारक या उसके अभिकर्ताओं से और कर्मचारियों से यह अपेक्षा कर सकेगा कि वह ऐसे आदेश में विनिर्दिष्ट की जाती वाली तारीख को उसके समक्ष संबंधित सम्पदा या भू-धृति से संबंधित ऐसे दस्तावेज़ों या कागज-पत्र या रजिस्टर उसके समक्ष पेश करे या उसे ऐसी जानकारी दे, जैसी वह सम्पदा या भू-धृति के प्रबन्ध के लिए आवश्यक समझे। प्रस्तुत मामले में प्रतिवादी सं० 2 ने वादी को यह निदेश दिया कि वह ऐसी दस्तावेज़ें प्रस्तुत करे जिनसे तौज़ी सं० 7/8 और 30 में अधिसूचित हिस्से के संबंध में व्यक्तियों के दायित्व का पता लगाना संभव था। वादी ने यह अभिवचन किया कि उसने अलग से कोई भी ऐसा लेखा नहीं रखा है और यह कि उसे तैयार करने में बहुत समय लगा। तथापि, उसने शेष शेयरों को अधिसूचित करने के बाद ही अप्रैल, 1950 के अंत में उन रजिस्टरों को पेश किया। अतः यदि प्रतिवादी सं० 2 संग्रहण संबंधी कागज-पत्र तब तक समय पर तैयार नहीं किए थे, तो वह बात प्रतिवादी सं० 2 की ओर से की गई किसी उपेक्षा के कारण नहीं हुई थी। दूसरी ओर उसने यह दलील दी कि, जैसा कि वादी ने इच्छा व्यक्त की है, अनधिसूचित हिस्से को भी अधिसूचित कर दिया जाना चाहिए और ऐसी अधिसूचना निकाली भी गई। कुछ समय तक जबकि संग्रहण

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



संबंधी कागज-पत्र तैयार करने के लिए कदम उठाए गए, उच्च न्यायालय ने उस अधिनियम को अभिखण्डित कर दिया था। उसके बाद वादी को वह सम्पदा सौंपने के लिए कदम उठाए गए। उच्च न्यायालय से इस बारे में सहमत होना कठिन है कि इस संबंध में प्रतिवादी सं० 2 की ओर से जानबूझकर व्यतिक्रम या घोर उपेक्षा की गई थी।

23. इस आरोप के संबंध में प्रतिवादी सं० 2 ने तमाम प्रमाण-पत्र संबंधी अनेक मामले फाइल किए थे, जिनमें से कुछ बाद में चलकर अभिखंडित कर दिए गए। स्वयं उच्च न्यायालय का मत इस बात का समर्थन करता है कि प्रतिवादी सं० 2 की ओर से कोई भी उपेक्षा नहीं हुई थी, किन्तु दूसरी ओर वादी उसके लिए उत्तरदायी था। उच्च न्यायालय ने भी इस प्रकार मत व्यक्त किया है—

> "ऐसा प्रतीत होता है प्रतिवादी सं० 2 को वादी द्वारा प्रस्तुत बकाया संबंधी किसी सूची के आधार पर ही और उचित समीक्षा कराए बिना ही, प्रतिवादियों ने प्रमाण-पत्र संबंधी अनेक मामले अप्रैल, 1950 के मध्य में तमादी के समय जल्दी में फाइल किए थे और इसी कारण से यह आश्चर्य की बात नहीं है कि उनमें से काफी बड़ी संख्या को बाद में चलकर अभिखण्डित कर दिया गया था, जिसके परिणाम-स्वरूप वादी की सम्पदा के लगान और लाभों को बकाया रकम का पर्याप्त भाग वसूल नहीं किया जा सका और कालवर्जित हो गया। यह स्पष्ट है कि इस कारण से वादी की सम्पदा को हुई हानि प्रतिवादी सं० 2 की निष्क्रियता के कारण थी जो कि उसकी ओर से जानबूझकर किए गए व्यतिक्रम और घोर उपेक्षा की कोटि में आती थी। ऐसी हानि के लिए जो उत्तरदायित्व था, वह निस्संदेह प्रति-वादियों का था।"

(हमारे द्वारा रेखांकित)

24. उच्च न्यायालय ने इस ओर ध्यान नहीं दिया कि प्रमाण-पत्र संबंधी मामले स्वयं वादी द्वारा प्रस्तुत बकाया विषयक सूची के आधार पर फाइल किए गए थे, यद्यपि वे जल्दी में फाइल किए गए थे। इन परिस्थितियों में प्रतिवादी सं० 2 पर यह आरोप लगाना कठिन है कि उसने वादी द्वारा परिवाद किए जाने पर जानबूझकर व्यतिक्रम किया या घोर उपेक्षा की। इसके अलावा उच्च न्यायालय ने अपना निर्णय देते समय, कम से कम ऐसे मामलों के प्रति निर्देश नहीं किया, जिनसे यह पता चलता हो कि घोर उपेक्षा हुई थी। उच्च न्यायालय ने इस बात को नज़र-अन्दाज़ कर दिया कि लगभग प्रमाण-पत्र विषयक 7000 मामले संक्षिप्त कालावधि में फाइल किए गए। जो

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



सामग्री हमारे समक्ष पेश की गई है, उसके आधार पर हमारा समाधान नहीं हुआ कि प्रतिवादियों के विरुद्ध उपर्युक्त आधार सिद्ध हो गया है।

25. तीसरा आधार भी प्रतिवादी सं० 2 ने किसी भी लम्बित कार्यवाही की तत्परता के साथ पैरवी नहीं की, सिद्ध नहीं हुआ है, क्योंकि उच्च न्यायालय ने किसी भी विनिर्दिष्ट मामले पर विचार नहीं किया है, जोकि प्रथमदृष्टया उस आरोप को साबित करता हो।

26. कृषि आयकर के संदाय के कारण अधिरोपित 2,000 रुपए की शास्ति के संबंध में यह बात देखी गई है कि पहले 5,000 रुपए की शास्ति अधिरोपित की गई थी, क्योंकि वादी समय पर कृषि आयकर संदाय करने में इसीलिए असमर्थ था, क्योंकि वह समय पर बकाया रकम की वसूली नहीं कर सका था। वास्तव में कलक्टर के मध्यक्षेप पर उसे कम करके 2,000 रुपए कर दिया गया था। फिर भी, प्रतिवादी सं० 2 द्वारा अधिसूचित सम्पदा के प्रबन्ध के संबंध में वह बहुत दूर की बात थी। विचारण न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि यह पहली बार गलत अधिसूचना निकालने के कारण ऐसा हुआ है। किन्तु, जब एक बार यह मान लिया जाता है कि पहली अधिसूचना अप्राधिकृत अधिसूचना नहीं है, तो प्रतिवादियों के बारे में यह अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता कि ये वादी द्वारा संदत्त 2,000 रुपए की शास्ति प्रतिपूर्ति करने के दायित्वाधीन हैं।

27. जहां तक कि प्रबन्ध की लागत का संबंध है, विवाद लगभग 8,000 रुपए तक सीमित है। यह बात देखी गई है कि सम्पदा उच्च न्यायालय के इस निर्णय के कारण, जिसके द्वारा उसने अधिनियम को असांविधानिक घोषित किया था, वादी को लगभग सात मास की कालावधि के भीतर समय से पूर्व ही वापिस करनी पड़ी थी। किन्तु चूंकि प्रतिवादी सं० 2 ने, सकल संगृहीत रकम के 25% से अधिक किया गया कोई भी व्यय वादी को वापस करने की प्रस्थापना की थी, इसलिए प्रतिवादी सं० 1 द्वारा वादी को 8,000 रुपए वापस करना पड़ा।

28. यह बात देखी गई है कि प्रस्तुत मामले में जबकि विचारण न्यायालय ने इस आधार पर अपनी कार्यवाही की कि अधिनियम असांविधानिक है, यह कि प्रतिवादी वादी की सम्पदा पर अतिचारी है और यह कि वादी का उनके प्रति कोई भी कर्त्तव्य नहीं था, उच्च न्यायालय की खण्ड न्यायपीठ ने, जिसने कि अन्त में उस अपील का निपटारा किया था, अधिनियम की धारा 31 की ओर उचित ध्यान नहीं दिया, जिसकी बाबत इसके पहले यह अभिनिर्धारित किया गया है कि वह सांविधानिक है। अधिनियम की धारा 31 में यह उपबन्ध किया गया था कि इस अधिनियम के अधीन सद्भाविक रूप से की

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



गई या की जाने के लिए तात्पर्यित किसी बात के लिए या के कारण या के सम्बन्ध में या प्रान्तीय सरकार पर या उसके अधीनस्थ या इस अधिनियम के अधीन कार्य करने वाले अधिकारियों में से किसी पर न्यागत होने वाले किसी कर्तव्य का पालन करने में की गई किसी अभिकथित उपेक्षा या लोप के सम्बन्ध में या प्रान्तीय सरकार या उसके अधीनस्थ या इस अधिनियम के अधीन कार्य करने वाले किसी अधिकारी को इस अधिनियम द्वारा प्रदत्त किसी शक्ति के प्रयोग या प्रयोग में हुई असफलता के सम्बन्ध में,, प्रान्तीय सरकार के किसी अधिकारी के जानबूझकर किए गए व्यतिक्रम या की गई घोर उपेक्षा के कारण हुई हानि या हुए दुरुपयोग के कारण करने के सिवाय, राज्य सरकार या राज्य सरकार के किसी सेवक के विरुद्ध या राज्य सरकार के किसी सेवक के आदेशाधीन कार्य करने वाले किसी व्यक्ति के विरुद्ध किसी न्यायालय में न तो कोई वाद लाया जाएगा और न ही विधिक कार्यवाही की जाएगी। बिहार एवं उड़ीसा जनरल क्लाजेज़ ऐक्ट, (1917C, बिहार और उड़ीसा साधारण खण्ड अधिनियम 1917), की धारा 4 की उपधारा (22) के अधीन कोई भी बात "सदभाविक रूप से" वहां की गई समझी जाएगी, जहां कि वह वास्तव में ईमानदारी के साथ की जाती है, चाहे वह उपेक्षा के साथ की गई हो या नहीं। यह अभिनिर्धारित करने के लिए कोई भी आधार नहीं है कि या तो राज्य सरकार या उसके अधीन कार्य करने वाले अधिकारियों में से किसी ने अधिनियम के अधीन अपने कर्तव्यों का निर्वहन करते हुए 19 नवम्बर, 1949 को अधिनियम की धारा 3 (1) के अधीन अधिसूचना निकालने में, जिसके द्वारा तौज़ी सं० 7/8 और 30 के भाग ही अधिसूचित किए गए थे अप्रैल, 1950 के पहले अलग से संग्रहण सम्बन्धी विवरणी तैयार न करने में ईमानदारी के साथ कार्य नहीं किया था। ऐसा प्रतीत होता है कि गलती इसलिए हुई थी, क्योंकि स्वयं वादी ने उक्त तौज़ी, किस्तों में अर्जित की थी। इसके अलावा जैसे ही गलती बताई गई, प्रतिवादी सं० 2 ने अनधिसूचित हिस्से को भी अधिसूचित करने के सम्बन्ध में कदम उठाए और सरकार ने तद्नुसार लगभग 4 मास के भीतर अधिसूचना निकाली। चूंकि वादी ने किसी कारण से ही अप्रैल, 1950 तक समेकित संग्रहण विवरणी भी नहीं सौंपी थी, इसलिए पृथक् संग्रहण विवरणी अप्रैल, 1950 तक प्रतिवादी सं० 2 द्वारा तैयार नहीं करवाई जा सकी और स्वयं वादी के मतानुसार भी समेकित विवरणियों के आधार पर पृथक् संग्रहण विवरणियां तैयार करने में छह मास लगते। यह दर्शित नहीं किया गया है कि या तो राज्य सरकार को या उसके अधिकारियों में से किसी को पहले से यह ज्ञान था कि वादी ने समेकित लेखा विवरणी बनाए रखी और यह कि वादी को जानबूझकर नुकसान

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh


पहुंचाने की दृष्टि से, पहली अधिसूचना तौज़ी सं० 7/8 और 30 के एक प्रभाग के सम्बन्ध में ही निकाली गई। ये तथ्य किसी अभिकथित उपेक्षा या लोप पर आधारित किसी दावे के विरुद्ध अधिनियम की धारा 31 के अधीन वैध प्रतिरक्षा गठित करते थे, क्योंकि प्रतिवादियों की ओर से जानबूझकर किए गए किसी व्यतिक्रम या की गई घोर उपेक्षा का कोई भी सबूत नहीं था। कानूनी शक्ति के जानबूझकर किए गए किसी दुरुपयोग का कोई भी सबूत नहीं था और न ही उस शक्ति के हड़पे जाने का कोई सबूत था जिसकी बाबत प्राधिकारियों को ज्ञान था कि उनके पास वह शक्ति नहीं है। इन परिस्थितियों में 8,000/- रुपए के जो कि विधि द्वारा प्राधिकृत रकम से अधिक प्रबन्ध करने की लागत के रूप में उपगत किए गए थे, दावे के सम्बन्ध में सफल होने के सिवाय सभी बातों के लिए किए गए नुकसानी के दावे को असफल होना चाहिए।

29. पूर्वगामी कारणों से हम विचारण न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय और पारित डिक्री को और उच्च न्यायालय की खण्ड न्यायपीठ द्वारा पारित तारीख 17 अगस्त, 1963 के निर्णय और डिक्री को अपास्त करते हैं और प्रतिवादी सं० 1 बिहार राज्य को यह निदेश देते हुए उसके विरुद्ध डिक्री पारित करते हैं कि वह वादी के विधिक प्रतिनिधियों को वाद की तारिख से अर्थात् 21 सितम्बर, 1951 से संदाय की तारीख तक उस पर 6 प्रतिशत वार्षिक व्याज की दर से, 8,000/- रुपए की राशि संदत्त करे। वाद में का शेष दावा खारिज किया जाता है। पक्षकार सभी न्यायालयों में हुए अपने-अपने खर्चे वहन करेंगे। तदनुसार अपील भागतः मंजूर की जाती है।

अपील भागतः मंजूर की गई।

श्री०

———

Agamnigam Digital Preservation Foundation

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

# हरशरण वर्मा

बनाम

# उत्तर प्रदेश राज्य और एक अन्य

(10 जनवरी, 1985)

(न्यायाधिपति ई० एस० वेंकटरामय्या और डी० पी० मदान)

**संविधान, 1950—अनुच्छेद 164 (1) और 173 (क) (1963 के सोलहवें संशोधन अधिनियम द्वारा यथा संशोधित)—किसी राज्य में मंत्रियों की नियुक्ति—अनुच्छेद 173 (क) के संशोधन का प्रभाव—कोई ऐसा व्यक्ति जो राज्य विधानमण्डल का सदस्य न हो, संविधान के अनुच्छेद 164 (1) के अधीन उक्त संशोधन के पश्चात् भी मंत्री के रूप में नियुक्त किया जा सकता है किन्तु अनुच्छेद 164 (4) के अधीन ऐसा मन्त्री जो निरन्तर छह मास की किसी अवधि तक राज्य के विधानमण्डल का सदस्य नहीं रहता है, उस अवधि की समाप्ति पर मन्त्री नहीं रहेगा।**

पिटीशनर ने यह पिटीशन संविधान के अनुच्छेद 32 के अधीन यह प्रार्थना करते हुए फाइल किया है कि प्रत्यर्थी के बारे में, जिसे उत्तर प्रदेश के राज्यपाल द्वारा संविधान के अनुच्छेद 164 (1) के अधीन उत्तर प्रदेश सरकार के मन्त्री के रूप में नवम्बर, 1984 में नियुक्त किया गया है, हालांकि वह विधानमण्डल के किसी भी सदन का सदस्य नहीं है, अधिकार पृच्छा की प्रकृति का रिट जारी किया जाए। उसने इस मामले में यह दलील दी है कि संविधान (सोलहवां) संशोधन अधिनियम, 1963 द्वारा संविधान के अनुच्छेद 173 के संशोधन के पश्चात् राज्यपाल को यह स्वतन्त्रता नहीं रही है कि वह किसी ऐसे व्यक्ति को जो कि राज्य के विधान मण्डल का सदस्य न हो, मन्त्री के रूप में नियुक्त कर सके और यह कि संविधान का अनुच्छेद 164 (4) केवल ऐसे व्यक्ति को लागू होगा जो मन्त्री के पद पर रहा हो किन्तु जो किसी ऐसे कारणवश विधानमण्डल का सदस्य रहने से विरत हो जाता है, जैसे कि किसी निर्वाचन पिटीशन में उसके निर्वाचन का अपास्त किया जाना। उच्चतम न्यायालय द्वारा पिटीशन खारिज करते हुए।

**अभिनिर्धारित**--सोलहवें संशोधन द्वारा संविधान के अनुच्छेद 173 के खण्ड (क) में एक खण्ड जोड़कर उसे संशोधित कर दिया गया है, जिसके द्वारा विधानमण्डल में किसी निर्वाचन में किसी अभ्यर्थी से यह अपेक्षा की गई

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



है कि वह निर्वाचन आयोग द्वारा इस निमित्त प्राधिकृत किसी व्यक्ति के समक्ष संविधान की तृतीय अनुसूची में इस प्रयोजन के लिए दिए गए प्रारूप के अनुसार शपथ ले या प्रतिज्ञान करे। संविधान के अनुच्छेद 173 के खण्ड (क) में संशोधन पुनःस्थापित करने का उद्देश्य यह उपबन्ध करना था कि न केवल अपना स्थान ग्रहण करने से पूर्व विधानमण्डल का कोई सदस्य संविधान के अनुच्छेद 188 द्वारा यथापेक्षित तृतीय अनुसूची द्वारा विहित शपथ ग्रहण करेगा बल्कि निर्वाचन के लिए खड़ा होने से पहले अभ्यर्थी के लिए यह आवश्यक होगा कि वह उस शपथ को ग्रहण करे। यह इस बात को सुनिश्चित बनाना है कि केवल ऐसा व्यक्ति जो भारत के प्रति निष्ठा रखता हो, विधानमण्डल की सदस्यता के लिए अर्ह होगा। (पैरा 7 और 10)

संविधान के अनुच्छेद 164 के खण्ड (4) में यह कहा गया है कि कोई मन्त्री (जिसके अन्तर्गत मुख्यमन्त्री भी शामिल है) जो निरन्तर छह मास की किसी अवधि तक राज्य के विधानमण्डल का सदस्य नहीं रहता है, उस अवधि की समाप्ति पर मन्त्री नहीं रहेगा। संविधान के अनुच्छेद 177 के आधार से किसी मन्त्री को यह अधिकार होगा कि वह उस राज्य की विधान सभा में या विधान परिषद् वाले राज्य की दशा में दोनों सदनों में बोले और उनकी कार्यवाहियों में अन्यथा भाग ले और विधानमण्डल की किसी समिति में, जिसमें उसका नाम सदस्य के रूप में दिया गया है, बोले और उसकी कार्यवाहियों में अन्यथा भाग ले, किन्तु इस अनुच्छेद के आधार पर वह मत देने का हकदार नहीं होगा। इसलिए अनुच्छेद 177 संविधान के अनुच्छेद 164 के खण्ड (2) में अन्तर्विष्ट सांविधानिक सिद्धान्त के कार्यान्वियन को सुनिश्चित बनाता है, जिसमें वह उपबन्ध किया गया है कि मन्त्रिपरिषद् राज्य की विधान सभा के प्रति सामूहिक रूप से उत्तरदायी होगी। विधान सभा के प्रति मन्त्रियों का उत्तरदायित्व यह सुनिश्चित करने का एक माध्यम है कि सरकार लोकप्रिय राय के अनुरूप कार्यरत है। (पैरा 12)

यह आशंका कि कोई ऐसा व्यक्ति जो संविधान के प्रति अपनी निष्ठ धारण न करता हो और जो भारत की प्रभुता तथा अखण्डता को कायम रखने के लिए तत्पर न हो, उसे ऐसी दशा में मन्त्री का पद प्राप्त करने का अवसर होगा यदि वह संविधान के अनुच्छेद 173 (क) द्वारा यथा विहित शपथ अथवा प्रतिज्ञान नहीं लेता है तथा उस पर हस्ताक्षर नहीं करता है, एक सुआधारित परिपाटी नहीं है क्योंकि संविधान के अनुच्छेद 164 के खण्ड (3) के अधीन किसी राज्य के मन्त्री से यह अपेक्षा की जाती है कि वह संविधान के प्रति निष्ठा सम्बन्धी शपथ ग्रहण करे तथा यह वचनभी दे कि वह भारत

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



की प्रभुता तथा अखण्डता को कायम रखेगा, पूर्व इसके कि वह संविधान की तृतीय अनुसूची में विहित प्ररूप में अपने पद को ग्रहण करता है। (पैरा 14)

यह उल्लेखनीय है कि विधिक स्थिति में संविधान के अनुच्छेद 173 (क) के संशोधन के कारण कोई तात्विक परिवर्तन नहीं लाया गया था जिससे कि कोई ऐसा व्यक्ति जो राज्य विधानमण्डल का सदस्य न हो, निःसन्देह संविधान के अनुच्छेद 164 के खण्ड (4) के अधीन रहते हुए सदस्य के रूप में नियुक्त किया जा सकेगा, जिसमें यह कहा गया है कि कोई मन्त्री, जो निरन्तर छह मास की किसी अवधि तक राज्य के विधानमण्डल का सदस्य नहीं रहता है, उस अवधि की समाप्ति पर मन्त्री नहीं रहेगा। (पैरा 15)

## अनुसृत निर्णय

| | | पैरा |
|---|---|---|
| [1971] | [1971] 2 उम० नि० प० 557= ए० आई० आर० 1971 एस० सी० 1331: **हरशरण वर्मा बनाम श्री त्रिभुवन नारायण सिंह, मुख्य मन्त्री, उत्तर प्रदेश और एक अन्य.** | 3 |

## निर्दिष्ट निर्णय

| | | |
|---|---|---|
| [1962] | ए० आई० आर० 1962 इलाहाबाद 301: **हरशरण वर्मा बनाम चन्द्र भान गुप्त और अन्य.** | 16 |

**आरम्भिक अधिकारिता : 1984 का रिट पिटीशन (सिविल) सं० 17135.**

भारत के संविधान के अनुच्छेद 32 के अधीन फाइल किया गया पिटीशन।

**पिटीशनर की ओर से** स्वयं पिटीशनर

न्यायालय का निर्णय न्यायाधिपति ई० एस० वेंकटरामय्या ने दिया।

**न्यायाधिपति वेंकटरामय्या —**

पिटीशनर ने यह पिटीशन संविधान के अनुच्छेद 32 के अधीन यह प्रार्थना करते हुए फाइल किया है कि प्रत्यर्थी के० पी० तिवारी के बारे में, जिसे उत्तर प्रदेश के राज्यपाल द्वारा संविधान के अनुच्छेद 164 (1) के अधीन उत्तर प्रदेश सरकार के मन्त्री के रूप में नवम्बर, 1984 में नियुक्त किया गया है, हालांकि वह (के० पी० तिवारी) विधानमण्डल के किसी भी सदन का सदस्य नहीं है, अधिकार पृच्छा की प्रकृति का रिट जारी किया जाए।

2. पिटीशनर ने, जिसका यह दावा है कि वह सर्वोत्कृष्ट प्रजातन्त्र तथा सांविधानिकता का अनुयायी है और किसी भी ऐसे व्यक्ति के विरुद्ध सख्त कार्रवाई करने का हामी है, जिसे राज्य विधानमण्डल में निर्वाचित न

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



किया गया हो, कि वह किसी मन्त्री का पद धारण कर सके, स्वयं इस मामले पर प्रबल उत्साह से बहस की है। यह कहा गया है कि विधानमण्डल के प्रति कार्यपालक उत्तरदायित्व की विध्वंसता को प्रवारित करने के उसके प्रयत्न में पिछले पच्चीस वर्षों की कालावधि के दौरान उसके द्वारा फाइल किए गए मामलों की क्रमावली में यह नवां मामला है।

3. हरशरण वर्मा बनाम **श्री त्रिभुवन नारायण सिंह, मुख्य मन्त्री, उत्तर प्रदेश और एक अन्य**[1] वाले मामले में, जो स्वयं पिटीशनर द्वारा फाइल किया गया था, इस न्यायालय की एक सांविधानिक न्यायपीठ ने यह अभिनिर्धारित किया है कि मुख्यमंत्री के रूप में किसी व्यक्ति की नियुक्ति पर इस आधार पर आक्षेप नहीं किया जा सकता कि वह नियुक्ति के समय राज्य के विधानमण्डल का सदस्य नहीं था। इस निर्णय के विरुद्ध पिटीशनर की व्यथा यह है कि इस न्यायालय ने संविधान (सोलहवां) संशोधन, अधिनियम, 1963 द्वारा संविधान के अनुच्छेद 173(क) के संशोधन के प्रभाव पर विचार नहीं किया था।

4. पिटीशनर ने विशिष्ट रूप से इस मामले में यह दलील दी है कि संविधान (सोलहवां) संशोधन अधिनियम, 1963 द्वारा संविधान के अनुच्छेद 173 के संशोधन के पश्चात् राज्यपाल को यह स्वतंत्रता नहीं रही है कि वह किसी ऐसे व्यक्ति को जो कि राज्य के विधानमण्डल का सदस्य न हो, मंत्री के रूप में नियुक्त कर सके और यह कि संविधान का अनुच्छेद 164(4) केवल ऐसे व्यक्ति को लागू होगा जो मंत्री के पद पर रहा हो किन्तु जो किसी ऐसे कारणवश विधानमण्डल का सदस्य रहने से विरत हो जाता है, जैसे कि किसी निर्वाचन पिटीशन में उसके निर्वाचन का अपास्त किया जाना।

5. संविधान (सोलहवां) संशोधन अधिनियम, 1963 द्वारा संशोधित किए जाने से पूर्व अनुच्छेद 173 इस प्रकार था—

> "173 कोई व्यक्ति किसी राज्य के विधानमण्डल के किसी स्थान को भरने के लिए चुने जाने के लिए अर्हित तभी होगा जब—
>
> (क) वह भारत का नागरिक हो;
>
> (ख) वह विधानसभा के स्थान के लिए कम से कम पच्चीस वर्ष की आयु का और विधान परिषद् के स्थान के लिए कम से कम तीस वर्ष की आयु का हो; और
>
> (ग) उसके पास ऐसी अन्य अर्हताएं हों जो इस निमित्त संसद् द्वारा बनाई गई किसी विधि द्वारा या उसके अधीन विहित की जाएं।"

[1] [1971] 2 उम० नि० प० 557=ए० आई० आर० 1971 एस० सी० 1331.

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



6. संविधान के अनुच्छेद 173 का खण्ड (क) इसके संशोधित किए जाने के पश्चात् इस प्रकार है—

"173. कोई व्यक्ति किसी राज्य के विधानमण्डल के किसी स्थान को भरने के लिए चुने जाने के लिए अर्हित तभी होगा जब—

(क) वह भारत का नागरिक हो और निर्वाचन आयोग द्वारा इस निमित्त प्राधिकृत किसी व्यक्ति के समक्ष तीसरी अनुसूची में इस प्रयोजन के लिए दिए गए प्ररूप के अनुसार शपथ ले या प्रतिज्ञान करे और उस पर हस्ताक्षर करे; ......",

7. सोलहवें संशोधन द्वारा संविधान के अनुच्छेद 173 के खण्ड (क) में एक खण्ड जोड़कर उसे संशोधित कर दिया गया है, जिसके द्वारा विधानमण्डल में किसी निर्वाचन में किसी अभ्यर्थी से यह अपेक्षा की गई है कि वह निर्वाचन आयोग द्वारा इस निमित्त प्राधिकृत किसी व्यक्ति के समक्ष संविधान की तृतीय अनुसूची में इस प्रयोजन के लिए दिए गए प्ररूप के अनुसार शपथ ले या प्रतिज्ञान करे। शपथ अथवा प्रतिज्ञान का उक्त प्ररूप, जो कि किसी राज्य के विधानमण्डल संबंधी निर्वाचन में किसी अभ्यर्थी को लेना चाहिए और उस पर हस्ताक्षर करने चाहिएं (जो कि संविधान की तृतीय अनुसूची में सोलहवें संशोधन द्वारा पुरःस्थापित किया गया था) इस प्रकार है—

"किसी राज्य के विधानमण्डल के लिए निर्वाचन के लिए अभ्यर्थी द्वारा ली जाने वाली शपथ या किए जाने वाले प्रतिज्ञान का प्ररूप—

"मैं, अमुक,————————जो विधानसभा (या विधान परिषद् में स्थान भरने के लिए अभ्यर्थी के रूप में नामनिर्देशित हुआ हूं, $\frac{\text{ईश्वर की शपथ लेता हूं}}{\text{सत्यनिष्ठा से प्रतिज्ञान करता हूं}}$ कि मैं विधि द्वारा स्थापित भारत के संविधान के प्रति सच्ची श्रद्धा और निष्ठा रखूंगा और मैं भारत की प्रभुसत्ता और अखण्डता अक्षुण्ण रखूंगा।"

8. इससे पूर्व केवल तब जबकि किसी व्यक्ति को किसी राज्य के विधानमण्डल के सदस्य के रूप में निर्वाचित अथवा नामनिर्दिष्ट कर लिया गया हो, संविधान की तृतीय अनुसूची में वर्णित निम्नलिखित प्ररूप में ऐसे सदस्य के रूप में अपना स्थान ग्रहण करने से पूर्व शपथ ग्रहण करने अथवा प्रतिज्ञान करने और उस पर हस्ताक्षर करने के लिए संविधान के अनुच्छेद 188 द्वारा अपेक्षित था—

"किसी राज्य के विधानमण्डल के सदस्य द्वारा ली जाने वाली शपथ या किए जाने वाले प्रतिज्ञान का प्ररूप—

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



"मैं, अमुक, जो विधानसभा (या विधान परिषद्) का सदस्य निर्वाचित (या नामनिर्देशित) हुआ हूं $\frac{\text{ईश्वर की शपथ लेता हूं}}{\text{सत्यनिष्ठा से प्रतिज्ञान करता हूं}}$ कि मैं विधि द्वारा स्थापित भारत के संविधान के प्रति सच्ची श्रद्धा और निष्ठा रखूंगा तथा जिस पद को मैं ग्रहण करने वाला हूं, उसके कर्तव्यों का श्रद्धापूर्वक निर्वहन करूंगा।"

9. उपर्युक्त अध्यपेक्षा का अनुपालन किसी राज्य विधानमण्डल के निर्वाचित अथवा नामनिर्दिष्ट सदस्य द्वारा सोलहवें संशोधन के पश्चात् भी करना होता है। संविधान के अनुच्छेद 188 के अधीन विधानमण्डल के किसी सदस्य द्वारा ली जाने वाली शपथ अथवा किए जाने वाले प्रतिज्ञान का प्ररूप अब इस प्रकार है—

"किसी राज्य के विधानमण्डल के सदस्य द्वारा ली जाने वाली शपथ या किए जाने वाले प्रतिज्ञान का प्ररूप :—

"मैं, अमुक, जो विधानसभा (या विधान परिषद्) का सदस्य निर्वाचित (या नामनिर्देशित हुआ) हूं, $\frac{\text{ईश्वर की शपथ लेता हूं}}{\text{सत्यनिष्ठा से प्रतिज्ञान करता हूं}}$ कि मैं विधि द्वारा स्थापित भारत के संविधान के प्रति सच्ची श्रद्धा और निष्ठा रखूंगा, मैं भारत की प्रभुता और अखण्डता अक्षुण्ण रखूंगा तथा जिस पद को मैं ग्रहण करने वाला हूं उसके कर्तव्यों का श्रद्धापूर्वक निर्वहन करूंगा।"

10. संविधान के अनुच्छेद 173 के खण्ड (क) में संशोधन पुरःस्थापित करने का उद्देश्य यह उपबंध करना था कि न केवल अपना स्थान ग्रहण करने से पूर्व विधानमण्डल का कोई सदस्य संविधान के अनुच्छेद 188 द्वारा यथापेक्षित तृतीय अनुसूची द्वारा विहित शपथ ग्रहण करेगा बल्कि निर्वाचन के लिए खड़ा होने से पहले भी अभ्यर्थी के लिए यह आवश्यक होगा कि वह उस शपथ को ग्रहण करे। यह इस बात को सुनिश्चित बनाना है कि केवल ऐसा व्यक्ति जो भारत के प्रति निष्ठा रखता हो, विधानमण्डल की सदस्यता के लिए अर्ह होगा।

11. संविधान के अनुच्छेद 163(1) तथा अनुच्छेद 164, जिनमें कि राज्य के मुख्यमंत्री तथा अन्य मंत्रियों की नियुक्ति के लिए उपबंध किया गया है, इस प्रकार हैं—

"163(1) जिन बातों में इस संविधान द्वारा या इसके अधीन राज्यपाल से यह अपेक्षित है कि वह अपने कृत्यों या उनमें से किसी को अपने विवेकानुसार करे उन बातों को छोड़कर राज्यपाल को उसके

Agamnigam Digital P...

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



कृत्यों का प्रयोग करने में सहायता और सलाह देने के लिए एक मंत्रि-परिषद् होगी जिसका प्रधान, मुख्यमंत्री होगा।.........

164(1) मुख्यमंत्री की नियुक्ति राज्यपाल करेगा और अन्य मंत्रियों की नियुक्ति राज्यपाल, मुख्यमंत्री की सलाह पर करेगा तथा मंत्री, राज्यपाल के प्रसादपर्यन्त अपने पद धारण करेंगे :

परन्तु बिहार, मध्य प्रदेश और उड़ीसा राज्यों में जनजातियों के कल्याण का भारसाधक एक मंत्री होगा जो साथ ही अनुसूचित जातियों और पिछड़े वर्गों के कल्याण का या किसी अन्य कार्य का भी भारसाधक हो सकेगा।

(2) मंत्रि-परिषद् राज्य की विधान-सभा के प्रति सामूहिक रूप से उत्तरदायी होगी।

(3) किसी मंत्री द्वारा अपना पद ग्रहण करने से पहले, राज्यपाल तीसरी अनुसूची में इस प्रयोजन के लिए दिए गए प्ररूपों के अनुसार उसको पद की और गोपनीयता की शपथ दिलाएगा।

(4) कोई मंत्री, जो निरन्तर छह मास की किसी अवधि तक राज्य के विधानमंडल का सदस्य नहीं रहता है, उस अवधि की समाप्ति पर मंत्री नहीं रहेगा।

(5) मंत्रियों के वेतन और भत्ते ऐसे होंगे जो उस राज्य का विधानमण्डल, विधि द्वारा, समय-समय पर अवधारित करे और जब तक उस राज्य का विधानमण्डल इस प्रकार अवधारित नहीं करता है तब तक ऐसे होंगे जो दूसरी अनुसूची में विनिर्दिष्ट हैं।"

12. संविधान के अनुच्छेद 164 के खण्ड (4) में यह कहा गया है कि कोई मंत्री (जिसके अन्तर्गत मुख्यमंत्री भी शामिल है), जो निरन्तर छह मास की किसी अवधि तक राज्य के विधानमण्डल का सदस्य नहीं रहता है, उस अवधि की समाप्ति पर मंत्री नहीं रहेगा। संविधान के अनुच्छेद 177 के आधार से किसी मंत्री को यह अधिकार होगा कि वह उस राज्य की विधान सभा में या विधान परिषद् वाले राज्य की दशा में दोनों सदनों में बोले और उनकी कार्यवाहियों में अन्यथा भाग ले और विधानमण्डल की किसी समिति में, जिसमें उसका नाम सदस्य के रूप में दिया गया है, बोले और उसकी कार्यवाहियों में अन्यथा भाग ले, किन्तु इस अनुच्छेद के आधार पर वह मत देने का हकदार नहीं होगा। इसलिए अनुच्छेद 177 संविधान के अनुच्छेद 164 के खण्ड (2) में अन्तर्विष्ट सांविधानिक सिद्धान्त के कार्यान्वयन को सुनिश्चित बनाता है, जिसमें यह उपबंध किया गया है कि मंत्रि-परिषद् राज्य की विधान सभा के प्रति सामूहिक रूप से उत्तरदायी होगी। विधानसभा के प्रति मंत्रियों का

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh


उत्तरदायित्व यह सुनिश्चित करने का एक माध्यम है कि सरकार लोकप्रिय राय के अनुरूप कार्यरत है। 'दि ब्रिटिश कांस्टिट्यूशन' नामक अपनी पुस्तक में सर आइवर जेनिंग्स ने यह कहा है कि 'इस बात पर भी जोर देना आवश्यक है कि मंत्रिमण्डल के उत्तरदायित्व से मात्र यह अभिप्रेत है कि किसी राजनीतिज्ञ के लिए यह आवश्यक है कि वह इस योग्य हो कि वह प्रशासन संबंधी प्रत्येक कार्य के लिए हाउस आफ कामन में प्रत्युत्तर दे सके।" हमारे संविधान के अधीन किसी राज्य में कोई मंत्री संविधान के अनुच्छेद 177 में अन्तर्विष्ट उपबंधों के आधार से उस उत्तरदायित्व का निर्वहन करता है, जो अनुच्छेद उसे इस योग्य बनाता है कि वह विधानसभा की कार्यवाहियों में भाग ले सकेगा, भले ही वह उसका ऐसा सदस्य न हो जिसे मतदान करने का अधिकार प्राप्त हो। किन्तु पिटीशनर ने यह दलील दी है कि संविधान सभा के विचार-विमर्श से यह सुझाव मिलता है कि कोई व्यक्ति मंत्री के रूप में अपने चुनाव के समय विधानमण्डल का सदस्य होगा। यह प्रतीत होता है कि वस्तुस्थिति ऐसी नहीं है। वास्तव में, जैसा कि **हरशरण वर्मा** बनाम **श्री त्रिभुवन नारायण सिंह, मुख्यमंत्री, उत्तर प्रदेश और एक अन्य**[1] वाले मामले में उल्लेख किया गया था, संविधान के प्ररूप में संविधान-सभा में एक संशोधन की प्रस्थापना की गई थी, जो इस प्रकार था :—

> "कोई भी मंत्री, इस पद पर चुने जाने के समय, यथास्थिति, या तो राज्यों की विधान-सभा का अथवा उनकी किसी विधान-परिषद् का सदस्य होगा।"

13. पूर्वोक्त संशोधन को स्वीकार नहीं किया गया था। (देखिए संविधान-सभा विचार-विमर्श, तारीख 1 जून, 1949, खण्ड 8, पृष्ठ 521)।

14. पिटीशनर द्वारा अभिव्यक्त यह आशंका कि कोई ऐसा व्यक्ति जो संविधान के प्रति अपनी निष्ठा धारण न करता हो और जो भारत की प्रभुता तथा अखण्डता को कायम रखने के लिए तत्पर न हो, उसे ऐसी दशा में मंत्री का पद प्राप्त करने का अवसर होगा यदि वह संविधान के अनुच्छेद 173 (क) द्वारा यथाविहित शपथ अथवा प्रतिज्ञान नहीं लेता है तथा उस पर हस्ताक्षर नहीं करता है, एक सुआधारित परिपाटी नहीं है क्योंकि संविधान के अनुच्छेद 164 के खण्ड (3) के अधीन किसी राज्य के मंत्री से यह अपेक्षा की जाती है कि वह संविधान के प्रति निष्ठा संबंधी शपथ ग्रहण करे तथा यह वचन भी दे कि वह भारत की प्रभुत्ता तथा अखण्डता को कायम रखेगा, पूर्व इसके कि वह संविधान की तृतीय अनुसूची में विहित प्ररूप में अपने पद को ग्रहण करता है; उक्त प्ररूप इस प्रकार है—

[1] ए० आइ० आर० 1971 एस० सी० 1331.

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



"किसी राज्य के मंत्री के लिए पद की शपथ का प्ररूप :—

"मैं, अमुक $\frac{\text{ईश्वर की शपथ लेता हूं}}{\text{सत्यनिष्ठा से प्रतिज्ञान करता हूं}}$ कि मैं विधि द्वारा स्थापित भारत के संविधान के प्रति सच्ची श्रद्धा और निष्ठा रखूंगा, मैं भारत की प्रभुता और अखण्डता अक्षुण्ण रखूंगा, मैं———————————राज्य के मंत्री के रूप में अपने कर्त्तव्यों का श्रद्धापूर्वक और शुद्ध अन्तःकरण से निर्वहन करूंगा तथा मैं भय या पक्षपात, अनुराग या द्वेष के बिना, सभी प्रकार के लोगों के प्रति संविधान और विधि के अनुसार न्याय करूंगा ।"

15. इस प्रकार यह उल्लेखनीय है कि विधिक स्थिति में संविधान के अनुच्छेद 173(क) के संशोधन के कारण कोई तात्विक परिवर्तन नहीं लाया गया था जिससे कि कोई ऐसा व्यक्ति जो राज्य विधानमण्डल का सदस्य न हो, निस्सन्देह संविधान के अनुच्छेद 164 के खण्ड (4) के अधीन रहते हुए सदस्य के रूप में नियुक्त किया जा सकेगा, जिसमें यह कहा गया है कि कोई मंत्री, जो निरन्तर छह मास की किसी अवधि तक राज्य के विधानमण्डल का सदस्य नहीं रहता है, उस अवधि की समाप्ति पर मंत्री नहीं रहेगा ।

16. **हरशरण वर्मा** बनाम **चन्द्रभान गुप्त और अन्य**[1] वाले मामले में जो कि पुनः पिटीशनर द्वारा ही फाइल किया गया मामला था, और जिसका अवलम्ब पिटीशनर ने लिया है, इलाहाबाद उच्च न्यायालय के विनिश्चय में यह अधिकथित किया गया है कि संविधान के अनुच्छेद 164(4) को अधिनियमित करके संविधान के निर्माताओं ने एक ऐसी स्थिति के लिए उपबंध किया था जिसमें कि कोई मंत्री संभवतः विधानमण्डल में अपना पद नियुक्ति के पश्चात्—उदाहरणार्थ, निर्वाचन पिटीशन के परिणामस्वरूप—खो देता है, अथवा जब उसकी नियुक्ति की जाती है, तो वह उसका सदस्य नहीं होता ।

17. इसलिए हमें इस पिटीशन में कोई सार दिखाई नहीं देता है । तदनुसार पिटीशन खारिज किया जाता है ।

पिटीशन खारिज किया गया ।

मू०

———

[1] ए० आई० आर० 1962 इलाहाबाद 301.

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

# रसिकलाल वाघजीभाई पटेल

बनाम

# अहमदाबाद नगर निगम और एक अन्य

**(14 जनवरी, 1985)**

**(न्यायाधिपति डी० ए० देसाई और रंगनाथ मिश्र)**

**औद्योगिक नियोजन (स्थायी आदेश) अधिनियम, 1946 (1946 का 20)—धारा 3(2) और अनुसूची की मद 9—"अवचार"—उच्च न्यायालय द्वारा ऐसे कृत्य को भी अवचार मान लेना जो सम्बद्ध सेवा विनियम में प्रगणित अवचारों में सम्मिलित नहीं है—उक्त दृष्टिकोण सही नहीं है, अतः "अवचार" सम्बद्ध सेवा विनियम में अवश्य ही प्रगणित होना चाहिए तभी किसी कर्मकार को उसके आधार पर दण्डित किया जा सकता है अन्यथा नहीं।**

पिटीशनर को विक्रय-कर विभाग में भर्ती किया गया था और सुसंगत समय पर वह निरीक्षक (इंस्पेक्टर) के रूप में कार्य कर रहा था। गुजरात राज्य के विक्रय-कर विभाग ने यह निदेश दिया कि पिटीशनर द्वारा घोर उपेक्षा संबंधी अवचार किया गया है क्योंकि उसने अवैध परितोषण की मांग की थी। ये आरोप साबित हो गए थे, अतः विक्रय-कर विभाग ने उस पर सेवा से हटाए जाने की शास्ति अधिरोपित कर दी। तत्पश्चात् पिटीशनर ने एक कालेज में सेवा प्राप्त कर ली। इसी दौरान पिटीशनर ने अहमदाबाद नगर निगम में मुख्य लिपिक के पद के लिए आवेदन दिया। इस आवेदन में उसने इस तथ्य को छिपाए रखा कि वह विक्रय-कर विभाग में से निरीक्षक के पद से अवचार के आरोप के परिणामस्वरूप हटाया गया था। सारांश यह कि वह तात्विक तथ्य को छिपाने का दोषी था और उसने धोखा देकर सेवा प्राप्त कर ली थी। बाद में ये तथ्य प्रकाश में आ गए और इसलिए उस पर आरोप-पत्र की तामील की गई और उसे पुनः सेवा से हटा दिया गया। उसने श्रम न्यायालय के समक्ष एक पिटीशन फाइल किया किन्तु यह पिटीशन इस आधार पर नामंजूर कर दिया गया कि पिटीशनर के विरुद्ध अभिकथित अवचार साबित हो चुका है। तत्पश्चात् उसने विशेष इजाज़त की मांग करते हुए उच्चतम न्यायालय में पिटीशन फाइल किया। पिटीशन खारिज करते हुए,

**अभिनिर्धारित**—या तो प्रमाणित स्थायी आदेशों के अधीन अथवा सेवा विनियमों के अधीन नियोजक के लिए यह आवश्यक है कि वह इस बात को

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



विहित करे कि अवचार क्या है जिससे कि कर्मकार उस त्रुटि को जान सके जिसके विरुद्ध वह चौकस रहे। यदि अवचार को प्रगणित करने संबंधी विस्तृत प्रयोग का अनुसरण करने के पश्चात् यह बात नियोजक के उच्छृंखल विवेक पर छोड़ दी जाती है कि वह किसी भी आचरण को अवचार का नाम दे सके, तो कर्मचारी सदा असमंजस में रहेगा और उसे नियोजक द्वारा कार्योत्तर अभिनिश्चय द्वारा दण्डित कर दिया जाएगा। यह आपराधिक विधिशास्त्र का एक सुस्थिर सिद्धान्त है, अर्थात्, अवचार के कारण सेवा में से हटाया जाना या पदच्युत किया जाना विधि में शास्ति गठित करता है, कि जिस कर्मकार पर अवचार का आरोप लगाए जाने की ईप्सा की गई हो, उसके बारे में यह आवश्यक होना चाहिए कि उसे इस संबंध में काफी पहले इस बात की सूचना दे दी जाए कि अवचार की कोटि में कौन-सी कार्यवाही अथवा कौन-सा आचरण आता है। (पैरा 4)

यह सुस्थिर है कि जब तक कि या तो प्रमाणित स्थायी आदेश में अथवा सेवा विनियमों के अन्तर्गत किसी कार्य अथवा लोप को अवचार के रूप में विहित किया गया हो, नियोजक को इस बात की स्वतंत्रता नहीं है कि वह किसी भी आचरण के बारे में यह कह दे कि वह अवचार है और कर्मकार को दण्डित कर दे भले ही अभिकथित अवचार किसी भी प्रगणित अवचार में ऐसा न समझा गया हो। (पैरा 4)

उच्च न्यायालय ने यह संप्रेक्षण करके गलत निर्णय दिया था कि तात्विक तथ्यों को छिपाकर और तात्विक पहलू के बारे में अपनी भूतकालीन सेवा के संबंध में व्यपदेशन करके पिटीशनर के आचार के बारे में यह नहीं कहा जा सकता कि वह सदाचार है। इसके प्रतिकूल यह उसके संबंध में अनुचित है कि उसने विमर्शित रूप से तात्विक तथ्य को छिपाया गया था और नगर निगम को धोखा देकर नियोजन अभिप्राप्त करने की कोशिश की थी। यह स्पष्ट रूप से अवचार है। इस प्रकार अभिनिर्धारित करने के पश्चात् कि तात्विक तथ्यों को मिथ्या रूप से छिपाया जाना अनचार गठित करता है, उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया था कि यद्यपि यह प्रगणित अवचारों में से किसी के अंतर्गत नहीं आता, तथापि सेवा विनियम के प्रयोजन के लिए यह ऐसा अवचार होगा जो कि इस नाते दण्डनीय होगा। विधि के इस दृष्टिकोण को स्वीकार नहीं किया जा सकता और इसे नामंजूर करना होगा। (पैरा 5)

**निर्दिष्ट निर्णय**

| | | |
|---|---|---|
| [1984] | [1984] 1 एस० सी० आर० 230 :<br>**ग्लैक्सो लेबोरेटरीज बनाम पीठासीन अधिकारी, श्रम न्यायालय, मेरठ और अन्य :** | पैरा<br>4 |

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



**सिविल अपीली अधिकारिता : 1984 का विशेष इजाज़त पिटीशन (सिविल) सं० 5523.**

1981 के विशेष सिविल आवेदन सं० 4649 में गुजरात उच्च न्यायालय के तारीख 28 नवम्बर, 1983 वाले निर्णय और आदेश के विरुद्ध किया गया पिटीशन ।

**पिटीशनर की ओर से** श्री विमल दवे

न्यायालय का निर्णय न्यायाधिपति डी० ए० देसाई ने दिया ।

**न्यायाधिपति देसाई—**

पिटीशनर के बारे में यह दर्शित किया गया है कि वह किसी ऐसे तात्विक तथ्य को छिपाने का दोषी है, जो कि उसे नियोजन प्रदान करने के लिए किसी नियोजक के लिए महत्वपूर्ण है और इसलिए पिटीशनर का मामला संविधान के अनुच्छेद 136 के अधीन विचार करने योग्य नहीं है और तारीख 28 नवम्बर, 1983 के विशेष आवेदन सं० 4649/81 में गुजरात उच्च न्यायालय की खण्ड न्यायपीठ के विनिश्चय के विरुद्ध विशेष इजाज़त लेकर अपील करने के लिए उसका पिटीशन तदनुसार असफल होना निश्चित है, किन्तु यह संक्षिप्त आलेख उच्च न्यायालय के निर्णय में विद्यमान विधि के कथन को ध्यान में रखते हुए विवश्यक आवश्यकता बन जाता है जबकि इसे सही रूप दिए बिना अनुज्ञात किया जाता है और हो सकता है कि किसी निर्दोष व्यक्ति को भविष्य में इससे हानि पहुंचे । इस संक्षिप्त आदेश के लिए यही एकमात्र न्यायौचित्य है ।

2. पिटीशनर को उसके द्वारा आवेदन किए जाने पर 30 सितम्बर, 1950 को विक्रय-कर विभाग में भर्ती किया गया था और सुसंगत समय पर वह विक्रय-कर निरीक्षक के रूप में कार्य कर रहा था । तारीख 31 जनवरी, 1964 वाले एक आदेश द्वारा, जो कि गुजरात राज्य के विक्रय-कर विभाग द्वारा निकाला गया था, पिटीशनर, जो कि सुसंगत समय पर विक्रय-कर निरीक्षक के रूप में कार्य कर रहा था, उस पर घोर उपेक्षा संबंधी अवचार का आरोप लगाया गया था और उसने अवैध परितोषण की मांग करके घोर अनौचित्य किया था और चूंकि इन आरोपों के बारे में यह अभिनिर्धारित किया गया था कि वे साबित कर दिए गए हैं, अतः विक्रय-कर विभाग ने उस पर सेवा से हटाए जाने की शास्ति अधिरोपित की । इस बारे में कोई विवाद नहीं है और इसलिए यह कथन भली-भांति किया जा सकता है कि पिटीशनर को साबित किए गए अवचार के कारण विक्रय-कर विभाग की सेवा से हटा दिया गया था ।

3. विक्रय-कर विभाग में से हटा दिए जाने के पश्चात्, पिटीशनर ने

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



15 मई, 1964 को भक्त वल्लभ धोला कालेज, अहमदाबाद (जिसे संक्षेप में 'कालेज' कहा गया है) में सेवा ग्रहण कर ली। जबकि वह कालेज में सेवारत था, तो पिटीशनर ने 13 जनवरी, 1968 को अहमदाबाद नगर निगम में मुख्य लिपिक के पद के लिए आवेदन किया। उक्त आवेदन विहित प्ररूप में किया जाना था, जिसके स्तंभ सं० 14 में यह अपेक्षा की गई थी कि अपीलार्थी इस बात का कथन करेगा कि क्या अपीलार्थी कभी सेवा से हटाया गया था और यदि ऐसा था,तो सेवा से हटाए जाने के कारण क्या थे और यदि अपीलार्थी ने स्वेच्छया पूर्ववर्ती सेवा छोड़ी थी, तो उस सेवा का त्याग करने के कारणों का कथन किया जाना चाहिए। इस स्तंभ के सम्बन्ध में उत्तर देते समय पिटीशनर ने यह कथन किया कि उसने 30 सितम्बर, 1950 से लेकर 31 जनवरी, 1964 तक विक्रय-कर विभाग में सेवा की थी और यह कि उसने इस कारण उस सेवा से त्यागपत्र दे दिया था क्योंकि उसे स्थानान्तरित कर दिया गया था। इस प्रकार यह प्रतीत होता है कि पिटीशनर मिथ्या रूप से तात्विक तथ्य को छिपाने का दोषी था क्योंकि उसने इस तात्विक तथ्य को छिपाया था कि उसे साबित किए गए अवचार के आधार पर सेवा से हटाया गया था और यह कि उसने यह मिथ्या सुझाव दिया था कि उसने स्वेच्छया सेवा से परित्याग किया था क्योंकि उसका स्थानान्तरण कर दिया गया था। अन्ततः, जब ये तथ्य प्रकाश में आए, तो उस पर आरोप-पत्र की तामील की गई और उसे सेवा से हटा दिया गया। श्रम न्यायालय के समक्ष एक पिटीशन फाइल किया गया था किन्तु उसे इस आधार पर नामंजूर कर दिया गया कि पिटीशनर के विरुद्ध अभिकथित अवचार साबित हो चुका है। उच्च न्यायालय को उसके द्वारा पेश किया गया पिटीशन असफल रहा। अतः उसने विशेष इजाज़त द्वारा यह पिटीशन फाइल किया है।

4. उच्च न्यायालय ने पिटीशन को नामंजूर करते समय यह अभिनिर्धारित किया कि यद्यपि अवचार संबंधी अभिकथन सुसंगत सेवा विनियमों में प्रगणित अवचारों के अन्तर्गत अवचार गठित नहीं करता है, तथापि नियोजक ऐसा आरोप लगा सकता है जो कि अन्यथा स्वतः अवचार होगा भले ही वह प्रगणित न किया गया हो और कर्मचारी को उस आधार पर दण्डित किया जा सकता है। हमें यह प्रतीत होता है कि यह प्रस्थापना अत्यन्त चौंका देने वाली है क्योंकि यद्यपि या तो प्रमाणित स्थायी आदेशों के अधीन अथवा सेवा विनियमों के अधीन नियोजक के लिए यह आवश्यक है कि वह इस बात को विहित करे कि अवचार क्या है जिससे कि कर्मकार/कर्मचारी उस त्रुटि को जान सकें जिसके विरुद्ध वह चौकस रहे। यदि अवचार को प्रगणित करने संबंधी विस्तृत प्रयोग का अनुसरण करने के पश्चात् यह बात

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



नियोजक के उच्छृंखल विवेक पर छोड़ दी जाती है कि वह किसी भी आचरण को अवचार का नाम दे सके, तो कर्मचारी सदा असमंजस में रहेगा और उसे नियोजक द्वारा कार्योत्तर अभिनिश्चय द्वारा दण्डित कर दिया जाएगा। यह आपराधिक विधिशास्त्र का एक सुस्थिर सिद्धान्त है, अर्थात्, अवचार के कारण सेवा में से हटाया जाना या पदच्युत किया जाना विधि में शास्ति गठित करता है, कि जिस कर्मकार पर अवचार का आरोप लगाए जाने की ईप्सा की गई हो, उसके बारे में यह आवश्यक होना चाहिए कि उसे इस सम्बन्ध में काफी पहले इस बात की सूचना दे दी जाए कि अवचार की कोटि में कौन-सी कार्यवाही अथवा कौन-सा आचरण आता है। जैसा कि उच्च न्यायालय द्वारा कथन किया गया है, विधिक प्रस्थापना के कारणवश यह आवश्यक था कि इस विषय में गहराई से जांच की जाए किन्तु **ग्लैक्सो लेबोरेटरीज** बनाम **पीठासीन अधिकारी, श्रम न्यायालय, मेरठ और अन्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय के हाल ही के विनिश्चय के कारण, जिसमें इस न्यायालय ने विनिर्दिष्ट रूप से विद्वान काउन्सेल श्री शान्ति भूषण, जो कि उस मामले में नियोजक की ओर से हाजिर हुए थे, द्वारा पेश की गई एक समरूप दलील का खण्डन कर दिया था, और इस सम्बन्ध में निम्नलिखित संप्रेक्षण किया था—

> "इन मतों का अवलम्ब लेते हुए श्री शांति भूषण ने यह दलील दी कि इस न्यायालय ने वस्तुतः यह अभिनिर्धारित किया कि ऐसे अन्य अवचार हो सकते हैं जो स्थायी आदेश में प्रगणित न हों और जिसके लिए नियोजक समुचित कार्यवाही कर सकेगा। इस मत को मामले के तथ्यों से अलग नहीं समझा जा सकता। उस मामले में न्यायालय के समक्ष जो कुछ देखा गया था वह यह था कि नियोजक ने पक्षकारों के बीच मुकदमेबाजी के पिछले इतिहास को नज़रअन्दाज़ करते हुए तकनीकी आक्षेप किया था कि धारा 33क के अधीन आवेदन चलने योग्य नहीं था। इसी संदर्भ में इस न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया था कि पूर्व कार्यवाही ऐसे किसी अवचार का परिणाम हो सकता है जो स्थायी आदेश में प्रगणित न हो। किन्तु उद्धृत मत की समानता विधि की प्रतिपादना से नहीं की जा सकती कि कुछ अवचार न तो परिभाषित हैं और न ही प्रगणित हैं और जिन पर भूतलक्षी प्रभाव से अवचार न होने के बारे में नियोजक विश्वास कर सकता है जो कर्मकार को शास्ति के दायित्वाधीन बनाएंगे। ऐसे अर्थान्वयन को स्वीकार करने के लिए विधि को दो

---

[1] [1984] 2 एस० सी० आर० 230.

Agamnigam Digital P...

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



शताब्दी पीछे जाना होगा। किन्तु इतना दूर जाने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि सेलम इरोड इलैक्ट्रिसिटी डिस्ट्रीब्यूशन कं० लि० **बनाम** सेलम इरोड इलैक्ट्रिसिटी डिस्ट्रीब्यूशन कं० लि० कर्मचारी संघ, ([19662] एस० सी० आर० 498) के मामले में इस न्यायालय ने वस्तुत: यह अभिनिर्धारित किया था कि अधिनियम के अधीन उद्देश्य एक ही प्रवर्ग से सम्बन्धित कर्मकारों के सम्बन्ध में किसी औद्योगिक स्थापन के अधीन उसी प्रकार अथवा समरूप कार्य का निर्वहन करने में नियोजन की शर्तों और निबन्धों की एकरूपता पुर:स्थापित करने पर और यह कि औद्योगिक नियोजक की ये शर्तें और निबंधन सुस्थापित होने चाहिएं और उनके द्वारा नियोजन स्वीकार करने से पहले नियोजितियों को उनका पता होना चाहिए। यदि उद्देश्य ऐसा है तो ऐसे किसी कार्य के बारे में कोई अस्पष्ट अपरिभाषित धारणा अनपकारी होगी जो नियोजक के दृष्टि से अवचार हो सकती है किन्तु स्थायी आदेश में उसका उपबंध नहीं है जिसके लिए कोई शास्ति अधिरोपित की जा सकती है, उसे स्थायी आदेशों में सम्मिलित नहीं किया जा सकता। नियोजन की शर्तों की निश्चितता से हमें उन दिनों की ओर जाना होगा जबकि नौकरों को आतंकित किया जाता था, जिसके विपरीत गति मुश्किल से न्यायोचित है। इस सम्बन्ध में हम वैस्टर्न इण्डिया मैच कम्पनी लिमिटेड **बनाम** कर्मकार, ([1973]) 3 उम० नि० प० 943 = [1974] 1 एस० सी० आर० 434) वाले मामले को भी निर्दिष्ट कर सकते हैं जिसमें इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया था कि सेवा की कोई शर्त यदि प्रमाणित स्थायी आदेशों के विपरीत है तो वह प्रभावी नहीं होगी और प्रमाणित स्थायी आदेशों को ऐसे सभी करारों पर पूर्विकता मिलेगी। वास्तव में इसमें एक रुचिकर मत दिया गया है जिस पर ध्यान देने का आवश्यकता है। न्यायालय ने यह कहा :—

"मण्डी नियंत्रित अर्थ-व्यवस्था के सिद्धान्त वाले स्वर्ण युग में लोग ईमानदारी से यह मानते थे कि मजदूरी के मण्डी में यदि मांग और पूर्ति का आर्थिक नियम लागू रहा तो नियोजक और कर्मकार मजदूरी का सौदा परस्पर फायदाप्रद रूप में और स्वतंत्रता के साथ कर सकेंगे। उन्होंने यह समझ लिया था कि यदि नियोजक और कर्मकार के बीच मजदूरी के सौदे इस प्रकार होते रहे तो कर्मकारों के लिए नियोजन के उचित निबंधन और शर्तें सुनिचश्ति हो जाएंगी। इस नियम का आदर वे प्राकृतिक कानून के समान करते थे। **इस**

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



नियम की अकाट्यता में उनको पूरा विश्वास था। किन्तु बहुत समय तक इस कानून का कार्यान्वयन देखने के बाद उनका विश्वास उठ गया।"

अंत में हम लखेरी सीमेंट वर्क्स लिमिटेड के कर्मकार **बनाम** एसोसिएटेड सीमेंट कंपनीज़ लिमिटेड, [(1970) 20 इण्डियन फैक्टरीज़ एण्ड लेबर रिपोर्ट्स 243] का निर्देश कर सकते हैं। इस न्यायालय ने इस दलील का खण्डन कर दिया कि अधिनियम में निश्चित रूप से न्यूनतम राशि विहित की जानी चाहिए जो कि किसी औद्योगिक स्थापन में विहित करनी होती है किन्तु इसमें से अन्यथा विस्तीर्णता को अपवर्जित नहीं किया जाता। रोहतक हिसार डिस्ट्रिक्ट इलैक्ट्रिसिटी सप्लाई कम्पनी लिमिटेड **बनाम** उत्तरप्रदेश राज्य और अन्य, [(1966) 2 एस० सी० आर० 863 वाले मामले में इस न्यायालय के पूर्व विनिश्चय का अवलम्ब लेते हुए इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि प्रत्येक ऐसी बात जो सुनिश्चित रूप से निहित किए जाने के लिए अपेक्षित है और किसी ऐसी दलील को ग्रहण नहीं किया जा सकता कि कोई ऐसी चीज़ जोविहित नहीं है तथापि उसे हिसाब में इस रूप में लेना होगा कि वह विहित की गई राशि में परिवर्तन करती है। संक्षेप में, इसे प्रबंधतंत्र की स्वेच्छाओं पर नहीं छोड़ा जा सकता कि वे कार्योत्तर रूप से यह कह सकें कि लोप या कार्य से सम्बन्धित किंचित कार्य जिनके बारे में यह पाया गया है कि वे सुसंगत स्थायी आदेश में प्रगणित नहीं हैं। वह भी ऐसा अवचार होगा जो यथार्थ रूप से सुसंगत स्थायी आदेश में प्रगणित अवचार के अन्तर्गत आता है किन्तु फिर भी वह किसी शास्ति को अधिरोपित करने के प्रयोजन से अवचार होगा। तदनुसार शांति भूषण की इस दलील को कि अवचार का कोई अन्य कार्य जो स्पष्टतः अवचार का कार्य होगा यद्यपि उसे स्थायी आदेश 22 में प्रगणित नहीं किया गया है, स्थायी आदेश 23 के अधीन दण्डनीय हो सकता है, नामंजूर किया जाना चाहिए।"

इस प्रकार यह सुस्थिर है कि जब तक कि या तो प्रमाणित स्थायी आदेश में अथवा सेवा विनियमों के अन्तर्गत किसी कार्य अथवा लोप को अवचार के रूप में विहित किया गया हो, नियोजक को इसकी स्वतंत्रता नहीं है कि वह किसी भी आचरण के बारे में यह कह दे कि वह अवचार है और कर्मकार को दण्डित कर दे भले ही अभिकथित अवचार किसी भी प्रगणित अवचार में ऐसा न समझा गया हो।

Agamnigam Digital Pr...

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



5. उच्च न्यायालय ने यह संप्रेक्षण करके गलत निर्णय दिया था कि—

"तात्विक तथ्यों को छिपाकर और तात्विक पहलू के बारे में अपनी भूतकालीन सेवा के सम्बन्ध में व्यपदेशन करके पिटीशनर के आचार के बारे में यह नहीं कहा जा सकता कि वह सदाचार है। इसके प्रतिकूल यह उसके सम्बन्ध में अनुचित है कि उसने विमर्शित रूप से तात्विक तथ्य को छिपाया था और नगर निगम को धोखा देकर नियोजन अभिप्राप्त करने की कोशिश की थी। यह स्पष्ट रूप से अवचार है।"

इस प्रकार अभिनिर्धारित करने के पश्चात् कि तात्विक तथ्यों को मिथ्या रूप से छिपाया जाना अवचार गठित करता है, उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया था कि यद्यपि यह प्रगणित अवचारों में से किसी के अन्तर्गत नहीं आता, तथापि सेवा विनियम के प्रयोजन के लिए यह ऐसा अवचार होगा जो कि हम नाते दण्डनीय होगा। इस विधि के इस दृष्टिकोण को स्वीकार नहीं कर सकते और इसे नामंजूर करना होगा।

6. विधिक स्थिति का स्पष्टतः पुनः कथन करने के पश्चात्, हम विशेष इजाजत पिटीशन को खारिज करते हैं।

पिटीशन खारिज किया गया।

मू०

———

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation F

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

# पंजाब राज्य

बनाम

# नोहर चन्द

(17 मई, 1984)

(न्यायाधिपति डी० ए० देसाई और अमरेन्द्र नाथ सेन)

**दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2)—धारा 179 और 180 [सपठित आवश्यक वस्तु अधिनियम, 1955 (1955 का 10) धारा 11 और 13-क]—विचारण की अधिकारिता—उर्वरक के विनिर्माता द्वारा विनिर्मित उर्वरक घटिया स्तर का पाया जाना तथा विनिर्माता के विपणन अभिकर्ता (मार्किटिंग एजेन्ट) द्वारा ऐसे उर्वरक को विनिर्माण के स्थान से किसी भिन्न स्थान पर बेचा जाना—अपर सेशन न्यायाधीश द्वारा विपणन अभिकर्ता को अभियोजित किया जाना किन्तु उच्च न्यायालय द्वारा अपर सेशन न्यायाधीश के आदेश को अपास्त किया जाना—ऐसे न्यायालय को जहां घटिया स्तर का उर्वरक बेचा गया था, विनिर्माता और विपणन अभिकर्ता, दोनों का विचारण करने की अधिकारिता प्राप्त होगी और उच्च न्यायालय द्वारा सेशन न्यायाधीश के आदेश में हस्तक्षेप करना ठीक नहीं है।**

प्रत्यर्थी मै० वरिन्द्र एग्रो कैमिकल्स (इण्डिया) के नाम से लुधियाना में उर्वरक के विनिर्माण का कारबार करता था। उर्वरक निरीक्षक ने प्रत्यर्थी द्वारा विनिर्मित उर्वरक का नमूना विश्लेषण के प्रयोजन के लिए अभिकर्ता से लिया। विश्लेषण पर यह घटिया स्तर का उर्वरक पाया गया था। कपूरथला के मुख्य कृषि अधिकारी ने आवश्यक वस्तु अधिनियम 1955, की धारा 13-क के साथ पठित उर्वरक नियंत्रण आदेश, 1957 की धारा 13(1)(क) के अधीन मै० सचदेवा इंटरप्राजिज (अभिकर्ता) के दो भागीदारों और घटिया स्तर के उर्वरक के विनिर्माता के विरुद्ध मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, कपूरथला के समक्ष दाण्डिक परिवाद फाइल किया। मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट ने उपर्युक्त अपराध के लिए सभी अभियुक्तों के विरुद्ध आरोप विरचित किया। प्रत्यर्थी ने यह निवेदन करते हुए विद्वान मजिस्ट्रेट के समक्ष आवेदन किया कि उसे उन्मोचित किया जाए और इस आधार पर उसके विरुद्ध की गई कार्यवाहियां रोक दी जाएं कि मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, कपूरथला को उसके विरुद्ध विचारण करने की कोई क्षेत्रीय अधिकारिता नहीं है, क्योंकि उर्वरक के विनिर्माण का

Agamnigam Digital Pres...

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



कारबार लुधियाना में किया जाता है। मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट ने प्रत्यर्थी को उन्मोचित कर दिया और उसके विरुद्ध कार्यवाहियां रोक दीं। पंजाब राज्य ने विद्वान अपर सेशन न्यायाधीश, कपूरथला के समक्ष दाण्डिक पुनरीक्षण फाइल किया। विद्वान अपर सेशन न्यायाधीश ने यह अभिनिर्धारित करते हुए कि मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट को अभियुक्तों सहित प्रत्यर्थी का विचारण करने की अधिकारिता है उसका आदेश अपास्त कर दिया। इस पर प्रत्यर्थी ने पंजाब हरियाणा उच्च न्यायालय के समक्ष पुनरीक्षण पिटीशन फाइल किया। उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश ने यह अभिनिर्धारित किया कि विद्वान अपर सेशन न्यायाधीश ने मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट के आदेश में हस्तक्षेप करके भूल की है और उसे विनिर्माता पर विचारण करने की अधिकारिता नहीं थी। उच्च न्यायालय के निर्णय के विरुद्ध विशेष इजाजत लेकर उच्चतम न्यायालय में अपील फाइल की गई। अपील मंजूर करते हुए,

**अभिनिर्धारित**—यदि घटिया स्तर के उर्वरक का विनिर्माण करना स्वतः अपराध है और घटिया स्तर के उर्वरक का विक्रय किया जाना स्वतः सुभिन्न अपराध है किन्तु वे कार्य-कारण प्रभाव के रूप में एक दूसरे के साथ जुड़े हुए हैं तो दोनों का विचारण किसी एक स्थान पर या अन्य स्थान पर किया जा सकता है। यदि कोई व्यक्ति घटिया स्तर के उर्वरक का विनिर्माण करता है तो जहां कहीं इसे बेचा जाता है वह आंतरिक या कार्यकारण संबंध है। (पैरा 8)

इस मामले में वे अभिकथन रह गये हैं जो कि उच्च न्यायालय के निर्णय में और विद्वान अपन सेशन न्यायाधीश के निर्णय में पाए गए हैं और यह स्पष्ट हो गया है कि जहां ऐसे उर्वरक, जिसे घटिया स्तर का पाया गया है, के विनिर्माता के विपणन अभिकर्ता को घटिया स्तर का उर्वरक बेचने के लिए अभियोजित किया जाता है वहां विनिर्माता का उसके साथ विचारण किया जा सकता है और उस न्यायालय को जहां घटिया स्तर का उर्वरक बेचा गया था, उन दोनों का विचारण करने की अधिकारिता होगी। (पैरा 9)

### अनुमोदित निणय

[1983] 1983 क्रि० ला जरनल 1595 : पैरा
**इन्चार्ज प्रोडक्शन, हरियाणा स्टेट कोआपरेटिव सप्लाई एण्ड मार्किटिंग फेडरेशन लिमिटेड (हैफेड) फर्टिलाइजर बनाम पंजाब राज्य.** 4

### उलट दिया गया निर्णय

[1982] 1982 चण्डीगढ़ क्रिमिनल केसेज 225 :
**सतोन्दर सिंह और अन्य बनाम पंजाब राज्य;** 2,4

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



[1980] (1980) क्रिमिनल लॉ जरनल 516 :
गुजरात राज्य बनाम एग्रो केमिकल्स इत्यादि.

**प्रभेदित निर्णय**

[1975] [1975] 3 उम० नि० प० 753=
[1975] सप्ली० एस० सी० आर० 30 :

**भगवान दास जगदीश चन्दर बनाम दिल्ली प्रशासन** 9

**दाण्डिक अपीली अधिकारिता : 1984 की दाण्डिक अपील सं० 247.**

(1982 की दाण्डिक प्रकीर्ण सं० 1473-एम० में पंजाब-हरियाणा उच्च न्यायालय के तारीख 28 जुलाई, 1982 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध विशेष इजाज़त लेकर की गई अपील)

**अपीलार्थी की ओर से** सर्वश्री के० सी० दुआ और एस० के० बग्गा

**प्रत्यर्थी की ओर से** सर्वश्री फ्रैंक एन्थनी और सुशील कुमार

न्यायालय का निर्णय न्यायाधिपति डी० ए० देसाई ने दिया ।

**न्यायाधिपति देसाई**—

विशेष इजाज़त मंजूर की जाती है ।

2. यहां प्रत्यर्थी नोहर चन्द मै० वरिन्द्र एग्रो कैमीकल्स (इण्डिया) के नाम और अभिनाम के अधीन लुधियाना में उर्वरक के विनिर्माण का कारबार कर रहा था । उर्वरक निरीक्षक के रूप में अभिहित निरीक्षक ने मै० सचदेव एण्टरप्राइजिज, कपूरथला (जिसे संक्षेप में अभिकर्ता कहा गया है) के परिसरों का 12 दिसम्बर, 1978 को निरीक्षण किया और नोहरचन्द द्वारा विनिर्मित उर्वरक का नमूना अभिप्राप्त किया जोकि अभिकर्ता द्वारा बेचा जा रहा था । वह नमूना यह अभिनिश्चित करने के लिए विश्लेषण के प्रयोजन के लिए अभिप्राप्त किया गया था कि क्या यह विहित स्तर का है । विश्लेषण किये जाने पर इसे घटिया स्तर का पाया गया था । कपूरथला के मुख्य कृषि अधिकारी ने आवश्यक वस्तु अधिनियम, 1955 की धारा 13-क सपठित उर्वरक नियंत्रण आदेश, 1957 की धारा 13(1)(क) के अधीन मै० सचदेव इंटरप्राजिज़ के दो भागीदारों, राजशेट्टी और घटिया स्तर के उर्वरक के विनिर्माता प्रत्यर्थी नोहर चन्द गुप्त के विरुद्ध मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, कपूरथला के न्यायालय में 24 दिसम्बर, 1980 को दांडिक परिवाद फाइल किया जो 1980 का दांडिक परिवाद सं० 156-सी है । विद्वान मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट ने सभी अभियुक्तों के विरुद्ध ऊपर वर्णित अपराध के लिए आरोप विरचित किया । प्रत्यर्थी नोहर चन्द ने यह निवेदन करते हुई विद्वान मजिस्ट्रेट के समक्ष

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



20 जुलाई, 1981 को आवेदन किया कि उसे उन्मोचित किया जाये और इस आधार पर उसके विरुद्ध कार्यवाहियां रोक दी जायें कि मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, कपूरथला को उस पर विचारण करने की कोई क्षेत्रीय अधिकारिता नहीं थी क्योंकि वह उर्वरक के विनिर्माण का कारबार लुधियाना में करता है। विद्वान मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट ने **गुजरात राज्य** बनाम **एग्रो कैमीकल्स इत्यादि**[1] वाले मामले में गुजरात उच्च न्यायालय के विनिश्चय का अनुसरण करते हुए प्रत्यर्थी को उन्मोचित कर दिया और उसके विरुद्ध कार्यवाहियां बन्द कर दीं। पंजाब राज्य ने विद्वान अपर सेशन न्यायाधीश कपूरथला के समक्ष 1981 का दांडिक पुनरीक्षण आवेदन सं० 48 फाइल किया, जिन्होंने (विद्वान अपर सेशन न्यायाधीश, कपूरथला ने) तारीख 13 फरवरी, 1982 के अपने निर्णय और आदेश द्वारा यह अभिनिर्धारित करते हुए विद्वान मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट का आदेश अपास्त कर दिया कि दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 180 में अंतर्विष्ट उपबन्धों को देखते हुए मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट कपूरथला (के न्यायालय) को अभियुक्तों सहित प्रत्यर्थी का विचारण करने की अधिकारिता प्राप्त थी। इस पर प्रत्यर्थी ने पंजाब-हरियाणा उच्च न्यायालय में पुनरीक्षण पिटीशन फाइल किया जोकि 1982 की दांडिक प्रकीर्ण सं० 1473-एम० है। उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश ने यह अभिनिर्धारित किया कि **सतीन्दर सिंह और अन्य** बनाम **पंजाब राज्य**[2] वाले मामले में किए गए विनिश्चय को देखते हुए जिसमें गुजरात उच्च न्यायालय द्वारा अपनाये गये दृष्टिकोण को स्वीकार किया गया था, विद्वान अपर सेशन न्यायाधीश ने विद्वान न्यायिक मजिस्ट्रेट के आदेश में हस्तक्षेप करने की भूल की थी और यह कि मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट कपूरथला (के न्यायालय) को नोहर चन्द विनिर्माता पर विचारण करने की कोई अधिकारिता नहीं थी। तदनुसार पुनरीक्षण आवेदन मंजूर किया गया था और विद्वान अपर सेशन न्यायाधीश का विनिश्चय अपास्त किया गया था तथा विद्वान मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट का (विनिश्चय) प्रत्यवर्तित किया गया था। इस प्रकार विशेष इजाज़त लेकर यह अपील की गई है।

3. प्रत्यर्थी के विरुद्ध यह अभिकथन किया गया था कि उसने घटिया स्तर के उर्वरक का विनिर्माण किया और अपने पणन अभिकर्ता (एजेन्ट) मै० सचदेव इंटरप्राइजिज़, कपूरथला के माध्यम से उसे बेचा। अपराध उस समय प्रगट हुआ था जब उर्वरक निरीक्षक ने कपूरथला के पणन अभिकर्ता से घटिया स्तर के उर्वरक का नमूना लिया। यह स्वीकृत स्थिति है कि प्रत्यर्थी जोकि विनिर्माता है, लुधियाना में उर्वरक के विनिर्माण का कारबार करता है।

---

[1] [1980] क्रिमनल लॉ जरनल 516.

[2] [1982] चण्डीगढ़ क्रिमिनल केसेज 225.

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



तैयार किया गया प्रश्न यह है : क्या कपूरथला के मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट (के न्यायालय) को जहां प्रत्यर्थी द्वारा विनिर्मित घटिया स्तर का उर्वरक पणन अभिकर्ता ने बेचा था, पणन अभिकर्ता सहित प्रत्यर्थी —घटिया स्तर के उर्वरक के विनिर्माता पर विचारण करने की अधिकारिता होगी।

4. उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश ने **सतीन्द्र सिंह**[1] वाले मामले में किए गए विनिश्चय का अनुसरण करते हुए यह अभिनिर्धारित किया कि घटिया स्तर के उर्वरक के विनिर्माता पर वहां विचारण नहीं किया जा सकता जहां वह वस्तु बेची जा रही थी। ससम्मान उच्च न्यायालय द्वारा अपनाया गया दृष्टिकोण विधि में पूर्णतः न चलने योग्य है। किन्तु विधिक स्थिति की परीक्षा करने के पूर्व इसी मुद्दे पर उसी उच्च न्यायालय में विधि के पश्चातवर्ती विकास की अवेक्षा की जा सकती है।

5. आरम्भ में यह संकेत किया जा सकता है कि वह विनिश्चय जिसके विरुद्ध प्रस्तुत अपील की सुनवाई की जा रही है उसी उच्च न्यायालय के अन्य विद्वान एकल न्यायाधीश के समक्ष प्रोद्भूत किया गया था और चूंकि विद्वान एकल न्यायाधीश को इस मामले में विद्वान न्यायाधीश द्वारा अपनाये गये दृष्टिकोण के सही होने के बारे में अधिक संदेह था इसलिए उन्होंने इस मामले को उसी न्यायालय के वृहत्तर न्यायपीठ के प्रमाणिक निर्णय के लिए निर्दिष्ट किया। यह निर्देशित मामला : **इन्चार्जप्रो डेक्शन, हरियाणा स्टेट कोआपरेटिव सप्लाई एण्ड मार्किटिंग फैडरेशन लिमिटेड, (हैफेड) फर्टीलाइजर बनाम पंजाब राज्य**[2] उच्च न्यायालय की खंड न्यायापीठ के समक्ष सुनवाई के लिए प्रस्तुत किया गया। खंड न्यायापीठ ने इस मामले में विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा दिये गये विनिश्चय को निर्दिष्ट किया और स्पष्टतः इसे अस्वीकार कर दिया और निबन्धनों के अनुसरण में इसे उलट दिया। इसके साथ-साथ उसने सतीन्द्र सिंह वाले मामले में किया गया विनिश्चय भी उलट दिया जिसका अनुसरण विद्वान न्यायाधीश ने इस मामले में किया था। निर्विवाद रूप से निश्चयपूर्वक यह कहा जा सकता है कि उच्च न्यायालय की वृहत्तर न्यायापीठ ने इस मामले में विद्वान न्यायाधीश द्वारा अपनाया गया दृष्टिकोण अस्वीकार कर दिया है।

6. प्रत्यर्थी घटिया स्तर के उर्वरक के विनिर्माता पर उन लोगों के साथ विचारण किया जाना है जिन्होंने उसके अभिकर्ताओं के रूप में उसके द्वारा विनिर्मित घटिया स्तर के उर्वरक का विक्रय किया। प्रश्न यह है कि क्या न्यायालय को, जहां घटिया स्तर का उर्वरक बेचा गया है, ऐसे घटिया स्तर के उर्वरक के विनिर्माता पर, विचारण करने की अधिकारिता होगी,

---

1 [1982] चण्डीगढ़ क्रिमिनल केसेज 225.

2 [1983] क्रिमिनल लॉ जरनल 1985.

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



जिसके विनिर्माण का कार्यकलाप भिन्न स्थान पर किया जाता है। यही दलील उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ के समक्ष दी गयी थी। उच्च न्यायालय ने दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 179 और 180 निर्दिष्ट करने के पश्चात यह अभिनिर्धारित किया कि उस न्यायालय को, जहां घटिया स्तर का उर्वरक बेचा जाता था घटिया स्तर के उर्वरक के विनिर्माता का विचारण की अधिकारिता प्राप्त होगी भले ही विनिर्माण संबंधी कार्यकलाप पूरी तरह से भिन्न स्थान पर किया गया है। खंड न्यायपीठ ने यह अभिनिर्धारित किया कि विनिर्माता और व्यवहारी का उस स्थान पर विचारण किया जा सकता है जहां घटिया स्तर के उर्वरक के विनिर्माण और विक्रय किया गया था, जैसाकि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 179 और 180 में परिकल्पित है। हमारे मतानुसार यह विधि में सही दृष्टिकोण प्रतीत होता है।

7. धारा 179 में यह उपबन्ध किया गया है कि जब कोई कार्य किसी की गई बात के और किसी निकाले हुए परिणाम के कारण अपराध है तब ऐसी परिस्थिति की जांच या विचारण ऐसे न्यायालय द्वारा किया जा सकता है, जिसकी स्थानीय अधिकारिता के अन्दर ऐसी बात की गई है या ऐसा परिणाम निकला है। धारा 180 में यह उपबन्ध किया गया है कि जब कोई कार्य किसी ऐसे अन्य कार्य से संबंधित होने के कारण अपराध है, जो स्वयं भी अपराध है या अपराध होता यदि कर्ता अपराध करने के लिए समर्थ होता, तब प्रथम वर्णित अपराध की जांच या विचारण ऐसे न्यायालय द्वारा किया जा सकता है जिसकी स्थानीय अधिकारिता के अन्दर उन दोनों में से कोई भी ऐसा कार्य किया गया है।

8. अब यदि घटिया स्तर के उर्वरक का विनिर्माण करना स्वत: अपराध है और घटिया स्तर के उर्वरक का विक्रय किया जाना स्वत: सुभिन्न अपराध है किन्तु वे कार्य-कारण प्रभाव के रूप में एक दूसरे के साथ जुड़े हुए हैं तो दोनों का विचारण किसी एक स्थान पर या अन्य स्थान पर किया जा सकता है। यदि कोई व्यक्ति घटिया स्तर के उर्वरक का विनिर्माण करता है तो जहां कहीं इसे बेचा जाता है वह आंतरिक या कार्य-कारण संबंध है। यह स्थिति निश्चित रूप से दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 179 और 180 के अंतर्गत होगी। हम 9 मार्च, 1983 को दिए गए खंड न्यायपीठ के पश्चात्-कथित इस विनिश्चय से सहमत हैं कि उस न्यायालय को, जहां घटिया स्तर का उर्वरक बेचा जाता है, घटिया स्तर के उर्वरक के विनिर्माता का विचारण करने की समान अधिकारिता होगी। यह इतना स्पष्ट है कि हमें इस बारे में और अधिक विचार-विमर्श करना अनावश्यक प्रतीत होता है।

9. श्री फ्रैंक एन्थोनी, विद्वान् काउन्सेल ने, जो प्रत्यर्थी की ओर से

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



हाजिर हुए, इस बात का जोरदार समर्थन किया कि **भगवानदास जगदीश चदर बनाम दिल्ली प्रशासन**[1] वाले मामले में न्या० अलगिरि स्वामी के उस विनिश्चय से, जिसमें उन्होंने सहमति व्यक्त की है, यह बिल्कुल स्पष्ट है कि अपमश्रित खाद्य पदार्थ का विनिर्माण और उसका विक्रय करना एक ही संव्यवहार का अभिन्न अंग नहीं कहा जा सकता है और यह कि जब तक उस परिवाद से यह दर्शित नहीं होता कि उर्वरक का नमूना उर्वरक के थैले से लिया गया था, जैसा कि विनिर्माता द्वारा दिया गया था, तब तक यह पूरा-पूरा सम्भव है कि अपमिश्रण पश्चात्वर्ती अवसर पर किया गया हो और इसलिए कोई भी ऐसी घटिया उर्वरक के, जिसे इस प्रकार बेचा जा रहा हो, विनिर्माण का अनुमान नहीं लगाया जा सकता, जब कि वह नमूना विपणन एजन्सी से लिया गया था। इस दृष्टिकोण द्वारा इस तथ्य की अनवेक्षा की गई है कि विचारण अभी किया जाना है— कोई भी व्यक्ति दो स्थितियों की परिकल्पना कर सकता है। जब उर्वरक का नमूना थैले से लिया जाता है जो कि उसी स्थिति में था जैसा कि विनिर्माता द्वारा परिदत्त किया गया था और विपणन अभिकर्त्ता (एजेन्ट) के कब्जे में था इसलिए घटिया स्तर के उर्वरक का विनिर्माण और विक्रय निर्विवाद रूप से एक ही संव्यवहार होगा। किन्तु यह बात उन तथ्यों के आधार पर प्रतिपादित की गई है जो विचारण में प्रगट की जा सकती है और साबित की जा सकती है। भगवान दास जगदीश चन्द्र वाले मामले में यह अभिकथन किया गया था कि अपीलार्थी ने, जो इस न्यायालय के समक्ष है, विक्रेता को घी बेचा जिसे विश्लेषण के आधार पर अपमिश्रित पाया गया था और उन दोनों पर खाद्य अपमिश्रण निवारण अधिनियम, 1954 की धारा 7 सहपठित धारा 16 के अधीन संयुक्त रूप से विचारण किया गया था। विचारण के दौरान घी का क्रेता वारन्टर को उन्मोचित कराना चाहता था जिससे कि अपराधकारी वस्तु के अपने द्वारा क्रय करने की बात को साबित करने के लिए प्रतिरक्षा के रूप में उसकी परीक्षा कर सके। यह आवेदन मंजूर किया गया था और वारन्टर को दोषमुक्त किया गया था। वारन्टर के दोषमुक्त करने के पश्चात् विद्वान् मजिस्ट्रेट ने खाद्य अपमिश्रण नियावरण अधिनियम, 1954 की धारा 20-क के अधीन विनिर्माता श्री गौरीशंकर प्रेमनारायण को आलिप्त किया। दिल्ली नगर निगम द्वारा वारन्टर और अन्य अभियुक्त की दोषमुक्ति के विरुद्ध अपील फाइल की गई थी। उच्च न्यायालय ने लक्ष्मी नारायण की दोषमुक्ति को कायम रखा किन्तु वारन्टर की दोषमुक्ति अपास्त कर दी। इस प्रकार यह मामला इस न्यायालय के समक्ष आया। हम इस बात को देखने में असफल रहे हैं कि किस प्रकार इस विनिश्चय से इस मामले

---

[1] [1975] 3 उम० नि० प० 753=[1975] सप्ली० एस० सी० आर० 30.

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



में प्रत्यर्थी की सहायता से हो सकती है। बहरहाल, न्या० अलगिरि स्वामी के उस निर्णय में व्यक्त किए गए मत का अवलम्ब लिया गया था जिसमें उन्होंने अपनी सहमति व्यक्त की थी जो निम्न प्रकार है—

> "यह बात ध्यान रखने की है कि आरोप में यह तो कहा गया है कि लक्ष्मी नारायण से क्रय किए गए घी का नमूना अपमिश्रित पाया गया था, किन्तु यह कहीं नहीं कहा गया है कि अपीलार्थी द्वारा लक्ष्मीनारायण के हाथ विक्रय किया गया घी अपमिश्रित था। यह बात तो बिना किसी संकोच के मानी जा सकती है कि विनिर्माता, वितरक और विक्रेता के बीच सामान्य उद्देश्य या समान आशय या प्रयोजन की एकता विक्रीत खाद्य वस्तु को बेचने की थी, किन्तु यह नहीं कहा गया है कि सामान्य उद्देश्य अपमिश्रित खाद्य वस्तु का बेचने का था।"

पश्चात्वर्ती प्रक्रम पर यह भी मत व्यक्त किया गया था कि—

> "आरोप की विधिमान्यता का विनिश्चय उन तथ्यों के आधार पर किया जाना है, जो अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत किए गए हों। यदि उनमें से किसी के भी विरुद्ध यह नहीं साबित किया जाता है कि उसके द्वारा विनिर्मित, वितरित या विक्रीत खाद्य वस्तु, अपमिश्रित थी तो वह व्यक्ति दोषमुक्त इसलिए नहीं किया जाएगा कि आरोप विधिमान्य नहीं था या त्रुटिपूर्ण था, बल्कि इसलिए कि आरोप को साबित करने के लिए कोई सबूत नहीं था। किन्तु उस अभिकथन के बिना यह नहीं कहा जा सकता है कि अपमिश्रित खाद्य को विनिर्मित, वितरित या विक्रीत करने के लिए उन सब के बीच प्रयोजन की एकता या समान उद्देश्य या कोई समान आशय था। यह भी मत व्यक्त किया गया था कि 'अपमिश्रित घी के विनिर्माण, वितरण और विक्रय से एक ही व्यवहार उस सूरत में गठित होगा जिसमें कि वह पाया गया हो कि वह भी तीनों प्रक्रमों पर अपमिश्रित था। अन्यथा उसका अर्थ केवल इतना ही है कि उन सब से एक ही संव्यवहार केवल इस अर्थ में गठित था कि उन सब का समान उद्देश्य घी का बेचना था'।"

उद्धृत मत से किसी प्रकार प्रत्यर्थी को सहायता मिल सकती है, हमारे समझ के परे है। प्रथमतः अपराधी का विचारण करने वाले न्यायालय की अधिकारिता का प्रश्न उस मामले में कभी नहीं उठाया गया था और यहां प्रत्यर्थी को अधिकारिता के न होने के आधार पर उन्मोचित किया गया था। दूसरे वह विनिश्चय मामले के तथ्यों पर किया गया था, जैसाकि उद्धृत अंश से

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



स्पष्ट होता है जिसमें आरोप का परिवर्णन किया गया है। इस पहलू का इस मामले में उल्लेख नहीं किया गया है। यह स्पष्ट करना होगा कि इस न्यायालय में प्रत्यर्थी की ओर से कोई शपथपत्र फाइल नहीं किया गया था और न तो परिवाद हमारे समक्ष पढ़ा गया था और मामले में उन प्रकथनों पर कार्रवाई की गई है जिन पर वर्तमान में कोई विवाद नहीं है। इसलिए इस मामले में वे अभिकथन हमारे समक्ष रह गए हैं जो कि उच्च न्यायालय के निर्णय में और विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश के निर्णय में पाए गए हैं। और स्पष्टतः यह स्पष्ट हो गया है कि जहां ऐसे उर्वरक जिसे घटिया स्तर का पाया गया है के विनिर्माता के विपणन अभिकर्त्ता को घटिया स्तर का उर्वरक बेचने के लिए अभियोजित किया जाता है वहां विनिर्माता का उसके साथ विचारण किया जा सकता है और उस न्यायालय को जहां घटिया स्तर का उर्वरक बेचा गया था, उन दोनों पर विचारण करने की अधिकारिता होगी।"

10. इसलिए उच्च न्यायालय ने विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश के आदेश को अपास्त करके भूल की थी। इस अपील में एक मात्र यही मुद्दा था और जैसा कि यह स्पष्टतः प्रगट होता है कि उच्च न्यायालय ने विद्वान अपर सेशन न्यायाधीश के आदेश में हस्तक्षेप करके भूल की थी। इसलिए यह अपील मंजूर की जाती है और उच्च न्यायालय का निर्णय अभिखंडित और अपास्त किया जाता है तथा विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश का निर्णय प्रत्यावर्तित किया जाता है।

अपील मंजूर की गई।

प्र/सरोहा

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

# राम जेठमलानी

बनाम

# भारत संघ

तथा

# बीबी अमरजीत कौर

बनाम

# भारत संघ और अन्य

**(19 जून, 1984)**

(न्यायाधिपति ई० एस० वेंकटरामय्या, दीर्घविकाश न्यायाधिपति)

**सुप्रीम कोर्ट रूल्स, 1966—भाग 1—आदेश 7, नियम 2, सपठित आदेश 2, नियम 2—वृहत्तर न्यायपीठ के प्रति निर्देश से सम्बन्धित परिपाटी तथा प्रक्रिया—अत्यधिक लोक महत्व के गम्भीर प्रश्नों को अन्तर्वलित करने वाले असाधारण मामले—पंजाब में की गई कार्यवाही के पश्चात् निरुद्ध सिक्ख नेताओं की निर्मुक्ति को अन्तर्वलित करने वाला विवाद्यक—उक्त विवाद्यक दीर्घविकाश न्यायाधिपति को निर्दिष्ट किया जाना—न्यायाधिपति के विचार में, ऐसा महत्वपूर्ण विवाद्यक वृहत्तर न्यायपीठ के समक्ष रखा जान आवश्यक है—अतः उक्त विवाद्यक दीर्घविकाश न्यायाधिपति द्वारा उच्चतम न्यायालय के सात न्यायाधिपतियों की बृहत्तर न्यायपीठ को निर्दिष्ट किया गया।**

यहां असाधारण मामले अन्तर्वलित हैं जिनमें लोक महत्व के इतने अधिक गम्भीर प्रश्न उद्‌भूत हुए हैं जो राष्ट्र की सुरक्षा तथा समुदाय के अनेक लोगों की व्यक्तिगत स्वतन्त्रता से सम्बन्धित हैं। इनमें से अनेक व्यक्तियों को समाज के बड़े प्रभुतासम्पन्नन लोगों द्वारा यह विश्वास दिलाया गया होगा (भले ही वह गलत हो) कि जो कुछ वे कर रहे थे, वह सही था और इस कारण वे स्वतन्त्र अभिकर्ता नहीं हो सकते। अतः इन मामलों पर ऐसे मामलों की अपेक्षा, जो इस न्यायालय के समक्ष प्रायः आते हैं, भिन्न रूप से विचार किया जाना आवश्यक है। मामलों की गम्भीरता तथा उनके महत्व को देखते हुए, यह आवश्यक हो जाता है कि इनका निर्णय दीर्घविकाश में कार्यरत

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



न्यायाधिपति को इनके निर्दिष्ट किए जाने की बजाय पर्याप्त बृहत्तर न्यायपीठ के समक्ष निर्णयार्थ निर्दिष्ट किया जाए ताकि इसमें जो गम्भीर प्रश्न अन्तर्वलित है, उसके बारे में प्राधिकारपूर्ण विनिश्चय दिया जा सके। मामला बृहत्तर न्यायपीठ को निर्दिष्ट करते हुए,

**अभिनिर्धारित**—अन्तर्वलित प्रश्न इतना विस्तृत और जटिल है कि उसे एकल न्यायाधिपति के कन्धों द्वारा वहन नहीं किया जा सकता। ये मामले और इस प्रकार के अन्य मामले उच्चतम न्यायालय के कम से कम सात ऐसे न्यायाधिपतियों द्वारा सुने जाने चाहिएं जिनका अप्रश्नगत न्यायिक प्राधिकार, विद्वत्ता कुशाग्रबुद्धि, साहस, निष्ठा, त्याग की भावना तथा इस देश में रहने वाले लोगों के प्रति कर्तव्य की भावना के लिए ज्ञात हमारे राज्यों में में से एक महान राज्य में शांति स्थापित करने में अधिक सहायक होगा। (पैरा 3)

इन कार्यवाहियों के अनुक्रम में किसी भी पक्षकार के पक्ष में काउन्सेल की ओर से कहे गए शब्द पर उसके प्रयोग से पूर्व विचार करना चाहिए। उत्तेजना और भावावेश के लिए कोई गुंजाइश नहीं है। विचारविमर्श में मात्र तर्क और कारण को महत्व दिया जाना चाहिए। ऐसे जटिल मुद्दों पर विचार करने के लिए जो अवधारण के लिए उद्भूत हो सकते हैं सभी लोगों की सहानुभूति होनी चाहिए। इन मामलों पर कार्रवाई करने के लिए उच्च न्यायिक प्रतिभा और राजनीतिज्ञता आवश्यक है और इस प्रकार इन मामलों को न्यायिक मजिस्ट्रेट, सेशन न्यायाधीश या उच्च न्यायालय में पहुंचने के लिए आवेदकों के लिए स्वतन्त्रता सुरक्षित करते हुए अस्वीकार नहीं किया जा सकता। (पैरा 2)

**दाण्डिक (रिट) अधिकारिता : 1984 का रिट पिटीशन (दाण्डिक) सं० 920 और 1984 का दाण्डिक रिट पिटीशन सं० 934.**

(संविधान के अनुच्छेद 32 के अधीन रिट पिटीशन)

**आवेदक/प्रत्यर्थी की ओर से** — सर्वश्री टी० आर० मृदुल, आर० बी० अग्रवाल और आर० एन० पोद्दार

**विरोधी पक्षकार/पिटीशनर की ओर से** — कुमारी रानी जेठमलानी, श्री जी० एस० चीमा और श्री शैलेन्द्र भारद्वाज

न्यायालय का निर्णय न्यायाधिपति ई० एस० वेंकटरामय्या ने दिया।

**न्यायाधिपति वेंकटरामय्या**—

ये मामले संख्या में केवल दो ही हैं। इस प्रकृति के अन्य कई मामले हो सकते हैं जो अब तक इस न्यायालय में नहीं पहुंचे हैं, किन्तु समयानुसार

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



फाइल किए जा सकते हैं। ये साधारण दाण्डिक मामले नहीं हैं जिनमें कतिपय ऐसे व्यक्ति अन्तर्वलित हैं जो मामूली जगह के रहने वाले हैं। ये असाधारण मामले हैं जिनमें लोक महत्व के ऐसे अधिक गम्भीर प्रश्न अन्तर्वलित हैं जो राष्ट्र की सुरक्षा तथा समुदाय के अनेक लोगों की व्यक्तिगत स्वतन्त्रता के विषय में हैं। इन में से अनेक व्यक्तियों को समाज के बड़े प्रभुतासम्पन्न लोगों द्वारा यह विश्वास दिलाया गया होगा (हो सकता है गलत हो) कि जो कुछ वे कर रहे थे वह सही था और इस कारण वे स्वतन्त्र अभिकर्ता नहीं हो सकते। इसलिए इन मामलों पर, ऐसे सामान्य मामलों की अपेक्षा जो इस न्यायालय के समक्ष आते हैं, भिन्न प्रकार से विचार करना होगा।

2. सर्वप्रथम हम एक चेतावनी देना चाहते हैं। इन कार्यवाहियों के अनुक्रम में किसी भी पक्षकार के पक्ष में काउन्सेल की ओर से कहे गए शब्द पर उसके प्रयोग से पूर्व विचार करना चाहिए। उत्तेजना और भावावेश के लिए कोई गुंजाइश नहीं है। विचार-विमर्श में मात्र तर्क और कारण को महत्व दिया जाना चाहिए। ऐसे जटिल मुद्दों पर विचार करने के लिए जो अवधारण के लिए उद्भूत हो सकते हैं सभी लोगों की सहानुभूति होनी चाहिए। इन मामलों पर कार्रवाई करने के लिए उच्च न्यायिक प्रतिभा और राजनीतिज्ञता आवश्यक है और इस प्रकार इन मामलों को न्यायिक मजिस्ट्रेट, सेशन न्यायाधीश या उच्च न्यायालय में पहुंचने के लिए आवेदकों के लिए स्वतन्त्रता सुरक्षित करते हुए अस्वीकार नहीं किया जा सकता। इन मामलों में की गई प्रत्येक कार्यवाही उन सभी सम्बन्धित व्यक्तियों को सांत्वना देने के और कष्ट और यातना को कुछ सीमा तक कम करने के रूप में होगी जिससे होकर देश और इसके शांतिप्रिय लोक गुजरे हैं तथा गुजर रहे हैं। इन कार्यवाहियों का प्रभाव ऐसे अनेक व्यक्तियों की अपमानित भावनाओं को शांत करने वाला होगा जो अब तक उन बातों से अवगत नहीं हैं कि वस्तुत: क्या हुआ है। इन मामलों पर इस देश के उच्चतम न्यायालय द्वारा व्यतीत किया गया कुछ भी समय निरर्थक नहीं जाएगा। इससे अधिक पवित्र कोई कर्त्तव्य नहीं है।

3. किन्तु, मैं यह महसूस करता हूं कि अवलम्बित प्रश्न इतना विस्तृत और जटिल है कि उसे एकल न्यायाधीश के कन्धों द्वारा वहन नहीं किया जा सकता। मेरा यह नम्र दृष्टिकोण है कि ये मामले और इस प्रकार के अन्य मामले इस न्यायालय के कम-से-कम सात ऐसे विद्वान् न्यायाधिपतियों द्वारा सुने जाने चाहिएं जिनका अप्रश्नगत न्यायिक प्राधिकार विद्वत्ता और कुशाग्र-बुद्धि, साहस, निष्ठा, त्याग की भावना तथा इस देश में रहने वाले लोगों के प्रति कर्त्तव्य की भावना के लिए ज्ञात हमारे राज्यों में से एक महान राज्य में शांति स्थापित करने में अधिक सहायक होगा।

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



4. क्या मैं यह कहूं कि निम्नलिखित विषयों के बारे में कोई समझौता नहीं हो सकता, अर्थात् भारत की एकता और अखण्डता, भारत सरकार के धर्मनिरपेक्ष और प्रजातांत्रिक रूप तथा भारतीय संविधान की सर्वोच्चता ? इसे किसी भी दशा में बनाए रखना होगा। देश के प्रशासन को चलाने के लिए स्थापित सरकार के अधिकार के बारे में कोई सन्देह नहीं किया जा सकता। हमें यह स्मरण करना चाहिए कि भारत निस्संदेह राज्यों का संघ है, किन्तु राज्यों की सीमाएं अपरिवर्तनीय नहीं हैं। भारत में एकल नागरिकता है और यह कि हम सभी भारतीय नागरिक हैं जो सम्पूर्ण भारत के हैं और सम्पूर्ण भारत हम सबका है। मनुष्य द्वारा बनाई गई सीमाएं हमें विभाजित नहीं कर सकतीं। भाषा, धर्म, जाति और अन्य तत्वों द्वारा एक वर्ग और दूसरे वर्ग के बीच बाधा नहीं डालने दी जा सकती। यहां यह स्मरण रखना महत्वपूर्ण है, यद्यपि वह अब्राहम लिंकन ने अन्य सन्दर्भ में कहा था, कि "जिस घर के भीतर ही फूट हो वह स्थिर नहीं रह सकता। वे मुद्दे जो अब इस न्यायालय के समक्ष हैं भारत के भविष्य में अधिक महत्वपूर्ण हैं। पुनः अमेरिका के सन्दर्भ में लिंकन ने जो कुछ कहा है उसे उद्धृत करना आवश्यक है—

> "यह प्रश्न मानव के प्रत्येक कुटुम्ब के समक्ष है[1], अर्थात् यह कि क्या संविधानिक गणतन्त्र या प्रजातन्त्र—एक ही जनता द्वारा उसी जनता की अपनी सरकार—स्वतन्त्रता अपने घरेलू शत्रुओं के विरुद्ध अपनी राजक्षेत्रीय अखण्डता बनाये रख सकती है या नहीं।"

5. उपर्युक्त शब्द वर्तमान भारत के सन्दर्भ में भी सुसंगत प्रतीत होते हैं।

6. इन मामलों में तथ्यों के प्रकट किए जाने से उन्हें, जिन्होंने भूल की है, यह महसूस हो सकता है कि भूल कहीं की गई है और भूल किस प्रकार की गई है। इसलिए त्रुटियों के अवांछित प्रभाव को दूर करने के लिए समाधानों का सुझाव देने के लिए यह न्यायालय सहायता कर सकता है। यद्यपि राज्य के विरुद्ध गिरफ्तार किए गए व्यक्तियों के विरुद्ध गम्भीर अभिकथन सामने आ सकते हैं। फिर भी, न्यायालय राज्यों में शीघ्रता से सामान्य स्थिति लाने के लिए यह विचार कर सकता है कि क्या इनमें से कम-से-कम कुछ को जमानत पर छोड़ा जाना सम्भव नहीं है जो पश्चाताप करने की प्रवृत्ति रखते हों ? इसी प्रक्रम पर न्यायालय को यह विचार करने का अवसर प्राप्य है कि क्या कोई उन्मुक्ति अधिनियम पारित करने के लिए संसद् को सिफारिश करनी चाहिए जो कि अत्यधिक दूरदर्शिता का कार्य हो सकता

---

[1] देखिए : अमेरिकी सिविल वार (गृह युद्ध) के दौरान फोर्ट सुमटेर की पराजय के पश्चात् कांग्रेस के नाम प्रथम संदेश।

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



है जिससे कि भारतीय गणतन्त्र के इतिहास की इस दु:खद परिस्थिति को दूर किया जा सके। ऐसी अनेक अन्य कार्यवाहियां की जा सकती हैं, और वे मेरे विद्वान् बन्धुओं के अधिकार के भीतर हैं जो इन मामलों की सुनवाई करते हैं। यदि यह न्यायालय अन्त में देश में शांति और सामंजस्य स्थापित करने में सफल हो सकता है, तो यह अत्यधिक हर्ष का अवसर होगा।

7. इसलिए मैं इन मामलों को इस आशा से बृहत्तर न्यायपीठ को निर्दिष्ट करता हूं कि हमारे देश के सामने भविष्य में इस प्रकार की स्थिति का सामना करने का कोई अवसर ही न उठे।

8. यह मामला भारत के मान्य मुख्य न्यायाधिपति के समक्ष समुचित निदेश दिए जाने के लिए प्रस्तुत किया जा सकता है।

मामला बृहत्तर न्यायपीठ को निर्दिष्ट किया गया।

प्र०/मू०

---

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

# उत्तर प्रदेश राज्य

बनाम

# पी० ए० मधु

(17 जुलाई, 1984)

(न्यायाधिपति एस० मुर्तजा फजल अली, ए० वरदराजन और सब्यसाची मुखर्जी)

**दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2)—धारा 154—प्रथम इत्तिला रिपोर्ट—फोन द्वारा पुलिस को सूचना दिया जाना जिसमें हत्यारे के नाम का उल्लेख न किया जाना—फोन पर दिए गए संदेश को किसी भी प्रकार प्रथम इत्तिला रिपोर्ट नहीं माना जा सकता।**

**संविधान, 1950—अनुच्छेद 136—उच्चतम न्यायालय की विशेष अधिकारिता—यदि उच्च न्यायालय ने साक्ष्य की अवहेलना कर दी है या उस पर विचार नहीं किया है या साक्षियों के साक्ष्य में अन्तर्निहित गुणागुण का विवेचन नहीं किया है और अभियुक्त को साधारण आधारों पर दोषमुक्त कर दिया है, जो नितान्त अमान्य हैं, तो उच्चतम न्यायालय उच्च न्यायालय के निर्णय में हस्तक्षेप करेगा।**

प्रत्यर्थी ने प्रबन्ध मण्डल के एक अधिकारी पर न्यायालय के परिसर में देसी पिस्तौल से अनेक गोलियां चला दीं और उसे तत्काल मार दिया। प्रत्यर्थी संघ का सचिव था। वही कर्मकारों की ओर से मामले की पैरवी कर रहा था। मृतक उप कार्मिक प्रबन्धक था। प्रत्यर्थी ने उसे प्रबन्ध-मण्डल के अन्य अधिकारियों के साथ-साथ उसके मेरठ में अपने लिखित कथन फाइल करने के बाद अधिकरण के कार्यालय से बाहर आने पर गोली से मार दिया। तत्पश्चात् एक प्रत्यक्षदर्शी साक्षी ने किसी से पुलिस थाने टेलीफोन करने के लिए कहा। फोन मिलने पर पुलिस वहां पहुंची। उसने पिस्तौल अभिग्रहण की तथा अभियुक्त और कुछ साक्षियों को पुलिस थाने ले गई, जहां एक औपचारिक प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज की गई। पंचनामा तैयार किया गया और अन्य औपचारिकताएं वहीं पूरी कर ली गई। तीन मुख्य प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों एवं प्रतिरक्षा साक्षी-1 के साक्ष्य पर ध्यानपूर्वक विचार करने के बाद विद्वान सेशन न्यायाधीश का यह स्पष्ट निष्कर्ष था कि प्रत्यर्थी के विरुद्ध अभिभोजन पक्ष का कथन पूरी तरह साबित हो गया है और उन्होंने तदनुसार

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



प्रत्यर्थी को भारतीय दण्ड संहिता की धारा 302 के अधीन सिद्धदोष ठहराया और उसे आजीवन कारावास का दण्डादेश दिया। उन्होंने प्रत्यर्थी को भारतीय आयुध अधिनियम की धारा 25 (1) (क) के अधीन भी सिद्धदोष ठहराया और उसे एक वर्ष के कठोर कारावास का दण्डादेश दिया। प्रत्यर्थी सेशन न्यायाधीश के विनिश्चय के खिलाफ उच्च न्यायालय में अपील में गया। उच्च न्यायालय ने सेशन न्यायाधीश का विनिश्चय उलट दिया और प्रत्यर्थी को उसके विरुद्ध लगाए गए आरोपों से दोषमुक्त कर दिया। इलाहाबाद उच्च न्यायालय के तारीख 6 फरवरी, 1981 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध विशेष इजाज़त लेकर उच्चतम न्यायालय में अपील फाइल की गई। अपील मंजूर करते हुए,

**अभिनिर्धारित**—आमतौर पर उच्चतम न्यायालय विशुद्ध रूप से साक्ष्य के अधिमूल्यन पर उच्च न्यायालय के निर्णय में हस्तक्षेप नहीं करता। किन्तु इस मामले में बहुत विशेष परिस्थितियां हैं, जिन्हें उच्च न्यायालय ने या तो अनदेखा कर दिया है या उन पर विचार नहीं किया है। इसके अलावा उच्च न्यायालय ने साक्षियों के साक्ष्य में अन्तर्निहित गुणागुण की जांच नहीं की बल्कि सामान्य आधार पर प्रत्यर्थी को दोषमुक्त कर दिया। (पैरा 7)

**निर्दिष्ट निर्णय**

| | | |
|---|---|---|
| [1971] | [1971] 1 एस०सी०आर० 599 : तपिन्दर सिंह बनाम पंजाब राज्य. | पैरा 11 |

**दाण्डिक अपीली अधिकारिता : 1981 की दाण्डिक अपील सं० 611.**

1980 की दाण्डिक अपील सं० 11478 में इलाहाबाद उच्च न्यायालय के तारीख 6 फरवरी, 1981 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध विशेष इजाज़त लेकर की गई अपील।

| | |
|---|---|
| **अपीलार्थी की ओर से** | सर्वश्री दलवीर भण्डारी, एच० एम० सिंह और रनवीर सिंह यादव |
| **प्रत्यर्थी की ओर से** | सर्वश्री आर० एल० कोहली और गिरीश चन्द्र |
| **मध्यक्षेपी की ओर से** | सर्वश्री राम जेठमलानी, कुमारी रानी जेठमलानी और श्रीं एस०बी० जेठमलानी |

न्यायालय का निर्णय न्यायाधिपति एस० मुर्तजा फज़ल अली ने दिया।

**न्यायाधिपति फज़ल अली**—

ब्रिटिश राज्य से परिश्रम पूर्वक स्वतन्त्रता प्राप्त करने के बाद हमने

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



प्रगति और सम्पन्नता के नए युग में प्रवेश किया, जिसके फलस्वरूप विभिन्न क्षेत्रों में अनेक प्रकार के असंख्य उद्योग स्थापित किए गए। उनमें से कुछ सरकारी क्षेत्र के थे और कुछ प्राइवेट क्षेत्र के। स्वतन्त्रता के बाद पारित देश की श्रम और औद्योगिक विधियों के फलस्वरूप श्रमिकों में एक नई जागृति की भावना पैदा हुई और वे विधियों द्वारा प्राप्त अधिकारों एवं विशेषाधिकार के प्रति अधिकाधिक जागरूक हो गए। यद्यपि श्रमिकों और प्रबन्ध-मण्डल के बीच विवाद देश के औद्योगिक जीवन की एक आम बात हो गई है, फिर भी औद्योगिक विवादों के इतिहास में बिरले ही कभी ऐसा आया है कि विवाद ने इतना विशाल रूप धारण कर लिया कि मनुष्य का जीवन संकट में पड़ गया, जिसके फलस्वरूप दिन दहाड़े निहत्थे आदमियों की हत्या होने लगी, यह भी न्यायालय के परिसर में।

2. इलाहाबाद उच्च न्यायालय के निर्णय के विरुद्ध विशेष इजाज़त लेकर की गई इस अपील की विषय-वस्तु ऐसी ही एक असाधारण घटना है, जिसमें एक श्रमिक संघ के सचिव के बारे में ऐसा प्रतीत होता है कि उसने बिना सोचे समझे प्रबन्ध-मण्डल के एक अधिकारी पर देसी पिस्तौल से अनेक गोलियां चला दीं और उसे तत्काल मार दिया।

3. मामले के तथ्यों का उल्लेख विद्वान सेशन न्यायाधीश और उच्च न्यायालय के निर्णयों में किया गया है और उन्हें यहां दोहराने की आवश्यकता नहीं है। अतः यह मामला बहुत छोटा सा है और हम प्रत्यर्थी मधु को दोषमुक्त करने के लिए उच्च न्यायालय ने जो कारण और निष्कर्ष दिए हैं, केवल उन पर विचार करना चाहते हैं।

4. मैसर्स हिन्दुस्तान कन्स्ट्रक्शन कम्पनी (जिसे इसमें इसके पश्चात् "कम्पनी" कहा गया है) ने जिला देहरादून में खादर में जमना हाइडल प्रोजेक्ट के निर्माण का काम अपने हाथ में लिया था।

5. आरम्भ में, ऐसा प्रतीत होता है कि श्रमिकों का प्रबन्ध-मण्डल से महंगाई भत्ते की मांग के बारे में कुछ विवाद था, जो औद्योगिक अधिकरण को निर्देशित कर दिया गया था। प्रत्यर्थी संघ का सचिव था। वही कर्मकारों की ओर से मामले की पैरवी कर रहा था, जबकि अभियोजन साक्षी 5 और 7 अधिकरण के समक्ष प्रबन्ध-मण्डल की ओर से हाजिर होने वाले अधिकारी थे। मृतक, एस० जे० सिरगांवकर मैसर्स हिन्दुस्तान कन्स्ट्रक्शन कम्पनी की मुम्बई शाखा का उप कार्मिक प्रबन्धक था। प्रत्यर्थी ने उसे (मृतक) प्रबन्ध-मण्डल के अन्य अधिकारियों के साथ-साथ उसके मेरठ में अपने लिखित कथन फाइल करने के बाद अधिकरण के कार्यालय से बाहर आने पर गोली से मार

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



दिया। तत्पश्चात् एक प्रत्यक्षदर्शी साक्षी, एस०के० गुई (अभियोजन साक्षी-7) ने किसी से पुलिस थाने टेलीफोन करने के लिए कहा, जोकि पास में ही था फोन मिलने पर पुलिस वहां पहुंची। उसने पिस्तौल अभिग्रहण की तथा अभियुक्त और कुछ साक्षियों को पुलिस थाने ले गई, जहां एक औपचारिक प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज की गई। पंचनामा तैयार किया गया और अन्य औपचारिकताएं वहीं पूरी कर ली गईं।

6. तीन मुख्य प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों (अभियोजन साक्षी 5, 6 और 7) के साक्ष्य पर एवं दुर्गा दास (प्रतिरक्षा साक्षी 1) के साक्ष्य पर ध्यानपूर्वक विचार करने के बाद विद्वान सेशन न्यायाधीश का यह स्पष्ट निष्कर्ष था कि प्रत्यर्थी के विरुद्ध अभियोजन पक्ष का कथन पूरी तरह साबित हो गया है और उसने तदनुसार प्रत्यर्थी को भारतीय दण्ड संहिता की धारा 302 के अधीन सिद्ध दोष ठहराया और उसे आजीवन कारावास का दण्डादेश दिया। उसने प्रत्यर्थी को भारतीय आयुध अधिनियम की धारा 25 (1) (क) के अधीन भी सिद्ध दोष ठहराया और उसे एक वर्ष के कठोर कारावास का दण्डादेश दिया। प्रत्यर्थी सेशन न्यायधीश के विनिश्चय के खिलाफ उच्च न्यायालय में अपील में गया। उच्च न्यायालय ने सेशन न्यायाधीश का विनिश्चय उलट दिया और प्रत्यर्थी और उसके विरुद्ध लगाए गए आरोपों से दोषमुक्त कर दिया।

7. आमतौर पर यह न्यायालय विशुद्ध रूप में साक्ष्य के अधिमूल्यन पर उच्च न्यायालय के निर्णय में हस्तक्षेप नहीं करता। किन्तु इस मामले में बहुत विशेष परिस्थितियां प्रतीत होती हैं, जिन्हें उच्च न्यायालय ने या तो अनदेखा कर दिया है या उन पर विचार नहीं किया है। इसके अलावा, ऐसा प्रतीत होता है कि उच्च न्यायालय ने साक्षियों के साक्ष्य में अन्तर्निहित गुणागुण की जांच नहीं की बल्कि सामान्य आधार पर प्रत्यर्थी को दोषमुक्त कर दिया, जो, जैसा कि हम इसके बाद बताएंगे, पूर्णतः अमान्य हैं।

8. ऐसा प्रतीत होता है कि पक्षकारों के लिए अपने लिखित कथन औद्योगिक अधिकरण, मेरठ के समक्ष फाइल करने के लिए नियत की गई तारीख 5 जुलाई, 1977 थी और इस सम्बन्ध में अन्य प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों (अभियोजन साक्षी 5, 6 और 7) के साथ-साथ मृतक अधिकरण के समक्ष हाजिर हुआ और अभियोजन साक्षी 5 और 7 ने अपने लिखित कथन फाइल किए। अभियोजन साक्षी 6 कम्पनी का स्थायी काउन्सेल था और वह कम्पनी से संबंधित सभी श्रमिक विवादों में उसका प्रतिनिधित्व करता था। प्रत्यर्थी उस परियोजना में हाइडल लाइनमैन के पद पर था और श्रमिक संघ

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



का सचिव था । प्रतिरक्षा साक्षी 1, दुर्गा दास उक्त संघ का उपाध्यक्ष था और वह भी घटना-स्थल पर था ।

9. ऐसा प्रतीत होता है कि लगभग 11·30 पूर्वाह्न पर लिखित कथन फाइल करने के बाद साक्षी तथा प्रत्यर्थी न्यायालय परिसर से बाहर आकर आपस में बातचीत कर रहे थे । ज्यों ही प्रत्यर्थी और सिरगांवकर (मृतक) अधिकरण भवन के मुख्य द्वार पर पहुंचे, प्रत्यर्थी के बारे में अभिकथन किया गया कि उसने देसी पिस्तौल निकाली और एक के बाद एक लगातार गोलियां चला दीं, जिसके फलस्वरूप सिरगांवकर गिर पड़ा और तत्काल मर गया । तत्पश्चात् प्रत्यर्थी ने पिस्तौल फैंक दी और साक्षियों ने उसे घेर कर पकड़ लिया तथा बाद में पुलिस के आने पर उसके हवाले कर दिया । अभियोजन पक्ष का यह भी कथन है कि जिस समय गोली चल रही थी, मेरठ के सिविल लाइन पुलिस थाने को एक फोन संदेश गोली चलने के बारे में दिया गया था और मसरूर अली, अभियोजन साक्षी 9 ने प्राप्त किया था, जिसने पूर्वाह्न 11·30 बजे रोजनामचे में इस आशय की प्रविष्टि की थी । फोन द्वारा सूचना में केवल यह सूचित किया गया था कि गोलियां चल रही हैं । इत्तिला मिलने पर अभियोजन साक्षी-10 राम दत्त गौतम, पुलिस उप निरीक्षक घटना-स्थल पर गया और उसने सिरगांवकर को अधिकरण भवन के मुख्य द्वार पर पड़ा पाया और प्रत्यर्थी को साक्षियों ने पकड़ लिया था । पुलिस अधिकारी ने अभियुक्त को अभिरक्षा में ले लिया और वह अभियोजन साक्षी-7, एस० के० गुई के साथ पुलिस थाने चल पड़ा जहां एक नियमित प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज की गई । मरणोत्तर-परीक्षा और शव समीक्षा संबंधी सामान्य कार्यवाही की गईं और सम्पूर्ण अन्वेषण के बाद पुलिस ने प्रत्यर्थी के विरुद्ध एक आरोप पत्र पेश किया, जिसके फलस्वरूप सेशन न्यायाधीश ने उसे सिद्धदोष ठहराया । संक्षेप में अभियोजन पक्ष-कथन यही है ।

10. जिन मुख्य आधारों पर उच्च न्यायालय ने सेशन न्यायाधीश के निर्णय को उलटा है, उनका सारांश निम्न प्रकार से दिया जा सकता है :—

11. दुर्गा दास, प्रतिरक्षा साक्षी-1 ने जो स्वीकृत रूप से घटना-स्थल पर था, कहा है कि ज्यों ही गोली चली, अभियोजन साक्षी-7 ने पुलिस थाने को फोन संदेश दे दिया । उच्च न्यायालय ने विवक्षित तार्किक प्रक्रिया द्वारा यह मत व्यक्त किया है कि यदि अभियोजन साक्षी-7 ने फोन संदेश देता तो वह हत्यारे का नाम बताता क्योंकि वह हर प्रकार से पूर्ण प्रत्यक्षदर्शी साक्षी था किन्तु उसके नाम का उल्लेख नहीं किया, इसलिए अभियोजन पक्ष-कथन

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



पर अविश्वास करने के लिए यह एक प्रबलतम संभव परिस्थिति है। किन्तु हम उच्च न्यायालय की इस कुछ अन्तर्वेलित तार्किकता से सहमत होने में असमर्थ हैं। वस्तुतः प्रतिरक्षा साक्षी का तो केवल यह कहना है कि गुई ने गोली चलने के बारे में पुलिस थाने फोन किया था और अंग्रेजी में कुछ कहा था। ऐसा प्रतीत होता है कि उच्च न्यायालय ने यह उपधारणा कर ली कि इससे अनिवार्यतः यह निष्कर्ष निकलता है कि गुई ने मृतक के हत्यारे का नाम नहीं बताया और केवल इसी आधार पर अभियोजन-पक्ष असफल होगा। इस तर्क में गम्भीर त्रुटि है। पहले तो फोन संदेश बहुत ही जल्दबाजी में दिया जाता है और उसे किसी भी प्रकार से प्रथम इत्तिला रिपोर्ट नहीं माना जा सकता, दूसरे यदि यह मान लिया जाए कि गुई ने एकदम घबराहट और परेशानी में फोन संदेश दिया था जब मृतक पर गोलियां चलाई जा रही थीं, तो गुई के लिए ऐसा कोई अवसर नहीं था कि वह घटना का सम्पूर्ण वृतांत बताता। वस्तुतः अपने साक्ष्य में गुई ने इस बात का प्रत्याख्यान किया है कि उसने स्वयं पुलिस को फोन किया था किन्तु उसका कहना है कि उसने पुलिस को फोन करने के लिए किसी से कहा था, जो कि तार्किक तथा स्वाभाविक दोनों प्रतीत होता है। इसके अतिरिक्त फोन पर ऐसी बारीक सूचना को इस न्यायालय ने कोई महत्व नहीं दिया है। **तपिन्दर सिंह बनाम पंजाब राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय ऐसी ही परिस्थितियों में यह मत व्यक्त किया था—

> "हरि सिंह, ए० एस० आई० पुलिस थाने सिटी कोतवाली को फोन संदेश 8 सितम्बर, 1969 को 5.35 बजे मिला था। सूचना देने वाले व्यक्ति ने अपना नाम नहीं बताया और न ही उसने कोई अन्य विवरण दिया। और केवल यह सूचित किया गया कहा गया कि लुधियाना टैक्सी स्टैंड पर गोली चल रही है। यह ठीक है कि फोन सुनने वाले पुलिस अधिकारी ने पुलिस थाने के रोजनामचे में इसे अंकित किया था। किन्तु प्रथम दृष्टया, यह रहस्मय और गुमनाम मौखिक संदेश, जिसमें स्पष्ट शब्दों में संज्ञेय अपराध का उल्लेख नहीं किया गया था, प्रथम इत्तिला रिपोर्ट नहीं माना जा सकता। मात्र इस तथ्य से कि यह सूचना समय की दृष्टि से पहले प्राप्त हुई थी, इसे प्रथम इत्तिला रिपोर्ट का स्वरूप प्रदान नहीं कर देता है।"

12. अतः इस विनिश्चय की दृष्टि से उच्च न्यायालय आधारभूत तार्किकता धराशायी हो जाती है। इसके अतिरिक्त स्वयं दुर्गादास स्वतन्त्र

---

[1] [1971] 1 एस० सी० आर० 599.

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



साक्षी प्रतीत नहीं होता, अपितु वह अत्यन्त हितबद्ध था क्योंकि श्रमिक संघ का उपाध्यक्ष होने के नाते वह कर्मकारों की ओर से औद्योगिक अधिकरण में मामले की पैरवी कर रहा था। अभियोजन-पक्ष के साक्षियों का यह स्पष्ट साक्ष्य है कि घटना के समय प्रत्यर्थी का ब्रीफकेस भी प्रतिरक्षा साक्षी-1 द्वारा रखा गया था। यद्यपि प्रतिरक्षा साक्षी 1 ने इस तथ्य से इंकार किया है, फिर भी अभियोजन साक्षी-5 के साक्ष्य से यह काफी साबित हो जाता है। इस साक्षी के खिलाफ केवल यह टिप्पण किया गया कि उसने इस तथ्य का उल्लेख अन्वेषण अधिकारी के समक्ष नहीं किया किन्तु चूंकि यह एक विस्तार का विषय था, इसलिए हो सकता है कि उसके लिए पुलिस को दिए गए अपने कथन में हर सम्भव ब्यौरे का उल्लेख करना आवश्यक न रहा हो इस साक्ष्य की संपुष्टि अभियोजन साक्षी-6 द्वारा की गई है, जो कि एक स्वतन्त्र साक्षी है। उसका कहना है कि प्रत्यर्थी का ब्रीफकेस दुर्गादास लिए हुए था। इसलिए ऐसा प्रतीत होता है कि चूंकि प्रतिरक्षा साक्षी-1 संघ क उपाध्यक्ष था और कर्मकारों का पैरवीकार था, इसलिए वह अत्यन्त हितबद्ध था और अभियोजन साक्षी-6 जैसे स्वतन्त्र साक्षी के साक्ष्य को ध्यान में रखते हुए अभियोजन साक्षी-5 के साक्ष्य पर अविश्वास करने का कोई कारण नहीं है कि प्रत्यर्थी का ब्रीफकेस प्रतिरक्षा साक्षी-1 लिए हुए था।

13. हम यह उल्लेख करना चाहेंगे कि उच्च न्यायालय ने अभियोजन पक्ष तथा प्रतिरक्षा पक्ष के साक्ष्य का मूल्यांकन करने के लिए दो भिन्न-भिन्न मापदण्ड अपनाए हैं। जबकि उच्च न्यायालय प्रतिरक्षा साक्षी-1 के असंपुष्ट साक्ष्य को स्वीकार कर लेता है, जोकि विवाद में इतना हितबद्ध है जितना मृतक था क्योंकि वह संघ का उपाध्यक्ष था और प्रत्यर्थी का ब्रीफकेस उसके कब्जे में था फिर भी उसने अभियोजन साक्षी 5 और 7 का साक्ष्य मुख्यतः इस आधार पर नहीं माना कि वे अत्यन्त हितबद्ध हैं। इस मुद्दे पर उच्च न्यायालय का सुसंगत निष्कर्ष इस प्रकार है—

> "पहले तो इससे प्रकट होता है कि सुब्रत कुमार गुई और एम० आर० भौमिक मुख्यतः मामले की पैरवी के लिए उत्तरदायी थे, हालांकि सभी स्थानों पर कम्पनी के सभी श्रमिक विवादों का सामान्य पर्यवेक्षण मृतक कर रहा था। दूसरे, इससे यह भी संकेत मिलता है कि ये दो साक्षी अपीलार्थी से खुश नहीं थे जो अधिकरण के समक्ष श्रमिकों के पक्षकथन का प्रतिनिधित्व कर रहा था और यह कि वे उसके आचरण से खिन्न थे। इन परिस्थितियों में ये दो साक्षी स्वतन्त्र साक्षी

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



आचरण से खिन्न थे। इन परिस्थितियों में दो साक्षी स्वतन्त्र साक्षी नहीं कहे जा सकते।"

14. यहां उच्च न्यायालय ने दो महत्वपूर्ण तथ्यों को बिल्कुल अनदेखा कर दिया—(1) अभियोजन साक्षी 5 और 7 कम्पनी के उच्चाधिकारी थे और यह सम्भव नहीं था कि वे इस प्रकार के मामले में मिथ्या अभिसाक्ष्य देते तथा (2) अभियोजन साक्षी-6 जो कम्पनी का और अन्य श्रमिकों से सम्बन्धित मामलों का 30 वर्षों से भी अधिक समय से स्थायी काउन्सेल था, अभियोजन साक्षी 5 और 7 के साक्ष्य की पूरी तरह संतुष्टि करता। हमने अभियोजन साक्षी 5 और 7 के साक्ष्य पर बहुत ध्यानपूर्वक और सावधानी से विचार किया है। किन्तु हमें उनके साक्ष्य में कोई त्रुटि या कमी दिखाई नहीं पड़ती जिससे न्यायालय उसे अस्वीकार कर सके। इसके विपरीत उनके साक्ष्य पर विचार करने के बाद हमारा समाधान हो गया है कि वे सर्वथा संगत और प्रासंगिक हैं और उनका साक्ष्य सत्य पर आधारित है। वस्तुतः हमें आश्चर्य है कि उच्च न्यायालय ने दिन दहाड़े निहत्थे व्यक्ति की हत्या के मामले में प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों के साक्ष्य पर अविश्वास कैसे किया जहां पर प्रत्यर्थी को तत्काल रंगे-हाथों पकड़ लिया गया था। उच्च न्यायालय ने प्रत्यर्थी के इस उग्र आचरण को भी अनदेला कर दिया जो एक के बाद एक गोलियां चलाता रहा, जिससे कि यह निश्चित हो जाए कि सिरगांवकर किसी भी दशा में जीवित न बचे।

15. एक और आधार पर उच्च न्यायालय ने सेशन न्यायाधीश के निर्णय को उलट दिया है और वह यह है कि यह मानना कठिन है कि पिस्तौल फेंकने के बाद प्रत्यर्थी घटना स्थल पर ही रहा और उसने भागने का कोई प्रयास नहीं किया। ससम्मान, उच्च न्यायालय का यह निष्कर्ष भी अत्यन्त अयथार्थवादी है। अभियोजन साक्षी 5, 6 और 7 का स्पष्ट साक्ष्य है पिस्तौल फेंकने के बाद प्रत्यर्थी को तीन साक्षियों ने घेर लिया था, जिससे कि वह न भाग सके। उच्च न्यायालय विषय के इस अत्यन्त महत्वपूर्ण पहलू पर विचार करने में असफल रहा है। साथ ही यदि कोई व्यक्ति न्यायालय के परिसर में निहत्थे आदमी की हत्या कर देता है, जो अन्य मुकदमेबाजों से भरा होता है वह भागने की नहीं सोच सकता और किसी न किसी के द्वारा अवश्यमेव पकड़ा जाएगा।

16. इससे आगे उच्च न्यायालय का मत था कि यह अत्यन्त संदेहजनक है कि साक्षी न्यायालय कक्ष के अन्दर से घटना को देख सकते थे क्योंकि उसमें कोई दरवाजा या खिड़की नहीं थी, जिसमें घटना देखी जा सकती। इस मत की पुष्टि के लिए उच्च न्यायालय प्रतिरक्षा साक्षी-1 के साक्ष्य पर निर्भर

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



करता प्रतीत होता है कि प्रतिरक्षा साक्षी 1 सहित चार व्यक्ति न्यायालय कक्ष में त्यों ही आ गए थे ज्यों ही पहली गोली चली थी। प्रकट है यह कथन गलत है, क्योंकि तीनों साक्षियों का कहना है कि गोलियां उस समय चली थीं, जब वे न्यायालय के कक्ष से बाहर थे और उन्होंने प्रत्यर्थी को गोली चलाते हुए वास्तविक रूप से देखा है। कुछ गोलियां चलने के बाद ही वे न्यायालय कक्ष में घुसे थे और फिर भी वे न्यायालय कक्ष के शीशों में से सम्पूर्ण घटना को देख सकते थे। अभिलेख पर ऐसा कोई भी साक्ष्य नहीं है जिससे यह पता चल सके कि खिड़कियों में शीशे नहीं थे और यह कि घटना स्थल न्यायालय कक्ष से नहीं देखा जा सकता था। इन परिस्थितियों में, उच्च न्यायालय का निष्कर्ष एकदम अनुमान पर आधारित है और अभिलेख पर के साक्ष्य के प्रतिकूल है।

17. ऐसा प्रतीत होता है कि उच्च न्यायालय ने प्रतिरक्षा साक्षी-1 के साक्ष्य पर निर्भर किया है किन्तु यह अत्यन्त हितबद्ध साक्षी था। जब तक किसी स्वतन्त्र साक्ष्य से उसके साक्ष्य की संतुष्टि न हो तब तक इस मामले के विचित्र तथ्यों और परिस्थितियों में उसके साक्ष्य के आधार पर कार्रवाई नहीं की जानी चाहिए।

18. अन्त में, ऐसा प्रतीत होता है कि उच्च न्यायालय ने इस तथ्य को पूरी तरह अनदेखा कर दिया है कि तीन प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों के लिए, जिनमें से एक लगभग 30 वर्ष से स्थायी काउन्सेल था, प्रत्यर्थी को मात्र इसलिए मिथ्या फंसाते कि वह संघ का सचिव था। प्रत्यर्थी का आचरण-क्रम उसकी निर्दोषिता के प्रतिकूल सिद्ध करता है। वह घटना स्थल पर ही रंगे हाथों पकड़ा गया और साक्षियों ने उसे घेर लिया जिससे कि वह भाग न सके और पुलिस घटना-स्थल पर घटना के पन्द्रह मिनट के अन्दर पहुंच गई और उसे पुलिस थाने ले गई। उच्च न्यायालय ने मृत्यु-समीक्षा की रिपोर्ट में विलम्ब के बारे में कुछ टिप्पणी की है किन्तु उसका कोई महत्त्व प्रतीत नहीं होता यदि तीन प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों के साक्ष्य पर विश्वास करना है।

19. हमने तीन साक्षियों (अभियोजन साक्षी 5, 6 और 7) के साक्ष्य पर गम्भीरता पूर्वक विचार किया है और हम सेशन न्यायाधीश से पूरी तरह सहमत हैं कि ये साक्षी विश्वसनीय और मान्य दोनों हैं। वस्तुतः उच्च न्यायालय ने प्रत्येक प्रत्यक्षदर्शी साक्षी के साक्ष्य में अन्तर्निहित गुणागुण के बारे में विचार न करके और उसे सामान्य आधार पर अस्वीकार करके जिनका कोई सार नहीं है, विधि की गम्भीर गलती की है।

20. ऊपर दिए गए कारणों से हमारा समाधान हो गया है कि यह ऐसा मामला नहीं है, जिसमें कल्पना की किसी भी उड़ान से यह कहा जा सके कि मामले के साक्ष्य और परिस्थितियों में कोई दूसरा युक्तियुक्त मत

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



सम्भव हो सकता है अर्थात्, यह कि अभियुक्त निर्दोष था । परिणामतः, अपील मंजूर की जाती है, उच्च न्यायालय का निर्णय अपास्त किया जाता है और अपीलार्थी भारतीय दण्ड संहिता की धारा 302 के अधीन आजीवन कारा के लिए एवं भारतीय आयुध अधिनियम की धारा 25 (1) (क) के अधीन एक वर्ष के कठोर कारावास के लिए सिद्धदोष किया जाता है क्योंकि, निस्संदेह उसे एक देसी पिस्तौल का इस्तेमाल करते पाया गया, जो घटनास्थल पर बरामद हुई थी ।

[अपील मंजूर की गई

क्र०/

---

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

# शरद बिरधीचन्द शारदा

बनाम

# महाराष्ट्र राज्य

(19 जुलाई, 1984)

(न्यायाधिपति एस० मुर्तजा फज़ल अली, ए० वरद्राजन और सव्यसाची मुखर्जी)

भारतीय दण्ड संहिता, 1860 (1860 का 45)—धारा 300 [सपठित भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 101-140]—हत्या के मामले में पारिस्थितिक साक्ष्य—यह साबित करने का भार कि परिस्थिति-शृंखला की कड़ियां पूरी हैं, अभियोजन-पक्ष पर होता है—यदि अभियोजन में कोई कमज़ोरी या कमी है, तो मिथ्या प्रतिरक्षा या अभिवाक् प्रस्तुत करके उस कमी को दूर नहीं किया जा सकता।

भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 (1872 का 1)—धारा 3 और 101-104 [सपठित भारतीय दण्ड संहिता, 1860 की धारा 302]—सन्देह का फायदा—ज़हर खिलाकर हत्या की जानी—जहां साक्ष्य के आधार पर दो संभावनाएँ उपलभ्य हों या हो सकती हैं, वहां अभियुक्त सन्देह का फायदा प्राप्त करने का हकदार होता है।

रतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 (1872 का 1)—धारा 3—पारिस्थितिक साक्ष्य—जहां अभियुक्त की दोषसिद्धि परिस्थिति के साक्ष्य के आधार पर की जाती है, वहां अन्य बातों के साथ-साथ उसकी पूर्ववर्ती शर्त यह है कि जिन परिस्थितियों से दोष विषयक निष्कर्ष निकाला जाता है, वे पूरी तरह, साबित की जानी चाहिएं—सम्बन्धित परिस्थितियां 'साबित की जानी चाहिएं' या 'साबित करनी होंगी' न कि 'साबित की जा सकती हैं'—परिस्थितियां निश्चायक प्रकृति की होनी चाहिएं तथा उन्हें साबित की जाने वाली उपकल्पना को छोड़कर, प्रत्येक संभावित उपकल्पना को अपवर्जित करना चाहिए।

भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 (1872 का 1)—धारा 32 (1)—मृत्युकालिक कथन—विस्तार—मृतक द्वारा वह कथन किया जाना जो ऐसे संव्यवहार की परिस्थितियों से सम्बन्धित हो, जिसके परिणामस्वरूप मृत्यु हुई है—ऐसे मृतक का कथन ग्राह्य होता है जिसकी मृत्यु हो जाती है, चाहे वह मृत्यु मानव-वध का

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



**परिणाम हो अथवा आत्महत्या का, परन्तु यह तब जबकि उक्त कथन मृत्यु के कारण से सम्बन्धित हो या उन परिस्थितियों को प्रदर्शित करता हो जिनके परिणामस्वरूप मृत्यु हुई है।**

**संविधान, 1950—अनुच्छेद 136—तथ्य सम्बन्धी एक ही निष्कर्ष में उच्चतम न्यायालय द्वारा हस्क्षेप --जब विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय दोनों ही तथ्य सम्बन्धी एक ही निष्कर्ष निकालते हैं, तो उच्चतम न्यायालय अनुच्छेद 136 के अधीन केवल विशेष परिस्थितियों में ही या वहां जहां विधि सम्बन्धी कोई त्रुटि हुई हो, हस्तक्षेप कर सकता है।**

मृतक अत्यधिक भावुक और संवेदनशील लड़की थी। उसका और अपीलार्थी शरद बिरधीचन्द शारदा का विवाह 11 फरवरी, 1982 में हुआ था। प्रारम्भ से ही वह आदर्श-सपने संजोए हुए थी, जिनके पूरे होने की उसे बहुत आशा था। विवाह के पश्चात् शीघ्र ही मृतक अपनी ससुराल चली गई और पुणे में "तक्षशिला-अपार्टमेंट" में अपीलार्थी के साथ रहने लगी। किन्तु दुर्भाग्य-वश जब उसे यह पता चला कि उसके पति और उसके सास-श्वसुर का व्यवहार उसके साथ क्रूर और कठोर है, तब वह अत्यधिक हताश और निराश हो गई, तथा उसके संजोए हुए सपने चूर-चूर होते प्रतीत हुए। इस दारुण वस्तुस्थिति के बावजूद भी उसने आशा नहीं छोड़ी और वह आशा के विपरीत आशा करती रही, और चूंकि वह बहुत ही अभिजात्य और उदार प्रकृति की थी, इसलिए वह सदैव क्षमा करने और भुलाने के लिए तैयार रहती थी। जैसे-जैसे दिन गुजरते गए, उसके सर्वाधिक प्रशंसनीय रुख के बावजूद भी उसने यह पाया कि "जैसी बातें प्रतीत हो रहीं हैं" वैसी नहीं हैं और ससुराल में उसके साथ एक मजदूरनी के रूप में या पैसे के बिना काम करने वाली नौकरानी के रूप में व्यवहार किया जा रहा है। उससे सभी प्रकार के आलतू-फालतू काम कराए जाते थे और इसके बावजूद कि उसने अपने पति से इसके सम्बन्ध में आपत्ति की, ऐसा प्रतीत होता है कि उसका कुछ परिणाम नहीं निकला। फिर भी मृतक के मस्तिष्क की बनावट कितनी कोमल और सदय थी कि उसने, अपने सास-श्वसुर से, बल्कि अपने पति से भी, कभी-कभी शिकायत करने की बात छोड़कर, कभी भी शिकायत नहीं की। जबकि बातें असह्य हो गईं, तो उसने आपत्ति की और अत्यधिक हताशा और कुंठा के क्षणों में स्पष्ट सम्भावित शब्दों में अपनी ये भावनाएं व्यक्त कर दीं कि उसका पति उससे नफरत करता है। केवल यही नहीं, जब उसने अपनी बहिन से स्वयं द्वारा लिखे गए पत्रों में अपनी दुःखपूर्ण कहानी का वर्णन किया, तो भी उसने अत्यधिक सावधानी और सतर्कता बरते हुए अंजू से यह अनुरोध किया कि वह उसके इस दुर्भाग्य के सम्बन्ध में उसके माता-पिता से कुछ न बताए, क्योंकि

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



कहीं ऐसा न हो कि वे अत्यधिक विक्षुब्ध, परेशान और शोकाकुल हो जाएं। अन्त में स्थिति यहां तक पहुंच गई कि मृतक पूरी तरह से ऊब गई और हताश हो गई और उसने यह सोचा कि वह अब ऐसे स्थान पर पहुंच गई है, जहां से वापस नहीं आया जा सकता। अन्त में उसके विवाह के लगभग चार महीने बाद तारीख 12 जून, 1982 की उस दुर्भाग्यपूर्ण सुबह को वह अपने बिस्तर पर मृत पाई गई। जहां तक मृत्यु के कारण का सम्बन्ध है, ऐसा प्रतीत होता है कि अभियोजन-पक्ष और प्रतिरक्षा-पक्ष के बीच गम्भीर भिन्नता है। अभियोजन का निश्चित पक्षकथन यह था कि चूंकि अपीलार्थी की उसमें बिलकुल ही रुचि नहीं रह गई थी और उज्जवला नामक लड़की से उसका अवैध सम्बन्ध था, इसलिए व्यावहारिक रूप से उसने अपनी पत्नी का त्याग कर दिया था और जब उसने यह पाया कि असह्य हो गया है, तो उसने 11 और 12 जून, 1982 के बीच उसकी हत्या कर दी और उसके शव की दाह-क्रिया करने की व्यर्थ कोशिश भी की। अन्त में मामला पुलिस को रिपोर्ट किया गया। दूसरी ओर, प्रतिरक्षा-पक्ष का अभिवाक् यह था कि जब इस बात की प्रबल सम्भावना है कि मंजु के साथ उसके पति और उसके सास-श्वसुर ने दुर्व्यवहार किया था या उसकी परवाह नहीं की थी, चूंकि वह अत्यधिक संवेदनशील और सरलता से प्रभावित हो जाने वाली स्त्री थी, इसलिए उसने भावनाओं के उफान से उत्पन्न होने वाली नितान्त ग्लानि और कुण्ठा के कारण आत्म-हत्या कर ली थी। विनिश्चित किए जाने के लिए यही मुख्य मुद्दा है। उच्च न्यायालय और विचारण न्यायालय दोनों ने ही आत्म-हत्या की कथा को अस्वीकृत कर दिया और यह निष्कर्ष निकाला कि मृतक के पति ने पोटाशियम साइनाइड की असरदार खुराक देकर उसकी हत्या की थी, और उन्होंने उसके चिकित्सीय साक्ष्य तथा रासायनिक परीक्षक के साक्ष्य का अवलम्ब यह दर्शित करने के लिए लिया कि यह शुद्ध और मात्र मानव-वध का मामला है, न कि आत्म-हत्या का, जैसा कि प्रतिरक्षा पक्ष ने अभिकथन किया है। उच्च न्यायालय ने विचारण न्यायालय के निर्णय की पुष्टि करते हुए मृत्यु के दण्डादेश की अभिपुष्टि कर दी और इसी कारण यह अपील विशेष इजाज़त लेकर की गई है। अपील मंजूर करते हुए,

**अभिनिर्धारित**—यह सुस्थिर है कि अभियोजन-पक्ष को स्वयं अपने ऊपर निर्भर करना चाहिए और वह प्रतिरक्षा की कमजोरी से कोई बल प्राप्त नहीं कर सकता। यह निश्चित विधि है और किसी भी विनिश्चय में इसके प्रतिकूल मत नहीं अपनाया गया है। कुछ मामलों में केवल यह अभिनिर्धारित किया गया है कि जहां किसी शृंखला के विभिन्न सूत्र अपने आप में पूर्ण होते हैं, वहां मिथ्या अभिवाक् या मिथ्या प्रतिरक्षा की सहायता न्यायालय को केवल आश्वासन देने के लिए ही ली जा सकती है। दूसरे शब्दों में, अतिरिक्त

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



जहां तक इस विषय का सम्बन्ध है, ऐसे मामलों में न्यायालय को साक्ष्य का ध्यानपूर्वक मूल्यांकन करना चाहिए और निम्नलिखित चार महत्वपूर्ण परिस्थितियां अवधारित करनी चाहिएं क्योंकि वे ही किसी दोषसिद्धि को न्यायोचित ठहरा सकती हैं :—(1) अभियुत का मृतक को विष देने का स्पष्ट हेतु हो, (2) मृतक तथाकथित विष देने से मरा हो, (3) अभियुक्त के पास विष हो, (4) उसके पास मृतक को विष देने का अवसर हो। (पैरा 165)

इस मामले में उच्च न्यायालय को यह चाहिए था कि वह अपीलार्थी को संदेह का लाभ देता। मामले की परिस्थितियों को देखते हुए जब तक कि अभियोजन-पक्ष इस संभावना को अपवर्जित न कर दे कि मृतक ने पोटाशियम सायनाइड विष खाकर हत्या की है, तब तक अपीलार्थी के विरुद्ध इस तथ्य से दोषिता का कोई प्रतिकूल निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता कि वही अंतिम व्यक्ति था जो मृतक के साथ देखा गया था, क्योंकि वह तो उसका पति था, जिसका रात के समय उसके साथ होना स्वाभाविक है। कल्पना की किसी भी उड़ान से इन 17 परिस्थितियों में से कुछ परिस्थितियां ऐसी हैं, जो अपीलार्थी की दोषिता की ओर संकेत करती हैं, ऐसा नहीं माना जा सकता। अतः किसी भी स्थिति में यह नहीं कहा जा सकता कि कोई भी परिस्थिति ऐसे मामले में अपीलार्थी की दोषिता के सिवाय, कुछ भी इंगित करने वाली नहीं समझी जा सकती जोकि विशुद्ध रूप से पारिस्थितिक साक्ष्य पर आधारित है। (पैरा 177 और 197)

मृतक द्वारा अभिकथित रूप से अपीलार्थी और/या उसके माता-पिता के विरुद्ध बताए जाने के बारे में तथा उन तीन पत्रों के बारे में उन पांच साक्षियों का मौखिक साक्ष्य, भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 32(1) के अधीन अग्राह्य है। (पैरा 201)

न्या० मुखर्जी ने कुछ मुद्दों पर अर्थात् विद्वान न्या० वरदराजन द्वारा तैयार किए गए निर्णय में वर्णित चार मुद्दों पर न्या० फज़ल अली द्वारा व्यक्त मत से भिन्न मत व्यक्त किया है। वे है :—(1) अपीलार्थी द्वारा मृतक के साथ दुर्व्यवहार; (2) प्रेमिका के साथ अपीलार्थी की घनिष्ठता; (3) साक्ष्य अधिनियम की धारा 32(1) के अधीन अपीलार्थी के विरुद्ध मृतक द्वारा अभिकथित परिवादों के बारे में मृतक के पत्रों और अभियोजन साक्षियों के मौखिक साक्ष्य की ग्राह्यता; और (4) डाक्टर का आचरण, जिन्होंने मृतक के शव की परीक्षा की थी। (पैरा 213)

मामले को अभियुक्त के प्रतिकूल पूरी तरह सिद्ध मानने से पहले निम्नलिखित शर्तें पूरी होनी चाहिएं : (1) वे परिस्थितियां, जिनसे दोषिता

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



का निष्कर्ष निकाला जाना है, पूरी तरह सिद्ध हो जानी चाहिएं। यहां यह उल्लेख किया जा सकता है कि इस न्यायालय ने यह इंगित किया था कि संबंधित परिस्थितियां "सिद्ध करनी होंगी" या "की जानी चाहिएं", न कि "की जा सकती हैं"। "साबित की जा सकती हैं" और "साबित करनी होंगी या "की जानी चाहिएं" में केवल व्याकरणिक अंतर ही नहीं है, बल्कि विधिक अंतर है। "निश्चय ही यह एक प्राथमिक सिद्धांत है कि इससे पहले कि न्यायालय अभियुक्त को दोषसिद्ध कर सके, अभियुक्त दोषी "होना चाहिए" न कि केवल "दोषी हो सकता है" और "हो सकता है" तथा "होना चाहिए" के बीच मानसिक अंतर बहुत लम्बा है, अस्पष्ट अटकलों को निश्चित निष्कर्षों से अलग करता है।" (2) इस प्रकार सिद्ध किए गए तथ्य केवल अभियुक्त की दोषिता की कल्पना के अनुरूप होने चाहिएं अर्थात् इस बात के सिवाय कि अभियुक्त दोषी है, किसी अन्य कल्पना के पोषक नहीं होने चाहिएं, (3) परिस्थितियां निश्चायक प्रकृति और प्रवृत्ति की होनी चाहिएं, (4) उन्हें साबित की जाने वाली हर उप-कल्पना के सिवाय हर संभावित उप-कल्पना अपवर्जित करनी चाहिए, और (5) साक्ष्य की श्रृंखला इतनी पूर्ण होनी चाहिए कि अभियुक्त की निर्दोषिता के अनुरूप निष्कर्ष निकालने के लिए कोई भी युक्तियुक्त आधार न बचे और उससे यह दर्शित हो कि सम्पूर्ण मानवीय संभावना में वह कार्य अभियुक्त द्वारा ही किया गया होगा। ये पांच स्वर्णिम सिद्धांत हैं। ये पारिस्थितिक साक्ष्य पर आधारित किसी पक्षकथन के सबूत के पंचशील सिद्धांत हैं। (पैरा 153 और 154)

इससे अपराध-शास्त्र का यह आधारभूत सिद्धांत उपदर्शित होता है कि कोई पक्षकथन तभी साबित हुआ कहा जा सकता है, जब निश्चित और प्रकट साक्ष्य हो और कोई भी व्यक्ति मात्र नैतिक धारणा पर सिद्धदोष नहीं ठहराया जा सकता। पैरा (157)

**न्या० फज़ल अली के मतानुसार**—मृत्युकालिक कथन की प्रकृति और विस्तार के प्रश्न से सम्बन्धित भारतीय विधि में इंग्लैंड की विधि से सुभिन्न विचलन किया गया है, जिसमें एकमात्र ऐसे कथन जिनका प्रत्यक्ष रूप से मृत्यु के कारण से सम्बन्ध होता है, ग्राह्य हैं। धारा 32 के खण्ड (1) का दूसरा भाग, अर्थात् यह कि "......... उस संव्यवहार की किसी परिस्थिति के बारे में (किया गया है), जिसके फलस्वरूप उसकी मृत्यु हुई, उन मामलों में, जिनमें व्यक्ति की मृत्यु का कारण प्रश्नगत हो" अभिव्यक्ति इंग्लैंड की विधि में मौजूद नहीं है। (पैरा 18)

**पेश की गई नज़ीरों और साक्ष्य अधिनियम की धारा 32(1) की स्पष्ट भाषा को देखने से निम्नलिखित प्रतिपादन सामने आते हैं :—(1) धारा 32**

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



अनुश्रुति के नियम का अपवाद है और ऐसे व्यक्ति का, जो मर जाता है, चाहे वह मृत्यु मानव-वध हो या आत्म-हत्या, कथन ग्राह्य बनाती है, परन्तु यह तब जबकि ऐसे कथन का सम्बन्ध मृत्यु के कारण से हो, या उससे ऐसी परिस्थितियां स्पष्ट होती हों, जिनके कारण मृत्यु हुई थी। इस सम्बन्ध में भारतीय साक्ष्य अधिनियम के अधीन, यहां के समाज की विशिष्ट दशाओं को और यहां के लोगों की विभिन्न प्रकृति और स्वरूप को देखते हुए, यह आवश्यक समझा गया कि अन्याय से बचने की दृष्टि की धारा 32 की परिधि को विस्तृत किया जाए। (2) निकटता की कसौटी का अर्थान्वयन अधिक शाब्दिक रूप से नहीं किया जा सकता और उसे सर्वव्यापी रूप से लागू होने वाले निश्चित फार्मूले में व्यावहारिक रूप से इस प्रकार नहीं लाया जा सकता जिससे कि वह सीमित दायरे में बंध जाए। समय की दूरी प्रत्येक मामले की परिस्थितियों पर निर्भर होगी या उसके साथ ही उसमें परिवर्तन होगा। उदाहरण के लिए जहां कि मृत्यु, ऐसे निरन्तर नाटक का, जिसकी प्रक्रिया लम्बी है, तर्कसंगत अंत है, और जैसी कि वह है, उस कथा का अंत है, वहां उस नाटक की समाप्ति से प्रत्यक्षतः सम्बन्धित प्रत्येक कदम के विषय में किया गया कथन इसलिए ग्राह्य होगा, क्योंकि समस्त कथन को समन्वित रूप से, न कि संदर्भ से हटकर पढ़ना होगा। कभी-कभी अव्यवहित हेतु से संगत कथन या ऐसे कथन जिनसे अव्यवहित हेतु का पता चलता है, इस आधार पर भी ग्राह्य हो सकते हैं कि वे मृत्यु के संव्यवहार के अंग हैं। यह स्पष्ट है कि ये सभी कथन मृतक की, जोकि अपनी बात मरणासन्न होकर कहता है, मृत्यु के पश्चात् ही सामने आते हैं। उदाहरण के लिए, जहां कि मृत्यु विवाह के बहुत ही संक्षिप्त समय के भीतर होती है या जहां कि समय की दूरी की सीमा 3 या 4 मास से अधिक नहीं है, वहां वह कथन धारा 32 के अधीन ग्राह्य हो सकता है। (3) धारा 32 के खण्ड (1) का द्वितीय भाग इस नियम का दूसरा अपवाद है कि दण्ड विधि में ऐसे व्यक्ति का साक्ष्य, जिसकी प्रति-परीक्षा अभियुक्त द्वारा नहीं की जा रही थी या उसके लिए अवसर नहीं दिया जा रहा था, इसलिए मूल्यहीन होगा क्योंकि प्रति-परीक्षा शपथ की सत्यनिष्ठा और पवित्रता के साथ मात्र इस कारण जुड़ी रहती है क्योंकि जो व्यक्ति मरने वाला होता है, उसका मिथ्या कथन करना संभाव्य नहीं होता, जब तक यह दर्शित करने के लिए सबल साक्ष्य मौजूद न हो कि कथन या तो उकसाने या सिखाए-पढ़ाने से प्राप्त किया गया है। (4) इस ओर ध्यान देना महत्त्वपूर्ण हो सकता है कि धारा 32 में न केवल मानव-वध के बारे में उपबंध किया गया है, बल्कि उसके अन्तर्गत आत्म-हत्या भी है; इसलिए ऐसी सभी परिस्थितियां, जोकि मानव-वध के मामले को साबित करने के लिए सुसंगत हो सकती हैं, आत्म-हत्या

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



के मामले को साबित करने के लिए समान रूप से सुसंगत होंगी। (5) जहां कि साक्ष्य में मृतक द्वारा किए गए कथन और लिखे गए पत्र हैं, जोकि उसकी मृत्यु से प्रत्यक्षतः संक्सत हैं, या संबंधित हैं, और जोकि दुर्भाग्य की कहानी कहते हैं, वहां उक्त कथन धारा 32 की परिधि के भीतर पूरी तरह से आएगा और इसी कारण से वह ग्राह्य होगा। ऐसे मामलों में केवल समय की दूरी, कथन को असंगत नहीं बनाएगी। (पैरा 21)

**न्या० वरदराजन के मतानुसार** (सम्मत निर्णय) : मृतक के अभिकथित मौखिक कथन और जो कुछ उसके पत्रों में कहा गया है, वह उन विषयों से संबंधित हो सकता है, जिनका संभवतः उसकी मृत्यु के कारण या परिस्थितियों से बहुत दूर का संबंध है। उन परिस्थितियों का उस वास्तविक घटना से कोई निकट का संबंध नहीं है, जिसके फलस्वरूप पोटाशियम साइनायड से उसकी मृत्यु हुई, यद्यपि उदाहरण के लिए, लम्बे समय तक विष देने के मामले में उनका संबंध वास्तविक प्राणान्तक खुराक की तारीख से बहुत दूर की तारीखों से हो सकता है। वे मृतक की सामान्य धारणाएं हैं, जिनसे भय या आशंका इंगित होती है, ये चाहे किसी व्यक्ति विशेष की हों या अन्यथा और उसकी मृत्यु के अवसर से सीधे संबंधित न हों। अभियोजन पक्ष का यह कथन नहीं है कि वर्तमान मामला लम्बे समय तक विष देने का मामला है। (पैरा 203)

अतः मृतक ने जो कुछ अपीलार्थी और/या उसके माता-पिता के विरुद्ध अभियोजन साक्षियों से कहा है और जो कुछ उसने अपने पत्रों में कहा है, उसके बारे में उन साक्षियों का मौखिक साक्ष्य साक्ष्य अधिनियम की धारा 32(1) के अधीन साक्ष्य में अग्राह्य है और उन पर किसी भी प्रयोजन के लिए विचार नहीं किया जा सकता। इन परिस्थितियों में न्यायालय की राय में, इस बारे में जिसकी बाबत यह अभिकथित किया गया है कि मृतक ने अपीलार्थी और/या उसके माता-पिता के विरुद्ध अभियोजन साक्षियों से कहा है, और उनके मौखिक साक्ष्य तथा पत्र साक्ष्य अधिनियम की धारा 32(1) के अधीन साक्ष्य में अग्राह्य हैं। (पैरा 204)

**न्या० मुखर्जी के अनुसार** (सम्मत निर्णय) : निकटता की कसौटी का शाब्दिक अर्थ नहीं किया जा सकता और न ही किया जाना चाहिए और इसे व्यावहारिक रूप से ऐसे सार्वभौमिक अकाट्य सूत्र के रूप में नहीं बांधा जा सकता, फिर भी इस बात पर जोर दिया जाना चाहिए कि जब कभी इसका विस्तार तत्काल समय में परे किया जाए, तो यह अपवादस्वरूप होना चाहिए और ऐसा बहुत ही सावधानी और सतर्कता से किया जाना चाहिए। सामान्य सिद्धांत के रूप में सभी प्रयोजनों के लिए यह अभिकथित नहीं किया जा

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh


सकता कि उदाहरण के लिए जहां मृत्यु विवाह के थोड़े समय के अन्दर होती है और समय की दूरी 3 या 4 मास से अधिक नहीं होती, वहां कथन साक्ष्य अधिनियम की धारा 32 के अधीन ग्राह्य होगा। ऐसा हमेशा नहीं होता और और न हो सकता है। वर्तमान मामले की परिस्थितियों जैसी अत्यन्त आपवादिक परिस्थितियों में ऐसे कथन ग्राह्य हो सकते हैं और वे भी निश्चित तथ्य को साबित करने के लिए नहीं, बल्कि निषेधात्मक तथ्य को इंगित करने के लिए अर्थात् अभियुक्त की दोषिता के बारे में कुछ संदेह पैदा करने के लिए। (पैरा 215)

आमतौर पर बहुत विशिष्ट परिस्थितियों के अभाव में या उच्च न्यायालय द्वारा की गई विधि की घोर गलती के बिना उच्चतम न्यायालय हस्तक्षेप नहीं करता, किन्तु जहां उच्च न्यायालय विद्यमान परिस्थितियों और साबित तथ्यों की उपेक्षा या अवहेलना कर देता है तथा अपराध-शास्त्र के सुस्थापित सिद्धांतों या पारिस्थितिक साक्ष्य के मूल्यांकन पर उच्चतम न्यायालय द्वारा किए गए विनिश्चयों का उल्लंघन करता है, और उन्हें गलत लागू करता हैं तथा संदेह का लाभ अभियुक्त को अभिलेख पर प्रत्यक्षतः विद्यमान तथ्यों के बावजूद या स्वयं अपने निष्कर्षों पर देने से इंकार करता है अथवा कोई युक्तियुक्त स्पष्टीकरण दिए बिना उन्हें अनदेखा करने का प्रयास करता है या अभिलेख पर प्रत्यक्ष विधि की गलती करता है जिससे अभियुक्त के प्रति घोर अन्याय हो जाए, वहां उच्चतम न्यायालय का कर्त्तव्य है कि वह आगे आए और उच्च न्यायालय के विधि की दृष्टि से त्रुटिपूर्ण विनिश्चय को सही करे। (पैरा 178)

**न्या० मुखर्जी** (सम्मत निर्णय) : अपील मंजूर की जानी चाहिए और निचले न्यायालयों के निर्णय अपास्त किए जाने चाहिएं और अपीलार्थी को उसके विरुद्ध लगाए गए आरोपों से दोषमुक्त किया जाना चाहिए तथा उसे तुरन्त रिहा किया जाना चाहिए। किन्तु ऐसा कुछ संकोच और बहुत चिन्ता के साथ किया गया है, क्योंकि ऐसा करना विशुद्ध रूप से तथ्यों के मूल्यांकन पर निचले दोनों न्यायालयों के निष्कर्षो में हस्तक्षेप करना होगा। (पैरा 211)

**अनुसरित निर्णय**

| | | पैरा |
|---|---|---|
| [1981] | [1981] 4 उम० नि० प० 924 = [1981] 2 एस० सी० आर० 384 : **शंकरलाल ग्यारसीलाल दीक्षित बनाम महाराष्ट्र राज्य;** | 157, 160, 162, 174 |
| [1979] | ए० आई० आर० 1979 एस० सी० 1966 : **हरिजन मेघा जेशा बनाम गुजरात राज्य;** | 144, 199 |

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh




| | | |
|---|---|---|
| [1976] | (1976) 1 एस० सी० सी० 438 : **शामू बालु चोगले** बनाम **महाराष्ट्र राज्य;** | 143, 199 |
| [1974] | [1974] 1 उम० नि० प० 1140=[1974] 2 एस० सी० आर० 694 : **नसीम अहमद** बनाम **दिल्ली प्रशासन;** | 157 |
| [1974] | 1974 क्रिमिनल लॉ जर्नल 1200 [म० प्र०] : **ओंकार** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य;** | 13 |
| [1973] | [1973] 3 उम० नि० प० 1011=(1973) 2 एस० सी० सी० 793 : **शिवाजी साहबराव बोबडे और एक अन्य** बनाम **महाराष्ट्र राज्य;** | 153 |
| [1973] | [1973] 3 उम० नि० प० 1286=[1973] 2 एस० सी० सी० 808 : **काली राम** बनाम **हिमाचल प्रदेश राज्य;** | 163 |
| [1972] | ए० आई० आर० 1972 एस० सी० 656 : **रामगोपाल** बनाम **महाराष्ट्र राज्य;** | 152, 157, 164, 167 |
| [1969] | (1969) 3 एस० सी० सी० 198 : **तुफैल (उर्फ सिम्मी)** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य;** | 152, 157 |
| [1966] | 1966 क्रिमिनल अपील आर० (एस० सी०) 281 : **शिव कुमार और अन्य** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य;** | 11 |
| [1963] | [1963] 2 एस० सी० आर० 405 : **एम० सी० अग्रवाल** बनाम **महाराष्ट्र राज्य;** | 157, 162 |
| [1959] | [1959] एस० सी० आर० 1336 : **रतन गौड़** बनाम **बिहार राज्य;** | 10 |
| [1958] | 1957 की दाण्डिक अपील सं० 120 : **चन्द्रकान्त नियाल चन्द सेठ** बनाम **मुम्बई राज्य;** | 157, 167 |
| [1958] | 1958 की दाण्डिक अपील सं० 98 : **धर्मबीर सिंह** बनाम **पंजाब राज्य;** | 10, 157, 168 |
| [1955] | [1955] 2 एस० सी० आर० 570 : **देवनन्दन मित्र** बनाम **बिहार राज्य;** | 157 |
| [1953] | ए० आई० आर० 1953 एस० सी० 468 : **फतेह सिंह भगत सिंह** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य;** | 143, 199 |
| [1952] | [1952] एस० सी० आर० 1091 : **हनुमंत** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य;** | 10, 152, 157, 161 162, 176 |


Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



| | | |
|---|---|---|
| [1952] | (1952) एन० ज़ैड० आर० 111 : **सम्राट** बनाम **होरी**; | 155 |
| [1939] | ए० आई० आर० 1939 पी० सी० 47=एस० आर० 66 इण्डियन्न अपील्स 66 : **पकाला नारायण स्वामी** बनाम **सम्राट** | 11, 13, 203 |

**प्रभेदित निर्णय**

| | | |
|---|---|---|
| [1977] | ए० आई० आर० 1977 एस० सी० 1164 : **राम दास** बनाम **महाराष्ट्र राज्य** | 172, 173 |
| [1960] | [1960] 2 एस० सी० आर० 460 : **अनन्त चिन्तामण लागू** बनाम **मुम्बई राज्य**; | 157, 171 |
| [1957] | ए० आई० आर० 1957 एस० सी० 211 : **प्रशादी** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य**; | 170 |

**अनुमोदित निर्णय**

| | | |
|---|---|---|
| [1981] | 1981 क्रिमिनल लॉ जर्नल 1373 : **मनोहर लाल और अन्य** बनाम **पंजाब राज्य**; | 11 |
| [1977] | [1977] 81 कलकत्ता वीकली नोट्स 713 : **प्रतिमा दत्त और एक अन्य** बनाम **राज्य**; | 12 |
| [1974] | ए० आई० आर० 1974 एस० सी० 1144 : **मोहन लाल पंगासा** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य**; | 157 |
| [1960] | ए० आई० आर० 1960 बाम्बे 290 : **अलीजान मियां** बनाम **राज्य**; | 14 |
| [1960] | ए० आई० आर० 1960 पंजाब 310 : **राजेन्द्र कुमार** बनाम **राज्य**; | 81 |
| [1959] | [1959] 1 मद्रास एल० जे० 246 : **चिन्नावालयन** बनाम **मद्रास राज्य**; | 15 |
| [1954] | ए० आई० आर० 1954 इलाहाबाद 153 : **राज्य** बनाम **कंचन सिंह और एक अन्य** | 19 |

**उलट दिया गया निर्णय**

| | | |
|---|---|---|
| [1950] | ए० आई० आर० 1950 कलकत्ता 306 : **गोकुल चन्द्र चटर्जी** बनाम **राज्य** | 16 |

**दाण्डिक अपीली अधिकारिता : 1983 की दाण्डिक अपील सं० 745.**

मार्च, 1983 के पुष्टि विषयक मामले के साथ-साथ 1983 की दाण्डिक अपील सं० 265 में मुम्बई उच्च न्यायालय के तारीख 20, 21, 22 और 23 सितम्बर, 1983 वाले निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



**अपीलार्थी की ओर से** सर्वश्री राम जेठमलानी, एम० एस० गणेश, एफ० एन० रंका और कुमारी जेठमलानी।

**प्रत्यर्थी की ओर से** सर्वश्री के० जी० भगत, ए० एस० जी०, एम० एन० श्रॉफ और यू० ए० जाधवराव।

न्यायालय का निर्णय न्यायाधिपति एस० मुर्तज़ा फज़ल अली ने दिया।

**न्यायाधिपति फजल अली—**

यह एक ऐसा दुर्भाग्यपूर्ण मामला है, जिसमें, यद्यपि वर और वधु के कुटुम्बों के समान मित्रों के मध्यक्षेप के परिणामस्वरूप निश्चित किए गए और करवाए गए विवाह का आरम्भ अच्छा हुआ था, किन्तु उसके थोड़े दिनों के बाद वह असफल हो गया। वधू, मंजु, की आशाएं और आकांक्षाएं बहुत ऊंची थीं और वह पति-पत्नी दोनों के बीच पूरे आमोद-प्रमोद और आनन्द, परस्पर प्रेम और आसक्ति से जीवन व्यतीत करने की न केवल आशा कर रही थी, बल्कि बड़ी उत्सुकता से प्रतीक्षा भी कर रही थी। ऐसा प्रतीत होता है कि वह अत्यधिक भावुक और संवेदनशील लड़की थी और प्रारम्भ से ही अपने विवाह के पश्चात्, जो उसके और अपीलार्थी शरद बिरधीचन्द शारदा के बीच 11 फरवरी, 1982 को हुआ था, पूरे किए जाने के आदर्श-सपने संजोए हुए थी। विवाह के पश्चात् शीघ्र ही मंजु अपनी ससुराल चली गई और पुणे में 'तक्षशिला-अपार्टमेंट' में अपीलार्थी के साथ रहने लगी। किन्तु दुर्भाग्यवश, जब उसे यह पता चला कि उसके पति और उसके सास-श्वसुर का व्यवहार उसके साथ क्रूर और कठोर है, तब वह अत्यधिक हताश और निराश हो गई, तथा उसके संजोए हुए सपने चूर-चूर होते प्रतीत हुए। इस दारुण वस्तुस्थिति के बावजूद भी, उसने आशा नहीं छोड़ी और वह आशा के विपरीत आशा करती रही, और चूंकि वह बहुत ही आभिजात्य और उदार प्रकृति की थी, इसलिए वह सदैव क्षमा करने और भुलाने के लिए तैयार रहती थी। जैसे-जैसे दिन गुज़रते गए, उसके सर्वाधिक प्रशंसनीय रुख के बावजूद भी उसने यह पाया कि "जैसी बातें प्रतीत हो रही हैं", वैसी नहीं हैं और यदि उसके शब्दों को उद्धृत कर दिया जाए, तो "ससुराल में उसके साथ एक मज़दूरनी के रूप में या पैसे के बिना काम करने वाली नौकरानी के रूप में व्यवहार किया जाता था"। उससे सभी प्रकार के आलतू-फालतू काम कराए जाते थे और इसके बावजूद कि उसने अपने पति से इसके संबंध में आपत्ति की, ऐसा प्रतीत होता है कि उसका कुछ परिणाम नहीं निकला। फिर भी मंजु के मस्तिष्क की बनावट कितनी कोमल और सदय थी कि उसने अपने सास-श्वसुर से, बल्कि

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



अपने पति से भी, कभी-कभी शिकायत करने की बात छोड़कर, कभी भी शिकायत नहीं की। जबकि बातें असह्य हो गईं, तो उसने आपत्ति की और अत्यधिक हताशा और कुंठा के क्षणों में स्पष्ट संभावित शब्दों में अपनी ये भावनाएं व्यक्त कर दीं कि वह (उसका पति) उससे नफरत करता है। केवल यही नहीं, जब उसने अपनी बहन अंजु से स्वयं द्वारा लिखे गए पत्रों में (जिन पर हम इस निर्णय के बाद वाले भाग में विचार करेंगे) अपनी दुखपूर्ण कहानी का वर्णन किया, तो भी उसने अत्यधिक सावधानी और सतर्कता बरतते हुए अंजु से यह अनुरोध किया कि वह उसके इस दुर्भाग्य के संबंध में उसके माता-पिता से कुछ न बताए, क्योंकि कहीं ऐसा न हो कि वे अत्यधिक विक्षुब्ध, परेशान और शोकाकुल हो जाएं।

2. अंत में स्थिति यहां तक पहुंच गई कि मंजु पूरी तरह से ऊब गई और हताश हो गई और उसने यह सोचा कि वह अब ऐसे स्थान पर पहुंच गई है, जहां से वापस नहीं आया जा सकता। अंत में उसके विवाह के लगभग चार महीने बाद तारीख 12 जून, 1982 की उस दुर्भाग्यपूर्ण सुबह को वह अपने बिस्तर पर मृत पाई गई।

3. जहां तक मृत्यु के कारण का संबंध है, ऐसा प्रतीत होता है कि अभियोजन पक्ष और प्रतिरक्षा पक्ष के बीच गम्भीर भिन्नता है। अभियोजन का निश्चित पक्षकथन यह था कि चूंकि अपीलार्थी की उसमें बिलकुल ही रुचि नहीं रह गई थी और उज्जवला नामक लड़की से उसका अवैध संबंध था, इसलिए व्यावहारिक रूप से उसने अपनी पत्नी का त्याग कर दिया था और जब उसने यह पाया कि असह्य हो गया है, तो उसने 11 और 12 जून, 1982 के बीच उसकी हत्या कर दी और उसके शव की दाह-क्रिया करने की व्यर्थ कोशिश भी की। अंत में मामला पुलिस को रिपोर्ट किया गया। दूसरी ओर, प्रतिरक्षा पक्ष का अभिवाक् यह था कि जब इस बात की प्रबल संभावना है कि मंजु के साथ उसके पति और उसके सास-श्वसुर ने दुर्व्यवहार किया था या उसकी परवाह नहीं की थी, तो चूंकि वह अत्यधिक संवेदनशील और सरलता से प्रभावित हो जाने वाली स्त्री थी, इसलिए उसने भावनाओं के उफान से उत्पन्न होने वाली नितान्त ग्लानि और कुण्ठा के कारण आत्महत्या कर ली थी। यही मुख्य मुद्दा है, जिसकी बाबत इस न्यायालय को विनिश्चय करना है।

4. उच्च न्यायालय और विचारण न्यायालय, दोनों ने ही आत्महत्या की कथा को अस्वीकृत कर दिया और यह निष्कर्ष निकाला कि मंजु के पति ने पोटाशियम साइनाइड की असरदार खुराक देकर उसकी हत्या की थी, और उन्होंने उसके चिकित्सीय साक्ष्य तथा रासायनिक परीक्षक के साक्ष्य का अवलम्ब

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



यह दर्शित करने के लिए लिया कि यह शुद्ध और मात्र मानव-वध का मामला है, न कि आत्म-हत्या का है, जैसा कि प्रतिरक्षा पक्ष ने अभिकथन किया है। उच्च न्यायालय ने विचारण न्यायालय के निर्णय की पुष्टि करते हुए मृत्यु के दण्डादेश की अभिपुष्टि कर दी और इसी कारण यह अपील विशेष इजाजत लेकर की गई है।

5. इस मामले के तथ्यों का विवेचन करने के पूर्व यह उल्लेख किया जा सकता है कि यद्यपि उच्च न्यायालय और विचारण न्यायालय, दोनों ने उन परिस्थितियों से संबंधित, जिनके परिणामस्वरूप मंजू की अभिकथित हत्या हुई थी, छोटी-मोटी और बारीक बातों पर भी विचार किया था, तथापि उनके निर्णयों को पढ़ने के पश्चात् हम यह महसूस करते हैं कि मामले के ये तथ्य बहुत ही संक्षिप्त हैं।

6. इस अभागी लड़की की कहानी 11-2-1982 को उस समय आरम्भ होती है जबकि उसका विवाह अपीलार्थी से हुआ था और उसके पूर्व 2-8-81 को औपचारिक रूप से सगाई भी हुई थी। विवाह के पश्चात् मंजु, पहली बार, अपने मायके 22-2-82 को थोड़े दिनों के लिए गई थी और 26-2-82 को पुनः वापस आई थी। अभियोजन का पक्षकथन यह है कि 17-3 82 को अपीलार्थी ने मंजु को पर्ल होटल में बुलाया, जहां कि उसने उसका उज्जवला से परिचय करवाया और उसने यह कहा कि यदि तुम अपने पति के साथ सुखमय जीवन व्यतीत करता चाहती हो, तो तुम्हें उज्जवला के हुक्म के अनुसार ही कार्य करना होगा। दूसरे शब्दों में, सुझाव यह था कि अपीलार्थी ने अपनी पत्नी से यह बात स्पष्ट कर दी थी कि उज्जवला ही मकान-मालिकिन है और मंजु केवल उसके आदेशों का पालन करने के लिए ही है। इस घटना के पश्चात् मंजु 2-4-82 को अपने मायके गई और 12-4-82 को पुनः वापस आ गई। वह अपने मायके दूसरी बार गई थी। मंजु का अपने मायके में तीसरी बार, और कदाचित अंतिम बार, जाना 25-5-82 को हुआ था, जहां से वह 3-6-82 को पुनः वापस आ गई थी और उसके बाद फिर कभी लौटकर नहीं गई। उसके पुणे वापस आने का कारण यह था कि उसके श्वसुर ने इस बात पर जोर दिया था कि तुम्हें इसलिए पुणे वापस आ जाना चाहिए क्योंकि शोभा (अपीलार्थी की बहन) की सगाई 13-6-82 को होने जा रही है।

7. इस दुर्भाग्यपूर्ण नाटक का अंतिम चरण यह था कि मंजु, अनुराधा (ए-2 की पत्नी) और उसके बच्चों के साथ ही 11-6-82 को लगभग 11·00 बजे रात अपने फ्लैट पर वापस आ गई। उस समय उसका पति अपार्टमैंट में नहीं था, किन्तु अभियोजन-पक्ष का यह अभिकथन है कि वह तुरन्त ही वापस

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



आ गया था और उसने मंजु को पोटाशियम साइनाइड खिलाया था। इसके बाद अपीलार्थी अपने भाई रामेश्वर के पास गया, जो भी उसी फ्लैट में रह रहा था और डाक्टर लोधा (अभियोजन साक्षी 24) को ले आया, जो तक्षशिला अपार्टमैंट से लगभग 1½ किलोमीटर की दूरी पर रह रहा था। डाक्टर लोधा के सुझाव पर डाक्टर गांधी (अभियोजन साक्षी 25) को भी बुलवाया गया और उनमें से दोनों ने यह निष्कर्ष निकाला कि मंजु मर चुकी है और उसकी मृत्यु अस्वाभाविक मृत्यु है तथा उन्होंने यह सलाह दी कि शव को इसलिए मरणोत्तर-परीक्षा के लिए भेज दिया जाए जिससे कि मृत्यु का कारण अवधारित किया जा सके। अंत में मोहन असवा (अभियोजन साक्षी-30) से टेलीफोन पर बातचीत की गई और यह इत्तिला दी गई कि मंजु की मृत्यु 5.30 प्रातः हो गई है। उसके बाद प्रायिक अन्वेषण और मरणोत्तर परीक्षा हुई, जोकि इस समय हमारे प्रयोजन के लिए बहुत संगत नहीं हैं और उन पर, उचित प्रक्रम में विचार किया जाएगा।

8. अपीलार्थी का अभिवाक यह था कि मैंने मंजु को पोटाशियम साइनाइड नहीं खिलाया है, बल्कि ऐसा प्रतीत होता है कि उसने नितान्त कुण्ठा के कारण आत्म-हत्या की है। अपनी सद्भावना साबित करने के लिए अभियुक्त ने इन परिस्थितियों का अवलम्ब लिया कि जैसे ही उसे अपनी पत्नी की मृत्यु के बारे में पता चला, उसने दो डाक्टरों को (अभियोजन साक्षी 24 और 25) बुलवाया और जब उन्होंने यह घोषित किया कि मंजु की मृत्यु अस्वाभाविक मृत्यु है, क्योंकि मृत्यु का कारण ज्ञात नहीं था, और इसी कारण से उसने उसके शव को मरणोत्तर-परीक्षा के लिए भेजने तथा पुलिस इत्तिला देने के लिए तुरन्त कदम उठाया। उसने अभियोजन-पक्ष के इस अभिकथन से इन्कार किया कि उसने मोहन असवा (अभियोजन साक्षी-30) को इस बात के लिए राजी करने की कोशिश की थी कि वह मृतक के शव की दाह-क्रिया करने की इजाजत दे दे।

9. हम यह कह सकते हैं कि उच्च न्यायालय ने यह साबित करने के लिए 17 परिस्थितियों का उल्लेख किया है कि अभियोजन-पक्ष द्वारा पेश किया गया पारिस्थितिक साक्ष्य पूर्ण और निश्चायक है। इन परिस्थितियों में से कुछ परिस्थितियां एक-दूसरे का अतिव्यापन करती हैं, और उनमें से कुछ असंगत हैं और कुछ को इस कारण विचार में नहीं लिया जा सकता है क्योंकि वे दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन किए गए अपीलार्थी के कथन में उससे इस दृष्टि से नहीं पूछी गई थीं जिससे कि उनके प्रभाव को स्पष्ट किया जा सके, जैसा कि हम अभी-अभी दिखाएंगे।

10. पारिस्थितिक साक्ष्य के सबूत की प्रकृति और स्वरूप से संबंधित

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



विधि इस न्यायालय तथा उच्च न्यायालयों के अनेक विनिर्णयों द्वारा स्थिर हो चुकी है। इस न्यायालय के विनिश्चय का स्वीकृत संदर्भ स्थल **हनुमंत बनाम मध्य प्रदेश राज्य**[1] वाले मामले में किए गए विनिश्चय में मिल सकता है, जहां कि न्यायाधिपति महाजन ने पारिस्थितिक साक्ष्य पर शुद्धत: आधारित मामले के सबूत की विभिन्न सहगामी बातें स्पष्ट रूप से प्रतिपादित की हैं और इस प्रकार मत व्यक्त किया है—

> "परिस्थितियां निश्चायक प्रकृति और प्रवृत्ति की होनी चाहिएं और वे ऐसी होनी चाहिएं जिससे कि साबित किए जाने के लिए प्रस्थापित उप-कल्पना को छोड़कर, प्रत्येक उपकल्पना उपवर्जित हो जाए................उसे ऐसी होनी चाहिए, जिससे यह दर्शित हो कि सभी मानवीय अधिसंभाव्यताओं के भीतर वह कार्य अभियुक्त द्वारा अवश्य ही किया गया होगा।"

इस न्यायालय ने **धर्मवीर सिंह बनाम पंजाब राज्य**[2] वाले मामले में इस विनिश्चय का अनुसरण तथा अनुमोदन किया था। तथापि, हम **हनुमंत**[1] वाले उपर्युक्त मामले का विवेचन अपने निर्णय वाले भाग में बाद में पूरी तरह से करेंगे। साक्ष्य अधिनियम की धारा 32(1) के निर्वचन के प्रश्न पर विचार करते हुए न्या० एस० के० दास ने **रतन गौड़ बनाम बिहार राज्य**[3] वाले मामले में इस न्यायालय का मत निम्नलिखित रूप में इस प्रकार व्यक्त किया था—

> "धारा 32 का एकमात्र सुसंगत खण्ड, जिसकी बाबत यह कहा जा सकता है कि उसका इससे कोई संबंध है, खण्ड (1) है, जिसका संबंध ऐसे व्यक्ति द्वारा किए गए कथनों से है जोकि अपनी मृत्यु के बारे में या उस संव्यवहार के बारे में जोकि अपनी मृत्यु के बारे में किए गए हों या उस संव्यवहार की किसी परिस्थिति के बारे में किए गए हों, जिसके फलस्वरूप उसकी मृत्यु हुई थी। हमारे समक्ष प्रस्तुत मामले में अगहनी ने जो कथन किए थे, उनका संबंध अपनी मृत्यु के कारण से या उसकी मृत्यु से संबंधित किसी परिस्थिति से नहीं है; उसके विपरीत उन कथनों का संबंध उसकी बहन की मृत्यु से है।"

वुडरोक और अमीर अली लिखित "लॉ ऑफ एवीडेन्स" खण्ड (II) में लेखकों

---

1 [1952] एस० सी० आर० 1091.

2 4-11.58 को विनिश्चत 1958 की दाण्डिक अपील सं० 98 जोकि हरे कागज पर मुद्रित की गई थी और जिसकी जिल्दबन्दी 4 खण्डों में की गई थी।

3 [1959] एस० सी० आर० 1336.

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



ने एक ही स्थान पर सभी मामले संगृहीत किए हैं और अपने निष्कर्षों को इस प्रकार उद्धृत किया है—

"संक्षेप में धारा 3 (1) के अधीन किसी कथन की सुसंगति की कसौटी यह नहीं है कि उस मामले में अन्तिम निष्कर्ष क्या है, बल्कि यह है कि क्या कथन करने वाले व्यक्ति की मृत्यु का कारण उस मामले से प्रश्नगत है या नहीं। "उस संव्यवहार की किसी परिस्थिति के बारे में किया गया है, जिसके फलस्वरूप उसकी मृत्यु हुई" अभिव्यक्ति की परिधि "अपनी मृत्यु के कारण" अभिव्यक्ति की बनिस्बत अधिक विस्तृत है; अन्य शब्दों में धारा 32 का खण्ड (1) दो प्रकार के कथनों के प्रति निर्देश करता है : (1) किसी व्यक्ति द्वारा अपनी मृत्यु के कारण के सम्बन्ध में किया गया कथन और (2) किसी व्यक्ति द्वारा उस संव्यवहार की किसी परिस्थिति के सम्बन्ध में किया गया कथन, जिसके फलस्वरूप उसकी मृत्यु हुई।

"जिसके फलस्वरूप उसकी मृत्यु हुई" शब्दों से "उसकी मृत्यु कारित की गई" अभिप्रेत नहीं है। इस प्रकार यह सुस्थिर है कि मृत्युकालिक कथन केवल वहां तक ग्राह्य होते हैं, जहां तक कि वे ऐसे तथ्य के प्रति प्रत्यक्ष रूप से संकेत करते हैं, जो मानव-वध से सम्बन्धित तथ्य और कार्य का गठन करते हैं; अर्थात् यह कि वे मार डालने के कार्य के प्रति और ऐसी परिस्थितियों के प्रति निर्देश करते हैं जो उनसे सम्बन्धित हों, जैसे कि ऐसी धमकियां, कठिनाइयां, कार्य, (मृत्युकालिक) कथन और घटनाएं, जोकि विवाद्य तथ्य या संव्यवहार गठित करती हैं या उसके साथ-साथ होती हैं और उसे स्पष्ट करती हैं। वे किसी पक्षकार के पक्ष में या विरुद्ध इस प्रकार ग्राह्य होती हैं, मानो कि वे सम्बन्धित तथ्य और कार्य के भाग हों।" —(पृष्ठ 952)

ऐसा प्रतीत होता है कि अभियोजन-पक्ष का ठोस और मुख्य आधार निम्नलिखित रूप में उपदर्शित किया जा सकता है—

(1) मृतक द्वारा अपने पत्रों में मृत्युकालिक लिखित कथन, जिनमें से दो पत्र उसने अपनी बहन अन्जु को तथा एक पत्र अपनी मित्र वाहिनी को सम्बोधित किया था;

(2) मृतक द्वारा अपने पिता (अभियोजन साक्षी-2), अपनी माता (अभियोजन साक्षी-20), अपनी बहन (अभियोजन साक्षी-6) और अपनी मित्र (अभियोजन साक्षी-3) और अभियोजन साक्षी-4 और 5 को भी किए गए मौखिक कथन, जिनसे उसकी मृत्यु से थोड़ी देर पहले की उसकी स्थिति का पता चलता है और ऐसी शिकायतें,

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



जोकि अपने पति द्वारा उसके साथ किए गए दुर्व्यवहार के सम्बन्ध में की थीं ;

(3) वह साक्ष्य, जिससे यह दर्शित होता है कि अपीलार्थी मृतक के साथ उसके कमरे में अन्तिम रूप से उस समय तक देखा गया था, जब वह मामला पुलिस को रिपोर्ट किया गया;

(4) अपलार्थी का अस्वाभाविक और अपराध में फंसाने वाला आचरण;

(5) रासायनिक परीक्षक की उस रिपोर्ट के साथ, जोकि स्पष्ट रूप से यह साबित करती है कि यह मानव-वध का मामला था, ली गई डाक्टरी साक्ष्य से पूरी तरह से आत्म-हत्या की कहानी समाप्त हो जाती है, जैसा कि अपीलार्थी ने अभिकथन किया है ।''

अपीलार्थी के विद्वान् काउन्सेल, श्री जेठमलानी ने बहुत जोर देकर यह दलील दी है कि इस बात की बहुत प्रबल सम्भावना है कि मृतक ने उन परिस्थितियों के कारण आत्म-हत्या की हो जोकि उसके पत्र में उल्लिखित की गई हैं। उसने लिखित और मौखिक मृत्युकालिक कथनों में अन्तर्विष्ट बातों की विधि-ग्राह्यता को प्रश्नगत किया है। उसने यह दलील दी है कि मृत्युकालिक कथन, साक्ष्य अधिनियम की न तो धारा 32 के और न ही धारा 8 के अधीन ग्राह्य हैं। अपीलार्थी ने यह निवेदन किया कि प्रस्तुत मामला साक्ष्य अधिनियम की धारा 32 के खण्ड (1) की परिधि के भीतर बिल्कुल नहीं आता।

11. इस प्रश्न के सम्बन्ध में जो अग्रनिर्णय है और जिसका अनुमोदन इस न्यायालय ने किया है, **पकाला नारायण स्वामी** बनाम **सम्राट**[1] वाला मामला है, जिसमें लार्ड एटकिन ने निम्नलिखित कसौटियां अधिकथित की हैं—

"यह सुझाव दिया गया है कि संव्यवहार हो जाने के बाद ही कथन किया जाना चाहिए; यह कि अभिकथन करने वाला व्यक्ति किसी भी स्थिति में मरणासन्न होना चाहिए; यह कि "परिस्थितियों" के अन्तर्गत ऐसे कार्य आते हैं, जोकि तब और वहां किए गए हों जब और जहां मृत्यु कारित हुई हो। माननीय न्यायाधीशों की यह राय है कि प्रयुक्त शब्दों के स्वाभाविक अर्थ से इन परिस्थितियों में से कोई भी परिसीमा अभिप्रेत नहीं होती। ऐसा कथन मृत्यु का कारण उत्पन्न होने से पूर्व या इसके पूर्व कि मृतक के पास उसे मार डाले जाने का पूर्वानुमान लगाने का कोई कारण हो, किया जा सकता है। परिस्थितियां संव्यवहार की परिस्थितियां होनी चाहिएं; साधारण अभिव्यक्तियां, जिनसे भय सन्देह उपदर्शित होता हो, चाहे किसी

[1] ए० आई० आर० 1939 पी० सी० 47.

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



विशिष्ट व्यक्ति के सम्बन्ध में हो या अन्यथा, और मृत्यु के अवसर से प्रत्यक्षत: सम्बन्धित न हो, ग्राह्य नहीं होंगी………। "संव्यवहार की परिस्थितियां" निस्सन्देह ऐसा वाक्यांश है जिससे कतिपय परिसीमाएं अभिप्रेत हैं। वह उतना विस्तृत नहीं है, जितना कि "पारिस्थितिक साक्ष्य" में सदृश उपयोग, जिसके अन्तर्गत सभी सुसंगत तथ्यों का साक्ष्य आ जाता है। दूसरी ओर, वह "सम्बन्धित तथ्य और कार्य" की बनिस्बत अधिक संकुचित है। परिस्थितियों का सम्बन्ध वास्तविक घटता से कुछ निकट का अवश्य हो होना चाहिए।……यह अवश्य ही कहना होगा कि परिस्थितियां ऐसे संव्यवहार की हैं, जिनके फलस्वरूप "मृत्युकालिक" कथन करने वाले की मृत्यु हुई थी।"

**शिव कुमार और अन्य** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य**[1] वाले मामले में किए गए इस न्यायालय के विनिश्चय में इन सिद्धान्तों का अनुसरण किया गया था और उन्हें पूरी तरह से अनुमोदित किया गया था, जिसमें निम्नलिखित मत व्यक्त किए गए थे—

"यह स्पष्ट है कि यदि मृतक का कथन इस धारा के अधीन ग्राह्य किया जाना है, तो उसे उस संव्यवहार की परिस्थितियों से सम्बन्धित ऐसा कथन होना चाहिए, जिसके फलस्वरूप उसकी मृत्यु हुई है। कथन मृत्यु का कारण उत्पन्न होने से पूर्व किया जा सकता है या इसके पूर्व ही किया जा सकता है जबकि मृतक के पास यह पूर्वानुमान लगाने का कोई कारण रहा हो कि उसे मार डाला जाएगा………इस धारा के अधीन ग्राह्यता की आवश्यक शर्त यह है कि परिस्थितियों का सम्बन्ध वास्तविक घटना से कुछ निकट का होना चाहिए। "संव्यवहार की परिस्थितियां" वाक्यांश ऐसा वाक्यांश है जिससे निस्संदेह कुछ परिसीमाएं अभिप्रेत हैं। वह उतना विस्तृत नहीं है जितना कि "पारिस्थितिक साक्ष्य" अभिव्यक्ति में उसके सदृश उपयोग, जिसके अन्तर्गत सभी सुसंगत तथ्यों के साक्ष्य आते हैं। दूसरी ओर, वह सम्बन्धित तथ्य और कार्य की अपेक्षा अधिक समुचित है।" [पाकला नारायण स्वामी **बनाम** सम्राट (ए० आई० आर० 1939 पी० सी० 47) वाला मामला देखिए]।

पूर्वोक्त सिद्धान्तों का अनुसरण लगभग सभी न्यायालयों के ऐसे अनेक विनिर्णयों में किया गया है, जिनकी ओर इस मामले में ध्यान दिया गया है। कुछ

[1] 1966 क्रिमिनल अपील आर० (एस० सी०) 281.

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



महत्वपूर्ण निर्णयों का उल्लेख किया जा सकता है, जिनमें से **मनोहर लाल और अन्य** बनाम **पंजाब राज्य**[1] वाला मामला है, जिसमें पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय की खण्ड न्यायपीठ ने निम्नलिखित रूप में मत व्यक्त किया था—

> "जो यंत्रणा दी जाती है, कभी-कभी वह भिन्न-भिन्न रूपों में स्वयं ही प्रकट होती है। प्रारम्भ में वह मानसिक यंत्रणा हो सकती है और उसके बाद वह शारीरिक यंत्रणा का रूप धारण कर सकता है। आहत व्यक्ति को जो शारीरिक हानि पहुंचाई जाती है, उसमें वांछित प्रभाव प्राप्त करने की दृष्टि से क्रमवार वृद्धि हो सकती है। घातक हमला समय के पर्याप्त अन्तराल के बाद किया जा सकता है, किन्तु यदि मृतक द्वारा लिखी गई बातों में प्रत्येक यंत्रणा की परिस्थितियां, यंत्रणा के आरम्भ होने के बाद अस्तित्व में आती हैं, तो उसके बारे में यह अभिनिर्धारित किया जाएगा कि वह सुसंगत है, जैसा कि साक्ष्य अधिनियम की धारा 32 (1) में अधिकथित किया गया है।"

12. हम विद्वान् न्यायाधीशों द्वारा व्यक्त उपर्युक्त मत से सहमत हैं। **प्रतिमा दत्त और एक अन्य** बनाम **राज्य**[2] वाले मामले में कलकत्ता उच्च न्यायालय ने **हनुमंत**[3] वाले मामले का अवलम्ब लेते हुए निकटता के सिद्धान्त की प्रकृति और परिसीमाएं स्पष्ट रूप से बताई हैं और यह मत व्यक्त किया है कि कुछ मामलों में, जिनमें क्रूरता सिद्ध हो गई है, निकटता का विस्तार तीन वर्ष की कालावधि तक भी हो सकता है। इस सम्बन्ध में, उच्च न्यायालय ने इस प्रकार मत व्यक्त किया—

> "इस मामले में, जो "संव्यवहार" है, वह सुमन के विवाह से ही उसके जीवन को समाप्त करने के उद्दीपन सहित वर्षों तक क्रमबद्ध रूप से दुर्व्यवहार करना है। "संव्यवहार की परिस्थितियां" अभिव्यक्ति के अन्तर्गत क्रूरता सम्बन्धी साक्ष्य भी है, जिसके परिणामस्वरूप आत्म-हत्या करने के लिए अनुकूल मनःस्थिति उत्पन्न होती है। यद्यपि वह अपने-आप में पर्याप्त नहीं है, जब तक कि उसके जीवन को समाप्त करने के लिए उद्दीपन सम्बन्धी साक्ष्य मौजूद न हो, वह साक्ष्य के रूप में सुसंगत होगा।
>
> ... ... ... ...
>
> यदि इस मत को सम्पूर्ण रूप से लिया जाए, तो मेरे विचार से यह विवक्षित होगा कि समय का तत्व सदैव यह आधारित करने का

---

[1] (1981) क्रिमिनल लॉ जर्नल 1373.

[2] (1977) 81 कलकत्ता वीकली नोट्स 713.

[3] [1952] एस० सी० आर० 1091.

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



आधार नहीं होता है कि क्या कोई साक्ष्य उचित रूप से "संव्यवहार की परिस्थितियां" अभिव्यक्ति की परिधि के भीतर है। उस मामले में अभिकथन यह था कि क्रूरता सिद्ध हो गई है, जिसका विस्तार तीन वर्ष की कालावधि से भी अधिक तक है और उसके साथ ही आहत व्यक्ति के जीवन को समाप्त करने के लिए यदा-कदा उद्बोधन किया गया है। इसके अतिरिक्त माननीय लार्ड न्यायाधीशों ने यह मत व्यक्त किया और यह अभिनिर्धारित किया कि क्रूरता सम्बन्धी साक्ष्य एक अविछिन्न जंजीर है, जिसमें से अनेक कड़ियां भरने के लिए किए गए उद्बोधन के परिणामस्वरूप जुड़ गई थीं। इसी प्रकार मामले में क्रूरता सम्बन्धी साक्षी, दुर्व्यवहार और उसके जीवन को समाप्त करने के उद्बोधन के बारे में यह अवश्य ही अभिनिर्धारित किया जाना चाहिए कि वे ग्राह्य हैं तथा उस सम्बन्ध में नीलिमा (जिसने कि आत्म-हत्या की थी) के साक्ष्य के कथन को भी ग्राह्य माना जाएगा, जिसका सम्बन्ध उन परिस्थितियों से था, जिनमें आत्म-हत्या की गई था।"

13. इसी प्रकार, **ओंकार** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य**[1] वाले मामले में **पकला नारायण स्वामी**[2] वाले मामले में किए गए प्रिवी कौंसिल के विनिश्चय का अनुसरण करते हुए मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय ने साक्ष्य अधिनियम की धारा 32 द्वारा अनुध्यात परिस्थितियों की प्रकृति को इस प्रकार स्पष्ट किया है—

> "परिस्थितियों का वास्तविक घटनाओं से कुछ निकट का संबंध होना चाहिए और उनके अन्तर्गत ऐसे कार्य आ सकते हैं, जो उस समय और वहां किए गए हों जबकि और जहां मृत्यु कारित की गई थी··· ·········इस प्रकार ऐसा कथन जिससे अपराध के लिए मात्र हेतु ध्वनित होता है, साक्ष्य में तब तक ग्राह्य नहीं हो सकता जब तक कि उसका सम्बन्ध स्वयं संव्यवहार से उतना निकट का न हो जिससे कि वह संव्यवहार की परिस्थिति हो जाए। प्रस्तुत मामले में उन कथनों के सम्बन्ध में साक्ष्य पेश किया गया है, जो मृतक ने इस कथन के बहुत पहले ही किए थे, जिनसे अपराध का हेतुक ध्वनित हो सकता हो।"

14. **अलीजान मियां** बनाम **राज्य**[3] वाले मामले में मुम्बई उच्च न्यायालय ने इसी प्रकार का मत अपनाया है।

15. **चिन्नावालयन** बनाम **मद्रास राज्य**[4] वाले मामले में मद्रास उच्च

---

[1] 1974 क्रिमिनल लॉ जर्नल 1200 (म०प्र०)

[2] ए० आई० आर० 1939 पी० सी० 47.

[3] ए० आई० आर० 1960 बाम्बे 290.

[4] (1959) 1 मद्रास एल० जे० 246.

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



न्यायालय के दो प्रख्यात न्यायाधीशों ने 'परिस्थिति'' शब्द की अर्थव्याप्ति पर विचार करते हुए इस प्रकार मत व्यक्त किया है—

"उदाहरण के लिए, समय सम्बन्धी तत्व का अतिलंघन करने के लिए अनुध्यात विशेष परिस्थिति बहुत दिनों तक विष खिलाते रहने का मामला है, जबकि दूरी सम्बन्धी तत्व का अतिलंघन करने के लिए विशेष अनुज्ञात परिस्थिति, उदाहरण के लिए, हत्या के आशय को मन में पाले रखने का मामला है। यह बात इसलिए है क्योंकि माननीय लार्ड न्यायाधीशों के मतानुसार उन शब्दों के स्वाभाविक अर्थ से कोई भी परिसीमाएं अभिप्रेत नहीं है, जैसे कि (1) यह कि कथन संव्यवहार हो जाने के बाद किया जाना चाहिए, (2) यह कि ऐसा कथन करने वाला व्यक्ति किसी भी स्थिति में मरणासन्न होना चाहिए, (3) यह कि परिस्थितियों के अन्तर्गत केवल वे कार्य आते हैं, जो कि तब और वहां किए गए हों, जब और जहां मृत्यु कारित गई थी किन्तु परिस्थितियां संव्यवहार की परिस्थितियां होनी चाहिएं और उनका वास्तविक घटना से कुछ निकट का सम्बन्ध होना चाहिए।"

16. **गोकुल चन्द्र चटर्जी** बनाम **राज्य**[1] वाले मामले में, कलकत्ता उच्च न्यायालय ने निकटता की वास्तविक संकल्पना की अर्थव्याप्ति को कुछ संकुचित कर दिया और इस प्रकार मत व्यक्त किया—

"प्रस्तुत मामले में यह नहीं कहा जा सकता कि पत्रों में जो कथन किए गए हैं, उनका सम्बन्ध मृत्यु के कारण से कोई नहीं है। जिस बात ने उसे अपने-आप को मार डालने के लिए प्रेरित किया, वह निस्संदेह दुखी मन की स्थिति थी, किन्तु मेरी दृष्टि में उन कथनों का वास्तविक घटना से इतना निकट सम्बन्ध नहीं है, जिससे वे साक्ष्य अधिनियम की धारा 32 (1) के अधीन ग्राह्य हो सकें। उनके बारे में यह नहीं कहा जा सकता कि वे उस संव्यवहार की परिस्थितियां हैं, जिसके फलस्वरूप मृत्यु हुई थी।"

17. तथापि हम इस न्यायालय और प्रिवी कौंसिल के स्पष्ट विनिश्चय को देखते हुए उच्च न्यालालय द्वारा व्यक्त मत का अनुमोदन नहीं करते। सादर, उच्च न्यायालय ने प्रिवी कौंसिल द्वारा अधिकथित विनिश्चयाधार के भावार्थ और उसकी भावना का उचित रूप से अर्थान्वयन नहीं किया है। अतः हमारी राय यह है कि इस मामले के अधीन इस विषय से सम्बन्धित सही विधि अधिकथित नहीं की गई है।

---

[1] ए० आई आर० 1950 कलकत्ता 306.

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



18. इस अध्याय को समाप्त करने के पूर्व हम यह कह सकते हैं कि मृत्युकालिक कथन की प्रकृति और विस्तार के प्रश्न से सम्बन्धित भारतीय विधि में इंगलैंड की विधि से सुभिन्न विचलन किया गया है, जिसमें एकमात्र ऐसे कथन, जिनका प्रत्यक्ष रूप से मृत्यु के कारण से सम्बन्ध होता है, ग्राह्य हैं। धारा 32 के खण्ड (1) का दूसरा भाग, अर्थात् यह कि "·········उस संव्यवहार की किसी परिस्थिति के बारे में (किया गया है), जिसके फलस्वरूप उसकी मृत्यु हुई, उन मामलों में, जिनमें व्यक्ति की मृत्यु का कारण प्रश्नगत हो" अभिव्यक्ति इंगलैंड की विधि में मौजूद नहीं है। इस प्रभेद के सम्बन्ध में **राजेन्द्र कुमार** बनाम **राज्य**[1] वाले मामले में स्पष्ट रूप से बताया गया था, जिसमें निम्नलिखित मत व्यक्त किए गए थे—

> "भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 32 के खण्ड (1) में यह उपबन्ध किया गया है कि सुसंगत तथ्यों के लिखित या मौखिक कथन जो ऐसे व्यक्ति द्वारा किए गए थे, जो मर गया है, स्वयमेव सुसंगत हैं जबकि वह कथन किसी व्यक्ति द्वारा अपनी मृत्यु के कारण के बारे में या उस संव्यवहार की किसी परिस्थिति के बारे में किया गया है, जिसके फलस्वरूप उसकी मृत्यु हुई, परन्तु यह उस दशा में जिसमें उस व्यक्ति की मृत्यु का कारण प्रश्नगत हो·········अब तक यह बात बिलकुल सुस्थिर हो चुकी है कि ऐसी घोषणा की, जो मृत्यु की प्रत्याशा से किया गया हो, आवश्यकता से सम्बन्धित भारतीय नियम और इंगलैंड के नियम के बीच अन्तर है।
>
> इंगलैंड की विधि में (मृत्युकालिक) कथन आसन्न मृत्यु की चेतना के अधीन रहते हुए किया जाना चाहिए, जबकि भारतीय विधि के अधीन किसी मृत्युकालिक कथन की ग्राह्यता के लिए यह आवश्यक नहीं है कि मृत्युकालिक कथन करते समय मृतक को मृत्यु की प्रत्याशा होनी ही चाहिए।"

19. **राज्य** बनाम **कंचन सिंह और अन्य**[2] वाले मामले में यह मत व्यक्त किया गया कि—

> "भारत में जो विधि है, वह मृत्युकालिक कथनों की ग्राह्यता को इस बात पर निर्भर नहीं बनाती है कि कथन करने वाले व्यक्ति को मृत्यु के आसन्न होने के सम्बन्ध में सचेत होना चाहिए। यदि उस व्यक्ति को इस बात की आशंका नहीं थी कि वह मर जाएगा, तो उसके द्वारा अपनी मृत्यु की परिस्थितियों के बारे में किया गया कथन साक्ष्य अधिनियम की धारा 32 के अधीन ग्राह्य होगा।"

---

1 ए० आई० आर० 1960 पंजाब 310.

2 ए० आई० आर० 1954 इलाहाबाद 153.

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



20. अतः इन परिस्थितियों में इस विषय के सम्बन्ध में इंग्लैंड के मामलों के प्रति निर्देश करना व्यर्थ है ।

21. इस प्रकार ऊपर उल्लिखित नजीरों और साक्ष्य अधिनियम की धारा 32(1) की स्पष्ट भाषा को देखने से निम्नलिखित प्रतिपादन सामने आते हैं—

(1) धारा 32 अनुश्रुति के नियम का अपवाद है और ऐसे व्यक्ति का, जो मर जाता है, चाहे वह मृत्यु मानव-वध हो या आत्म-हत्या, कथन ग्राह्य बनाती है, परन्तु यह तब जबकि ऐसे कथन का सम्बन्ध मृत्यु के कारण से हो, या उससे ऐसी परिस्थितियां स्पष्ट होती हों, जिनके कारण मृत्यु हुई थी । जैसा कि ऊपर उपदर्शित किया गया है, इस सम्बन्ध में भारतीय साक्ष्य अधिनियम के अधीन, हमारे समाज की विशिष्ट दशाओं को और हमारे लोगों की विभिन्न प्रकृति और स्वरूप को देखते हुए, यह आवश्यक समझा गया कि अन्याय से बचने की दृष्टि से धारा 32 की परिधि को विस्तृत किया जाए ।

(2) निकटता की कसौटी का अर्थान्वियन अधिक शाब्दिक रूप से नहीं किया जा सकता और उसे सर्वव्यापी रूप से लागू होने वाले फार्मूले में व्यावहारिक रूप से इस प्रकार नहीं लाया जा सकता जिससे कि वह सीमित दायरे में बंध जाए । समय की दूरी प्रत्येक मामले की परिस्थितियों पर निर्भर होगी या उसके साथ ही उसमें परिवर्तन होगा, उदाहरण के लिए जहां कि मृत्यु, ऐसे निरन्तर नाटक का, जिसकी प्रक्रिया लम्बी है, तर्कसंगत अंत हैं और जैसी कि वह है, उस कथा का अंत है, वहां उस नाटक की समाप्ति से प्रत्यक्षतः सम्बन्धित प्रत्येक कदम के विषय में किया गया कथन इसलिए ग्राह्य होगा, क्योंकि समस्त कथन को समन्वित रूप से, न कि संदर्भ से हटकर पढ़ना होगा । कभी-कभी अव्यवहित हेतु से संगत कथन या ऐसे कथन जिनसे अव्यवहित हेतु का पता चलता है, इस आधार पर भी ग्राह्य हो सकते हैं कि वे मृत्य के संव्यवहार के अंग है । यह स्पष्ट है कि ये सभी कथन मृतक की जो कि अपनी बात मरणासन्न होकर कहता है, मृत्यु के पश्चात् ही सामने आते हैं । उदाहरण के लिए जहां कि मृत्यु विवाह के बहुत ही संक्षिप्त समय के भीतर होती है या जहां कि समय की दूरी की सीमा 3 या 4 मास से अधिक नहीं है, वहां वह कथन धारा 32 के अधीन ग्राह्य हो सकता है ।

(3) धारा 32 के, खण्ड (1) का द्वितीय भाग इस नियम का दूसरा अपवाद है कि, दण्ड विधि में ऐसे व्यक्ति का साक्ष्य, जिसकी

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



प्रतिपरीक्षा अभियुक्त द्वारा नहीं की जा रही थी या जिसे करने का अवसर नहीं दिया जा रहा था, इसलिए मूल्यहीन होगा क्योंकि प्रति-परीक्षा शपथ की सत्यनिष्ठा और पवित्रता के साथ मात्र इस कारण जुड़ी रहती है कि जो व्यक्ति मरने वाला होता है, उसका मिथ्या कथन करना संभाव्य नहीं होता, जब तक यह दर्शित करने के लिए सबल साक्ष्य मौजूद न हो कि कथन या तो उकसाने या सिखाये-पढ़ाने से प्राप्त किया गया है।

(4) इस ओर ध्यान देना महत्त्वपूर्ण हो सकता है कि धारा 32 में न केवल मानव-वध के बारे में उपबंध किया गया है, बल्कि उसके अन्तर्गत आत्म-हत्या भी है; इसलिए ऐसी सभी परिस्थितियां, जो कि मानव-वध के मामले को साबित करने के लिए सुसंगत हो सकती हैं, आत्म-हत्या के मामले को साबित करने के लिए समान रूप से सुसंगत होंगी।

(5) जहां कि साक्ष्य में मृतक द्वारा किए गए कथन और लिखे गए पत्र हैं, जो कि उसकी मृत्यु से प्रत्यक्षतः संसक्त हैं, या संबंधित हैं, और जोकि दुर्भाग्य की कहानी कहते हैं, वहां उक्त कथन धारा 32 की परिधि के भीतर पूरी तरह से आएगा और इसी कारण से वह ग्राह्य होगा। ऐसे मामलों में केवल समय की दूरी, कथन को असंगत नहीं बनाएगी।

22. अब हम मंजु द्वारा अपनी बहन और मित्र को लिखे गए पत्रों (प्रदर्श 30, 32 और 33) की अन्तर्वस्तुओं पर बारीकी से विचार करेंगे। हम चार प्रयोजनों को उन पत्रों की अन्तर्वस्तुओं की परीक्षा करना चाहते हैं—

(1) मंजु की मनः स्थिति और मनोवैज्ञानिक रूप का पता लगाने के लिए,

(2) मंजु का अपने पति और सास-ससुर के प्रति जो रुख था, उसकी प्रकृति,

(3) कितना तनाव और कितनी कुंठा थी, जोकि स्पष्टतः उन पत्रों में व्यक्त प्रतीत होती है, और

(4) जीवन के प्रति मंजु की व्यक्तिगत विशेषताएं और मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण को अवधारित करने के लिए और यह भी अवधारित करने के लिए कि क्या वह कभी भी आत्म-हत्या करने में समर्थ थी या उसके प्रति उसका रुझान था।

23. हम तारीख 8-5-82 (प्रदर्श-30) वाले पत्र से आरम्भ कर रहे हैं, जो कि उसने अपनी बहन अंजु को संबोधित किया था और जो मुद्रित पेपर बुक के भाग-I के पृष्ठ 191 पर (मुद्रित) है। अपीलार्थी के विद्वान काउन्सेल

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



ने, हमारे कार्य को सरल बनाने की दृष्टि से मूल पत्र का अंग्रेजी अनुवाद और उसे रोमन लिपि में भी प्रदाय किया है। दोनों में दी गई बातों की तुलना करने पर हमारी राय यह है कि कुल मिलाकर पेपर बुक में मुद्रित अंग्रेजी अनुवाद ठीक है और मूल-पत्र की अन्तर्वस्तु का ईमानदारी के साथ दिया गया रूपान्तर है। समस्त पत्र प्रोद्धृत करना हमारे लिए आवश्यक नहीं है, किन्तु हम उन सुसंगत प्रभागों को ही प्रोद्धृत करना चाहते हैं, जिनमें ऊपर उल्लिखित चार प्रयोजनों को स्पष्ट और उनकी व्याख्या करने की कोशिश की गई है :—

"खत तो सभी उत्सुकता से पढ़ते हैं; कहीं वह किसी के हाथ न पड़ जाए। मैं ऐसी जोखिम नहीं उठाना चाहती हूं। इसलिए मैं तुम्हें आज दूसरा खत लिखने जा रही हूं।" (पृष्ठ 191)

रोमन लिपि में वह निम्नलिखित रूप में है :—

"खत तो सभी उत्सुकता से पढ़ते हैं। कहीं किसी के हाथ पड़ सकता है। ऐसी रिस्क लेनी नहीं है। इसलिए मैं तुम्हें आज दूसरा खत लिखने का लिया। (पृष्ठ 17)

24. उपर्युक्त का विश्लेषण करने से स्पष्ट रूप से यह दर्शित होता है कि मंजु अत्यन्त संगोपनशील स्त्री थी और केवल उन लोगों को जो कि उसके मित्र या निकट नातेदारों के रूप में उसके बहुत ही निकट थे, अपनी भावनाओं के संबंध में अपना मोटा विचार या चलती-फिरती झलक देने के सिवाय, अपनी व्यक्तिगत बातें या गुप्त बातें केवल अपने तक ही सीमित रखना चाहती थी। प्रोद्धरण से यह दर्शित होता है कि कदाचित संवेगों में बहकर उसने अपनी बहन को बहुत लम्बा पत्र लिखा था, जिसको अपनी सर्वाधिक अच्छी मित्र मानती थी। किन्तु दोबारा विचार करने पर उसने उसे इसलिए फाड़ दिया था कि कहीं ऐसा न हो कि वह पत्र किसी और के हाथ पड़ जाए और वह ऐसी जोखिम उठाने के लिए तैयार नहीं थी। इस मानसिकता और कुलीन प्रकृति से हमें उसके माता-पिता, बहन और मित्रों के समक्ष उसके दौरान जब वह अन्तिम बार बीड़ गई थी, उसके द्वारा किए गए कथनों के साक्ष्यिक मूल्य का निर्धारण करने में बहुत बड़ी सहायता मिलेगी। दूसरे पैरा में जोकि नीचे प्रोद्धृत किया गया है, उसकी मनःस्थिति और तनाव और वह यन्त्रणा, जिससे वह गुजर रही थी, प्रतिबिम्बित है—

"जैसी कि मेरे मन में बातें आ रही हैं, जिन्हें लिखा नहीं जा सकता है, मैं यह नहीं समझती कि अब इस पत्र में क्या लिखा जाए। इस समय मेरी मनःस्थिति बहुत कुछ वैसी ही है। बस तुम (मुझे) समझती हो। मैं बहुत बड़ी कठिन परीक्षा से गुजर रही हूं। मैं उसे पास करने में असमर्थ हूं। जब तक कि (मैं) अपने को संभाल सकती हूं, ठीक है।

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh


जब असंभव हो जाएगा, तो फिर दूसरा रास्ता निकालना पड़ेगा। देखना क्या-क्या होता है। ठीक है।" (पृष्ठ 191)

25. उसने यह संकेत किया है कि वह बड़े कठिन समय से गुजर रही है किन्तु अपने को इतना संभालने की कोशिश कर रही है, जितना कि हो सकता है। इसके अलावा उसने यह भी उपदर्शित किया है कि यदि स्थिति में परिवर्तन नहीं होता है, तो फिर उसे कोई दूसरा रास्ता अपनाना पड़ेगा। रोमन लिपि में जो वास्तविक शब्द प्रयुक्त हैं, वे निम्नलिखित रूप में हैं—

"जब तक संभाल सकती हूं, ठीक है जब असंभव हो जाएगा, तो फिर रास्ता निकालना पड़ेगा। देखना क्या-क्या होता है।" (पृष्ठ 17)

26. "तो फिर कोई दूसरा रास्ता निकालना पड़ेगा" शब्दों से स्पष्ट रूप से उसकी विकृत मन:स्थिति का पता चलता है और उससे यह ध्वनि निकलती प्रतीत होती है कि उसकी सभी परेशानियों से छुटकारा पाने का दूसरा रास्ता आत्म-हत्या करना है। इस ओर ध्यान देना महत्वपूर्ण है कि ऊपर प्रोद्धृत उसके पत्र के प्रथम दो पैराओं में उसके पति के आचरण की ओर न तो कोई संकेत है और न कोई इशारा।

27. उसने अपने पत्र के पैरा तीन में अपनी भावनाओं को इस प्रकार व्यक्त किया है—

"मैंने बहुत सोचा कि मेरे पति के माता-पिता का मकान पुणे में है, इसलिए मैं यह करूंगी और वह करूंगी, क्योंकि मेरे पति के माता-पिता के मकान के लोग स्वतंत्र विचारों के हैं। तथापि, मैंने धीरे-धीरे यह जान लिया कि उस मकान में बहू की कीमत एक मजदूर से ज्यादा नहीं है। —(पृष्ठ 191)

सुसंगत प्रभाग रोमन लिपि में निम्नलिखित रूप में है—

"इस घर में बहू की कीमत मजदूर से ज्यादा नहीं है"

—(पृष्ठ 18)

28. तीसरे पैरा के अन्त में उसने अपनी दुर्दशा इस प्रकार दोहरायी है—

"किन्तु यहां पर मेरी स्थिति लावारिस व्यक्ति की भांति है। जो होना था, हो गया। मैं (उस पर) आंसू नहीं बहाना चाहती हूं। जब मैं मिलूंगी, उस समय इन सभी बातों के बारे में बात करूंगी।"

29. चौथे पैरा के मध्य में यह उपदर्शित करके कि मेरी सभी आशाएं चूर-चूर हो गई हैं और चूंकि मेरे पति द्वारा मेरी उपेक्षा किए जाने के कारण मेरे स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है, उसने अपनी भावनाओं के उद्वेग को प्रकट किया है। रोमन लिपि में उसने निम्नलिखित शब्दों का उपयोग किया है—

"सचमुच क्या-क्या सपने रहते हैं कुवारेपन में, मगर टूटे हुए

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh


देखकर दिल पर क्या गुजरती है। वैसे तो मैंने कुछ भी सपने नहीं देखे थे। बस एक ही सपना था कि मेरा पति मुझ से बहुत प्यार करे, मगर अभी वह भी न पाकर दिल की हालत पर काबू नहीं पा सक रही। तबीयत पर उसका असर दिख रहा है।" —(पृष्ठ 19-20)

30. आठवें पैरा के पश्चात् कथित भाग में उसने अपनी भावनाओं को व्यक्त करते हुए इस प्रकार मत व्यक्त किया है—

"अब मंजू उत्तेजित हो रही है; यह कहना आवश्यक है कि वह जीवित है। तुम इस पत्र के बारे में किसी से मत कहना। भाऊसाब से मैं यह बात कहना चाहती थी। किन्तु उन्हें दुखी करने से क्या फायदा है। परिणाम चाहे कुछ भी हो, अपनी किस्मत आजमानी चाहिए। मैं तुम्हें सब बताना चाहती हूं। किन्तु मैं बता नहीं सकती।"

31. उसने जिन शब्दों का उपयोग किया है, उनसे उसकी स्नेहिल और संगोपनशील प्रकृति का और उस सावधानी का पता चलता है, जोकि उसने अपने पिता को कोई बात न कहने के लिए बरती थी, जिन्हें भाऊसाब कहकर संबोधित किया गया है। सुसंगत प्रभाग रोमन लिपि में इस प्रकार है—

"दिल तो करता था, बाई, भाऊसाब को सब बताऊं, मगर उनको दु:ख देकर क्या फायदा। अपने-अपने नसीब, देखेंगे, नतीजा क्या निकलता है। मुझे तुम्हें सब कुछ बताना है, मगर बता नहीं सकती।
—(पृष्ठ 22)

32. इन प्रोद्धरणों से मृतक की प्रकृति, शील, मानसिक प्रवृत्ति, वेदना और सहनशक्ति के संबंध में काफी रोशनी पड़ती है। स्पष्ट रूप से जिस एक बात की ओर ध्यान दिया जा सकता है, वह यह है कि वह अपने पति या अपने सास-श्वसुर को अपराध में फंसाने की अपेक्षा वह सभी दोष अपने पर मढ़ने के लिए तैयार थी। पत्र (प्रदर्श 30) के अन्य भाग इस मामले के प्रयोजन के लिए बिलकुल ही संगत नहीं हैं। उस पत्र की मुख्य अन्तर्वस्तु को संक्षेप में बताते हुए निम्नलिखित निष्कर्ष या परिणाम निकलते हैं—

(क) मंजू अत्यधिक भावुक और संवेदनशील स्त्री थी।

(ख) उसे अपने जीवन में उस समय धक्का लगा, जबकि उसने अपने पति और सास-श्वसुर द्वारा अपने साथ दुर्व्यवहार किए जाने के कारण, यह पाया कि विवाह के पश्चात् उसके सभी सपने चूर-चूर हो गए हैं और उसे हताश, विषण्ण तथा निराश स्त्री बनाकर छोड़ दिया है।

(ग) उसके सास-श्वसुर ने उसके साथ लगातार दुर्व्यवहार किया था और मकान में उसकी स्थिति पैसे दिए बिना रखी गई नौकरानी या मजदूर की स्त्री की स्थिति से भिन्न कुछ नहीं थी।

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

(घ) वह अपनी परेशानियों और अपनी तकलीफों को अपने तक ही सीमित रखना चाहती थी और किसी भी कारण वह उन्हें अपने माता-पिता या अपनी बहन से भी प्रकट करने के लिए इसलिए तैयार नहीं थी, कि कहीं ऐसा न हो कि वे विषण्ण और दुखी हो जाएं ।

(ङ) उसने स्वयं पति के विरुद्ध क्रूरता सम्बन्धी कोई भी गम्भीर अभिकथन नहीं किया और उसने यह सोचा कि उसे कुण्ठाग्रस्त होकर स्वयं ही सहन करना चाहिए ।

33. अब हम प्रदर्श-32 की परीक्षा करेंगे जोकि तारीख 8-6-1982 वाला पत्र है, जिसे मंजु ने अपनी बहन अंजु को लिखा था । शायद यह अंजु को लिखा गया उसका अन्तिम पत्र था और यह इस मामले के विनिश्चय के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण और सुसंगत है । वह पत्र इन शब्दों से आरम्भ होता है— "मैं यहां पर खुश हूं ।" दूसरे पैरा में उसने निम्नलिखित रूप में अपनी भावनाओं को व्यक्त किया है—

"शोभा बाई की शादी का कार्यक्रम 13 को निश्चित हुआ है । मैं यह नहीं जानती कि मकान में ऐसा गन्दा वातावरण क्यों हैं ? प्रति क्षण यह महसूस होता है कि कुछ न कुछ हो जाएगा । हर व्यक्ति तनाव में रहता है । मकान में कोई भी कार्य अभी तक आरम्भ नहीं किया गया है । खैर जाने भी दो मेरी मन स्थिति ठीक नहीं है । किन्तु फिर भी मैं इस ओर ध्यान न देने की आदि हो चुकी हूं अन्जु तुम्हारे उनके क्या हाल हैं ।" —(पृष्ठ 195)

34. जहां तक कि पहले भाग का सम्बन्ध है, वह "गन्दा वातावरण" जिसके बारे में उसने बताया है, ऐसी किसी भी बात से पूरी तरह से जिसे उसके पति ने की हो या किसी ऐसे क्रूर व्यवहार से जो उसने उसके साथ किया हो, असम्बद्ध है; उसने कुटुम्ब में चल रहे तनाव के प्रति निर्देश मात्र किया था, क्योंकि 13-6-82 को "शादी" (कोहल) निश्चित हुई थी। उसका क्रोध अपने पति के प्रति या अपने प्रति उतना नहीं है जितना कि उस ढंग के प्रति है, जिससे बातें की जा रही थीं । उसने इस बात की शिकायत की कि कोई भी काम अभी तक शुरू नहीं हुआ है और उस कुटुम्ब की ज्येठतम पुत्रवधू होने के कारण उसने यह सुनिश्चित करना अपना कर्तव्य समझा कि सभी व्यवस्थाएं पूरी हो जाएं अपर सालिसिटर जनरल ने यह स्वीकार किया कि उसके पत्र के इस प्रभाग में पति द्वारा या पति के माता-पिता द्वारा किए गए किसी भी दुर्व्यवहार के प्रति निर्देश नहीं किया गया है, किन्तु उसका सम्बन्ध केवल ऐसे महत्वपूर्ण कार्य के लिए त्रुटिपूर्ण और असन्तोषजनक व्यवस्था से है। तीसरे पैरा का सुसंगत प्रभाग, कमोबेश,

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अनुपघातमक है, किन्तु उन पंक्तियों में पीड़ा की कहानी, हताशा और कुंठा की भावना और निराशा की लहर अवश्य मौजूद है। हिन्दी में लिखे गए वास्तविक शब्द इस प्रकार हैं —

"मेरा तो आने का क्या होता है, देखना है। बुआ जी के यहां से खत और आया, तो शायद चान्स मिल सकता है। मगर मेरी मंगल की दुल्हन के रूप में देखने की बहुत इच्छा है। देखेंगे।"

35. उसे स्वभावतः किसी बात की आशंका थी और वह अपने मायके जाने के लिए बहुत आशान्वित नहीं थी। चूंकि यह उसका अन्तिम पत्र था और वह भी बहुत ही संक्षिप्त था, इसलिए, उससे उस ढंग के प्रति स्पष्ट संकेत मिलता है कि उसका मस्तिष्क किस प्रकार कार्य कर रहा था। उसने अपने पति पर या किसी पर भी कोई दोष नहीं लगाया। किन्तु फिर भी उसे यह भय था कि कुछ होने जा रहा है और (कदाचित) वह अपने मायके न जा सके और अपनी ननद का विवाह न देख सके, जिसके लिए तैयारियां की जा रही थीं। हमारी राय में इन शब्दों से भविष्य के प्रति अत्यधिक संकेत मिलता है और उससे यह उपदर्शित होता प्रतीत होता है कि उस समय तक उसने अपने दुखद अस्तित्व को बनाए रखने की बजाए अपने जीवन को समाप्त करने का लगभग इरादा कर लिया है। चूंकि संक्षिप्तता, विचार कौशल की ज्ञान होती है, इसलिए उसने प्रत्यक्ष रूप से यह संकेत दिया कि वह अपने पिता से या किसी से भी स्वभावतः इसलिए नहीं मिल सकेगी, क्योंकि जब उसका जीवन समाप्त हो जाएगा, तो ऐसा कोई प्रश्न ही नहीं हो सकता। यद्यपि प्रदर्श 32, एक संक्षिप्त पत्र है, फिर भी उसमें उसकी वास्तविक भावनाएं प्रदर्शित की गई हैं तथा वह अनन्तिम विनिश्चय मौजूद है जो कि उसने पहले ही लिया हो सकता है, किन्तु जिसे वह स्पष्ट कारणों से प्रकट नहीं करना चाहती थी।

36. उसके बाद हम प्रदर्श 33 पर विचार करेंगे जो कि तारीख 23-4-82 वाला वह पत्र है जिसे मृतक ने अपनी घनिष्ट मित्र वाहिनी को लिखा था और जिससे उसकी वास्तविक भावनाएं बदलती हुई मुद्रा और मनोवेगों का पता चलता है। यह एकमात्र ऐसा पत्र है जिसमें उसने अपने पति के विरुद्ध स्पष्ट शिकायत की है और उसका सुसंगत प्रभाग यहां इस प्रकार उद्धृत किया जा सकता है—

"वास्तव में, वाहिनी, मुझे तुम्हारी बहुत याद आती है। जब भी मैं थोड़ा-सा परेशान हो जाती हूं, तो मैं यह महसूस हूं कि काश तुम मेरे पास होती।

यहां पर सभी लोग बहुत अच्छे हैं। हर व्यक्ति प्यार करता है। फिर भी मुझे अकेलापन महसूस होता है। एक कारण यह है कि

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

मकान में बहुत से व्यक्ति हैं और वे मुझसे बड़े हैं और इस प्रकार मैं कोई भी काम स्वतन्त्र रूप से करने का साहस नहीं करती। हर समय मेरे मन में कुछ भय रहता है, जिसके कारण गड़बड़ हो जाती है।

भगवान जानता है कि मैं वहां कब आ सकूंगी ? जिस मुद्दे के संबंध में हमारा विचार-विमर्श हुआ था, वह वैसा ही है जैसे कि था। वाहिनी, मेरी कसम, तुम इसके बारे में किसी से भी बात न करना। मुझे बहुत कष्ट है। किन्तु मैं कर भी क्या सकती हूं। उसके अलावा कोई दूसरा रास्ता भी नहीं है और मुझसे बार-बार वही गलती हो जाती है। वह यह है कि मैं सामने जाती हूं और दस बार बात करती हूं, फिर जब वे नहीं बोलते, तो मैं गुस्सा हो जाती हूं। वाहिनी, सिवाय भरपूर आंसू बहा लेने के मेरे हाथ में कुछ भी नहीं है। कम-से-कम आज तक इस व्यक्ति को अपनी पत्नी की ओर ध्यान देने का समय ही नहीं मिला; चलो छोड़ो भी किन्तु वाहिनी, मैं क्या करूं ?"

—(पृष्ठ 196)

"कौन जानता है, मेरे ऊपर दुख का कौन-सा पहाड़ गिरने वाला है। अभी तक तो मैं जिन्दा हूं। भगवान मेरे प्रति इतना निर्दयी क्यों हो गया है।" —(पृष्ठ 197)

"कल तक मेरा इरादा था कि एक शब्द भी तब तक नहीं बोलूंगी जब तक कि वे मुझसे नहीं बोलते हैं। मैं यह देखना चाहती हूं कि मैं किस सीमा तक अपनी भावनाओं को नियन्त्रित कर सकती हूं। वाहिनी, तुम भी मेरे लिए भगवान से प्रार्थना करो कि मुझ जैसी लड़की की इतनी कठिन परीक्षा क्यों ली जा रही है। वाहिनी, मैं उनसे इतना अधिक डरती हूं कि विवाह के पश्चात् प्रथम 10-15 दिनों के दौरान कामोत्तेजक सम्मोहन भी स्वप्न के समान हो गया है।"

"मैं उनसे यह पूछने का साहस नहीं कर सकती कि क्या आपके कपड़े धुलने जाने हैं। इस समय मेरी हैसियत अधिकार के तौर पर किसी वेतन के बिना नौकरानी की हैसियत मात्र है।

केवल मेरे प्रति ही इतनी अन्यमनस्कता क्यों ? वाहिनी, मैं तुम्हारी गोद में अपना सिर रखकर रो लेना चाहती हूं। वाहिनी, तुम पुणे जल्दी से जल्दी आ जाओ।

प्रत्येक सुबह उठकर मैं यह महसूस करती हूं कि वे आज मुझसे बोलेंगे, किन्तु हर दिन अपनी आशाओं के विपरीत आशा लगाए रखती हूं। वाहिनी, आखिर क्या होगा ? अब आशा की एक किरण भी शेष नहीं बची है।

Agamnigam Digi

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

परसों की बात है, मैं उत्तेजित हो गई और गुस्से में बोल गई। "तुम मुझसे नफरत करते हो, क्या मैं अपने माता-पिता के मकान पर पेट नहीं भर सकती थी ?"

"नफरत" शब्द के कारण वे क्रुद्ध हो गए। उन्होंने कहा, "यदि तुम इस प्रकार बात करोगी, तो मुझसे बुरा कोई आदमी भी नहीं होगा।"

यदि ऐसे चलता रहा, तो मैं तुम्हारे पास सोने नहीं आऊंगा। इससे इसका अर्थ यह है कि आंसू बहाने की इजाजत भी नहीं है। वे मुझसे कैसे कहते हैं कि तुम मुझसे इतनी जल्दी ऊब गई हो ? ऐसे व्यक्ति से मैं क्या कहूं। एक बार तो ऐसा महसूस होता है कि वे मेरी गिनती करते ही नहीं। दूसरे क्षण मैं यह महसूस करती हूं कि वे मेरा बहुत ध्यान रखते हैं। किन्तु चिड़चिड़े स्वभाव के कारण उन्हें शांत करने में कुछ समय लगेगा। जिस दिन उनका अहम कम हो जाएगा, उस दिन कोई भी व्यक्ति इतना सौभाग्यशाली नहीं होगा जितना मैं होऊंगी। किन्तु उस दिन तक यह निश्चित नहीं है कि क्या मैं जीवित भी रहूंगी।

—(पृष्ठ 197)

37. दूसरे पैरा में वह यह संकेत देते हुए अपनी बात प्रारम्भ करती है कि मैं परेशानी महसूस कर रही हूं और मेरी बहुत ही इच्छा है कि वाहिनी मेरे पास इस समय होती। तीसरे पैरा में स्पष्ट रूप से वह कहती है कि उसकी ससुराल में जितने भी व्यक्ति हैं, सभी बहुत अच्छे हैं और सभी उसे प्यार करते हैं, किन्तु एक मकान में अनेक व्यक्तियों के होने के कारण उसे स्वतन्त्र रूप से कार्य करने का अवसर नहीं मिलता। यह अंतिम पंक्ति—"हर समय मेरे मन में कुछ भय रहता है, जिसके कारण गड़बड़ हो जाती है"—उसके अदृश्य भय के प्रथम चिह्न का आरम्भ है, जिसका पता लगाने में वह असमर्थ थी। चौथा पैरा कुछ महत्त्वपूर्ण है जिससे यह पता चलता है कि उसकी जो भी भावनाएं रही हों, उसने वाहिनी को यह कसम दिलाई थी कि वह इस संबन्ध में किसी से भी बात न करे जो कि वह उक्त पत्र में लिखने जा रही थी। उसका कहना यह है कि उसे बहुत कष्ट है और वह यह संकेत देती है कि वह भरपूर रो लेती है और वह इसका जो कारण बताती है, वह यह है कि मैं बराबर गलतियां करती रही हूं और अपने पति से अनेक बार बात भी की, किन्तु उनका मौन अत्यधिक कष्टदायी था, जिसके बारे में वह क्रुद्ध भी हो जाती थी। अंतिम प्रभाग में पहली बार वह अपने पति के विरुद्ध इस प्रभाव की प्रत्यक्ष शिकायत करती है कि उन्हें उसकी (मंजु) देखभाल करने का समय ही नहीं। उसी पैरा में वह अपने कष्ट का वर्णन करती है और यह शिकायत करती है कि भगवान मेरे प्रति

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

मकान में बहुत से व्यक्ति हैं और वे मुझसे बड़े हैं और इस प्रकार मैं कोई भी काम स्वतन्त्र रूप से करने का साहस नहीं करती। हर समय मेरे मन में कुछ भय रहता है, जिसके कारण गड़बड़ हो जाती है।

भगवान जानता है कि मैं वहां कब आ सकूंगी ? जिस मुद्दे के संबंध में हमारा विचार-विमर्श हुआ था, वह वैसा ही है जैसे कि था। वाहिनी, मेरी कसम, तुम इसके बारे में किसी से भी बात न करना। मुझे बहुत कष्ट है। किन्तु मैं कर भी क्या सकती हूं। उसके अलावा कोई दूसरा रास्ता भी नहीं है और मुझसे बार-बार वही गलती हो जाती है। वह यह है कि मैं सामने जाती हूं और दस बार बात करती हूं, फिर जब वे नहीं बोलते, तो मैं गुस्सा हो जाती हूं। वाहिनी, सिवाय भरपूर आंसू बहा लेने के मेरे हाथ में कुछ भी नहीं है। कम-से-कम आज तक इस व्यक्ति को अपनी पत्नी की ओर ध्यान देने का समय ही नहीं मिला; चलो छोड़ो भी किन्तु वाहिनी, मैं क्या करूं ?"

—(पृष्ठ 196)

"कौन जानता है, मेरे ऊपर दुख का कौन-सा पहाड़ गिरने वाला है। अभी तक तो मैं जिन्दा हूं। भगवान मेरे प्रति इतना निर्दयी क्यों हो गया है।" —(पृष्ठ 197)

"कल तक मेरा इरादा था कि एक शब्द भी तब तक नहीं बोलूंगी जब तक कि वे मुझसे नहीं बोलते हैं। मैं यह देखना चाहती हूं कि मैं किस सीमा तक अपनी भावनाओं को नियन्त्रित कर सकती हूं। वाहिनी, तुम भी मेरे लिए भगवान से प्रार्थना करो कि मुझ जैसी लड़की की इतनी कठिन परीक्षा क्यों ली जा रही है। वाहिनी, मैं उनसे इतना अधिक डरती हूं कि विवाह के पश्चात् प्रथम 10-15 दिनों के दौरान कामोत्तेजक सम्मोहन भी स्वप्न के समान हो गया है।"

"मैं उनसे यह पूछने का साहस नहीं कर सकती कि क्या आपके कपड़े धुलने जाने हैं। इस समय मेरी हैसियत अधिकार के तौर पर किसी वेतन के बिना नौकरानी की हैसियत मात्र है।

केवल मेरे प्रति ही इतनी अन्यमनस्कता क्यों ? वाहिनी, मैं तुम्हारी गोद में अपना सिर रखकर रो लेना चाहती हूं। वाहिनी, तुम पुणे जल्दी से जल्दी आ जाओ।

प्रत्येक सुबह उठकर मैं यह महसूस करती हूं कि वे आज मुझसे बोलेंगे, किन्तु हर दिन अपनी आशाओं के विपरीत आशा लगाए रखती हूं। वाहिनी, आखिर क्या होगा ? अब आशा की एक किरण भी शेष नहीं बची है।

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



परसों की बात है, मैं उत्तेजित हो गई और गुस्से में बोल गई। "तुम मुझसे नफरत करते हो, क्या मैं अपने माता-पिता के मकान पर पेट नहीं भर सकती थी ?"

"नफरत" शब्द के कारण वे क्रुद्ध हो गए। उन्होंने कहा, "यदि तुम इस प्रकार बात करोगी, तो मुझसे बुरा कोई आदमी भी नहीं होगा।"

यदि ऐसे चलता रहा, तो मैं तुम्हारे पास सोने नहीं आऊंगा। इससे इसका अर्थ यह है कि आंसू बहाने की इजाजत भी नहीं है। वे मुझसे कैसे कहते हैं कि तुम मुझसे इतनी जल्दी ऊब गई हो ? ऐसे व्यक्ति से मैं क्या कहूं। एक बार तो ऐसा महसूस होता है कि वे मेरी गिनती करते ही नहीं। दूसरे क्षण मैं यह महसूस करती हूं कि वे मेरा बहुत ध्यान रखते हैं। किन्तु चिड़चिड़े स्वभाव के कारण उन्हें शांत करने में कुछ समय लगेगा। जिस दिन उनका अहम कम हो जाएगा, उस दिन कोई भी व्यक्ति इतना सौभाग्यशाली नहीं होगा जितना मैं होऊंगी। किन्तु उस दिन तक यह निश्चित नहीं है कि क्या मैं जीवित भी रहूंगी।

—(पृष्ठ 197)

37. दूसरे पैरा में वह यह संकेत देते हुए अपनी बात प्रारम्भ करती है कि मैं परेशानी महसूस कर रही हूं और मेरी बहुत ही इच्छा है कि वाहिनी मेरे पास इस समय होती। तीसरे पैरा में स्पष्ट रूप से वह कहती है कि उसकी ससुराल में जितने भी व्यक्ति हैं, सभी बहुत अच्छे हैं और सभी उसे प्यार करते हैं, किन्तु एक मकान में अनेक व्यक्तियों के होने के कारण उसे स्वतन्त्र रूप से कार्य करने का अवसर नहीं मिलता। यह अंतिम पंक्ति—"हर समय मेरे मन में कुछ भय रहता है, जिसके कारण गड़बड़ हो जाती है"—उसके अदृश्य भय के प्रथम चिह्न का आरम्भ है, जिसका पता लगाने में वह असमर्थ थी। चौथा पैरा कुछ महत्त्वपूर्ण है जिससे यह पता चलता है कि उसकी जो भी भावनाएं रही हों, उसने वाहिनी को यह कसम दिलाई थी कि वह इस संबन्ध में किसी से भी बात न करे जो कि वह उक्त पत्र में लिखने जा रही थी। उसका कहना यह है कि उसे बहुत कष्ट है और वह यह संकेत देती है कि वह भरपूर रो लेती है और वह इसका जो कारण बताती है, वह यह है कि मैं बराबर गलतियां करती रही हूं और अपने पति से अनेक बार बात भी की, किन्तु उनका मौन अत्यधिक कष्टदायी था, जिसके बारे में वह क्रुद्ध भी हो जाती थी। अंतिम प्रभाग में पहली बार वह अपने पति के विरुद्ध इस प्रभाव की प्रत्यक्ष शिकायत करती है कि उन्हें उसकी (मंजु) देखभाल करने का समय ही नहीं। उसी पैरा में वह अपने कष्ट का वर्णन करती है और यह शिकायत करती है कि भगवान मेरे प्रति

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

इतना निर्दयी क्यों है। इसके आगे वह अपनी ये भावनाएं व्यक्त करती है कि कामोत्तेजक सम्मोहन, जो कि उसने अपने विवाह के कुछ दिन बाद अनुभव किया था, पूरी तरह से समाप्त हो गया है और वह टूटे हुए सपने के समान या खोए हुए स्वर्ग के समान हैं। इसके बाद वह अपनी दुर्गति का इस प्रकार वर्णन करती है कि वह वेतन के बिना नौकरानी के रूप में है। पुन: उसकी शिकायत यह है कि उसके प्रति अन्यमनस्कता दिखाई जाती है। अंत में आशाओं के विपरीत वह आशा करती है कि किसी दिन वह (उसके पति) उससे बोलेगा और समस्याओं पर विचार-विमर्श करेगा, किन्तु उधर से कोई भी संवेदनशीलता दर्शित नहीं होती। बाद में वह विशिष्ट घटना के प्रति निर्देश करती है और वह उससे यहां तक कह देती है कि आप मुझसे नफरत करते हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि इससे उसका पति क्रुद्ध हो गया, जिसने उसकी इस टिप्पणी का बहुत अधिक ही विरोध किया। पुन: एक ही सांस में उस पैरा के अंत में जबकि वह यह कहती है कि मेरा पति मेरी परवाह नहीं करता, तो भी वह तुरन्त अपने मन को बदल देती है और यह कहती है कि वे (उसके पति) उसका काफी ध्यान रखते हैं, किन्तु उनके चिड़चिड़े स्वभाव के कारण उसे शान्त करने में कुछ समय लगेगा। उसकी भावनाओं में अचानक फिर तब्दीली होती है, जबकि वह यह कहती है कि जब मेरे पति का अहम कम हो जाएगा, तो उससे अधिक कोई भी सौभाग्यशाली नहीं होगा। अगली पंक्ति कुछ महत्त्वपूर्ण है क्योंकि वह इस ओर संकेत करती है कि जब तक वह दिन आएगा, कदाचित मैं जीवित ही नहीं रहूंगी।

38. इस पत्र का सावधानी के साथ अवलोकन करने से निम्नलिखित बातें प्रकट होती हैं—

(1) वह अपनी ससुराल जाने के बाद खोई-खोई रही और छोटी-छोटी बातें अपने दिल में रख लेती थी और थोड़े से प्रकोपन की स्थिति में भी वह अत्यधिक भावुक और संवेदनशील हो जाती थी।

(2) वह एक ही समय पर आशावाद और निराशावाद दोनों की मिश्रित भावनाएं प्रदर्शित करती थी।

(3) सरलता के साथ यह निष्कर्ष निकाला जा सकता कि उसे अपने पति के विरुद्ध कोई भी गम्भीर शिकायत नहीं थी, किन्तु वह इसलिए दुखी और उदास हो जाया करती थी, क्योंकि उसकी ओर उचित ध्यान नहीं दिया जा रहा था। जिसके सम्बन्ध में वह सोचती थी कि उसकी ओर वैसा ध्यान दिया जाए।

(4) ऐसा कोई संकेत नहीं है कि उसे अपने पति से किसी खतरे की आशा थी, और न ही यह दर्शित करने के लिए कोई बात मौजूद

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



है कि स्थिति इतनी नाजुक हो गई थी कि उसके परिणामस्वरूप विपत्ति पड़ने वाली थी। कुछ गुप्त और छिपे हुए ऐसे संकेत हो सकते हैं, जिन्हें वह लिखित रूप में प्रकट करने के लिए तैयार नहीं थी; वे क्या थे, स्पष्ट नहीं है।

(5) उस पत्र को बारीकी से पढ़ने और उसका विश्लेषण करने से स्पष्ट रूप से कम-से-कम दो बातों का पता चलता है—

(क) यदि वह अत्यधिक विषण्ण थी,

(ख) यह कि उसके मनोविकृत स्वभाव के परिणामस्वरूप उसमें अपना जीवन समाप्त करने या आत्म-हत्या करने की स्पष्ट प्रवृत्ति मौजूद थी।

39. यह संभावना उन विभिन्न पत्रों से स्पष्ट हो जाती है, जोकि हमने प्रोद्धृत किए हैं। वास्तव में यदि वह बात ऐसी नहीं थी, तो यह कैसे संभव हो सकता था कि अपने पति के विरुद्ध कोई शिकायत न करते हुए, वह न केवल वाहिनी को बल्कि अंजु को भी यह संकेत देती है कि कदाचित वह जीवित न रहे। वह ऐसी किसी धमकी का उल्लेख नहीं करती है, जो कि उसके पति ने किसी भी समय या कहीं भी उसे दी हो।

(6) पत्र में जो बातें लिखी हैं, उनके परिणामस्वरूप हमें निश्चित रूप से यह निष्कर्ष निकालना होगा कि मंजु स्वयं एकाकी और असहाय महसूस करती थी और उस समय से जबसे वह ससुराल आई थी, उसे जंगम वस्तु या आवश्यक बुराई मानकर उसके साथ व्यवहार किए जाने के सिवाय और कोई व्यवहार नहीं किया जाता था।

40. इस प्रकार पत्रों में जो परिवर्णन किए गए हैं, उनसे निरापद रूप से हम यह अभिनिर्धारित कर सकते हैं कि हताशा और कुंठा के कारण उसके द्वारा आत्म-हत्या किए जाने की स्पष्ट संभावना और प्रवृत्ति थी। ऐसा प्रतीत होता है कि वह अपने विवाहित जीवन से ऊब गई थी, किन्तु उसने फिर भी आशाओं के विपरीत आशा की थी कि कदाचित स्थिति में सुधार हो जाए। किसी भी स्थिति में इस तथ्य को कि वह आत्म-हत्या कर सकती है, निरापद रूप से अपवर्जित या समाप्त नहीं किया जा सकता। यह हो सकता है कि उसके पति ने उसकी हत्या की हो, किन्तु जब दो मत युक्तियुक्त रूप से संभव हों तो फायदा अभियुक्त को मिलना चाहिए। हम अपने मत का समर्थन करने की दृष्टि से राबर्ट जे० कास्टेंब्राम के, जोकि एक प्रख्यात मनोरोग चिकित्सक था, कुछ अवतरणों को प्रोद्धृत करना चाहेंगे, जिनमें उसने अपनी पुस्तक में, जिसका शीर्षक "डेथ, सोसायटी एण्ड ह्यूमन एक्सपीरियन्स" था, उन करणों, परिस्थितियों, मुद्राओं और मनोवेगों का

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

विश्लेषण किया है, जोकि किसी व्यक्ति को आत्म-हत्या करने के लिए प्रेरित कर सकते हैं। विद्वान ग्रंथकार ने यह लिखा है कि ऐसा व्यक्ति जोकि मनोविकृत स्वभाव का है और विषण्णता तथा कुंठा से पीड़ित है, किसी अन्य व्यक्ति की अपेक्षा आत्म-हत्या करने के लिए अधिक प्रेरित होता है। अपने मत के समर्थन में हम उसके ग्रंथ से कतिपय अवतरण प्रोद्धृत्त करते हैं—

"तथ्य यह है कि कुछ लोगों का, जो आत्म-हत्या करते हैं, वर्गीकरण मनोविकृत या अत्यधिक विक्षुब्ध व्यक्तियों के रूप में किया जा सकता है। —(पृष्ठ 242)

यदि हमारा सम्बन्ध बहुत बड़ी जनसंख्या में आत्म-हत्या की अधिसंभाव्यता से है, तो मानसिक और मनोवेग विषयक विकृति ऐसी सुसंगत अस्थिर स्थिति है जिस पर विचार करना पड़ेगा। —(पृष्ठ 243)

और वास्तविक परिस्थितियों को अत्यधिक तोड़-मरोड़कर ही यह दावा किया जा सकता है कि सभी आत्म-हत्याएं पागलपन के आवेश में की जाती हैं। —(पृष्ठ 243)

यदि इस दृष्टि से देखा जाए, तो आत्म-हत्या केवल उन ढंगों में से है जिसमें समाज का सापेक्ष रूप से कमजोर कोई व्यक्ति उस संघर्ष में अपने आपको समाप्त कर देता है जोकि जंगल में किए जाने वाले संघर्ष के समान होता है। —(पृष्ठ 243)

व्यष्टि अपने आपको इसलिए नष्ट नहीं करता है, क्योंकि उसे मरणोपरांत उच्च ख्याति प्राप्त करने या अमरत्व प्राप्त लोगों में स्थान मिलने की आशा रहती है। उसके बदले वह ऐसे जीवन से अपने आपको अलग कर लेना चाहता है, जिसका गुण मृत्यु से भी अधिक बुरा प्रतीत होता है। —(पृष्ठ 245)

आशा और प्रगति की नवजाग्रत भावना निराशा की भावना से और मौनभाव से कष्ट सहने की भावना से तुरन्त इस प्रकार ही घिर जाती है कि कभी-कभी ऐसा प्रतीत होता है कि मृत्यु ही उसे निगल सकती है। —(पृष्ठ 245)

प्रतिशोध की हवाई कल्पनाएं और आत्म-हत्या के साथ उनका सहयोजन ऐसे लोगों के लिए सुपरिचित हैं, जो मनोवेग विषयक कष्ट में उनकी ओर ध्यान देते हैं। —(पृष्ठ 251)

"ऐसे लोग जो प्रतिशोध से भिन्न कारणों से आत्म-हत्या करने की कोशिश करते हैं, इस उपधारणा के आधार पर भी कार्य कर सकते हैं कि, एक अर्थ में, वे उसके प्रभाव का फायदा प्राप्त करने के कारण मृत्यु के बाद भी जीवित रहेंगे।

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



* * *

आत्म-हत्या का शिकार व्यक्ति उन आत्म-प्रत्याशाओं का शिकार हो सकता है जोकि पूरी नहीं हुई हैं। निराशा और कुंठा की भावना दोनों में ऐसी बात होती है, जिसका अनुभव वह व्यक्ति करता है जो आत्म-हत्या के जरिए प्रतिशोध लेने की कोशिश करता है......... तथापि, कुछ लोगों के लिए संकट का क्षण उस समय आता है, जबकि ऐसी भ्रांति इतनी स्पष्ट और कष्टदायक हो जाती है कि उसे सहन नहीं किया जा सकता। यदि किसी चीज को समाप्त होना है, तो वह स्वयं व्यक्ति ही हो सकता है, न कि, कदाचित्, ऐसे अत्यधिक उच्च मानक, जिनके द्वारा वह निर्णय किया गया है.........वारेन ब्रीड और उसके सहयोगियों ने यह निष्कर्ष निकाला कि असफलता की भावना ऐसे अनेक व्यक्तियों में महत्वपूर्ण होती है, जो अपना जीवन स्वयं ही समाप्त करते हैं।"

—(पृष्ठ 252)

41. ऊपर व्यक्त मत मंजु के मामले को पूरी तरह से लागू हैं। सत्यनिष्ठा के साथ उसने यह विश्वास किया था कि अपने पति के साथ उसका जो पवित्र संगम हुआ है, उसके परिणामस्वरूप उसे स्वास्थ्य और खुशी प्राप्त होगी किन्तु दुर्भाग्यवश, ऐसा प्रतीत होता है कि उसका अन्त ऐसे अवसादप्रद विवाह में हुआ, जिन्होंने ऊपर बताई गई परिस्थितियों को देखते हुए उसे इतनी एकाकी स्थिति में छोड़ दिया था और इतनी संवेगात्मक विकृति उत्पन्न कर दी थीं, जिसके परिणामस्परूप इतनी कुण्ठा और निराशा भर गई कि वह अपना जीवन समाप्त करने के लिए विवश हो गई। इस सम्बन्ध में कोई सन्देह नहीं हो सकता कि मंजु न केवल संवेदनशील और भावुक स्त्री थी, बल्कि उसमें अत्यधिक प्रभावित होने का गुण भी मौजूद था और पत्रों से ऐसा पता चलता है कि उसके मष्तिक और शरीर के बीच लगातार संघर्ष चल रहा था और दुर्भाग्यवश उन परिस्थितियों के कारण, जो कि विद्यमान थीं, उसके जीवन को समाप्त करने में शीघ्रता हुई। ऐसे लोग जिनका ऐसा मनोविकृत दर्शन होता है या जिनके मस्तिष्क का इस प्रकार झुकाव होता है, सदैव आदर्श के सपने देखते हैं और यदि वह आदर्श असफल रहता है, तो वह असफलता उन्हें अपने जीवन को समाप्त करने की ओर ले जाती है, क्योंकि वे यह महसूस करते हैं कि उनके जीवन में अब कुछ आकर्षण शेष नहीं रह गया है।

42. मेरी के० हिंशलिफ, डगलस हूपर और एफ० जॉन रोबर्ट्स ने अपने "मेलनकोली मैरेज" नामक ग्रन्थ में यह मत व्यक्त किया है—

"आत्म-त्हया करने के प्रयत्न के मामलों के अध्ययन से उन वैवाहिक समस्याओं के जिनके परिणामस्वरूप वह कार्य किया जाता है बड़े

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



प्रभाव का पता चलता है। 100 लगातार मामलों के हमारे अध्ययन (रोबर्ट्स और हूपर 1969) से हमारा निष्कर्ष यह है कि यदि रोगियों के अपने पारस्परिक पर्यावरण में अन्य व्यक्तियों के साथ उनके परस्पर व्यवहार पर विचार किया जाता है तो उनमें से अधिकांश को नहीं समझा जा सकता।" —(पृष्ठ 5)

43. ऐसे व्यक्तियों की ऐसी विशिष्ट मनोवृत्ति होती है जोकि उनमें अत्यधिक प्रेम और भक्ति उत्पन्न करती है किन्तु जब उन्हें निराशा का सामना करना पड़ता है या जब कि वे अपने पर्यावरण को इतना बुरा पाते हैं और अपने अनुसार नहीं पाते हैं, तो वे जीवन के प्रति सभी आकर्षण खो देते हैं। इन मनोभावों का वर्णन करते हुए ग्रंथकारों ने यह मत व्यक्त किया है—

"'निराशा', 'हताशा', 'घृणा' और 'दयनीयता', खिन्नचित्त व्यक्ति का उसके पर्यावरण से सम्बन्ध की ओर ध्यान आकर्षित करती हैं। ग्रंथिल खिन्नचित्त व्यक्ति प्रायः उस तथ्य के सम्बन्ध में अपनी ओर से कहने के लिए संघर्ष करेगा, जोकि न केवल किसी प्रकार से भविष्य की ओर संकेत करता प्रतीत होता है और इस प्रकार जीवन के प्रति कोई संकेत नहीं करता—बल्कि यह कि संसार वास्तव में भिन्न दिखाई पड़ता है।" —(पृष्ठ 7)

44. कोलरिज ने अपने ग्रंथ "ओड टू डिजेक्शन" में अपने प्रसामान्य वक्रोक्तिपूर्ण ढंग से ऐसे व्यक्तियों के मनोवेगों के सम्बन्ध में बहुत ही सुन्दरता के साथ इस प्रकार स्पष्ट किया है—

"मैं उन सबको काफी स्पष्ट रूप से इस प्रकार देखता हूं—मैं देखता हूं, किन्तु महसूस नहीं करता, कि वे कितने सुन्दर हैं;"

45. एक दूसरे स्थान पर ग्रंथकार (हिंशलिफ, हूपर और जॉन) ने यह अन्तिम निष्कर्ष निकाला है कि टूटे हुए वैयक्तिक संबंध नैदानिक कार्य करने में बड़ी भूमिका निभाते हैं और इस सम्बन्ध में इस प्रकार मत व्यक्त किया है—

"प्रारम्भ में हमने ये विचार आत्म-हत्यायें करने के प्रयत्न के मामलों के अध्ययन पर लागू किए (रोबर्ट्स और हूपर 1969) और यद्यपि हमने यह धारणा नहीं की थी कि वे सभी निश्चित रूप से खिन्नचित्त व्यक्ति थे, तथापि हमने उनके व्यवहार के दूरस्थ और निकटस्थ कारणों की जांच की और यह पाया कि टूटे हुए व्यक्तिगत सम्बन्धों ने नैदानिक कार्य करने में बड़ी भूमिका निभाई थी।" —(पृष्ठ 50)

इन ग्रंथकारों के मत मंजु की प्रकृति, मानसिक स्थिति और उस दुर्भाग्यपूर्ण जीवन

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



की जोकि उसके विवाह के चार मास के भीतर समाप्त हो गया था, परिस्थितियों को उपयुक्त रूप से और प्रत्यक्षत: लागू होते हैं।

46. हमने इन परिस्थितियों की ओर इसलिए संकेत किया क्योंकि उच्च न्यायालय ने इस तथ्य पर बहुत जोर दिया है कि अभियोजन पक्ष ने जो साक्ष्य पेश किया है, वह आत्म-हत्या की सम्भावना को पूर्णत: अपवर्जित करता है और मन्जु की मृत्यु कायरतापूर्ण हत्या के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है।

47. अब हम उस मौखिक मृत्युकालिक कथन के अगले भाग पर विचार करेंगे जिसकी बाबत यह कहा गया है कि मृतक ने अपने माता-पिता और मित्रों से किया था। कुछ कथन जिनका मन्जु की मृत्यु से या उन परिस्थितियों से, जिनके परिणामस्वरूप उसकी मृत्यु हुई थी, आकस्मिक सम्बन्ध है, साक्ष्य अधिनियम की धारा 32 के अधीन निस्संदेह ग्राह्य हैं, जैसा कि हमने अभिनिर्धारित किया है, किन्तु अन्य कथन जिनका मृत्यु से निकट का कोई संबंध नहीं है या यदि है भी तो जिनका मृत्यु से दूर का या अप्रत्यक्ष सम्बन्ध है, ग्राह्य नहीं होंगे। तथापि, दुर्भाग्यवश दोनों प्रकार के कथन इतनी जटिलता के साथ मिश्रित कर दिए गए हैं कि उस भाग का पता लगाने की जोकि ग्राह्य है या ग्राह्य नहीं है, कोशिश करनी होगी।

48. साक्षियों के साक्ष्य का विवेचन करने से पूर्व, हम उस पृष्ठभूमि में, जिसमें मौखिक कथनों पर विचार करना होता है, कुछ प्रारम्भिक टिप्पणियों का उल्लेख कर सकते हैं। ऐसे सभी व्यक्ति, जिनके बारे में यह कहा गया है कि मन्जु ने उनके समक्ष मौखिक कथन उस समय किए थे, जबकि वह अन्तिम बार बीड गई थी, निकट के सम्बन्धी और मित्र हैं। निकट सम्बन्ध और स्नेह को देखते हुए साक्षी की स्थिति में किसी भी व्यक्ति की स्वभावत:, यह प्रवृत्ति होगी कि वह ऐसे तथ्यों को बढ़ा-चढ़ाकर पेश करे और उसमें ऐसे तथ्यों को जोड़ दे जो कि उनके समक्ष बिलकुल ही कहे नहीं गए हों। यह नहीं कि यह बात जानबूझकर की जाती है, बल्कि अनजाने भी की जाती है, किन्तु मृतक के प्रति जो प्यार और स्नेह होता है, वह कल्पित हत्यारे के विरुद्ध मानसिक घृणा उत्पन्न करता है और इसी कारण से न्यायालय को ऐसे साक्ष्य की परीक्षा बहुत ही सतर्कता और सावधानी से करनी होती है। यदि साक्षी सच्चाई के किसी भाग या कदाचित पूरी सच्चाई ही बयान कर रहे हैं तो भी वे अभियुक्त व्यक्ति के विरुद्ध प्रतिशोध या बदले की भावना से प्रेरित होते हैं और इस प्रक्रिया में कतिपय ऐसे तथ्यों की जो न कहे जा सकते हों या न कहे जा सकते थे, कल्पना इस प्रकार की जा सकती है कि साक्षियों ने उन्हें यह सुनिश्चित करने की दृष्टि से अनजाने ही कहा होगा जिससे कि अपराधी को दण्डित किया जा सके। मनुष्य की यह मनोवृत्ति है और इसके सम्बन्ध में कुछ भी नहीं किया जा सकता।

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



49. अब हम ऐसे सम्बन्धित साक्षियों के साक्ष्य पर विचार करना चाहेंगे जोकि, यदि उन्हें पत्रों के साथ-साथ पढ़ा जाए तो, मृतक की मृत्यु से सम्बन्धित कारणों या परिस्थितियों से सम्बन्धित साक्ष्य की संहत कड़ी पेश करते हैं। अभियोजन पक्ष के अनुसार मन्जु बीड अन्तिम बार 25-5-82 को गई थी, जहां कि वह 3 जून, 1982 तक उस समय तक ठहरी रही, जबकि अपीलार्थी का पिता उसे वहां से ले आया। अन्य शब्दों में, मन्जु की परेशानियों और कष्टों के सम्बन्ध में वर्णन उस समय किया गया था जबकि वह अन्तिम बार आई थी, न कि उसके पहले। इन कथनों के बारे में यह अभिकथन किया गया है कि वे मन्जु के पिता रामेश्वर चित्तलांग (अभियोजन साक्षी 2), रेखा (अभियोजन साक्षी 3) जोकि मन्जु की मित्र थी, और जिसके प्रतिपत्र, प्रदर्श 33, में वाहिनी के रूप में निर्देश किया गया है, अन्जु (अभियोजन साक्षी 6), जोकि मन्जु की बहन है और जिसे पत्र (प्रदर्श 30 और 32) लिखे गए थे और अभियोजन साक्षी-20, बाई, जोकि मन्जु की मां थी, के समक्ष किए गए थे। मीना महाजन (अभियोजन साक्षी-5) की परीक्षा भी की गई किन्तु हम दो कारणों से इस साक्षी के साक्ष्य पर भरोसा करने की स्थिति में नहीं हैं—(1) मन्जु ने जो पत्र लिखे थे, उनमें से उसका कहीं भी नाम दिखाई नहीं पड़ता, और (2) मन्जु ने प्रत्यक्ष रूप से कुछ भी नहीं कहा था, किन्तु उसे केवल अभियोजन साक्षी-2 द्वारा उल्लिखित घटनाओं के सम्बन्ध में सूचना मात्र मिली थी। इस प्रकार का अप्रत्यक्ष साक्ष्य विश्वास करने योग्य नहीं है।

50. सबसे पहले हम (मन्जु के पिता) रामेश्वर चितलांग, अभियोजन साक्षी-2 के साक्ष्य पर विचार करेंगे। हम उसके साक्ष्य के सुसंगत भाग का संक्षेप में वर्णन करेंगे, क्योंकि अन्य भागों का सम्बन्ध इस बात से है कि विवाह कैसे हुआ था और पति-पत्नी मधुयामिनी मनाने कैसे गए थे, जो बातें हमारे प्रयोजन के लिए सुसंगत नहीं हैं। साक्षी का यह कथन है कि जब मन्जु अपने मामा के साथ बीड आई थी, तो मामा ने यह पाया कि वह कुछ परेशान-सी है और जब उसने उससे यह पूछा कि क्या तुम अपने पति के घर में खुश नहीं हो, तो उसने कहा कि मैं अपने पति के साथ बहुत खुश नहीं हूं, क्योंकि मैंने यह देखा कि मेरा पति मेरे साथ बहुत प्रसन्न नहीं रहता, बल्कि वास्तव में वह मुझसे घृणा करता है। ये तथ्य पति और पत्नी के बीच प्राय: घरेलू झगड़ों के परिणाम हैं, क्योंकि इस कथन के बारे में यह नहीं कहा जा सकता कि मन्जु की मृत्यु से उसका सम्बन्ध प्रत्यक्ष या निकट का इस प्रकार है जिससे कि वह साक्ष्य अधिनियम की धारा 32 के अधीन ग्राह्य हो सके।

51. उसके साक्ष्य से यह प्रतीत होता है कि अपनी पुत्री से इस प्रकार का वर्णन सुनने के बाद उसने उसे यह सलाह दी कि वह अपने ससुराल की

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh


परिस्थिति और वातावरण से समझौता कर ले। अग्राह्य होने के अलावा ऐसा प्रतीत नहीं होता है कि उससे अपीलार्थी के विरुद्ध अभिकथित हत्या का मामला सिद्ध करने में अभियोजन पक्ष को कोई सहायता मिलेगी। साक्षी ने और आगे यह कहा है कि चूंकि अभियुक्त के बाबा की मृत्यु हो चुकी थी, इसलिए मैं अपनी पत्नी और मन्जु के साथ पुणे गया था। चूंकि वहां शोक-संतप्त कुटुम्ब के प्रति अपनी संवेदना प्रकट करने के लिए कमोवेश औपचारिक रूप से जाना था, इसलिए वह मन्जु को अभियुक्त के घर ही छोड़ आया था। उसके साक्ष्य का एकमात्र वह भाग, जिसका अवलम्ब अभियोजन पक्ष ने लिया है, यह है कि उसने यह देखा कि मन्जु बहुत ही परेशान और अशान्त रहती है और बिरधीचन्द से (अभियुक्त का पिता) यह निवेदन किया कि वह मन्जु को धनराज के मकान पर ले जाने की इजाजत दे दे, जोकि उसने दे दी। धनराज के मकान पर पहुंचने पर साक्षी का कहना यह है कि मन्जु बुरी तरह से फूट-फूट कर रो पड़ी और अपनी मां की बाहों में समा गई। मन्जु की यह स्थिति, जिसे साक्षी ने स्वयं अपनी आंखों से देखा था, निस्सदेह उस बात का मुख्य साक्ष्य होगा, जो कुछ कि उसने देखा और महसूस किया। यद्यपि वह ऐसा नहीं था, जिसका सम्बन्ध किसी भी प्रकार से साक्ष्य अधिनियम की धारा 32 से हो। किन्तु मात्र इस परिस्थिति से निरापद रूप से यह निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता कि मन्जु को अपने पति से अपने जीवन के लिए किसी भी प्रकारके गम्भीर खतरे की आशंका थी।

52. इसके अलावा साक्षी ने यह कथन किया है कि उसने मन्जु द्वारा की गई शिकायतों के बारे में बिरधीचन्द को बताया। अपीलार्थी, शरद को बुलवाया गया और वह चुपचाप अपने पिता की बात सुनता रहा, किन्तु साक्षी को यह महसूस हुआ कि बिरधीचन्द ने अपने पुत्र से जो भी कहा है, उसका उस पर (अपीलार्थी पर) कोई भी गम्भीर प्रभाव पड़ा हुआ नहीं जान पड़ता और वह कमरे से बाहर चला गया। यह तो मात्र राय पर आधारित साक्ष्य है, और इसी कारण ग्राह्य नहीं है। फिर भी अभियुक्त ने अपने पिता की उपस्थिति में अपने श्वसुर से बहस में पड़ना ठीक नहीं समझा और यही कारण है वह चुप रहा। इससे ऐसा कोई भी निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता कि उसका व्यवहार मन्जु के प्रति किसी भी प्रकार शत्रुतापूर्ण था या यह कि उसका जीवन समाप्त करने के लिए उसके मन में ऐसी कोई भावना थी।

53. इसके आगे साक्षी ने यह कथन किया कि मैंने यह पाया कि मन्जु धनराज के मकान पर रात में हर समय रोती ही रहती थी। बाद में सुबह साक्षी मन्जु को उसके ससुराल ले आया, किन्तु साक्षी की शिकायत यह है कि शरद ने उससे मिलने की परवाह नहीं की और न ही उनमें आपस में कोई बातचीत हुई। तथापि, ये ऐसी छोटी-छोटी परिस्थितियां हैं जोकि वैवाहिक

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



जीवन की घटनाएं हैं और इससे अपीलार्थी के विरुद्ध कोई भी प्रतिकूल निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता।

54. उसके कथन में जो दूसरी शिकायत की गई थी, वह यह थी कि जब उसने शरद की घटनाओं को सुलझाने के लिए स्वेच्छा से प्रस्ताव रखा, तो अपीलार्थी ने रुखाई के साथ उससे यह कहा कि मैं अन्य व्यक्तियों से अपनी कठिनाइयां सुलझवाना नहीं चाहता और शरद के इस रुख पर साक्षी स्वभावतः बहुत ही निराश हुआ था। अभियुक्त का यह आचरण भी ऐसे महत्व का नहीं है जिससे कि कोई प्रतिकूल निष्कर्ष निकाला जा सके। ऐसे कुछ व्यक्ति जिनके मन में गौरव या आत्मसम्मान की भावना रहती है, ये पसन्द नहीं करते कि कोई भी व्यक्ति, चाहे उनका पिता या श्वसुर ही क्यों न हों, उनके व्यक्तिगत मामलों में हस्तक्षेप करे। शायद यही कारण रहा हो जिससे कि शरद का रुख कुछ ठण्डा और कड़ा था। लेकिन कोई बात साबित नहीं होती। वास्तव में अनुभव से यह पता चलता है कि जहां बड़े-बूढ़े लोग पति या उसकी पत्नी के मामलों में दखल देने लगते हैं तो विवाहित पति-पत्नी के सम्बन्धों में गम्भीर बाधा उत्पन्न हो जाती है। इसीलिए अभियोजन साक्षी-2 के कथन से कुछ बात साबित नहीं होती।

55. पुनः, साक्षी ने यह दोहराया कि जब मन्जु उसे विदा करने के लिए नीचे आई, तो उसने यह देखा कि वह सारा समय रोती ही रही। यदि इस लम्बी कहानी को संक्षिप्त कर दिया जाए, तो साक्षी बीड वापस आया और उसने अपने पुत्र प्रदीप को पुणे इसलिए भेजा कि वह वहां से मन्जु को बीड वापस लाए। वहां पहुंचने पर उसे यह जानकारी मिली कि मन्जु और शरद मैसूर, तिरुपति आदि घूमने गए हुए हैं। प्रदीप के बीड वापस लौटने पर धनराज ने साक्षी को यह सूचना दी कि शरद और मन्जु पुणे वापस आ गए हैं और इसी कारण से उसने अपना पुत्र दीपक, मन्जु को वापस लाने के लिए पुणे भेजा। जब मन्जु बीड पहुंची, तो साक्षी ने यह पाया कि वह पूरी तरह से परेशान और भयभीत है। यह कथन मुख्य साक्ष्य के रूप में ग्राह्य होगा। इस छोटी-सी बात का कितना साक्ष्यिक मूल्य है, भिन्न बात है।

56. इसके बाद साक्षी से उसकी पत्नी (अभियोजन साक्षी-20) ने उन घटनाओं का वर्णन किया, जिन घटनाओं का वर्णन मन्जु ने उससे किया था। किन्तु जहां तक कि इस साक्षी का सम्बन्ध है, उसका कोई भी मूल्य नहीं है, क्योंकि मुख्य साक्ष्य अभियोजन साक्षी 20 का ही होगा। तथापि विवाह को पूरी तरह से टूटने से बचाने की साक्षी अत्यधिक परेशान था और इसी कारण से उसने अभियुक्त के निकट परिचित हीरा शारदा नाम के व्यक्ति को बुलवाया जिसने उससे (साक्षी से) यह कहा कि मैं हैदराबाद जा रहा हूं और 4 या 5

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



जून के बाद कुछ हल निकाला जाएगा। ठीक उसी समय उसने साक्षी को यह सलाह दी कि वह मन्जु को पुणे वापस भेजने में कोई जल्दीबाजी न करे।

57. 2 जून, 1982, को बिरधीचन्द, बीड आया और साक्षी से यह कहा कि वह मन्जु को पुणे भेज दे, क्योंकि बिरधीचन्द की पुत्री का विवाह 30 जून, 1982 को निश्चित हुआ था और कोहल (सगाई) 13 जून को होने वाली थी जिससे कि मन्जु उस रस्म के समय मौजूद रहे और व्यवस्था की देखभाल कर सके। साक्षी का कहना यह है कि इसे सुनने के बाद उसने बिरधीचन्द से यह कहा कि मन्जु अत्यधिक भयभीत है और यह कि वह अपनी ससुराल वापस नहीं जाना चाहती और न ही वह (साक्षी) इतनी जल्दी वापस भेजने के लिए राजी है। उसने बिरधीचन्द को यह सुझाव दिया कि चूंकि उसके भतीजे का विवाह 25 जून को बीड में होने वाला है, इसलिए शरद उस विवाह में आएगा और उस समय वह अपने साथ मन्जु को ले जा सकता है। तथापि, बिरधीचन्द ने साक्षी को इस बात के लिए रजामन्द कर लिया कि वह मन्जु को वापस भेज दे और उसे इस बात का आश्वासन दिया कि उसे किसी भी प्रकार की हानि नहीं पहुंचेगी और उसने यह भी वचन दिया कि मन्जु को बीड वापस भेज दिया जाएगा। इस साक्षी के साक्ष्य में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण कथन को यहां इस प्रकार प्रोद्धृत किया जा सकता हैं—

> "मैं अपने मकान की पहली मन्जिल पर बिरधीचन्द से बातचीत कर रहा था। मन्जु ने यह बात जीने से सुनी, मकान के खुले हुए प्रभाग में मुझे बुलवाया और मुझसे यह कहा कि 'मैं किसी भी स्थिति में अभियुक्त के घर जाने का तैयार नहीं हूं।' चूंकि वह तभी से भय की स्थिति में थी या कि उसके मस्तिष्क में अत्यधिक भय व्याप्त था, और उसने यह भी कहा कि मैं अभियुक्त के घर जाने को तैयार नहीं हूं।
>
> *     *     *
>
> इसके बाद, खाना खाने के बाद मैंने मन्जु को बिरधीचन्द के साथ भेज दिया। तब बिरधीचन्द, मन्जु और कविता लगभग 12.30 बजे अपराह्न 3 जून, 1982 को बस से बीड चले गए। मन्जु मेरे मकान के भीतर से ही उस समय तक लगातार रोती रही थी, जब तक कि बस नहीं चली गई। वह अत्यधिक भय की स्थिति में थी।"—[पृष्ठ 197]

58. साक्षी ने अपने कथन में अनेक बार यह कहा है कि मन्जु सदैव रोती रहती थी और अन्तिम संकट उस समय आया जबकि उसने उसके और बिरधीचन्द के बीच की बात सुनकर जीने से उसे बुलाया और उससे कहा कि वह अपने पति के घर इसलिए जाने को तैयार नहीं है क्योंकि उसके मन में बहुत

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



भय समाया हुआ है । दो कारणों से इस साक्षी के साक्ष्य के इस भाग पर विश्वास करना कठिन हैं—

(1) जबकि दो बड़े-बूढ़ों के बीच बातचीत चल रही थी, तो क्या मन्जु उनकी बातचीत सुनने के लिए जीने के निकट बैठी रही होगी और अपने पिता को बुलाएगी तथा अपने विचारों की अभिव्यक्ति करेगी और किसी भी स्थिति में पुणे वापस जाने सम्बन्धी अपनी भावनाओं और विनिश्चयों को व्यक्त किया होगा । ऐसा प्रतीत होता है कि यह आचरण न केवल उन पत्रों की (प्रदर्श 30, 32 और 33), जिनका विवेचन किया जा चुका है, मंशा और भावना के प्रत्यक्ष रूप से विरुद्ध है ।

(2) जैसा कि हमने इन पत्रों का विवेचन करते हुए उपदर्शित किया है—क्या ऐसी स्त्री, जिसके मन में इतना स्नेह भरा हुआ था और जो मितभाषी प्रकृति की थी तथा जो यह पसन्द नहीं करती कि उसके पात्रों में जो बातें लिखी हैं उन्हें अन्जू या वाहिनी उसके माता-पिता को न बताए, क्योंकि कहीं ऐसा न हो कि वे परेशान और चिन्तित हो जाएं या कि उन्हें कष्ट हो, अचानक इतनी बदल जाएगी कि अपने उन मनोभावों को भूल जाएगी और सभी के सामने रो-रोकर और चिल्ला-चिल्लाकर खुल्लम-खुल्ला यह घोषित करेगी कि वह अत्यन्त भय की स्थिति में है, हमें अन्तर्निहित रूप से अनाधिसंभाव्य प्रतीत होता है। यदि एक बार परिपक्व स्त्री की विशिष्ट प्रकार की प्रकृति का अहम हो जाता है या उसके मस्तिष्क का ऐसा झुकाव हो जाता है, तो यह संभाव्य नहीं है कि वह अपनी समस्त प्रकृति को ही छोड़ दे—इस मामले में अपने माता-पिता के प्रति उसका स्नेह और प्रेम और ऐसी कोई बात न करने की भावना है, जोकि उन्हें कष्ट दे या परेशान करे और हर ऐसे व्यक्ति को जिससे कि उसकी मुलाकात होती, अपनी दुख भरी कहानी कहना आरम्भ करे ।

59. मन्जु को पूरी तरह से यह ज्ञात हो गया होगा कि उसकी ननद की सगाई 13 जून को होने वाली हैं और यदि उसका श्वसुर उक्त रस्म में उपस्थित होने के लिए उसे पुणे ले जाने के वास्ते बार-बार कह रहा है और उन्होंने सभी प्रकार से ऐसा आश्वासन दिया है कि उसे कोई भी हानि नहीं पहुंचेगी, तो क्या वह फिर भी अपने पिता को बुलाएगी और यह व्यक्त करेगी कि उसके मन में भय है और यह बार-बार दोहराएगी जोकि उसने अभी पहले ही कहा है। हमें ऐसा प्रतीत होता है कि यह पश्च-विचार है या यह कि यह बात साक्षी के साक्ष्य में कल्पना से जोड़ी गई है जिससे कि अभियोजन-पक्ष की कहानी पर विश्वास हो सके और मृतक की हत्या के लिए काल्पनिक हेतुक

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



बनाया जा सके। वास्तव में, यदि वह अपने श्वसुर की उन सभी कोशिशों का जो उसे पुणे ले जाने के लिए की जा रही थीं, प्रतिरोध करने पर तुली हुई होती, तो वह वहां जाती ही नहीं। दूसरी ओर अन्त में पुणे जाने और कोहल की रस्म के लिए व्यवस्था करने विषयक बाद वाले उसके आचतण से वह कथा झूठ हो जाती है, जोकि साक्षी ने पेश की थी। किसी व्यक्ति के लिए यह अत्यधिक कठिन है कि वह मस्तिष्क के विशिष्ट प्रकार के झुकाव को या मनुष्य की विशेषता को परिवर्तित करे जब तक कि ऐसा करने के लिए पर्याप्त और वैवश्यक परिस्थितियां न हों। प्रस्तुत मामले में हमें ऐसी कोई वैवश्यक परिस्थितियां दिखाई नहीं पड़ती हैं कि साक्षी के कथन को उसी रूप में मान लिया जाए कि जिस रूप में वह है।

60. अब हम इस चित्र के दूसरे पहलू पर विचार करें। साक्षी का कहना यह है कि जब मैं 12-6-82 को पुणे पहुंचा और उस स्थान पर गया, जहां मृत्यु हुई थी, तो मैंने यह पाया कि शरद खाट पर सो रहा है या लेटा हुआ है और मुझे देखकर उसने जोर-जोर से चिल्लाना आरम्भ किया और उसे जो दुख हुआ है या उसे जो धक्का लगा है, उसे प्रकट करने का नाटक करने लगा। साक्षी के वास्तविक कथन को इस प्रकार प्रोद्धृत किया सकता है—

> "मैं यह देख सका कि शरद ने, जो कि उसी के कमरे में सोया हुआ या पड़ा था, मुझे कमरे में आते देखकर तुरन्त फूट-फूटकर रोना शुरू किया जिससे कि उसका शरीर हिल रहा था और उसे जो दुख पहुंचा था या धक्का लगा था, उसका दिखावा कर रहा था। अन्त में मैंने उससे यह पूछा कि मंजु को क्या हुआ है। तब उसने मुझसे कहा कि चूंकि 11 तारीख को मंजु के साथ हमारे विवाह की वर्षगांठ थी, इसलिए मैं और मंजु दोनों ही अत्यधिक प्रसन्न मुद्रा में थे। उसके मतानुसार, वे लगभग 12 बजे रात सोने चले गए और उसने (शरद ने) मंजु के साथ ऐसे ढंग से संभोग किया कि ऐसा आनन्द उन्होंने इसके पहले कभी भी नहीं उठाया था। अन्त में उसके मतानुसा जब वे (अर्थात् मंजु और शरद) पूरी तरह से थक गए और स्खलित हो गए, तो दोनों सो गए। उसके मतानुसार लगभग 5.30 बजे प्रातःकाल जबकि वह उठा और पेशाब करने गया और जब वह उस कमरे में वापस आया, तो उसने यह पाया कि प्रायः की भांति मंजु अभी नहीं उठी है और चूंकि उसके मतानुसार वह ठीक उसी समय उठती थी, जबकि वह उठा करता था और इसलिए वह मंजु के पास गया और उसने उसको आवाज लगाकर बुलाया, तो उसने यह पाया कि वह मर गई है।"

61. यह कुछ अजीब है कि जबकि साक्षी ने वह सब बात, जो उसकी

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



पुत्री ने उससे कही थी और आगे पूछताछ किए बिना, वैसी ही स्वीकार कर ली तो उसने तुरन्त यह निष्कर्ष निकाल लिया कि उसके दामाद की आंखों में जो दु:ख और आंसू दिखाई पड़ रहे थे, वे बनावटी थे और वह मगरमच्छ के आंसू ही बहा रहा था। ऐसी कोई परिस्थिति दर्शित करने के लिए, जिसके पणिामस्वरूप साक्षी यह निष्कर्ष निकाल सकता था, दर्शित करने के लिए न तो कोई साक्ष्य है और न ही अभिलेख पर कोई बात है। दूसरी ओर जैसाकि साक्षी ने वर्णन किया है, यदि अपीलार्थी के आचरण को शांत-चित्त से देखा जाए, तो यह बिलकुल ही स्वाभाविक और प्राकृतिक था, क्योंकि उस समय जबकि साक्षी पुणे पहुंचा था, मरणोत्तर परीक्षा की जा चुकी थी और मंजु की मृत्यु के बारे में उसके पहुंचने से बहुत पूर्व ही पता चल चुका था। साक्षी के लिए ऐसा कोई कारण नहीं था कि वह उस समय यह उपधारणा करता कि शरद ने मृतक की हत्या अवश्य की होगी। उसके समक्ष ऐसी कोई सामग्री या आंकड़े नहीं थे, जिसके परिणामस्वरूप वह ऐसा निष्कर्ष निकालता। एक महत्वपूर्ण तथ्य का स्पष्ट रूप से पता चलता है, अर्थात् यह कि साक्षी शरद के विरुद्ध अत्यधिक पूर्वधारणा से प्रेरित था और यदि कोई भी व्यक्ति किसी भी चीज को, चाहे वह सत्य ही क्यों न हो, पीले चश्मे से देखता है, तो उसे हर वस्तु पीली ही दिखाई पड़ेगी।

62. लगभग आधी रात के निकट मैथुन करने सम्बन्धी साक्षी के कथन का दूसरा भाग हमें अन्तर्निहित रूप से अनधिसांव्य प्रतीत होता है। तथापि, कोई कितना ही शिक्षित या प्रगतिशील क्यों न हो, किसी व्यक्ति के लिए सर्वाधिक निर्लज्ज और अशिष्ट ढंग से अपने श्वसुर से ऐसी बात कहना हमारी अमूल्य सांस्कृति विरासत के विरुद्ध है। स्पष्ट रूप से हमारी राय यह है कि मैथुन करने सम्बन्धी कहानी साक्षी की मनगढ़न्त बात है और इसी कारण से वह इस साक्षी के परिसाक्ष्य की सच्चाई से बहुत दूर है।

63. इसके अलावा पृष्ठ 175 पर साक्षी ने यह स्वीकार किया है कि मंजु के जीवन-काल के दौरान अंजु और रेखा ने मंजु से पत्रों के प्राप्त होने के बारे में उससे कहा था, किन्तु उन्होंने पत्रों में लिखी गई बातों की प्रकृति के बारे में कभी भी कोई संकेत नहीं किया। यह सही कथन है क्योंकि मंजु ने अंजु और वाहिनी दोनों से ही वास्तविक स्थिति या उन यंत्रणाओं के बारे में जोकि वह भुगत रही थीं, उसके माता-पिता से प्रकट न करने के लिए प्रार्थना की थी और कदाचित् उन्होंने मृतक द्वारा उनसे खिलाई गई कसम की पवित्रता को कायम रखा था। यह बात यह दर्शित करने के लिए अतिरिक्त परिस्थिति है कि जब मंजु अन्तिम बार बीड़ आई थी, तब भी वह अपनी बहन अंजु या वाहिनी से कुछ कह सकती थी, किन्तु उसने सभी विस्तार प्रकट करने और अपने माता-पिता के समक्ष वास्तविक स्थिति पेश करने का कभी भी साहस नहीं किया—

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



यह ऐसा कदम था जिसे उसने अस्तित्व में लाने से जानबूझकर प्रतिविरत रखा था। हम साक्षी के इस साक्ष्य को समझ सकते हैं कि मंजू परेशान, दुखी और विषण्ण थी। कभी-कभी प्राकृतिक प्रेम और स्नेह के कारण माता-पिता राई का पहाड़ बना देते हैं और इस मामले में भी ऐसा प्रतीत होता है कि यही हुआ था।

64. प्रत्यर्थी की ओर से अभियोजन साक्षी 2, 3, 6 और 20 के कथनों सुसंगतता का अपार सालिसिटर जनरल ने काफी अवलम्ब लिया। उसने दो प्रयोजनों के लिए उनके कथनों का उपयोग करने की कोशिश की — प्रथमत: जो कुछ साक्षी ने अपनी आंखों से देखा था और उसने मानसिक वेदना और कष्ट महसूस किया था और जो कि मृतक भुगत रही थी, उसका प्राथमिक साक्ष्य के रूप में, दूसरी बात यह है कि उसने पुणे में मंजु के ठहरने के दौरान उसके पति द्वारा उसके साथ किए गए व्यवहार के बारे में इन साक्षियों से मृतक (मंजु) द्वारा किए गए कथन का अवलम्ब लिया और उससे मंजु की हत्या करने का अभियुक्त से स्पष्ट हेतु का पता चलता है।

65. जहां तक प्रथम परिस्थिति का सम्बन्ध है, इस संबंध में कोई संदेह नहीं हो सकता कि उक्त साक्ष्य निस्संदेह मृतक की मन:स्थित प्रकट करने वाले साक्ष्य के रूप में ग्राह्य होगा। इस मामले में यह प्रारम्भिक साक्ष्य होगा और इसी कारण से इस पहलू से संबंधित साक्षी के कथन की सुसंगतता के बारे में कोई भी सन्देह नहीं हो सकता। यह कि हमें ऐसे कथनों को कितना साक्ष्यिक मूल्य देना चाहिए, संदर्भ और प्रत्येक साक्षी के साक्ष्य को उचित रूप से लागू करने की बात पर निर्भर है।

66. जहां तक कि दूसरे पहलू का सम्बन्ध है, जोकि इस बात के बारे में है कि मृतक ने साक्षियों से क्या कहा था, वह उन परिस्थितियों से संबंधित है, जिनके परिणामस्वरूप मृतक की मृत्यु हुई थी, साक्ष्य के रूप में साक्ष्य अधिनियम की धारा 32 के अधीन ही ग्राह्य होगा। उस विधि को, जिसका विवेचन ऊपर किया गया है और उन प्रतिपादनों को और निष्कर्षों को जो हमने निकाले हैं, देखते हुए इस सम्बन्ध में कोई भी सन्देह नहीं हो सकता कि ये कथन साक्ष्य अधिनियम की धारा 32 के उस दूसरे भाग की परिधि के भीतर आएंगे, जिनका संबंध उस संव्यवहार से प्रत्यक्ष रूप से है, जिसके परिणामस्वरूप मंजु की मृत्यु हुई थी और वह ग्राह्य होगा। तथापि, इस प्रश्न के उस पहलू की परीक्षा करने के पूर्व, हम प्रारम्भ में यह कह सकते हैं कि मंजु के चरित्र, आचरण और स्वभाव से जैसा कि उसके पत्रों (प्रदर्श 30, 32 और 33) से प्रकट होता है या दर्शित होता है, यह उपदर्शित होता हैं कि मंजु के लिए उन तथ्यों को विस्तार से बताना, जिनके बारे में उपर्युक्त साक्षियों ने अभिसाक्ष्य

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh


दिया है, असंभव नहीं, तो सर्वाधिक असंभाव्य अवश्य होगा। यदि यह निष्कर्ष सही है तो उपर्युक्त साक्षियों के कथन के इस भाग का अवलम्ब नहीं लिया जा सकता।

67. अब हम अभियोजन साक्षी 3, 4, 5, 6 और 20 के साक्ष्य का विवेचन करेंगे। जैसा कि हमने मंजु के पिता (अभियोजन साक्षी 2) के साक्ष्य का विवेचन किया है, अब अभियोजन साक्षी-20 (मंजु की मां) के साक्ष्य का विवेचन करना अधिक उचित होगा जिससे वे अधिकांश बातें, जिनकी बाबत अभियोजन साक्षी-2 ने बताया था, प्राप्त की गई थीं। उसका साक्ष्य पेपरबुक के भाग-1 के पृष्ट 305 पर है। हमारे लिए उन व्यौरों में जाना आवश्यक नहीं है. जिनकी बाबत अभियोजन साक्षी-2 ने अभिसाक्ष्य पहले ही दे दिया है। उसके साक्ष्य का सर्वाधिक सुसंगत भाग 2-4-1982 को मंजु का बीड जाने के संबंध में है। उसका कथन यह है कि उस समय जबकि वह बीड गई थी, तो उसने यह पाया कि मजु प्रसन्नचित और खुश है तथा मंजु ने 8 या 10 दिन ठहरने के दौरान उससे कोई शिकायत नहीं की थी। इस प्रश्न के उत्तर में कि क्या उसने मंजु से पूछताछ की थी या उस कालावधि के दौरान उससे कोई बातचीत की थी—उसने यह कथन किया कि मंजु ने उससे यह कहा था कि मेरा पति मुझमें कोई भी दिलचस्पी नहीं लेता और प्रातःकाल मकान से चला जाता है और रात को काफी देर से लौटता है, जिसके लिए उसका बहाना यह है कि वह अपने कारखाने के काम में बहुत ज्यादा व्यस्त रहता है। यहां पर यह कथन किया जा सकता है कि अभियुक्त के पास एक रासायनिक कारखाना था, जिसमें वह सवेरे से लेकर रात देर तक काम करता था। इसके अलावा साक्षी ने यह अभिसाक्ष्य दिया कि मंजु ने उसे इत्तिला भी दी थी कि अब मेरे पति के घर में मेरे लिए कोई भी आकर्षण नहीं रह गया है। तथापि यह तथ्य उसके प्रथम कथन के विपरीत हैं, जबकि उसने यह कहा था कि मंजु बिलकुल ही खुश और प्रसन्न है, जैसा कि नव-विवाहिता लड़की से आशा की जाती है। फिर भी मंजू ने जो बात भी कही थी, वह किसी महत्व की प्रतीत नहीं होती है क्योंकि उसने (साक्षी ने) स्वयं ही यह स्वीकार किया है कि मैंने उसकी बात गम्भीरता से नहीं ली थी और मैंने मंजु से यह कहा था कि चूंकि वह नए कुटुम्ब में आई है, इसलिए नई परिस्थितियों के अनुकूल ढ़ालने में उसे कुछ समय लग सकता है। उसने मंजू को ऐसी बातों को अधिक महत्व देने के विरुद्ध चेतावनी दी थी।

68. उसके बाद उसने आगे यह कथन किया कि लगभग तारीख 11 या 12 अप्रैल, 1982 को वह (अभियोजन साक्षी-20) अपने पति के साथ अपीलार्थी के दादा की मृत्यु के अवसर पर संवेदना प्रकट करने के लिए पुणे गई। उसके बाद उसका कहना यह है कि 11 या 12 मई, 1982 को जब वे दूसरी

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



बार पुणे गए, तो वह अपने भाई धनराज के यहां ही ठहरी थी और यह कि जब वह वहां थी, तो मंजु ने उसकी गर्दन के चारों ओर बाहें कस लीं और अपना नियन्त्रण होते हुए फूट-फूट कर रोने लगी। इसके आगे उसका कहना यह है कि मंजु ने उससे यह निवेदन किया कि वह उसे बीड ले जाए, क्योंकि ससुराल में उसके लिए ठहरना संभव नहीं है जहां कि न केवल वह ऊब गई है, बल्कि अत्यधिक डरी हुई और भयभीत भी है।

69. दूसरे दिन वह (अभियोजन साक्षी 20) अपीलार्थी की मां से मिली और उससे स्पष्ट रूप से यह कहा कि मैंने मंजु को अत्यधिक परेशान, अशांत और भयभीत पाया है और यह कि उसे अपने पति की ओर से अत्यधिक दबाव और निर्बन्धन का अनुभव हो रहा है। किन्तु अपीलार्थी की मां ने उसे यह विश्वास दिलाया कि घबराने की कोई बात नहीं है और सब ठीक हो जाएगा। इसके बाद साक्षी ने अपने पति से सारी बातें बताई और उससे यह कहा कि वह मंजु को बीड ले आए। तब अभियोजन साक्षी-2 ने मंजु को बीड ले जाने के लिए बिरधीचन्द की अनुज्ञा मांगी किन्तु उसने उससे यह कहा कि चूंकि कुछ मेहमान आने वाले हैं, इसलिए वह (अभियोजन साक्षी-2) 4-5 दिन बाद मंजु को भेज सकता है। यहां पर यह उल्लेख किया जा सकता है कि मंजु की यातनाओं और मनःस्थिति के बारे में जो विस्तृत बातें हैं, वे इस साक्षी ने अपने पति (अभियोजन साक्षी-2) से भी नहीं कही थीं, क्योंकि इस मामले की बाबत में उसने कुछ भी नहीं कहा। इसके अलावा उसका कथन भयावह रूप से अस्पष्ट है।

70. जैसा कि पहले ही उपदर्शित किया जा चुका है कि पत्रों से (प्रदर्श 30, 32, 33) यह दर्शित होता है कि मंजु परेशानी से भरी हुई अपनी दशा के बारे में अपने माता-पिता को परेशान नहीं करना चाहती थी या उन्हें किसी भी प्रकार से दुखी नहीं करना चाहती थी, यह बात सर्वाधिक असंभाव्य प्रतीत होती है कि मंजु के ददिया श्वसुर की मृत्यु के अवसर पर वह अपनी मां से अपनी दुखभरी कहानी कहना चाहेगी। हमें ऐसा प्रतीत होता है कि अभियोजन पक्ष ने यह बात अपने मन से जोड़ी है जिससे कि इस साक्षी के साक्ष्य में संवेगात्मक प्रभाव उत्पन्न किया जा सके। अन्त में 25 मई, 1982 को दीपक मंजु को बीड ले आया और इस बार उसके साथ उसकी चचेरी बहन कविता भी थी। यहां पर पुनः उसका कहना यह है कि यहां पहुंचने पर उसने यह पाया कि मंजु अत्यधिक परेशान है और उसके मन में भय का तनाव है और मंजु अपनी सभी परेशानियों के संबंध में अपनी मन की बातें खोलकर कहने के लिए तैयार हो गई थी। तथापि, चूंकि कविता वहां पर थी और उसने मंजु को अपनी मां से अकेले में मिलने के लिए कोई भी अवसर नहीं दिया,

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh


इसलिए उसे (कविता को) इस या उस बहाने से बाहर भेज दिया। उसके बाद मंजु ने अपनी मां से यह कहा कि मुझे अपने पति से बड़ा बुरा व्यवहार मिल रहा है और जबकि वह अपनी दुर्दशा के बारे में बात बता रही थी, तो उसने दो महत्त्वपूर्ण घटनाओं के बारे में बताया, जिसने उसे बुरी तरह से परेशान कर दिया था—(1) यह कि उज्जवला कोठारी (अभियोजन साक्षी 37) द्वारा उसके पति को लिखा गया प्रेम-पत्र उसे मिल गया, जिससे यह दर्शित होता था कि अपीलार्थी का अभियोजन साक्षी 37 के साथ अवैध संबंध चल रहा है; और (2) यह कि एक अवसर पर अपीलार्थी ने मंजु से यह कहा कि मैं तो इस जीवन से तंग आ चुका हूं और अब जीवित नहीं रहना चाहता हूं और इस कारण से आत्म-हत्या करना चाहता हूं। मंजु द्वारा इस पूछताछ के बावजूद कि वह आत्म-हत्या क्यों करना चाहता है, उसने कोई कारण नहीं बताया। उसके बाद उसने अपनी मां को यह इत्तिला दी कि जब यह बात चल रही थी, तो उसने (मंजु ने) स्वयं ही आत्म-हत्या करने की अपनी इच्छा व्यक्त की थी। तत्पश्चात् शरद ने एक प्रस्ताव रखा, जिसके अनुसार उन दोनों को ही आत्म-हत्या करनी थी और उन्होंने कुछ टिप्पणियां लिखीं, जिनसे यह दर्शित होता है कि वे आत्म-हत्या करने जा रहे हैं। शरद से यह योजना सुनने के बाद मंजु ने उससे कहा कि मैं आत्म-हत्या नहीं करना चाहती, क्योंकि मैंने अभी जीवन के प्रति अपनी सभी आशाएं समाप्त नहीं की हैं और यह कि उसने केवल इसलिए आत्म-हत्या करने की इच्छा व्यक्त की थी, क्योंकि उसने (उसके पिता ने) उससे यह कहा था कि वह ऐसा करेगा। अभियोजन साक्षी-20 हमें यह विश्वास दिलाना चाहता है कि जब एक सांस में ही वह समझौता करने को तैयार हो गई थी, फिर भी दूसरे क्षण वह पूरी तरह पीछे हट गई। मंजु के स्वभाव की स्थिति का ध्यान रखते हुए इस पर विश्वास करना कठिन है।

71. वे दो कथन जिनकी बाबत यह कहा गया है कि मंजु ने अपनी मां से किए थे, परस्पर विरोधी और असाम्य प्रतीत होते हैं और उनसे कूट-रचना की दुर्गन्ध आती है। मंजु के मतानुसार, शरद ने तब दो टिप्पण लिखे—एक टिप्पण अपने पिता को सम्बोधित करते हुए और दूसरा अपने श्वसुर को सम्बोधित करते हुए लिखा था और मंजु से ऐसा ही करने को कहा, किन्तु उसने ऐसी कोई भी बात करने से इन्कार कर दिया। साक्षी ने यह स्वीकार किया कि इस सम्बन्ध में कुछ भी कहा गया कि अपीलार्थी ने जो भी टिप्पण किए थे, उनके सम्बन्ध में क्या हुआ।

72. आत्म-हत्या करने विषयक समझौते की यह सब कथा हमें काल्पनिक कहानी के सिवा कुछ प्रतीत नहीं होती है। मंजु ने जो पत्र (प्रदर्श 30, 32, 33) लिखे थे, उनमें आत्म-हत्या करने विषयक समझौते के बारे में

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



उच्च न्यायालय के समक्ष साक्षी द्वारा बताई गई कहानी के बारे में पत्रों में न तो कोई उल्लेख है और न ही कोई संकेत और न ही न्यायालय के समक्ष वह टिप्पण पेश किया गया था। यह हमें काल्पनिक कथा मालूम पड़ती है और इसे इस दृष्टि से यहां पर पेश किया गया था जिससे कि अपीलार्थी को मंजू के प्रति उसके दुर्व्यहार के लिए दण्डित किया जा सके।

73. इस कथन की असत्यता को दर्शित करने के लिए एक दूसरी अन्तर्निहित परिस्थिति यह है कि यद्यपि अभियोजन साक्षी-2 को उन तथ्यों के बारे में बता दिया गया था, फिर भी बिरधीचन्द के समक्ष उसने उनका उल्लेख कभी भी नहीं किया, विशेषकर तब जबकि वह इस बात पर जोर दे रहा था कि मंजु को उसकी पुत्री शोभा की सगाई के अवसर पर पुणे वापस भेज दिया जाना चाहिए। वास्तव में यदि यह तथ्य, जोकि वहां तक बहुत ही महत्वपूर्ण है, जहां तक कि पति और पत्नी दोनों के जीवन का सम्बन्ध है, मौजूद होता, तो अभियोजन साक्षी-2 जो पहली बात करता, वह यह है कि वह बिरधीचन्द से यह कहता कि मामला ऐसी स्थिति में आ चुका है कि इस सम्बन्ध में अब कोई भी सन्देह नहीं रह गया है कि उसके पुत्री के मन में तुरन्त मृत्यु होने का भय समाया हुआ है और अपनी पुत्री को पुणे जाने की इजाजत देना उसके लिए असंभव है, जहां कि शरद आत्म-हत्या करने के लिए या उसकी हत्या करने के लिए उस पर दबाव डालने पर तुला हुआ है या विशेषकर इसलिए क्योंकि अभियोजन साक्षी-20 ने अपने साक्ष्य में यह स्वीकार किया है कि मंजु से उसे जो बातें मालूम हुई थीं, चूंकि वे गम्भीर थीं, इसलिए उसने अपने पति से उनके बारे में बताया कि वह उससे सहमत है।

74. इस गम्भीर घटना के अलावा साक्षी ने उसी प्रकार के एक महत्वपूर्ण मामले के सम्बन्ध में अभिसाक्ष्य दिया, अर्थात् यह कि शिला सप्तमी के दिन अपीलार्थी ने अपनी मां को फोन किया कि वह शोभा के साथ ही मंजु को एक होटल (पर्ल होठल, जैसा कि अन्य साक्षियों ने उनके सम्बन्ध में अभिसाक्ष्य दिया था) भेज दे, क्योंकि वह अपने मित्रों को पार्टी देना चाहता है। चूंकि शोभा मकान में मौजूद नहीं थी, इसलिए मंजु की सास ने रिक्शे में बिठाकर उसे अकेले ही होटल भेज दिया। होटल पहुंचने पर एक लड़की को छोड़कर उसे कोई नहीं मिला, जिसका परिचय उसके पति ने उज्जवला कोठारी के रूप में करवाया था। इस घटना का सर्वाधिक नाजुक भाग यह है कि अपीलार्थी की बाबत यह अभिकथन किया गया है कि उसने मंजु को यह इत्तिला दी कि तुम उज्जवला से इस सम्बन्ध में सबक लो कि मेरे साथ तुम्हें किस प्रकार व्यवहार करना चाहिए और उससे यह भी कहा कि उज्जवला मेरे संबध में सब कुछ जानती है और मैं पूरी तरह से उसके हाथ में हूं। बाद में अपीलार्थी चला

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh


गया और तब उज्जवला ने उससे यह कहा कि अपीलार्थी क्रोधी प्रकृति का व्यक्ति है और वह उससे तभी बात करे यदि और जब वह (शरद) उससे (मंजु से) बात करना चाहता है। उसने (उज्जवला ने) मंजु से यह कहा कि अपीलार्थी पूरी तरह से मेरे इशारे पर चलता है और पति और पत्नी के बीच जो भी घटनाएं घट रही हैं, उनके सम्बन्ध में उसे एक-एक बात की जानकारी मिलती रहती है। अन्त में उज्जवला ने इस बात के बारे में बताया कि वह और शरद एक-दूसरे से प्रेम करते हैं। मंजु के सम्बन्ध में यह कहा गया है कि उसने उज्जवला को डांट दिया और यह कहते हुए विरोध प्रकट किया कि मैं अपने पति के साथ अपने व्यवहार के सम्बन्ध में उससे कोई सबक लेने के लिए तैयार नहीं हूं, क्योंकि वह (मंजु) उसकी विवाहिता पत्नी है, जबकि उज्जवला केवल एक मित्र है। मंजु ने अपनी मां से यह भी कहा कि उसने अपीलार्थी और अभियुक्त संख्या 2 से ये सभी बातें बयान कीं। इस घटना के परिणामस्वरूप मंजु कुछ अस्थिर हो गई, जिसके बाद उसके पति ने उसके साथ दुगुनी क्रूरता प्रकट करनी शुरू कर दी और उसके जीवन को अत्यधिक भयभीत बना दिया तथा इन सब बातों को देखते हुए उसने अपनी मां से यह कहा कि तुम मुझे अभियुक्त के घर वापस न भेजो।

75. यहां पर जिस एक महत्वपूर्ण मुद्दे की ओर ध्यान दिया जा सकता है और जिससे यह दर्शित होता है कि उसके (मंजु के) पति और उज्जवला के जो भी सम्बन्ध रहे हों, वह यह है कि साक्षी ने जो चित्र उपस्थित किया है, वह पूरी तरह से सही नहीं है, क्योंकि यदि ऐसी स्थिति पहुंच गई थी, जहां से वापस नहीं आया जा सकता था, तो बिरधीचन्द के लिए अपीलार्थी को बुलवाने और ऊटी, मैसूर और अन्य स्थानों की यात्रा करने की व्यवस्था करने का पूरी तरह से कोई प्रश्न ही नहीं था, और न ही मंजु इन स्थानों को जाने के लिए सहमत हुई होती। इसके आगे साक्षी ने यह कथन किया कि जैसे ही मंजु को पता चला कि बिरधीचन्द उसे बुलाने आया है, उसे धक्का लगा और वह लगातार यह कहती रही कि मैं अपने पति के घर जाने से अत्यधिक डरती हूं और यह कि उसे वहां वापस न भेजा जाए।

76. साक्षी ने मंजु के व्यवहार सम्बन्धी रुख का जो चित्र खींचा है, हमें ऐसा प्रतीत होता है कि वह उसके स्वभाव के मस्तिष्क की रचना की सभी बातों के प्रति उसके मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण के और नैसर्गिक आदतों के पूरी तरह से विपरीत है और उनके अनुसार नहीं हैं। यही कारण है कि मंजु ने जो पत्र लिखे थे, उनमें से किसी के भी प्रति प्रत्यक्षतः या अप्रत्यक्षतः कोई निर्देश नहीं किया गया और उसने अंजु और वाहिनी दोनों से ही यह अभिव्यक्त रूप से यह निवेदन किया था कि कोई भी बात मेरे माता-पिता से प्रकट न करें, कहीं

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh


ऐसा न हो कि उसके कारण वे परेशान हों या उन्हें कोई कष्ट पहुंचे। अन्य शब्दों में मंजु ऐसी स्त्री थी जिसने अपनी परेशानियों और पीड़ाओं, यातनाओं और दुखों, चिन्ता और वेदना के बावजूद, अपने माता-पिता को अपनी दुख भरी कहानी बयान करने के बारे में और उसके द्वारा उन्हें अप्रत्याशित धक्का पहुंचने के बारे में कभी नहीं सोचा होगा। इस भावना का उल्लेख उन पत्रों (प्रदर्श 30, 32, 33) में जिनका विवेचन हम पहले ही कर चुके हैं, सर्वाधिक स्पष्ट संभावित शब्दों में किया गया है। किसी भी पत्र में आत्म-हत्या सम्बन्धी समझौते या उसके पति और उज्जवला के साथ अवैध सम्बन्ध के बारे में बिलकुल भी कोई निर्देश मौजूद नहीं है।

77. एक दूसरा महत्वपूर्ण तथ्य जिसे उच्च न्यायालय ने छोड़ दिया है, यह है कि इस साक्षी के कथन के अनुसार भी अपीलार्थी ने अपनी मां से यह कहा था कि वह शोभा को मन्जु के साथ होटल भेज दे और उस समय उसे यह पता नहीं हो सकता था कि शोभा वहां पर नहीं आएगी। वास्तव में यदि वहां पर उज्जवला के द्वारा मन्जु का अपमान किए जाने या उसकी भावनाओं को ठेस पहुंचाए जाने का उसका कोई बुरा आशय होता, तो वह अपनी मां से यह कभी नहीं कहता कि वह शोभा को भी भेज दे, क्योंकि तब मामले के खुल जाने की सम्भाव्यता थी। एक दूसरी भी अन्तर्निहित अनधिसंभाव्यता थी, जो पूरी कहानी पर विश्वास न करने की बात को कठिन बनाती है।

78. उन गम्भीर बातों के अलावा अभियोजन साक्षी 2 और 20 दोनों ने मन्जु को यह विश्वास दिलाने की कोशिश की कि वह बिरधीचन्द द्वारा दिए गए इन आश्वासनों को स्वीकार कर ले कि उसे कोई भी हानि नहीं पहुंचेगी और यदि कोई बात होगी, तो वे उचित रूप से उसका प्रतिकार करेंगे। हमें इस पर विश्वास करना असंभव है कि वे माता-पिता जोकि अपनी पुत्री को इतना अधिक प्यार और स्नेह करते थे, इन परिस्थितियों को जानने के बाद, फिर भी बिरधीचन्द का पक्ष लेने की कोशिश करेंगे और अपनी पुत्री को पुणे जाने के लिए राजी करेंगे। रामेश्वर (अभियोजन साक्षी-2) को यह चाहिए था कि वह बिरधीचन्द से बिलकुल ही स्पष्ट रूप से कह देता कि मैं उन गम्भीर घटनाओं को देखते हुए अर्थात् आत्म-हत्या करने संबन्धी समझौता, मन्जु के साथ अपीलार्थी का क्रूर व्यवहार, मृत्यु का लगातार भय, जिसकी आशंका मन्जु को थी, अपीलार्थी और उज्जवला के बीच अवैध सम्बन्ध, उसकी पुत्री का जो कि किसी भी हालत में पुणे जाने को तैयार नहीं थी, हर समय रोते रहने और क्रन्दन करते रहने का सबल विरोध—इन सब बातों को देखते हुए वह मन्जु को नहीं भेजेगा। दूसरी ओर ऐसा प्रतीत होता है कि जानबूझकर और समझ बूझकर उन्होंने अपनी प्यारी पुत्री को मृत्यु के कुएं में धकेल दिया था। इस तथ्य से

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कि मन्जु के माता-पिता ने उसे ढाढस बंधाने की कोशिश की थी और मामले के इतिहास को पूरी तरह से जानते हुए बिरधीचन्द के आश्वासनों पर विश्वास किया था, यह दर्शित होता है कि मन्जु ने अपने माता-पिता से जो कोई कथन किया था, वह इतना अधिक महत्व का नहीं था जिससे कि उनका रुख कठोर हो जाता। यह दूसरी अन्तर्निहित परिस्थिति है जो आत्म-हत्या करने सम्बन्धी समझौते और पर्ल होटल में मन्जु को आने के निमन्त्रण और उस ढंग जिससे उज्जवला की उपस्थिति में उसका अपमान किया गया था, की कहानी को झुठलाती है। इस संबंध में कोई संदेह नहीं है कि अपीलार्थी और मंजु के बीच के सम्बन्ध अत्यधिक तनावपूर्ण थे। हो सकता है कि ऐसे सम्बन्ध उज्जवला के साथ उसकी मित्रता के कारण रहे हों या वह अपनी ससुराल में खुश न रही हो, जैसा कि उसने अपने पत्रों में स्पष्ट रूप से व्यक्त किया है, किन्तु उसने ऐसे किसी बड़े महत्व की बात प्रकट नहीं की थी जिससे कि माता-पिता को धक्का लगता और जिसके परिणामस्वरूप वे उसे किसी भी हालत में पुणे जाने से रोकते। अभियोजन साक्षी-2 और 20 ने जो कथन किए हैं, वे इस कारण विश्वास के योग्य नहीं रह जाते।

79. अब हम मन्जु की बहन अन्जु, अभियोजन साक्षी-6, के साक्ष्य पर विचार करना चाहेंगे। इस साक्षी का कथन न्यूनाधिक रूप से अभियोजन साक्षी-20 के साक्ष्य की हू-बहू नकल है, जिसका विवेचन ऊपर किया जा चुका है और इसी कारण से, उसके साक्ष्य पर सविस्तार विचार करना आवश्यक नहीं है। जहां तक कि पहली बार आने का सम्बन्ध है, वह अपनी मां का पूरी तरह से समर्थन करती है कि मन्जु बहुत खुश थी, जैसी कि नव-विवाहिता लड़की के बारे में आशा की जा सकती है। जब मन्जु लगभग 2 अप्रैल, 1982 को बीड आई, तो वह वहां पर 8 या 10 दिन ठहरी और उस कालावधि के दौरान साक्षी ने यह देखा कि वह कुछ असन्तुष्ट है और उसने यह शिकायत की कि मेरा पति रात को बहुत देर से लौटता है। उसने अपने पति के कुटुम्ब के अन्य सदस्यों के कठोर रुख के विरुद्ध भी शिकायत की थी। उसने उज्जवला कोठरी की कहानी भी पेश की थी और जो कुछ अभियोजन साक्षी 20 ने कहा था, जिसका विवेचन हम पहले ही कर चुके हैं, उसने उसकी संपुष्टि भी की थी। उसने आत्म-हत्या सम्बन्धी उक्त समझौते के प्रति और तब उस तथ्य के प्रति भी निर्देश किया कि बिरधीचन्द पुणे ले जाने के लिए मन्जु को लेने आया था जिससे कि वह शोभा की सगाई में उपस्थित रहे। उसके बाद उसने एक ऐसी घटना के सम्बन्ध में अभिसाक्ष्य दिया है जोकि पूरी तरह से अनधिसंभाव्य प्रतीत होती है। उसके मतानुसार, 3 जून, 1982 को अभियोजन साक्षी-2 ने अपने दो मित्र, राजू और रथ को भोजन के लिए बुलवाया, जिसमें बिरधीचन्द भी

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Aagamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

उपस्थित था और उसने उनसे यह कहा कि मन्जु पुणे जाने के लिए तैयार नहीं है, क्योंकि वह वहां जाने से भयभीत है। किन्तु बिरधीचन्द ने अपने दो मित्रों के साथ-साथ यह आश्वासन दिया कि कुछ भी नहीं होगा। हम यह नहीं समझते कि इस साधारण अनुक्रम में अभियोजन साक्षी-2 इतना मूर्ख होगा कि संबंधित पक्षों से भिन्न अन्य व्यक्तियों को अपने घर की गुप्त बातें जानने देगा। उसके बाद साक्षी ने उन पत्रों को (प्रदर्श 30 और 32) साबित किया है।

80. उसने इस प्रभाव का एक महत्वपूर्ण कथन किया है कि कुछ अवसरों पर मन्जु ने उसकी (अन्जु) उपस्थिति में अपनी मां से बातचीत की थी। यद्यपि मन्जु ने अन्जु से यह कहा था कि माता-पिता से कोई बात प्रकट न करे, तथापि उन्हें हर बात बता दी गई। प्रति-परीक्षा के दौरान साक्षी से यह पूछा गया—यह कैसे हुआ कि मन्जु इन सभी बातों को उस समय बता रही थी, जब साक्षी से यह कहा गया था कि वह उन बातों को अपने माता-पिता से न कहे, जिसे उसने यह कहते हुए स्पष्ट किया कि मैंने मन्जु से यह नहीं पूछा था कि वह अपनी मां से यह सब बातें क्यों प्रकट कर रही है। ऐसा प्रतीत होता है कि उसने इस प्रश्न का कोई संतोषजनक उत्तर नहीं दिया। एक दूसरे स्थान पर साक्षी का कथन इस प्रकार है—

> "मैंने वे सभी बातें जोकि मुझे मन्जु से प्राप्त हुई थीं, किसी से भी नहीं कहीं। और न ही किसी ने मुझसे पूछा ही, जब तक कि पुलिस ने मेरा कथन दर्ज नहीं कर लिया।"

81. अतः यदि उसके साक्ष्य पर पूर्णतः विश्वास किया जाए, तो उसमें वही कमजोरी मौजूद है जो अभियोजन साक्षी-20 के कथन में है और उसका भी वही हश्र होना चाहिए।

82. अभियोजन साक्षी-3, रेखा [जिसको मन्जु के पत्र (प्रदर्श 33) में वाहिनी के रूप में संबोधित किया गया है] ने यह कथन किया है कि पहले अवसर पर जब मन्जु घर आई थी, वह बिलकुल प्रसन्नचित्त थी, किन्तु अप्रैल, 1982 मास में जब वह दूसरी बार बीड आई, तो मैंने उसे ऐसा नहीं पाया और मंजु ने यह शिकायत की कि मेरा पति मुझसे इस बहाने या उस बहाने से बात करने से कतराता है। मन्जु ने इस साक्षी को यह भी सूचना दी कि उज्जवला नाम की महिला अपीलार्थी की मित्र है और साक्षी का कहना यह है कि मैंने यह कहकर मन्जु को ढाढस बंधाने की कोशिश की कि चूंकि तुम्हारा पति रासायनिक इन्जीनियर है, इसलिए उसके बहुत से मित्र हो सकते हैं। प्रदर्श-33 (वह पत्र जिसे मन्जु ने उसको लिखा था) के प्रति निर्देश करते हुए उसने यह कथन किया कि इस पत्र में जो एकमात्र शिकायत की गई है, वह यह है कि मेरा पति मुझसे उचित रूप से बात नहीं कर रहा है। उसके बाद उसने एक ऐसी घटना के

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

सम्बन्ध में अभिसाक्ष्य दिया जो कि उस समय घटी थी, जबकि वह मुम्बई को जा रही थी और उस समय साक्षी कुछ समय के लिए पुणे में ठहरी थी। उसका कथन यह है कि मैंने मन्जु से लगभग आधे घण्टे बातचीत की थी, जबकि मन्जु ने आत्म-हत्या करने से सम्बन्धित समझौते की कहानी उसे सुनाई थी। उसने यह भी कथन किया कि मन्जु उस स्थिति से बहुत डरी हुई थी और लगभग आंसू बहाते हुए फूट-फूट कर रो पड़ी थी।

83. सबसे महत्त्वपूर्ण तथ्य, जिसकी ओर उसके साक्ष्य में ध्यान दिया जा सकता है, मन्जु के मस्तिष्क की बनावट और उसके मनोविकृत स्वभाव की ओर स्पष्ट रूप से संकेत करता है। पेपर बुक के भाग-1 के पृष्ठ 212 पर उज्जवला के साथ अपने पति के सम्बन्ध के बारे में वर्णन करते हुए वह यह कहती है कि अपीलार्थी क्रोधित हो गया और उसके बाद उसने उससे (अपने पति से) निम्नलिखित शब्द कहे—

> "मैं इसे सहन करने नहीं जा रही हूं, मैं इसकी इजाजत नहीं दूंगी, यद्यपि उसके बुरे सम्बन्धों से हमारे कुटुम्ब पर कलंक लग सकता है, किन्तु फिर भी मैंने उसी प्रकार विनिश्चय कर लिया है।"

84. इन महत्त्वपूर्ण और सारगर्भित शब्दों से स्पष्टतः यह दर्शित होता है कि मन्जु अपने जीवन से इतना उकता और ऊब गई कि उसके मन में प्रतिशोध की भावना उत्पन्न हो गई और उसने साक्षी से यह कहा कि मैं इसे सहन नहीं करने जा रही हूं, भले ही उसके परिणामस्वरूप कुटुम्ब पर कलंक क्यों न लग जाए और यह कि उसने उसी प्रकार विनिश्चय कर लिया है। निस्संदेह इस कथन में स्पष्ट रूप से यह संकेत मौजूद है कि उसने अपने जीवन को समाप्त करने का, चाहे कुछ भी क्यों न हो जाए, और उसके द्वारा अपने पति को परेशानी में डालने, का पक्का इरादा कर लिया था और इसलिए भी उससे भी कुटुम्ब के सदस्यों पर उसकी मृत्यु के बाद सन्देह किया जा सकता था। ऐसा प्रतीत होता है कि यह उसकी इस भावना का परिणाम था, क्योंकि उसने अन्जु को अपने पत्रों में से एक में निम्नलिखित शब्दों में व्यक्त किया था—

> "अभी तक तो मैं अपने आपको नियंत्रित रख सकी। ठीक है। जब असम्भव हो जाएगा, तब कोई दूसरा रास्ता निकालना होगा। देखें क्या होता है। ठीक है।"

उसी प्रकार से इस साक्षी को लिखे गए पत्र (प्रदर्श 33) में वह एक छिपा हुआ संकेत करती है: "किन्तु आज तक यह निश्चित नहीं है कि मैं जीवित रहूंगी।"

85. इस प्रकार ऐसा प्रतीत होता है मृत्यु और निराशा की भावनाएं, जिन्हें साक्षी ने मौखिक रूप से पुणे में व्यक्त किया था, उस समय पूरी हो गई,

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



जब 12 जून, 1982 को प्रातःकाल वह मृत पाई गई।

86. अभियोजन साक्षी 4, हीरालाल रामलाल शारदा का साक्ष्य भी महत्त्वपूर्ण नहीं है। उसका मात्र यह कथन है कि मई, 1982 के अन्तिम सप्ताह में अभियोजन साक्षी-2 ने उसे बुलाया था और उससे यह कहा था कि मन्जु का पति उसके साथ दुर्व्यवहार कर रहा है और इसीलिए वह अपने ससुराल नहीं जाना चाहती। अभियोजन साक्षी-2 ने उससे आत्म-हत्या करने सम्बन्धी समझौते के बारे में भी इत्तिला दी। चूंकि साक्षी हैदराबाद जाने की जल्दी में था, इसलिए उसने अभियोजन साक्षी-2 को यह परामर्श दिया कि वह जल्दबाजी में कोई अन्तिम विनिश्चय न करे और यह कि मन्जु बिरधीचन्द के साथ पुणे तब तक न भेजी जाए, जब तक कि वह लौट न आए और उस समय विनिश्चय किया जा सकता है। हैदराबाद से लौटने पर उसको यह पता चला कि बिरधीचन्द मन्जु को पुणे पहले ही ले जा चुका है और उसके बाद वह भी पुणे के लिए रवाना हो गया। वास्तव में यदि वह मामला इतना गम्भीर था, तो अभियोजन साक्षी-4 जैसे व्यक्ति ने जोकि अभियोजन साक्षी-2 का नातेदार होने की अपेक्षा अपीलार्थी का नातेदार था, उसे यह सलाह दी थी कि वह जल्दीबाजी में कोई काम न करे और अन्तिम विनिश्चय न करे, किन्तु उसके लौटने तक प्रतीक्षा करे, किन्तु फिर भी ऐसा प्रतीत होता है कि अभियोजन साक्षी-2 ने उसकी सलाह नहीं मानी और मन्जु को पुणे भेज दिया। इससे यह दर्शित होता है कि यह मामला वस्तुतः ऐसा महत्त्वपूर्ण या अत्यावश्यक नहीं था जिससे कि बिरधीचन्द से साफ-साफ इंकार करने का यह कठोर कदम उठाया जा सकता कि मन्जु पुणे नहीं जाएगी। इससे भी यह पता चलता है कि आत्म-हत्या करने सम्बन्धी समझौते की कथा और अन्य बातें इस दृष्टि से पेश की गई थीं जिससे कि अभियोजन पक्ष की कहानी को विशिष्टता या दिशा प्रदान की जा सके।

87. एक दूसरा तथ्य जिसके प्रति इस साक्षी ने अभिसाक्ष्य दिया है, अपीलार्थी द्वारा किया गया यह वर्णन है कि उसने अपनी पत्नी के साथ मैथुन किया था। हमने इस कहानी पर पहले ही अविश्वास व्यक्त कर दिया है, क्योंकि वह अत्यन्त अनधिसंभाव्य है तथा यह कथा हमारे देश की या हमारी प्रकृति और आदतों की सांस्कृतिक विरासत के विरुद्ध है। यह एकमात्र ऐसा प्रयोजन है, जिसके लिए इस साक्षी की परीक्षा की गई थी और उसके साक्ष्य से इस मामले में कोई आगे प्रगति नहीं होती है।

88. मीना महाजन, अभियोजन साक्षी-5, की परीक्षा इस दृष्टि से की गई है जिससे कि अभियोजन साक्षी-2 और अन्य साक्षियों द्वारा वर्णन की गई कहानी का समर्थन किया जा सके। अभियोजन साक्षी-2 के कुटुम्ब से उसका बिलकुल ही कोई सम्बन्ध नहीं था, किन्तु उसके बारे में अभिकथन किया गया

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh


है कि वह मंजु की मित्र थी और उसका कहना यह है कि उसने यह पाया कि मंजु पूरी तरह से निराश और उदास हो चुकी है और जब मंजु अपनी उक्त कथा का वर्णन करती थी, तो रोना और क्रन्दन करना आरम्भ कर देती थी। उसके आगे साक्षी का कहना यह है कि मंजु अपीलार्थी से इतना भयभीत थी कि उसे इस बात का डर था कि उसके हाथों ही उसकी मौत होगी। किसी साक्षी ने इस हद तक नहीं कहा है कि मंजु के जीवन को तुरन्त कोई खतरा था और न ही मंजु ने अभियोजन साक्षी-2, 6 और 20 से ही यह बात कही थी। हमें ऐसा प्रतीत होता है कि यह साक्षी राजा से भी अधिक वफादार है। यह मानते हुए भी कि मंजु अभियोजन साक्षी-6 की मित्र थी, किन्तु उसने कभी भी उसे कोई ऐसा पत्र नहीं लिखा जिसमें उस प्रकार की कोई बात उपदर्शित की गई हो। इन कारणों से हमारा समाधान नहीं हुआ है कि यह साक्षी विश्वास के लायक है।

89. उपर्युक्त साक्षियों के साक्ष्य की बारीकी तथा सावधानी के साथ समुचित संवीक्षा करने से स्पष्ट रूप से और उल्लेखनीय रूप से जो कहानी प्रकट होती है, वह उस कहानी से बिलकुल भिन्न है जो कि इन पत्रों (प्रदर्श 30, 32 और 33) से स्पष्ट होती है। वास्तव में इन पत्रों से विशिष्टतः, निम्नलिखित मामलों के बारे में दूसरी ही कहानी का पता चलता है—

(1) आत्म-हत्या करने सम्बन्धी समझौते या ऐसी परिस्थितयों के प्रति, जिनके परिणामस्वरूप आत्म-हत्या हुई थी, पूरी तरह से कोई निर्देश नहीं हैं;

(2) उज्जवला के और अपीलार्थी के साथ उसके अवैध सम्बन्धों के प्रति कोई भी निर्देश नहीं है;

(3) इस तथ्य का उल्लेख नहीं है कि मृतक पुणे जाने के लिए बिलकुल ही तैयार नहीं थी और यह कि उसे बलात् भेजा गया;

(4) पत्रों में जो शिकायतें की गई हैं, वे पति के दुर्व्यवहार, एकाकीपन, उपेक्षा और क्रोध तक ही सीमित हैं, किन्तु किसी भी पत्र में ऐसी कोई आशंका व्यक्त नहीं की गई है कि मृतक को अपने पति से अपने जीवन के लिए तुरन्त किसी खतरे की आशा थी;

(5) वास्तव में इन पत्रों में उसने अपनी बहन और अपनी मित्र से यह कहा था कि वे उसके माता-पिता से उसकी दुखभरी दुर्दशा को प्रकट न करें, किन्तु अपने माता-पिता से उन तथ्यों का वर्णन करते हुए उसने स्वयं ही अपने उक्त संवेगात्मक वचन को तोड़ दिया, जोकि हमें सच प्रतीत नहीं होतीं और जो अभियोजन पक्ष को मजबूत करने के लिए ही जोड़ा गया पश्च-विचार प्रतीत होता है।

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



(6) इन पत्रों में यदि कोई बात अन्तर्निहित है, तो वह यह है कि उसकी दुखद स्थिति और उसके पति द्वारा घोर दुर्व्यवहार किए जाने के कारण मंजु ने अपने माता-पिता को परेशान करने की बनिस्बत स्वयं ही अपना जीवन समाप्त करने का विनिश्चय कर लिया।

90. अत: हम उच्च न्यायालय और विचारण न्यायालय के इस विचार से सहमत होने में असमर्थ हैं कि जिन साक्षियों का ऊपर विवेचन किया गया है, उन पर पूरी तरह से इस प्रकार निर्भर किया जा सकता है जिससे कि आत्महत्या की सम्भावना अपवर्जित हो जाए और यह कि एकमात्र निश्चित निष्कर्ष, जोकि उनके साक्ष्य से निकाला जा सकता है, यह है कि अपीलार्थी ने ही मृतक की हत्या की थी।

91. यदि इन सभी बातों को एक स्थान पर रख दिया जाए, तो पूरी कहानी का जो चित्र उभर कर आता है, वह यह है कि युक्तियुक्त रूप से इस बात की संभावना है कि मंजु ने या तो कुण्ठा के **कारण** या निराशा के कारण अपने जीवन को समाप्त करने का या उसके सपनों को चूर-चूर करने और प्रतिदिन उसके साथ दुर्व्यवहार करने के लिए अपने पति से प्रतिशोध लेने का पक्का इरादा कर लिया था।

92. मंजु के मन में जो प्रतिशोध की भावना काम कर रही थी, उसके अलावा जो कुछ हुआ, उसके बारे में हमें यह प्रतीत होता है कि इन सारी बातों ने मिलकर उसके मन पर एक उग्र संवेग पैदा कर दिया जो उस घुटन से पैदा हुआ था, जिसका उसके पत्रों और उसके पश्चात्वर्ती आचरण, दोनों में प्रचुर साक्ष्य है। सेन्फर्ड एच० कादिशकृत एन्साइक्लोपीडिया ऑफ क्राइम एण्ड जस्टिस (जिल्द 4) में लेखक इस प्रकार उल्लेख करता है :—

> "अन्य मनोवैज्ञानिक रूप से प्रतिपादित विचारधाराओं के अनुसार आत्महत्या घुटन से उत्पन्न तीव्र संवेग को कार्यरूप देने का माध्यम मानी जाती है।"

93. साक्षी के उल्लिखित साक्ष्य से जो दूसरा निष्कर्ष निकलता है वह यह है कि आत्महत्या करने के आशय का एक महत्वपूर्ण लक्षण निरन्तर रोते-बिलखते रहने का तथ्य है, जैसा कि जार्ज डब्ल्यू० ब्राउन एण्ड टीरिल हेरिश ने अपनी पुस्तक "सोशल ओरिजिन्स ऑफ डिप्रैशन" में कहा है, जोकि इस प्रकार है :—

"1. **लक्षण आंकड़े**

**दुखी मन—**

1. चिल्लाना

2. दयनीय महसूस करना/दयनीय दिखाई देना, मुस्कराने या हंसने में असमर्थता

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh


3. भविष्य के बारे में असहाय होने की भावना
4. आत्म-हत्यापरक विचार
5. आत्म-हत्यापरक प्रयास

भय/चिन्ता/परेशानी

15. मनः कायिक संगतियां
16. तनाव/चिन्ता
17. खास परेशानी
18. संत्रास
19. भीति

चिन्तन करना

20. आत्म-ग्लानि अनस्तित्व की भावना
21. भ्रान्ति
22. उत्पीड़न की भ्रान्ति/ईर्ष्या
23. भव्यता की भ्रान्ति
24. नियंत्रण की भ्रान्ति/असर
25. अन्य भ्रान्तियां जैसे, रोग भ्रमी की परेशानी
26. श्रवणी विभ्रम
27. दृश्य-विभ्रम

94. ऐसा प्रतीत होता है कि इनमें से अधिकांश लक्षण मंजु के पत्रों (प्रदर्श 30, 32 और 33) और उल्लिखित साक्ष्य से मंजु में विद्यमान साबित हो गए हैं।

95. किन्तु हम यहां यह भी कहना चाहेंगे कि संवेदनशील और भावुक प्रकृति की स्त्रियों में प्रायः यह देखा गया है कि यदि वे अपने निकट सम्बन्धियों के कार्य से अपने जीवन में तंग आ जाती है, तो वे इतनी हताश हो जाती हैं कि उनमें बदले की भावना आ जाती है और वे उन लोगों का खात्मा करने का प्रयास करती हैं, जिन्होंने उनकी जिन्दगी निरर्थक बना दी है और प्रतिशोध की इस प्रबल भावना के वशीभूत वे आत्म-हत्या करने की चरम सीमा तक भी जा सकती हैं और उनमें यह भावना हो सकती है कि जो विषय उनकी व्यथा का मूल कारण है, उसे भी नष्ट कर दिया जाए। इस मामले में यही हुआ होगा। जब मंजु ने देखा कि उसके सपने टूट चुके हैं तो उसने पहले तो समझौता करने का भरसक प्रयास किया, किन्तु अपने पति के निरन्तर दुर्व्यवहार और विमुख दृष्टिकोण से उसने अपनी हत्या करके बदला लेने की सोची जिससे कि वह उस परिवार को नष्ट और बरबाद कर दे जो उसकी मृत्यु करने के लिए उत्तरदायी हैं। रोबर्ट जे० केस्टनबोम ने अपनी पुस्तक "डेथ,

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



सोसायटी एण्ड ह्यू मन एक्सपीरियन्स" में जो कुछ कहा है, हम उसे उधृत करना चाहेंगे —

> "प्रतिशोध की भावनाएं और आत्म-हत्या का विचार उन लोगों को सुविदित है जो संवेगात्मक संत्रास में इन्हें उभरने देते हैं।"

96. साक्ष्य पर ध्यानपूर्वक विचार करने और चर्चा करने के बाद हम पहले मुद्दे पर निम्नलिखित निष्कर्षों पर पहुंचे हैं—

(1) विवाह के थोड़े समय बाद ही मंजु और उसके पति के सम्बन्धों में भारी तनाव पैदा हो गया जो इतना बढ़ गया कि वे वहां से वापस नहीं लौटे ;

(2) इस हद तक यह साबित किया जा चुका है कि अपीलार्थी की उज्जवला के साथ घनिष्टता थी, जिसके फलस्वरूप मंजु और उसके सम्बन्ध कटु हो गए थे ;

(3) अभियोजन साक्षी 2 द्वारा प्रस्तुत और अभियोजन साक्षी 20 द्वारा समर्थित यह वृतांत विश्वसनीय नहीं है कि जब वे मन्जु के मरने के बाद पुणे पहुंचे थे तो उन्होंने अपीलार्थी को दुखी होकर रोते बिलखते देखा था जोकि केवल मगरमच्छ के आंसू बहाना था ;

(4) आत्म-हत्या की रजामन्दी की कहानी और यह अभिकथन कि उज्जवला के साथ अपीलार्थी के अयुक्त सम्बन्ध इस चरम सीमा तक पहुंच गए थे कि वह उज्जवला में इतना आसक्त रहता था कि वह मन्जु की हत्या के हेतु आधार शिला बन गया, स्पष्ट रूप से साबित नहीं किया गया है ;

(5) अभियोजन साक्षी-2 का यह अभिकथन कि अपीलार्थी ने उसे बताया था कि 11 जून, 1982 की रात को उसने मृतक के साथ संभोग किया था, सही नहीं हो सकता और विश्वसनीय नहीं है क्योंकि यह अन्तर्निहित रूप से असंभाव्य है ;

(6) अभियोजन साक्षी 2, 3, 6 और 20 के साक्ष्य के बावजूद हमारे समाधानप्रद रूप में यह साबित नहीं किया गया है कि मामला इतना बढ़ गया था कि मन्जु ने किसी भी कीमत पर अपने ससुर (बिरधीचन्द) के साथ पुणे जाने से इंकार कर दिया था किन्तु वह विवश करके और मनाकर अपने साथ ले गया ;

(7) पत्रों (प्रदर्श 30, 32, और 33) तथा अभियोजन साक्षी 2, 3, 4, 6 और 20 के साक्ष्य के संयुक्त पाठ और प्रभाव से स्पष्ट पता चलता है कि मन्जु जिस गन्दे वातावरण में और विरोधी वातावरण में रह रही थी, उसके कारण जो चिह्न और लक्षण

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



दिखाई दिए, वे इस बात के सूचक हैं कि इस बात की युक्तियुक्त संभावना थी कि वह आत्म-हत्या कर लेती और अभियोजन पक्ष इस संभावना को युक्तियुक्त सन्देह से परे अपवर्जित या निवारित करने में समर्थ नहीं हुआ है।

(४) उल्लिखित साक्ष्य का अधिकांश भाग निस्संदेह ग्राह्य है, जैसा कि हमने अभिनिर्धारित किया है, किन्तु इसका साक्ष्यीय महत्त्व कम प्रतीत होता है, जैसा कि हमने साक्ष्य का विवेचन करते समय अनेक असंभावनाओं का उल्लेख किया था।

97. लेकिन हमें यहां तुरन्त यह कहना चाहिए कि हम यह सुझाव नहीं देते कि यह बिलकुल भी हत्या का मामला नहीं था बल्कि केवल यही अभिनिर्धारित करेंगे कि प्रतिरक्षा-पक्ष द्वारा यथा अभिकथित कम-से-कम आत्म-हत्या की संभावना थी और इसे भ्रम नहीं कहा जा सकता।

98. हम यहां यह उल्लेख करना चाहेंगे कि हमें साक्षियों के साक्ष्य तथा परिस्थितियों का पुनर्मूल्यांकन आत्म-हत्या के मनोवैज्ञानिक पहलू को ध्यान में रखकर करना होगा जोकि मन्जु की मानसिकता और चरित्र में पाई जाती थी क्योंकि ये महत्त्वपूर्ण बाते हैं, जिन्हें उच्च न्यायालय ने पूरी तरह अनदेखा कर दिया था। हमें ऐसा प्रतीत होता है कि साक्ष्य का मूल्यांकन करते समय उच्च न्यायालय इस बात से बहुत प्रभावित था कि पत्रों की अन्तर्वस्तु द्वारा प्रकट साक्ष्य ग्राह्य साक्ष्य नहीं है जो विधि का गलत दृष्टिकोण है, जैसा कि हम बता चुके हैं।

99. अब हम दूसरे भाग पर आते हैं जोकि संभवतः अभियोजन पक्ष-कथन का सबसे महत्वपूर्ण पहलू है और वह यह परिस्थिति है कि अपीलार्थी को मृतक की मृत्यु से पहले उसके साथ अन्तिम बार देखा गया था। प्रकटतः यदि यह साबित है तो यह अपीलार्थी के खिलाफ निश्चायक साक्ष्य प्रतीत होता है किन्तु यहां भी न्यायालय ने कुछ अनिवार्य बातों को पूरी तरह अनदेखा कर दिया है, जिनसे इस मुद्दे पर अभियोजन पक्ष द्वारा पेश किए गए साक्ष्य पर काफी संदेह प्रकट होता है।

100. अपीलार्थी को अंतिम बार मृतक के साथ देखा गया था, इस प्रश्न को तीन विभिन्न प्रक्रमों में बांटा जा सकता है—

(1) तक्षशिला अपार्टमैंट्स में मन्जु के साथ-साथ अनुराधा और उसके बच्चों का पहुंचना और उसके बाद अपीलार्थी का पहुंचना और शयन-कक्ष में प्रवेश करना जहां अनुराधा मन्जु से बात कर रही थी।

(2) ए-2 द्वारा अभियोजन साक्षी-29 को बुलाना, जिसके पश्चात् अपीलार्थी और उसके भाई का डाक्टर लोढ़ा को और तत्पश्चात्

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



डाक्टर गांधी को लाने के लिए स्कूटर पर जाना।

(3) मोहन आसव (अभियोजन साक्षी-30) को बुलवाना और अपीलार्थी, बिरधीचन्द और अन्य के बीच बातचीत जिसके फलस्वरूप इस मामले की रिपोर्ट पुलिस को दी गई।

101. इस परिस्थिति के उपरोक्त तीन प्रक्रमों को तकनीकी दृष्टि से इस अर्थ में नहीं लिया जा सकता कि अभियुक्त अन्तिम बार मृतक के साथ देखा गया था, किन्तु प्रथम परिस्थिति के साथ इन तीन भागों से मिलकर अपीलार्थी द्वारा हत्या का हेतु बन सकता है।

102. इन मुद्दों पर उच्च न्यायालय के निर्णय के परिशीलन से ऐसा प्रतीत होता है कि उच्च न्यायालय ने विभिन्न घटनाओं का सही समय तैयार करने के लिए समस्या को कम्प्यूटर और गणितीय दृष्टिकोण से देखा है जो कि सही नहीं हो सकता, जैसा कि डाक्टर बनर्जी (अभियोजन साक्षी 33) सहित अन्य साक्षियों के साक्ष्य से प्रतीत होता है।

103. अभियोजन साक्षी-7, मोटर रिक्शा चालक के साक्ष्य से पता चलता है कि 11 जून की रात को वह अनुराधा और अन्य के साथ-साथ मृतक को लाया था और उन्हें रात के लगभग 11 बजे तक्षशिला अपार्टमैंट्स के समीप छोड़ा था। अनेक मुद्दों पर साक्षियों की प्रति-परीक्षा की गई किन्तु हम उच्च न्यायालय का निष्कर्ष इस तथ्य के आधार पर स्वीकार करेंगे कि 11 जून, 1982 को साक्षी ने ऊपर वर्णित व्यक्तियों को रात के लगभग 11 बजे छोड़ा था। शेष साक्ष्य इस मामले के प्रयोजन के लिए सुसंगत नहीं हैं। फिर भी यह उल्लेखनीय है कि अभियोजन साक्षी-7 जैसे साधारण आदमी के लिए समय में कुछ मिनटों के अन्तर की गुंजाईश हमेशा देनी चाहिए। हम यह नहीं मान सकते कि जब साक्षी ने यह कहा कि उसने मन्जु और अन्य लोगों को रात के 11 बजे वहां छोड़ा था, तो वह एकदम 11 बजे ही था। हो सकता है वह 10-15 मिनट पहले या बाद में हो। उसका साक्ष्य उस अनुमानित समय को दर्शाने के लिए ही सुसंगत है जब मन्जु अपार्टमैंट्स में लौटी थी।

104. इस मुद्दे पर अगला साक्षी है अभियोजन साक्षी-28, के० एन० काडू। यह साक्षी अभियोजन साक्षी-7 की संपुष्टि करता है और उसका कहना है कि उसने उस समय अपार्टमैंट्स के निकट रिक्शा की आवाज सुनी थी जब ए-2 की पत्नी, मन्जु और तीन बालक अपार्टमैंट्स में घुसे थे और अपने कमरों में गए थे। उसने आगे कहा कि लगभग 15 मिनट बाद उसने अपीलार्थी को स्कूटर पर आते देखा और जब उसने अपना स्कूटर पार्क किया तो साक्षी ने उससे पूछा था कि आप इतनी देर से क्यों आए हैं, तो उसने उत्तर दिया था कि वह किसी बैठक में व्यस्त था। इससे यह प्रतीत होगा कि अपीलार्थी अपार्टमैंट्स

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh


में रात के लगभग 11-30 या 11-45 बजे पहुंचा था। बिलकुल सही समय नियत करना बहुत कठिन है क्योंकि स्वयं साक्षी का कहना है कि उसने अनुमानित समय बताया है। अतः उच्च न्यायालय ने मन्जु और उसके साथियों या अपीलार्थी के पहुंचने का समय प्रायः गणितीय सुनिश्चितता के साथ तय करके न्यायोचित नहीं किया क्योंकि ऐसा करना अत्यन्त अयथार्थवादी दृष्टिकोण होगा। ऐसा प्रतीत होता है कि उच्च न्यायालय ने यह अन्दाजा लगाया था कि मन्जु आधी रात को 12 बजे मरी होगी, अर्थात् अपीलार्थी के पहुंचने के 15-20 मिनट के अन्दर। किन्तु हमारे लिए वह सही समय निर्धारित करना असंभव है जब मन्जु की मृत्यु हुई थी क्योंकि डाक्टर बनर्जी ने भी अपने साक्ष्य में कहा है कि मृतक की मृत्यु का समय 18 से 36 घन्टों के बीच है, जो कि रात में 12 बजे के भी बाद का समय होगा। कुछ भी हो, इतना निश्चित है कि मन्जु की मृत्यु लगभग 2 बजे पूर्वाह्न हुई होगी क्योंकि जब डाक्टर लोढ़ा 2-40 पूर्वाह्न बजे पहुंचा था तो उन्होंने उसे मृत पाया था और उन्होंने यह भी कहा कि शव-काठिन्य (रिगर मोर्टिस) आरम्भ हो चुका था। अतः वह समय नियत करना कठिन है क्योंकि इससे ऐसा प्रतीत होता है कि हर साक्षी के पास घड़ी थी, जो सही और हू-बहू ठीक समय देती थी। ऐसा निष्कर्ष बिलकुल भी अपेक्षित नहीं है।

105. इस मामले का तीसरा प्रक्रम यह है कि जिस समय साक्षी सो रहा था, उसने स्कूटर चालू करने की आवाज सुनी और वह अपने बिस्तर से उठा और अपीलार्थी और ए-2 को जाते हुए देखा। तत्पश्चात् उसने 7-8 व्यक्तियों को अपने स्कूटरों पर आते-जाते देखा। ऐसा प्रतीत होता है कि उच्च न्यायालय का कहना है कि यह रात के लगभग 1-30 बजे तक हुआ होगा। यदि ऐसा है तो भी इससे यह साबित नहीं होता कि मन्जु की मृत्यु आधी रात को हुई थी। चूंकि साक्षी सो रहा था और वह स्कूटर की आवाज से उठा था, इसलिए वह समय नियत करना कठिन है जब उसने अपीलार्थी और ए-2 को अपने स्कूटरों पर जाते हुए देखा था। अतः उच्च न्यायालय ने उसके द्वारा दिए गए तथ्यों को साबित करने के लिए उसके साक्ष्य का अवलम्ब लेकर ठीक ही किया।

106. अभियोजन साक्षी-29, बी० के० काड़ू, जो तक्षशिला अपार्टमैंट्स में चौकीदार का काम करता था, का कहना है कि आधी रात को लगभग रामेश्वर और ए-2 ने उसे बुलवाया और चीखने-चिल्लाने की आवाज सुनकर वह फ्लैट सं० 5 में गया था। उसने आगे कहा कि ए-2 ने उसे दरवाजे की चटखनी खोलने के लिए निर्देश दिया था किन्तु दरवाजा अन्दर से बन्द नहीं मिला था और इस प्रकार ए-2 बाहर चला गया था और कुछ देर बाद लौटा था। जब साक्षी दरवाजे पर खड़ा हुआ था, तो ए-2 लौट आया था और उसके

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



लौटने के बाद साक्षी भी अपने घर वापस आ गया था और सो गया था। संभवत: साक्षी उस घटना का उल्लेख कर रहा है, जब अपीलार्थी-1 और अपीलार्थी-2 स्कूटर पर डाक्टर लोढ़ा को लाने के लिए गए थे। प्रति-परीक्षा के दौरान इस साक्षी ने यह स्वीकार किया था कि उसके पास कोई घड़ी नहीं थी और अन्दाज से समय बताया था। हम उसका साक्ष्य पूर्णरूपेण स्वीकार करेंगे किन्तु इससे हम किसी निष्कर्ष पर नहीं पहुंचते।

107. मामले के प्रथम प्रक्रम के सम्बन्ध में यही एकमात्र साक्ष्य है और सम्पूर्ण अधिसंभाव्यता में इससे यह बिलकुल भी साबित नहीं होता कि अपीलार्थी-1 ने मृतक की हत्या की थी। इसके विपरीत तीन साक्षियों द्वारा साबित परिस्थितियां प्रतिरक्षा पक्ष के इस अभिवाक् से असंगत नहीं हैं कि कमरे में प्रवेश करने के थोड़ी देर बाद ही मन्जु ने आत्म-हत्या कर ली होगी।

108. इस परिस्थिति का दूसरा भाग घटना-स्थल पर डाक्टर लोढ़ा और फिर डाक्टर गांधी का आना है। हम उनका साक्ष्य पूर्णरूपेण स्वीकार करते हैं। डाक्टर लोढ़ा अपीलार्थी के परिवार का डाक्टर था और यह नितान्त स्वाभाविक था कि जब अपीलार्थी को यह आशंका हो गई थी कि उसकी पत्नी मर गई है तो उसे बुलवाया जाता यद्यपि डाक्टर लोढ़ा (अभियोजन साक्षी-24) उनका पारिवारिक डाक्टर था, फिर भी उसने प्रतिरक्षा-पक्ष का समर्थन करने का प्रयास नहीं किया और उसने स्पष्ट रूप से अभियुक्त और अन्य से, जो वहां उपस्थित थे, कह दिया था कि उसके लिए मृत्यु का कारण अभिनिश्चित करना संभव नहीं है जोकि मरणोत्तर परीक्षा द्वारा ही पता किया जाता जा सकता है। दूसरे शब्दों में, अप्रत्यक्ष रूप से उन्होंने सुझाव दिया था कि मन्जु की मृत्यु अप्राकृतिक मृत्यु है और दूसरी राय लेने की दृष्टि से उन्होंने सलाह दी थी कि डाक्टर गांधी (अभियोजन साक्षी-25) को भी बुलवा लिया जाए। तदनुसार, डाक्टर गांधी को बुलवाया गया और उन्होंने डाक्टर लोढ़ा की राय का अनुमोदन किया। अपीलार्थी या उनके परिवार के व्यक्तियों का ऐसा आचरण अभियोजन पक्ष के अभिकथन से पूर्णत: असंगत है कि अपीलार्थी ने मृतक की हत्या की थी।

109. ऐसा प्रतीत होता है कि उच्च न्यायालय ने एक महत्वपूर्ण टिप्पणी की थी और वह यह थी कि डाक्टर लोढ़ा और डाक्टर गांधी को इतनी दूर से क्यों बुलवाया गया जब कि डाक्टर केलकर जो त्वचा विशेषज्ञ थे, उसी भवन में रहते थे। इस टिप्पणी का कोई सिर-पैर नहीं है। प्रकट है कि बिरधीचन्द शहर का प्रतिष्ठित व्यक्ति था और जब उसने देखा कि उसकी पुत्र-वधु मर चुकी है, तो उसने स्वभावत: अपरिचित व्यक्तियों को बुलवाने के बजाय अपने परिवार के डाक्टर को बुलवाया।

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

110. ऐसा प्रतीत होता है कि अभियोजन साक्षी-30, मोहन आसव को फोन पर भी बुलवाया गया था और जब वह घटना-स्थल पर आया तो उसने अपीलार्थी-2, बिरधीचन्द को कमरे के फर्श पर बैठे हुए पाया और बिरंधीचन्द दुखी होकर उससे लिपट गए और उससे कहा कि मंजु आघात से मर गई है और डाक्टर मृत्यु प्रमाण-पत्र देने के लिए तैयार नहीं है।

111. इस साक्षी के साक्ष्य को समझने के लिए अभियोजन साक्षी-30 से सम्बन्धित घटनाओं का क्रम निर्धारित करना आवश्यक है। इस साक्षी का कहना है कि जिस समय वह सो रहा था, वह राम विलास शारदा (अपीलार्थी का भाई) द्वारा दरवाजे पर प्रातः लगभग 4.00 या 4.15 उजे दस्तक देने पर उठा था। राम विलास ने उसे बताया था कि मंजु मर गई है और डाक्टर मृत्यु प्रमाण-पत्र देने के लिए तैयार नहीं है। यह बात करने के बाद साक्षी राम विलास के साथ-साथ अपार्टमैंट्स में गया और प्रातः 5.30 बजे तक वहां रहा। इसके बाद वह अपने घर लौट आया, नहाया और लगभग 6.30 बजे उसे राम विलास का एक फोन मिला कि पुलिस में रिपोर्ट कर दी जाए और यह प्रार्थना की थी कि मृत्यु का समय प्रातः 5.30 बजे बताया जाए। फलस्वरूप, वह लगभग 7 बजे या 7.30 बजे पुलिस स्टेशन पहुंचा और यह रिपोर्ट लिखाई कि मंजु प्रातः 5.30 बजे मर गई है।

112. इस साक्षी का पूर्ववृत्त संदेहास्पद प्रतीत होता है और इसीलिए उसका साक्ष्य बहुत सूक्ष्म रूप में माना जाएगा। पृष्ठ 387 पर उसने अपने कथन में यह स्वीकार किया है कि चुंगी अपवंचन के बारे में कार्यवाहियां उसके विरुद्ध न्यायालय में लम्बित हैं। उसने यह भी स्वीकार किया कि वह खाद्य अपमिश्रण निवारण अधिनियम के अधीन 1973 में सिद्ध दोष किया गया था और 9 मास के कठोर कारावास के लिए दण्डादिष्ट किया गया था।

113. इसके अलावा ऐसा प्रतीत होता है कि बिरधीचन्द और अन्य अभियुक्तों के विरुद्ध न्यायालय में उसने जो कथन किए हैं, उनमें से अधिकांश उसने पुलिस के समक्ष नहीं किए थे। ये कथन उससे पूछे गए थे और उसने इन्कार कर दिया था किन्तु वे अन्वेषण अधिकारी, अभियोजन साक्षी-40 द्वारा सिद्ध कर दिए गए हैं, जिसका साक्ष्य मुद्रित पेपर बुक के भाग-II के पृष्ठ 521 पर दिखाई पड़ता है। विलम्ब से न्यायालय में किए गए इन कथनों का सारांश इस प्रकार दिया जा सकता है—

114. न्यायालय के समक्ष अपने कथन में जबकि साक्षी ने पृष्ठ 386 (पैरा 19) पर कहा है कि मंजु की मृत्यु संदेहास्पद है, फिर भी उसने उस समय पुलिस के समक्ष ऐसा कथन नहीं किया था जब अभियोजन साक्षी-40 का कथन उसे बताया गया था। एक दूसरा महत्वपूर्ण मुद्दा जिस पर उसका कथन

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



सही प्रतीत नहीं होता, यह है कि बिरधीचन्द और अन्य द्वारा उसे बताया गया प्रमुख तथ्य यह था कि डाक्टर मृत्यु प्रमाण-पत्र देने के लिए तैयार नहीं थे किन्तु उसने पुलिस के सामने ऐसा नहीं कहा था। इसी प्रकार, उसने बिरधीचन्द द्वारा किए गए कथन के बारे में न्यायालय में अभिसाक्ष्य दिया कि उसकी प्रतिष्ठा चली जाएगी और इसीलिए सुबह 7.00 बजे से पहले दाह-संस्कार कर दिया जाना चाहिए किन्तु उसने तब तक ऐसा न करने की सलाह दी जब तक कि वह पुलिस को न बता दे, क्योंकि अन्यथा उसका सारा परिवार मुसीबत में पड़ जाएगा। पृष्ठ 381 पर पैरा 5 में उसके साक्ष्य का सम्पूर्ण भाग बाद में सोचा गया गया प्रतीत होता है, जैसा कि अभियोजन साक्षी 40 ने कहा था—

"मैंने अभियोजन साक्षी-30 मोहन आसव का कथन लेखबद्ध किया। मेरे समक्ष उसने ऐसा नहीं कहा कि मंजु की मृत्यु संदेहास्पद है। मेरे समक्ष उसने यह नहीं कहा कि अभियुक्त सं० 3 ने उसे यह जानकारी दी थी कि डाक्टर मृत्यु प्रमाणपत्र देने के लिए तैयार नहीं हैं। उसने मेरे समक्ष यह नहीं कहा कि मृत्यु प्रमाणपत्र डाक्टरों से मांगा गया था और उन्होंने उसे देने से इंकार कर दिया था। अपने कथन के दौरान इस साक्षी ने अपनी मुख्य परीक्षा के भाग क से च को छोड़कर पैरा सं० 5 के अनुसार कथन नहीं किया।"

115. अभियोजन साक्षी 30 की मुख्य परीक्षा के पैरा 5 में "क" से "च" के रूप में निर्दिष्ट भाग इस प्रकार उद्धृत किए जा सकते हैं—

"इसके बाद बिरधीचन्द ने मुझे बताया कि मंजु आघात से मर गई है और यह कि······उसने कहा कि वह हृदयगति रुकने से मरी है······किसी भी हालत में वह 7.00 बजे से पहले मंजु का दाह-संस्कार करना चाहता था······जब उसने कहा कि चाहे कुछ भी खर्च हो जाए, वह उसका दाह-संस्कार प्रातः 7.00 बजे से पहले करना चाहता है।"

116. यह कथन निम्नलिखित कारणों से सही प्रतीत नहीं होता—

(क) बिरधीचन्द भली प्रकार जानता था कि वह अभियोजन साक्षी-30 एक पुलिस का सिपाही है और चूंकि वह डाक्टरों को मृत्यु प्रमाण-पत्र देने के लिए मनाने के लिए तैयार नहीं था, इसलिए उसका बर्ताव मित्रतापूर्ण नहीं था क्योंकि वह इस बात पर जोर दे रहा था कि मामले की रिपोर्ट पुलिस में करा दी जाए।

अतः यह विश्वास करना कठिन है कि बिरधीचन्द खुलेआम कहकर इतना जोखिम उठाएगा जबकि वह अच्छी तरह जानता था कि

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

वह साक्षी इतना मैत्रीपूर्ण नहीं है, जैसा वह सोचता था और इसीलिए वह पुलिस को सूचित करना चाहता था, ऐसा करके वह खुद अपनी कब्र खोदता।

(ख) इसी तर्क के आधार पर अपीलार्थी की ओर से यह अत्यन्त असंभाव्य था कि वह पुलिस को मामले को रिपोर्ट देने का विनिश्चय करने के बाद अभियोजन साक्षी-30 से मृत्यु का समय प्रातः 5.30 बजे रिपोर्ट करने के लिए कहा था जबकि वह उसके बर्ताव से भलीभांति परिचित था जब वह उनके फ्लैट पर आया था।

117. यह बिलकुल भी समझ में नहीं आता कि वह साक्षी मंजु की मृत्यु का समय प्रातः 7.30 बजे कैसे लिखा सकता था अथवा किसी भी हालत में जब उसकी मृत्यु की जानकारी उसके पति को थी और जब वह स्वयं फ्लैट में प्रातः लगभग 4.15 बजे गया था, तब वह भली-भांति जानता था कि मंजु इससे पहले मर चुकी थी और डाक्टर लोढ़ा तथा डाक्टर गांधी ने उसे प्रमाणित कर दिया था तथा बिरधीचन्द को पुलिस में मामले की रिपोर्ट देने की सलाह दी थी। मूल प्रदर्श-120 (मराठी भाषा में) में ऐसा प्रतीत होता है कि साक्षी द्वारा दिया गया मृत्यु का समय "पहटे" है, जिसका मोलसवर्थ के मराठी-अंग्रेजी कोश के पृष्ठ 497 के अनुसार अर्थ है "सूर्योदय से पहले छह घटिक की अवधि, उषाकाल यानी सूर्योदय से लगभग 2 घंटा 24 मिनट पहले (एक घटिक 24 मिनट के बराबर)। इसके द्वारा हम प्रातः लगभग 3.00 बजे के निकट आ जाते हैं। जैसा कि मूल प्रदर्श 120 में उल्लेख किया गया है, "पहटे" शब्द के अनुवाद में या "प्रातः 5.30 बजे" शब्दों में कुछ भ्रम है। फिर भी इससे केवल यही अंतर है पड़ता है कि साक्षी के अनुसार मंजु की मृत्यु प्रातः 3.00 बजे के आस-पास हुई होगी जोकि डाक्टर लोढ़ा के इस साक्ष्य से मेल खाती है कि जब उसने प्रातः लगभग 2.30 बजे मंजु की परीक्षा की थी तो उसने उसे मृत पाया था और मृत्यु काठिन्य पहले ही आरम्भ हो चुका था।

118. यहां हमारा सम्बन्ध इस संविवाद से नहीं है कि रिपोर्ट दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 154 या धारा 174 के अधीन ग्राह्य है अथवा नहीं किन्तु तथ्य यह रहता है कि पुलिस को यह सूचना मिली थी कि मृत्यु प्रातः 5.30 बजे हुई है। ऐसा प्रतीत होता है कि उच्च न्यायालय ने इस छोटी-सी घटना का सहारा ले लिया कि उसने बिरधीचन्द और उसके परिवार की समस्या के प्रति यथार्थवादी दृष्टिकोण नहीं अपनाया। नगर के प्रतिष्ठित व्यक्ति होने के नाते बिरधीचन्द जल्दबाजी नहीं करना चाहते थे जिससे कि उनकी प्रतिष्ठा में क्षति न हो और स्वभावतः कोई कार्रवाई करने से पहले वे सोचते और अपने मित्रों की सलाह लेना चाहते थे। यह अभिकथन कि अपीलार्थी-3 ने उसे मृत्यु

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



का समय प्रातः 5.30 बजे रिपोर्ट करने के लिए कहा था, बिलकुल भी साबित नहीं हुआ है किन्तु पुलिस के समक्ष अभियोजन साक्षी-30 के कथन पर आधारित है। इस प्रकार विषय के इस पहलू पर उच्च न्यायालय द्वारा अपनाया गया दृष्टिकोण कृत्रिम और अयथार्थवादी प्रतीत होता है क्योंकि उसने यह नहीं समझा कि मृतक की मृत्यु का प्रातः 3·30 बजे के समय का प्रश्न अपीलार्थी या अन्य किसी अभियुक्त द्वारा कभी नहीं उठाया जा सकता था क्योंकि वे भली-भाँति जानते थे कि दो डाक्टरों ने पूर्ण मामले की जांच की है और मृत्यु का समय लगभग 1.30 बजे दिया है। इन सब बातों को जानते हुए कोई अभियोजन साक्षी-30 से पुलिस स्टेशन पर मृत्यु का समय प्रातः 5.30 बजे देने के लिए कैसे कह सकता था।

119. इस प्रकार हमारे लिए ऐसे साक्षियों के साक्ष्य पर निर्भर करना कठिन होगा जिसने गलत कथन किए हैं तथा बिरधीचन्द और अभियोजन पक्ष दोनों को खुश करने की कोशिश की है। अतः उसका साक्ष्य विश्वास के योग्य नहीं है।

120. इस मुद्दे पर मामले का अंतिम भाग अभियोजन साक्षी-2 और 4 का साक्ष्य है। इसमें यह बताया गया कि अपीलार्थी ने उनसे कहा था कि उसने 12 जून, 1982 को प्रातः लगभग 5 बजे अपनी पत्नी के साथ संभोग किया था। अपीलार्थी के कथन में अन्तर्निहित असम्भावना के अलावा एक अन्य परिस्थिति है, जो इस विवाद्यक से अधिक सम्बन्धित है। ऐसा प्रतीत होता है कि कलघाटगी (अभियोजन साक्षी-20), पुलिस थाने के भारसाधक निरीक्षक ने डाक्टर बनर्जी से कुछ पूछताछ की थी, जोकि निम्न प्रकार है—

> "क्या यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है या नहीं कि मृत्यु से ठीक पूर्व लैंगिक मैथुन हुआ था?"

यह प्रश्न प्रदर्श 129 में किया गया था और डाक्टर का उत्तर प्रदर्श 187 में है, जो इस प्रकार है—

> "परिचर्यात्मक परीक्षा से मृत्यु से ठीक पूर्व किसी लैंगिक मैथुन के होने का निश्चित साक्ष्य नहीं मिलता।"

121. अतः डाक्टर का यह निश्चित निष्कर्ष अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत पक्षकथन की तह पर प्रहार करता है कि अपीलार्थी ने अभियोजन साक्षी-2 और 4 से अपनी पत्नी के साथ लैंगिक मैथुन करने के बारे में बताया था किन्तु दुर्भाग्यवश उच्च न्यायालय ने इस महत्वपूर्ण परिस्थिति का फायदा अभियुक्त को देने के बजाय अभियोजन पक्ष को दे दिया और यह अभियोजन पक्ष के साक्ष्य का मूल्यांकन करते समय उच्च न्यायालय के दृष्टिकोण में एक दूसरी गलती है। अपने शयन-कक्ष में अपीलार्थी के पहुंचने और मंजु की मृत्यु के बीच बहुत कम

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh


समय के अंतर को ध्यान में रखते हुए यह विश्वास करना बिलकुल असंभव प्रतीत होता है कि उसने अपनी पत्नी के साथ लैंगिक मैथुन करने का प्रयास किया होगा। अतः यह परिस्थिति इस मुद्दे पर अभियोजन साक्षी-2 और 4 के साक्ष्य को मिथ्या सिद्ध कर देती है और इससे यहां तक पता चलता है कि साक्षी अपीलार्थी को फंसाने के लिए कितना झूठ बोल सकते हैं।

122. अन्त में बिरधीचन्द की विक्षुब्ध मनःस्थिति और उसके कुटुम्ब की मुसीबत को ध्यान में रखते हुए यह विश्वास करना कठिन है कि जब अपीलार्थी से अभियोजन साक्षी-2 मिला था तब अपीलार्थी द्वारा व्यक्त दुख और उसके द्वारा रोना बनावटी कहा जा सकता है। यदि यह मान लिया जाए कि अभियुक्त ने मृतक की हत्या नहीं की तो अभियोजन साक्षी के सामने रोना-बिलखना और दुख प्रकट करना बिलकुल स्वाभाविक होगा, मिथ्या नहीं।

123. अन्य छोटी-छोटी बातें भी हैं, जिन पर उच्च न्यायालय ने विचार किया है किन्तु वे हमें बहुत तात्विक प्रतीत नहीं होतीं।

124. अभियोजन पक्ष की इस पहलू पर सम्पूर्ण तस्वीर को दृष्टि में रखने पर स्थिति निम्नलिखित प्रतीत होती है—

(1) यदि अभियुक्त मंजु के जागते रहने के दौरान उसे जहर देना चाहता था तो उसने अधिकतम प्रतिरोध किया होगा, जैसा कि उसकी स्थिति में अन्य कोई भी करता। मरणोत्तर परीक्षा रिपोर्ट में डाक्टर बनर्जी ने हिंसा या प्रतिरोध का कोई चिन्ह नहीं पाया है। यदि अपीलार्थी उसे काबू कर लेता, तो भी वह चिल्लाती-चीखती और आस-पास के फ्लैट से लोग एकत्र हो जाते जो इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए एक भारी जोखिम हो जाती कि उस घर के कुछ लोग अपीलार्थी से कुछ ही पहले आए थे।

(2) एक दूसरी संभावना भी हो सकती है, जिसे नकारा नहीं जा सकता और वह यह है कि मंजु के पानी मांगने पर उसे पानी के गिलास में पोटाशियम सायनाइड दे दिया गया हो, किन्तु ऐसा नहीं था क्योंकि वह स्वयं कैमिस्ट थी और वह इस चालाकी को तुरन्त भांप लेती और यदि एक बार उसे शंका पैदा हो जाती तो अपीलार्थी के लिए उसकी हत्या करना बहुत कठिन हो जाता।

(3) तीसरी संभावना यह है कि चूंकि मंजु फ्लैट में काफी देर से लौटी थी, इसलिए वह अपीलार्थी के आने से पहले ही सोने चली गई और उसने यांत्रिक श्वासावरोध की प्रक्रिया में विष जबरदस्ती देने का प्रयास किया होगा। इसी स्थिति में मृतक कोई प्रतिरोध नहीं कर सकती थी। किन्तु उच्च न्यायालय ने डाक्टर की यह राय स्वीकार

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



नहीं की है। उच्च न्यायालय ने साक्ष्य, परिस्थितियों और चिकित्सा-नज़ीरों पर विस्तारपूर्वक विचार और चर्चा करने के बाद यह राय व्यक्त की कि डाक्टर की राय कि मंजु यांत्रिक श्वासावरोध से मरी है, साबित नहीं हुआ है, अथवा किसी भी स्थिति में ऐसे साक्ष्य पर निर्भर करना सुरक्षित नहीं होगा। इस सम्बन्ध में हम इस मुद्दे पर उच्च न्यायालय द्वारा निकाले गए तथ्य सम्बन्धी निष्कर्ष का हवाला देना चाहेंगे—

"डाक्टर बनर्जी के साक्ष्य से और चिकित्सा प्राधिकारियों द्वारा व्यक्त किए गए मतों से जो उपरोक्त स्थिति सामने आती है, उसकी दृष्टि से यह कहना संभव नहीं होगा कि दायें निलय में गहरे लाल रंग के विद्यमान होने से अनन्यतः यांत्रिक श्वासावरोध का संकेत मिलता है, विशेषरूप से जबकि ऐसा लक्षण पोटाशियम सायनाइड द्वारा विष देने के मामले में होता है।" —(पेपर बुक पृष्ठ 147-48)

"इस उत्तर की दृष्टि से अनन्यतः यह कहना संभव नहीं होगा कि यह विशिष्ट लक्षण यांत्रिक श्वासावरोध की स्थिति में अनन्यतः उपलब्ध होता है।

इस प्रकार हम उन सातों मदों पर चर्चा कर चुके हैं, जिन पर डाक्टर बनर्जी ने यह राय देने के प्रयोजन के लिए निर्भर किया है कि यांत्रिक श्वासावरोध था। अतः हमारे मतानुसार, ये सात निष्कर्ष यह अभिनिर्धारित करने के प्रयोजन के लिए अनन्य आंकड़े प्रस्तुत नहीं करेंगे कि यांत्रिक श्वासावरोध हुआ था। चूंकि उपरोक्त सात निष्कर्ष सायनाइड विष देने के मामले में भी विद्यमान हो सकते हैं, इसलिए हमारा विचार है कि यह सकारात्मक निष्कर्ष लेखबद्ध करने के लिए कि यांत्रिक श्वासावरोध हुआ है, इन परिस्थितियों पर निर्भर करना सुरक्षित नहीं होगा।" —(पृष्ठ 150-151)

125. उच्च न्यायालय ने जिन परिस्थितियों पर निर्भर किया है, उन्हें यहां दोहराना सम्भव नहीं है क्योंकि तथ्य सम्बन्धी निष्कर्ष स्वयं सिद्ध होते हैं। ऐसी स्थिति में यांत्रिक श्वासावरोध की संभावना बिल्कुल भी नहीं है।

(4) एक दूसरी संभावना जो सोची जा सकती है, वह यह है कि मंजु प्राकृतिक मृत्यु से मरी है किन्तु रासायनिक परीक्षक की रिपोर्ट से यह बात भी गलत सिद्ध हो जाती है, जैसा कि मरणोत्तर-परीक्षा रिपोर्ट से पुष्ट है कि मृतक पोटाशियम सायनाइड ग्रहण करने के फलस्वरूप मरी थी।

(5) अब केवल यह युक्तियुक्त संभावना बची है कि चूंकि

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh


मृतक अपने पति के दुर्व्यवहार से दुखी थी, इसलिए प्रतिशोध और विद्रोह की मिश्रित भावना में उसने फ्लैट में प्रवेश करने के बाद अपने आप पोटाशियम सायनाइड खा लिया हो और निर्जीव होकर लेटी रही। जब अपीलार्थी कमरे में घुसा तो उसने यह सोचा होगा कि वह सो रही है और उसे छेड़ने की आवश्यकता नहीं है किन्तु जब उसने देखा कि घण्टों तक भी शरीर बिलकुल नहीं हिला-डुला तो उसे आशंका होने लगी और फलस्वरूप उसने समीप के फ्लैट से अपने भाई को डाक्टर लोढ़ा को बुलाने के लिए भेज दिया।

126. इन परिस्थितियों में यह नहीं कहा जा सकता कि प्रतिरक्षा पक्ष के अभिकथनानुसार आत्म-हत्या करने की मृतक की युक्तियुक्त संभावना को नकारना या निराकृत करना सुरक्षित हो सकता है।

127. ऊपर वर्णित परिस्थितियों की समीक्षा करने पर हमारी यह राय है कि चूंकि अपीलार्थी को अंतिम बार मृतक के साथ देखे जाने की स्थिति इतनी निश्चायक रूप से नहीं की गई है कि उससे यह अनिवार्य निष्कर्ष निकाला जा सके कि मंजु की मृत्यु एक घोर मानव-वध का मामला था।

128. अब हम मामले के एक महत्वपूर्ण तथ्य पर आते हैं, जिस पर अपीलार्थी की ओर से श्री जेठमलानी ने बहुत निर्भर किया प्रतीत होता है। फिर भी दुर्भाग्य की बात है कि मरणोत्तर परीक्षा रिपोर्ट में किए गए प्रक्षेपणों सम्बन्धी पहलू को उच्च न्यायालय ने पूरी तरह अनदेखा कर दिया है क्योंकि उसने उक्त प्रक्षेपणों के समर्थन में चिकित्सा साक्ष्य में विद्यमान दुर्बलता को कोई महत्व नहीं दिया। यद्यपि अपीलार्थी के विद्वान् काउन्सेल ने हमारा ध्यान मरणोत्तर रिपोर्ट में अनेक प्रक्षेपणों एवं रासायनिक परीक्षक को भेजी गई रिपोर्ट की ओर आकर्षित किया था, फिर भी हम केवल दो न्यूनताओं से प्रभावित हुए हैं, जिन पर गहन विचार किया जाना चाहिए। पहले तो यह संकेत किया गया है कि मूल मरणोत्तर टिप्पण में जो कि डाक्टर बनर्जी (अभियोजन साक्षी-33) को उसकी राय के लिए भेजा गया था, स्पष्ट प्रक्षेपण है, जिसके द्वारा "आत्म-हत्या का मामला हो सकता है" शब्द काटे गए प्रतीत होते हैं और डाक्टर बनर्जी ने यह स्पष्ट कर दिया था कि चूंकि "मृत्यु से समय" शब्द उसने दोबारा लिखे थे, इसलिए उसने बाद में लिखे हुए शब्द काट दिए थे, दूसरे शब्दों में, डाक्टर ने बाद वाले भाग को काटना स्पष्ट रूप से स्वीकार किया है। अत: हम यह देखेंगे कि जो उन्होंने स्पष्टीकरण दिया है, वह सही है या नहीं। इस विवाद्यक का विनिश्चय करने के लिए हमने मूल मरणोत्तर टिप्पण (प्रदर्श 128) की स्वयं परीक्षा की जिसमें वह लेख स्वीकृत रूप से डाक्टर बनर्जी द्वारा काटा गया है। वह सुसंगत स्तम्भ, जिसके सामने शब्द काटे

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

गए हैं, स्तम्भ सं० 5 है, जोकि इस प्रकार है—

> "5. पुलिस अधिकारी या मजिस्ट्रेट की संलग्न रिपोर्ट का सार मृत्यु की तारीख सहित यदि ज्ञात है। मृत्यु का अनुमानित करण या परीक्षा का कारण।"

129. अन्तिम पंक्ति से यह संकेत मिलता है कि डाक्टर को दो बातों पर ध्यान देना था—(1) मृत्यु की तारीख, यदि ज्ञात है और (2) मृत्यु का अनुमानित कारण। ऐसा प्रतीत होता है कि यह दस्तावेज अभियोजन साक्षी-33 ने 12-6-82 को अपराह्न 4.30 बजे लिखा था। डाक्टर द्वारा लिखे गए शब्दों का सुसंगत भाग है "मृत्यु का समय", जो उसके कथनानुसार उसके कथन में दोहराए गए थे। इन शब्दों के बाद कुछ अन्य शब्द स्वीकृत रूप से काट दिए गए औरउ सका (अभियोजन साक्षी 33) का स्पष्टीकरण था कि चूंकि उसने "मृत्यु से समय" दो बार लिख दिया था, इसलिए पुनरावृत्ति के कारण उसने दूसरी पंक्ति काट दी थी। प्रदर्श 128 को देखने मात्र से यह पता नहीं चलता कि डाक्टर का स्पष्टीकरण सही है। हमने मैग्निफाइंग शीशे की सहायता से उक्त शब्दों की अपने आप परीक्षा की है और देखा है कि काटे गए शब्द "मृत्यु से समय" अर्थात् "टाइम सिन्स डैथ" नहीं कहा जा सकता था। जो पंक्ति काट दी गई है और पंक्ति रहने दी गई है, उनके बीच एक सामान्य शब्द केवल "मृत्यु" यानी "डैथ" है। हमारी राय में काटे गए शब्द "केन बी ए केस आफ स्वसाइडल डैथ" अर्थात् "आत्म-हत्या का मामला हो सकता है", प्रतीत होते हैं। किन्तु डाक्टर बनर्जी अपनी आरम्भिक बात पर डटे रहे जो स्वयं दस्तावेज में उनके लेख से समर्थित नहीं है। हमें ऐसा प्रतीत होता है कि पहली बार जब उन्होंने मरणोत्तर-टिप्पण लिखा था, तो उन्हें ऐसा प्रतीत हुआ कि कोई असमानता दिखाई नहीं दी औरयह मानव-वध के बजायआत्म-हत्या का मामला प्रतीत होता है। अत: यह परिस्थिति प्रतिरक्षा को अत्यन्त संभाव्य, यदि निश्चित नहीं, बनाने के लिए प्रबलतम संभव परिस्थिति है। इसके अतिरिक्त डाक्टर का यह स्पष्टीकरण कि काटे गए शब्द "टाइम सिन्स डैथ" थे, उक्त स्पष्टीकरण के अनुसार काटे गए शब्द केवल तीन हैं जबकि काटे गए भाग में 7 शब्द हैं। इस प्रकार डाक्टर का स्पष्टीकरण दस्तावेज से सिद्ध नहीं होता।

130. यह सही है कि डाक्टर ने रासायनिक परीक्षक की रिपोर्ट आने तक अपनी राय आरक्षित रखी किन्तु इससे प्रश्न का उत्तर नहीं मिलता क्योंकि मरणोत्तर-टिप्पण के स्तम्भ 5 में डाक्टर बनर्जी ने स्पष्ट लिखा है कि "कैन बी ए केस आफ स्वसाइडल डैथ" जिससे यह संकेत मिलता है कि रासायनिक परीक्षक की रिपोर्ट की अनुपस्थिति में उनकी राय थी कि यह एक आत्म-हत्या का मामला हो सकता है। अपने साक्ष्य में अभियोजन साक्षी 33 ने कहा

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh


है कि स्तम्भ सं० 5 में प्रदर्श 128 में काटे गए शब्द हैं "टाइम सिन्स डैथ" और चूंकि अगली पंक्ति में इसकी पुनरावृत्ति की गई थी, इसलिए उन्होंने दूसरी पंक्ति के शब्द काट दिए। अनवरत प्रतिपरीक्षा के बावजूद डाक्टर अपनी बात पर डटा रहा प्रतीत होता है। अतः यह कहने से कोई प्रयोजन सिद्ध नहीं होगा कि यह बात बहुत महत्वपूर्ण थी और हम उच्च न्यायालय से यह प्रत्याशा करते हैं कि इस पहलू पर गम्भीरता से ध्यान दिया जाता जोकि अभियुक्त के पक्ष में जाती है।

131. विद्वान् काउन्सेल द्वारा बताया गया एक दूसरे प्रक्षेपण जिह्वा की स्थिति के बारे में है, जैसा प्रदर्श 134 में उल्लेख किया गया है। मूल में उक्त स्तम्भ भरते समय, ऐसा प्रतीत होता है कि डाक्टर ने कोई चीज काटी है। भरी गई प्रविष्टि इस प्रकार प्रतीत होती है 'माउथ इज क्लोज्ड विद टिप (समथिंग स्कोर्ड आउट) सीन काट बिटविन दी टीथ"। किन्तु रिपोर्ट की कार्बन प्रतिलिपि में, जो रासायनिक परीक्षक को भेजी गई थी (प्रदर्श 132) उन्होंने "कॉट बिटविन दी टीथ" स्याही से जोड़े हैं किन्तु मूल में कुछ और है। यह इस तथ्य से समर्थित है कि रिपोर्ट की जो प्रतिलिपि रासायनिक परीक्षक के परीक्षक के पास वास्तव में भेजी गई थी, उसमें उक्त स्तम्भ के सामने कोई प्रक्षेपण नहीं है, जहां पर "इनसाइड माउथ" ("मुंह के अन्दर") लिखा गया है।

132. इन परिस्थितियों का संयुक्त प्रभाव यह दर्शाता है कि डाक्टर बनर्जी (अभियोजन साक्षी-33) ने जीभ की स्थिति के बारे में कुछ अतिरिक्त तथ्य प्रस्तुत करने का प्रयास किया था। कदाचित यह उनकी अन्तिम राय के कारण था कि मृतक की मृत्यु यांत्रिक श्वासावरोध के कारण हुई थी जिससे जीभ दांतों के दांतों बीच में दब सकती है। किन्तु इससे उनके द्वारा लिखी गई और रासायनिक परीक्षक को भेजी गई वास्तविक रिपोर्टों के सही या गलत होने पर बहुत संदेह उत्पन्न होता है। इस प्रकार यह प्रकट है कि कार्बन प्रतिलिपि में जो डाक्टर ने अपने पास रखी थी, प्रविष्टियां रासायनिक परीक्षा को भेजी गई प्रति के बाद की गई होंगी। किन्तु इस परिस्थिति का बहुत महत्व नहीं है, क्योंकि डाक्टर की राय की मन्जु की मृत्यु पोटाशियम सायनाइट जबरदस्ती देने से या यांत्रिक श्वासावरोध की प्रक्रिया से हुई थी, साबित नहीं हुई है। इस पहलू पर अधिक देर रुकने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि उच्च न्यायालय ने यांत्रिक श्वासावरोध की बात स्वीकार नहीं की है।

133. जहां तक डाक्टर बनर्जी के अन्य निष्कर्षों का सम्बन्ध है, हम उनसे पूरी तरह सहमत हैं। डाक्टर बनर्जी की निष्ठा और गलत रिपोर्ट के बारे में अपीलार्थी की ओर से अनेक बातें कही गईं। किन्तु हमने जो कुछ कहा है,

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



उसको ध्यान में रखते हुए हमें इन दलीलों में कोई सार दिखाई नहीं पड़ता।

134. अपने निर्णय के पैरा 90 में उच्च न्यायालय ने ऐसी अनेक परिस्थितियां बताई हैं, जो उसके अनुसार अभियोजन-पक्ष के इस कथन को साबित कर देती है कि अपीलार्थी ने 11 जून, 1982 की रात को विष दिया था। ये परिस्थितियां निम्न प्रकार उद्धृत की जा सकती हैं—

(1) मन्जु की मृत्यु शयन-कक्ष में 11/12 जून, 1982 की रात को 11 30 बजे और 1.00 बजे के बीच विष देने से हुई थी।

(2) अभियुक्त सं० 1 मन्जु की मृत्यु से पहले से अर्थात् रात के लगभग 11.15 बजे उस शयन-कक्ष में उपस्थित था।

(3) अभियुक्त सं० 1 रात के 1.30 बजे या 1.45 बजे फ्लैट में नहीं लौटा था, जैसा कि अभिकथन किया गया है।

(4) डाक्टर श्रीकान्त केलकर और या श्रीमती अन्जली केलकर को सहायता के लिए तुरन्त न बुलाने में अभियुक्त सं० 1 का आचरण उसकी इस प्रतिरक्षा से असंगत है कि जब वह रात को 1.30 बजे फ्लैट में अभिकथित रूप से लौटा था, तो उसे मंजु के स्वास्थ्य के बारे में संदेह महसूस हुआ था।

(5) अभियुक्त सं० 1 का उस समय उदासीन आचरण जब डाक्टर लोढ़ा और डाक्टर गांधी तक्षशिला अपार्टमेंट्स वाले फ्लैट में आए थे। अभियुक्त सं० 1 ने ऐसी कोई व्याकुलता नहीं दिखाई जैसे आमतौर पर उस समय दिखाई पड़ती है जब डाक्टर मरीज़ की जांच करने आता है। अभियुक्त सं० 1 को उस समय डाक्टरों के पास होना चाहिए था जब उन्होंने मंजु की जांच की थी और उसे अपनी पत्नी के अच्छे होने के बारे में अभिव्यक्त रूप से या अपने व्यवहार से अपनी भावनाएं प्रकट करनी चाहिएं थीं। उसके लिए यह अभिकथित तथ्य प्रकट करना भी आवश्यक था कि जब वह रात को लगभग 1.30 बजे या इसके आस-पास लौटा तो उसने मंजु को संदेहास्पद अवस्था में पाया।

(6) मंजू का दाह-संस्कार 12-6-82 को प्रात: 7 बजे से पहले कितनी भी रकम खर्च करके भी कराने का बिरधीचन्द का प्रयास। बिरधीचन्द का यह आचरण ऐसे व्यक्ति के आचरण को दर्शाता है, जिसके पास अभियुक्त सं० 1 गया था और उसने उस घटना के बारे में बताया था।

(7) मोहन आसव द्वारा पुलिस को हत्या की देर से और झूठी सूचना। यद्यपि सूचना मोहन द्वारा अभियुक्त सं० 3 के फोन पर दी

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh


गई हिदायतों के अनुसार दी गई थी, फिर भी यह माना जाता है कि अभियुक्त सं० 1 ने उस घटना के बारे में अभियुक्त सं० 3 को बताया होगा और उसके आधार पर अभियुक्त सं० 3 ने मोहन आसव को हिदायतें दीं थी।

(8) पुलिस को सही जानकारी देने के लिए अभियुक्त सं० 1 ने स्वयं अपने आप या किसी दूसरे के माध्यम से कोई कार्रवाई नहीं की।

(9) यह दर्शाने के लिए कि मंजु की मृत्यु शांतिपूर्वक और प्राकृतिक मृत्यु हुई है, उसके शव को उस रूप में रखना।

(10) अभियुक्त सं० 1 के पास मंजु को मारने का हेतु था क्योंकि वह उज्जवला के साथ अपने सम्बन्ध जारी रखने के लिए उससे छुटकारा पाना चाहता था।

(11) मंजु के बाएं पैर में पायजेब का न होना, इस प्रतिरक्षा से असंगत है कि मंजु ने आत्म-हत्या की थी।

(12) चादर की तह में पायजेब छिपाने का आचरण एक दोषी आदमी का आचरण है।

(13) शयन-कक्ष का दरवाजा अन्दर से बन्द नहीं पाया गया। यदि मंजु आत्म-हत्या करती तो वह सामान्यतः दरवाजा अन्दर से बन्द कर लेती।

(14) निश्चय ही मंजु के पास पोटाशियम सायनाइड नहीं होगा।

(15) मंजु 4 से 6 सप्ताह की गर्भवती थी। यह एक ऐसी परिस्थिति है जो आमतौर पर उसे आत्म-हत्या करने से रोकती।

(16) स्वीकृत या साबित तथ्यों से अभियुक्त सं० 1 की ओर से प्रत्याख्यान।

(17) सुसंगत समय पर शयन-कक्ष में अनुपस्थित होने का मिथ्या अभिवाक्। —(पृष्ठ 152-155)

135. हम ऊपर दी गई अधिकांश परिस्थितियों की पहले ही चर्चा कर चुके हैं और अपनी राय दे चुके हैं तथा परिस्थिति सं० 1, 2, 3, 4, 5 और 6 के प्रभाव की भी पूरी तरह व्याख्या कर चुके हैं। भले ही पुनरावृत्ति हो फिर भी हम पुनः यह कहना चाहेंगे कि ऐसा प्रतीत होता है कि उच्च न्यायालय ने परिस्थिति सं० 4 का बहुत अधिक अवलम्ब लिया है क्योंकि अपीलार्थी ने डाक्टर श्रीकांत केलकर (अभियोजन साक्षी-26) और डाक्टर (श्रीमती) अंजली केलकर (अभियोजन साक्षी-27) को तुरन्त नहीं बुलवाया। इतने गम्भीर विषय

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



में नितान्त स्वाभाविक था कि अपीलार्थी के परिवार के सदस्य अपने परिवार के डाक्टर को बुलवाते, जो परिवार के प्रत्येक सदस्य की बीमारी से पूरी तरह परिचित था। इन परिस्थितियों में यदि अपीलार्थी और उसका भाई डाक्टर लोढ़ा को लाने के लिए $1\frac{1}{2}$ किलोमीटर गए थे तो इसमें कुछ भी गलत नहीं था। दूसरे, डाक्टर श्रीकांत केलकर त्वचा विशेषज्ञ थे, जबकि डाक्टर (श्रीमती) केलकर बाल चिकित्सा विज्ञानी थीं और अपीलार्थी को यह सही विश्वास रहा हो कि चूंकि वे भिन्न शाखाओं के डाक्टर हैं, इसलिए ऐसे गम्भीर रोग का इलाज करने के लिए कतई उपयुक्त नहीं हैं। अतः उच्च न्यायालय ने इस परिस्थिति को अपीलार्थी के अपराधकारी आचरण के रूप में मानकर गलती की।

136. परिस्थिति सं० 5 एकदम अटकलबाजी है क्योंकि ज्यों ही डाक्टर लोढ़ा आए, उन्होंने मन्जु को देखा और सलाह दी कि डाक्टर गांधी को बुलवाया जाए। हमारी समझ में नहीं आता कि जब अपीलार्थी ने दो डाक्टरों को बुलवाया, जिन्होंने मृतक की परीक्षा की थी तो इसमें उसका उदासीन आचरण कैसे था। जब मृतक की जांच की जा रही थी तो अपीलार्थी उसी कमरे में या पास वाले कमरे में था। इससे यह निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता कि अपीलार्थी मन्जु की गम्भीर स्थिति के प्रति उदासीन था।

137. जहां तक परिस्थिति सं० 6 का सम्बन्ध है, हम मोहन आसव, अभियोजन साक्षी-30 के साक्ष्य पर विचार करते समय इसकी व्याख्या पहले ही कर चुके हैं। जहां तक परिस्थिति सं० 7 का सम्बन्ध है, उच्च न्यायालय ने यह उपधारणा की है कि चूंकि ऐसा कोई विश्वसनीय साक्ष्य नहीं है कि अभियोजन साक्षी-30 द्वारा पुलिस को दी गई इत्तिला झूंठी है और यह कि अपीलार्थी ने घटना के बारे में अपीलार्थी-3 को अवश्य बताया होगा, जिसके आधार पर उन्होंने अभियोजन साक्षी-30 को हिदायतें दीं। इसमें बिलकुल भी कोई सच्चाई नहीं है, जैसा कि हम अभियोजन साक्षी-30 के साक्ष्य पर विचार करते समय उल्लेख कर चुके हैं।

138. परिस्थिति सं० 8 का सम्बन्ध इस बात से है कि अभियोजन साक्षी-30 से मामले की रिपोर्ट पुलिस में करने के लिए कहा गया था। जब शव फ्लैट में पड़ा हुआ था तो अपने एक परिचित के माध्यम से पुलिस को रिपोर्ट देने के सिवाय अपीलार्थी क्या कर सकता था। जहां तक परिस्थिति सं० 9 और 10 का सम्बन्ध है, हमें ये कोई महत्वपूर्ण प्रतीत नहीं होती क्योंकि, जैसा कि हम बता चुके हैं, (प्रदर्श 30, 32 और 33) में पत्रों के पढ़ने से और अपीलार्थी के आचरण से हमें ऐसा कोई साक्ष्य दिखाई नहीं पड़ता कि मन्जु को मारने का अपीलार्थी का स्पष्ट हेतु था।

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

139. परिस्थिति सं० 11 और 12 भी अभियोजन-पक्ष के लिए सहायक नहीं हैं क्योंकि यह बात कि पायजेब चादर में थी या अन्यत्र नितांत महत्वहीन है और इससे प्रश्नगत विवाद्यक पर बिलकुल भी प्रभाव नहीं पड़ता। परिस्थिति सं० 13 भी अन्दाज की गई है, क्योंकि यदि शयन-कक्ष अन्दर से बन्द नहीं पाया गया था तो इस बात से यह पता नहीं चलता कि मन्जु आत्म-हत्या नहीं कर सकती थी। विभिन्न व्यक्ति परिस्थितियों में भिन्न-भिन्न तरीकों से प्रतिक्रिया करते हैं। जब मन्जु ने अपने शयन-कक्ष में प्रवेश किया था तो उसका पति नहीं आया था और चूंकि वह सो गई, इसलिए हो सकता है उसने अन्दर से कमरा इसलिए बन्द न किया हो ताकि उसका पति कमरे में आ सके। जहां तक परिस्थिति सं० 14 का सम्बन्ध है, उच्च न्यायालय ने अभियोजन साक्षी-2 के साक्ष्य के अत्यन्त महत्वपूर्ण अंश को अनदेखा कर दिया है। उसने मुद्रित पेपर बुक के भाग 1 पृष्ठ 178 पर यह कहा है—

> "बीड में प्लास्टिक का कारखाना एक भागीदारी समुत्थान है, जिसमें धनराज के दो पुत्र, मेरी पत्नी और भाभी यानी भाई की पत्नी भागीदार हैं।"

140. डाक्टर मोदी कृत मैडिकल ज्यूरिसप्रडैंस एण्ड टैक्सीकोलोजी (19वां संस्करण) (चिकित्सा न्यायशास्त्र और विषविज्ञान) के पृष्ठ 747 से पता चलता है कि "प्लास्टिक के लिए आधारभूत रासायन तैयार करने के लिए सायनाइड का भी प्रयोग किया जाता है।" इस तथ्य के अलावा कि उच्च न्यायालय ने इस परिस्थिति का अवलम्ब लेकर अभिलेख की स्पष्ट गलती की है, यह एक अतिरिक्त संघटक है, जिससे पता चलता है कि जब मन्जु अन्तिम बार बीड गई थी और वहां एक सप्ताह से अधिक ठहरी थी तो उसे वहां सायनाइड उपलब्ध हो सका होगा।

141. परिस्थिति सं० 15—यह तथ्य कि मन्जु 4 से 6 सप्ताह की गर्भवती थी, मन्जु को आत्म-हत्या करने से रोकेगा, विशुद्ध रूप से अनुमान की की बात है। 4 से 6 सप्ताह का गर्भ बहुत गम्भीर नहीं होता और उसे आसानी से साफ कराया जा सकता है। इसके अतिरिक्त जब किसी व्यक्ति ने अपना जीवन समाप्त करने का विनिश्चय कर लिया हो तो ये ऐसी बाते हैं, जिनका कोई महत्व नहीं है। इसके विपरीत हो सकता है, इस परिस्थिति से उसे आत्म-हत्या करने की प्रेरणा मिली हो क्योंकि यदि उसे बालक पैदा हुआ तो उसके पति और सास-श्वसुर के दुर्व्यहार की दृष्टि से, हो सकता है, बालक का भी उचित पालन-पोषण न हो। जो भी हो, हम उच्च न्यायालय की भांति अटकलों और अन्दाजों के क्षेत्र में विचरण करना नहीं चाहते।

142. परिस्थिति सं० 16 नितान्त असंगत है क्योंकि अभियोजन-पक्ष

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



एक मिथ्या अभिवाक् से कोई बल प्राप्त नहीं कर सकता जब तक कि वह पूर्ण निश्चितता के साथ अपने पक्ष-कथन को साबित न कर दे। परिस्थिति सं० 17 भी सुसंगत नहीं है क्योंकि सुसंगत समय पर शयन-कक्ष से अनुपस्थित रहने के मिथ्या अभिवाक् को उठाने का कोई प्रश्न नहीं है क्योंकि इस मुद्दे पर कोई स्पष्ट साक्ष्य नहीं है।

143. पूर्वोक्त टिप्पणियों के अलावा ऊपर वर्णित और उच्च न्यायालय द्वारा अवलम्बित परिस्थितियों में से कुछ में एक महत्वपूर्ण कमी है, अर्थात् परिस्थिति सं० 4, 5, 6, 8, 9, 11, 12, 13, 16 और 17। चूंकि ये परिस्थितियां दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन अपीलार्थी के कथन में उसके समक्ष नहीं रखी गई थी, इसलिए उन्हें विचार-क्षेत्र से पूरी तरह निकालना होगा क्योंकि अपीलार्थी को उन्हें स्पष्ट करने का कोई अवसर नहीं मिला। इस न्यायालय ने बहुत पहले 1953 में भी हमेशा यही अभिनिर्धारित किया है कि **फतेह सिह भगत सिह** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया था कि ऐसी कोई परिस्थिति, जिसकी बाबत अभियुक्त दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 342 के अधीन परीक्षित नहीं किया गया, उसके विरुद्ध प्रयुक्त नहीं की जा सकती। इस विनिश्चय के समय से इस न्यायालय की असंख्य नजीरे हैं, जिनमें बराबर यही मत अपनाया गया है कि जब तक अभियुक्त के विरुद्ध जाने वाली परिस्थिति दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 342 या 313 के अधीन उसकी परीक्षा के समय उसके समक्ष पेश न की जाए, तब तक उसे उसके विरुद्ध प्रयुक्त नहीं किया जा सकता। **शामू बालू चौगेल** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[2] वाले मामले में इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है—

> "यह तथ्य कि अपीलार्थी फरार बताया गया, दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 342 के अधीन उसके समक्ष न रखे जाने के कारण उसके विरुद्ध प्रयुक्त नहीं किया जा सकता।"

144. इसी प्रकार के आशय का **हरिजन मेघा जेशा** बनाम **गुजरात राज्य**[3] इस न्यायालय का एक दूसरा विनिश्चय है, जिसमें यह मत व्यक्त किया गया था —

> "पहले तो उसने यह बताया कि अपीलार्थी के शरीर की तलाशी लेने पर एक चड्ढी मिली, जिस पर खून के धब्बे थे और सीरमविज्ञानी

---

[1] ए० आई० आर० 1953 एस० सी० 468.

[2] (1976) एस० सी० सी० 438.

[3] ए० आई० आर० 1979 एस० सी० 1566.

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh


की रिपोर्ट के अनुसार उसमें मनुष्य का खून लगा हुआ था। इस प्रभाव से चूंकि यह परिस्थिति धारा 342 के अधीन उसकी परीक्षा में अभियुक्त के सामने नहीं रखी गई, इसलिए अभियोजन-पक्ष को अपीलार्थी को सिद्धदोष ठहराने के लिए इस कथन का अवलम्ब लेने की इजाजत नहीं दी जा सकती।"

145. इस मुद्दे पर बहुत सारी नजीरें देना हमारे लिए आवश्यक नहीं है क्योंकि अब यह प्रश्न इस न्यायालय के अनेक विनिश्चयों द्वारा अन्तिम रूप से तय किया जा चुका है। विषय के इस दृष्टिकोण से वे परिस्थितियां जो दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन अपीलार्थी की परीक्षा में उसके समक्ष न रही जाएं, विचार-क्षेत्र से पूर्णत: अपवर्जित करनी होंगी।

146. हम यहां अपीलार्थी के काउंसेल द्वारा प्रस्तुत एक महत्वपूर्ण तथ्य का उल्लेख करना चाहेंगे, जिसका प्रतिवाद अपर महासालिसिटर ने किया है। उच्च न्यायालय के समक्ष यह तर्क दिया गया था कि यह अत्यन्त असंभाव्य है कि यदि अपीलार्थी की बहन की सगाई, जोकि उतनी ही महत्वपूर्ण थी जितनी शादी होती है, 13 जून को होने वाली थी तो क्या अपीलार्थी उससे एक दिन पहले अपनी पत्नी की हत्या करेगा और ऐसा करके अपने परिवार को ही नहीं बल्कि बहन को भी अपमान और विनाश के अंधेरे में धकेल देगा। विषय के इस पहलू पर हम पहले ही चर्चा कर चुके हैं, किन्तु यह ध्यान देना दिलचस्प होगा कि उच्च न्यायालय ने इस अन्तर्निहित असंभाव्यता का इस आधार पर खण्डन करने का कैसे प्रयास किया है कि विष देने के मामले में अपराधी विष देने के अवसर की इंतजार में रहेगा और जब उसे अवसर मिल जाएगा तो उससे यह प्रत्याशा नहीं की जाएगी कि तर्कसंगत रूप से सोचे बल्कि वह तुरन्त हत्या कर डालेगा। उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के प्रति उचित आदर सहित हम इस प्रकार की जटिल तार्किकता से सहमत होने में असमर्थ हैं जोकि अभिलेख के साक्ष्य द्वारा समर्थित नहीं है। अभियोजन-पक्ष द्वारा प्रस्तुत यह स्पष्ट साक्ष्य है कि एक सप्ताह या कुछ दिनों के अन्तराल के सिवाय मन्जु हमेशा अपने पति के साथ रहती थी और उसने यह शिकायत की थी कि वह रात को देर से आता है। इस प्रकार वे दोनों पिछले चार मास से एक ही कमरे में अकेले रहते थे। इसलिए यदि वह वास्तव में विष देना चाहता था तो ऐसा करने के लिए अपीलार्थी के पास बहुत मौके हो सकते थे। हम उच्च न्यायालय के इस तर्क को मानने में असमर्थ हैं कि इस बार अपीलार्थी को अवसर मिल गया तो उसने उसका फायदा उठा लिया। साक्ष्य से यह भी दर्शित होता है कि मन्जु और अपीलार्थी दोनों सुहागरात मनाने के लिए पुणे से बाहर गए थे और उस समय भी वह उसकी हत्या कर सकता था और तब मामले में नैसर्गिक मृत्यु

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh


दिखाई पड़ती । बहरहाल, ये सब बातें अटकलबाजियां हैं ।

147. उच्च न्यायालय के तर्क के खोखलेपन को समझते हुए अपर महासालिसिटर ने इसे एक भिन्न तरीके से पेश किया । उन्होंने निवेदन किया कि चूंकि मृतक 4-6 सप्ताह की गर्भवती थी और अपीलार्थी यह जानता था कि जब तक मृतक की हत्या किसी के कहने पर नहीं की जाती, उसके लिए उसकी हत्या करना बहुत कठिन हो जाएगा, भले ही उसे अवसर मिल जाए, यदि बच्चा पैदा हो गया तो फिर उसे बच्चे का भी भरण-पोषण करना होगा, जिससे उज्जवला से उसके अयुक्त सम्बन्धों पर प्रभाव पड़ेगा । यह एक आकर्षक तर्क प्रतीत होता है किन्तु सूक्ष्म-विश्लेषण करने पर पता चलता है कि यह अमान्य है । यदि मंजु की मृत्यु के बहुत पहले उसके 4-6 सप्ताह की गर्भवती होने का ही प्रश्न था तो अपीलार्थी अपनी बहन का विवाह होने तक अगले 15 दिन और प्रतीक्षा कर सकता था, जोकि 30 जून, 1982 के लिए तय था और फिर वह या तो उसका गर्भपात करवाता या उसे मार देता । इसके अतिरिक्त अभियोजन साक्षी-2 (पृष्ठ 176) के साक्ष्य से यह प्रतीत होता है कि उसके समुदाय में 'कोहल समारोह' केवल एक औपचारिक सगाई नहीं होती बल्कि एक बहुत महत्वपूर्ण समारोह होता है, जिसमें सभी निकट संबंधी बुलाए जाते हैं और समारोह में भाग लेने के लिए आमंत्रित किए जाते हैं और भोजन भी खिलाया जाता है । अभियोजन साक्षी-2 ने इसके बारे में जो कुछ कहा है, उसे हम उद्धृत करना चाहेंगे—

> "2-8-1981 को मंजु के कोहल समारोह के समय मेरे नातेदार यानी शहर से बाहर से मेरी बहन ने इसमें भाग लिया था और अनेक व्यक्ति इस समारोह में आमंत्रित किए गए थे । उस समारोह में दूल्हे के पिता से यह अपेक्षित किया गया कि वह भोजन का खर्च उठाए जबकि दुल्हन को दिए गए उपहार दूल्हे के खर्च पर देने या करने होते हैं। इस कार्यक्रम में दुल्हा भाग नहीं लेता ।"

148. बिरधीचन्द और अन्य इस मुद्दे पर साक्ष्य देने में असमर्थ हैं, फिर भी वे अभियुक्त बनाए गए । किन्तु दोनों पक्षकारों का यह स्वीकृत कथन है कि अभियुक्त उसी समुदाय के हैं, जिसका अभियोजन साक्षी-2 है । इन परिस्थितियों में यह तर्क स्वीकार करना कठिन है कि अपीलार्थी कोहल अनुष्ठापन की पूर्व संध्या को अपनी पत्नी की हत्या करेगा जबकि ऐसा वह उस अनुष्ठापन से बहुत पहले या विवाह के बाद कर सकता था क्योंकि न तो कोई जल्दबाजी थी और न ही ऐसी कोई अड़चन थी, जिससे कि उसे अपनी पत्नी की हत्या करने का अवसर न मिल पाए ।

149. अब हम पारिस्थितिक साक्ष्य की प्रकृति और स्वरूप पर विचार

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

करेंगे। इस विषय से सम्बन्धित विधि पिछले 4-6 दशकों से सुस्थिर है और इस मुद्दे पर इतने विनिश्चय किए गए हैं कि न्यायालय द्वारा अधिकथित सिद्धांत न्यूनाधिक रूप से स्वतः सिद्ध हो गए हैं।

150. उच्च न्यायालय ने इस न्यायालय के कुछ विनिश्चयों का हवाला दिया है और उन मामलों के विनिश्चयाधार को इस मामले में लागू करने का प्रयास किया है। किन्तु, जैसा कि हम अभी बताएंगे, वे स्पष्टतः प्रभेद्य हैं। उच्च न्यायालय इस न्यायालय सहित कुछ न्यायालयों द्वारा अपनाए गए मत से बहुत प्रभावित था कि अभियुक्त द्वारा प्रस्तुत मिथ्या प्रतिरक्षा या मिथ्या अभिवाक् पारिस्थितिक साक्ष्य की विभिन्न शृंखलाओं में एक अतिरिक्त सम्पर्क सूत्र होगा और ऐसा प्रतीत होता है कि उसका सुझाव है कि चूंकि अपीलार्थियों ने मिथ्या अभिवाक् प्रस्तुत किया था, इसलिए वह पक्ष कथन को साबित करने के लिए अन्य परिस्थितियों के साथ-साथ निश्चायक होगा। फिर भी हम शुरू में ही यह कहना चाहेंगे कि इस न्यायालय ने ऐसा नहीं कहा था किन्तु मामले के इस पहलू पर हम कुछ बाद में विचार करेंगे।

151. यह सुस्थिर है कि अभियोजन-पक्ष को स्वयं अपने ऊपर निर्भर करना चाहिए और वह प्रतिरक्षा की कमजोरी से कोई बल प्राप्त नहीं कर सकता। यह निश्चित विधि है और किसी भी विनिश्चय में इसके प्रतिकूल मत नहीं अपनाया गया है। कुछ मामलों में केवल यह अभिनिर्धारित किया गया है कि जहां किसी शृंखला के विभिन्न सूत्र अपने आप में पूर्ण होते हैं वहां मिथ्या अभिवाक् या मिथ्या प्रतिरक्षा की सहायता न्यायालय को केवल आश्वासन देने के लिए ही ली जा सकती है। दूसरे शब्दों में, अतिरिक्त सम्पर्क सूत्र का प्रयोग करने से पहले यह साबित करना होगा कि शृंखला के सभी सम्पर्क सूत्र पूर्ण हैं और उनमें कोई कमी नहीं है। विधि यह नहीं है कि जहां अभियोजन पक्ष के कथन में कोई कमी या दोष है, वहां उसे मिथ्या प्रतिरक्षा या अभिवाक् से ठीक या पूरा किया जा सकता है, जो न्यायालय द्वारा स्वीकृत नहीं है।

152. उन मामलों की चर्चा करने से पहले, जिनका अवलम्ब उच्च न्यायालय ने लिया है, हम एक दाण्डिक मामले में जो केवल पारिस्थितिक साक्ष्य पर निर्भर करता है, अपेक्षित प्रकृति, स्वरूप और आवश्यक सबूत के विषय में कुछ विनिश्चयों को प्रोद्धृत करना चाहेंगे। इस न्यायालय का मूलभूत और सबसे आधारभूत विनिश्चय **हनुमंत** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य**[1] है। इस न्यायालय ने आज तक अनेक विनिश्चयों में इस मामले का बराबर अनुसरण और उपयोग किया है। उदाहरण के लिए, **तुफेल (उर्फ) सिम्मी** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य**[2]

---

[1] *[1952]* एस० सी० आर० 1091.

[2] (1969) 3 एस० सी० सी० 198.

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh


और रामगोपाल बनाम महाराष्ट्र राज्य[1]। हनुमन्त के मामले में न्या० महाजन ने जो कुछ अधिकथित किया है, उसे उद्धृत करना उपयोगी होगा—

> "यह ध्यान रखना होगा कि जिन मामलों में साक्ष्य पारिस्थितिक साक्ष्य होता है, उनमें वे परिस्थितियां जिनसे दोषिता का निष्कर्ष निकाला जाना है, पहली बार पूरी तरह सिद्ध की जानी चाहिएं और इस प्रकार स्थापित सभी तथ्य केवल अभियुक्त की दोषिता की कल्पना के अनुरूप होने चाहिएं। साथ ही, वे परिस्थितियां निश्चायक प्रकृति और प्रवृत्ति की होनी चाहिएं तथा वे ऐसी होनी चाहिएं कि प्रत्येक कल्पना अपवर्जित हो जाए और वही शेष रहे जो साबित की जानी है। दूसरे शब्दों में, साक्ष्य की शृंखला होनी चाहिए कि वह उतना पूर्ण हो कि अभियुक्त की निर्दोषिता के अनुरूप निष्कर्ष के लिए कोई भी युक्तियुक्त आधार न बचे और वह ऐसी हो कि यह दर्शित हो कि समस्त मानवीय संभावना के अन्तर्गत वह कार्य अभियुक्त द्वारा ही किया गया होगा।"

153. इस विनिश्चय के सूक्ष्म-विश्लेषण से पता चलता है कि अभियुक्त के प्रतिकूल मामले को पूरी तरह सिद्ध मानने से पहले निम्नलिखित शर्तें पूरी होनी चाहिएं :

> (1) वे परिस्थितियां, जिनसे दोषिता का निष्कर्ष निकाला जाना है, पूरी तरह सिद्ध की जानी चाहिएं।

यहां यह उल्लेख किया जा सकता है कि इस न्यायालय ने यह इंगित किया था कि संबंधित परिस्थितियां "सिद्ध करनी होंगी" या "की जानीं चाहिएं न कि की जा सकती हैं"। "साबित की जा सकती हैं" और "साबित करनी होंगी या की जानी चाहिएं" में केवल व्याकरणिक अन्तर ही नहीं है, बल्कि विधिक अंतर है, जैसा कि इस न्यायालय ने **शिवाजी साहबराव बोबडे और एक अन्य बनाम महाराष्ट्र राज्य**[2] में अभिनिर्धारित किया था। उसमें न्यायालय ने निम्नलिखित मत व्यक्त किया था—

> "निश्चय ही यह एक प्राथमिक सिद्धांत है कि इससे पहले कि न्यायालय अभियुक्त को दोषसिद्ध कर सके, अभियुक्त दोषी "होना चाहिए" न कि केवल "दोषी हो सकता है" और "हो सकता है" तथा "होना चाहिए" के बीच मानसिक अंतर बहुत लम्बा है, अस्पष्ट अटकलों को निश्चित निष्कर्षों से अलग करता है।"

(2) इस प्रकार सिद्ध किए गए तथ्य केवल अभियुक्त की दोषिता

---

[1] ए० आई० आर० 1972 एस० सी० 656.

[2] [1973] 3 उम० नि० प० 1011=(1973) 2 एस० सी० सी० 793.

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



की कल्पना के अनुरूप होने चाहिएं अर्थात् इस बात के सिवाए कि अभियुक्त दोषी है, किसी अन्य कल्पना के पोषक नहीं होने चाहिएं ;

(3) परिस्थितियां निश्चायक प्रकृति और प्रवृत्ति की होनी चाहिएं ;

(4) उन्हें साबित की जाने वाली हर उप-कल्पना के सिवाए हर संभाषित उप-कल्पना अपवर्जित करनी चाहिए; और

(5) साक्ष्य की शृंखला इतनी पूर्ण होनी चाहिए कि अभियुक्त की निर्दोषिता के अनुरूप निष्कर्ष निकालने के लिए कोई भी युक्तियुक्त आधार न बचे और उससे यह दर्शित हो कि सम्पूर्ण मानवीय संभावना में वह कार्य अभियुक्त द्वारा ही किया गया होगा ।

154. ये पांच स्वर्णिम सिद्धांत हैं, यदि हम ऐसा कह सकते हैं । ये पारिस्थितिक साक्ष्य पर आधारित किसी पक्षकथन के सबूत के पंचशील सिद्धांत हैं ।

155. इस बात का उल्लेख करना दिलचस्प हो सकता है कि जहां तक पारिस्थितिक साक्ष्य पर आधारित दाण्डिक मामले में सबूत के ढंग का सम्बन्ध है, अपराध सार की अनुपस्थिति में उसके सबूत के संबंध में विधि का कथन न्या० ग्रेसन ने (तथा अन्य तीन न्यायाधीश इससे सहमत थे) **सम्राट बनाम होरी**[1] वाले मामले में अधिकथित किया था—

> "अभियुक्त को सिद्धदोष ठहराए जाने से पहले मृत्यु का तथ्य ऐसी परिस्थितियों द्वारा साबित किया जाना चाहिए जो अपराध करना नैतिक दृष्टि से निश्चित बना दें और युक्तियुक्त संदेह की कोई गुंजाइश न रहे : पारिस्थितिक साक्ष्य इतना सटीक और बाध्यकारी होना चाहिए कि न्यायालय इस बात से आश्वस्त हो जाए कि इन तथ्यों से हत्या से भिन्न कोई तर्कसंगत कल्पना नहीं की जा सकती ।"

156. लार्ड गोडर्ड ने "नैतिक रूप से निश्चित" पद को कुछ हल्का सा इस प्रकार बदल दिया है "ऐसी परिस्थितियां जो अपराध करना निश्चित बनाती हों ।"

157. इससे अपराध-शास्त्र का यह आधारभूत सिद्धांत उपदर्शित होता है कि कोई पक्षकथन तभी साबित हुआ कहा जा सकता है जब निश्चित और प्रकट साक्ष्य हो और कोई भी व्यक्ति मात्र नैतिक धारणा पर सिद्धदोष नहीं ठहराया जा सकता । इस न्यायालय ने **अनन्त चिन्तामण लागू बनाम मुम्बई राज्य**[2] वाले मामले में **होरी वाले मामले**[1] को अनुमोदित कर दिया था । इस

[1] (1952) एन० जैड० एल० आर० 111.

[2] [1960] 2 एस० सी० आर० 460.

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



न्यायालय ने अपने बाद के सभी विनिश्चयों में **लागू वाले मामले**[1] का और **हनुमन्त वाले मामले**[2] में इस न्यायालय प्रतिपादित सिद्धांतों का एकरूपता से और बराबर अनुसरण किया है और एक भी मामला इसका अपवाद नहीं है। उदाहरण के लिए **तुफैल वाला मामला**[3], **रामगोपाल वाला मामला**[4], **चन्द्रकान्त नियालचन्द्र सेठ** बनाम **मुम्बई राज्य**[5], **धर्मवीर सिंह** बनाम **पंजाब राज्य**[6]। अन्य अनेक ऐसे मामले हैं, जिनमें यद्यपि **हनुमंत वाले मामले**[2] पर अभिव्यक्त रूप से ध्यान नहीं दिया गया है, फिर भी वही सिद्धांत प्रतिपादित यिए गए हैं और दोहराए गए हैं, जैसे **नसीम अहमद** बनाम **दिल्ली प्रशासन**[7], **मोहनलाल पंगासा** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य**[8], **शंकरलाल ग्यारसीलाल दीक्षित** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[9] और **एम० सी० अग्रवाल** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[10]—जोकि एक पांच न्यायाधीशों के न्यायपीठ का विनिश्चय है।

158. अपने इस तर्क को पूरा करने के लिए कि यदि प्रतिरक्षा-पक्ष का कथन झूठा है तो यह भी अभियोजन पक्ष के कथन के समर्थन में एक अतिरिक्त सम्पर्क-सूत्र होगा, अपर महासालिसिटर ने **देवनन्दन मित्र** बनाम **बिहार राज्य**[11] **वाले** मामले में इस न्यायालय के विनिश्चय का अवलम्ब लेते हुए जो बहुत ही प्रबल तर्क दिया है, यहां उस पर ध्यान देना आवश्यक है। विद्वान अपर महासालिसिटर के प्रति ससम्मान हम उस निवेदन से सहमत नहीं हैं जो उन्होंने उपरोक्त मामले के बारे में किया है। उसका सुसंगत भाग इस प्रकार है—

> "किन्तु इस प्रकार के मामले में जहां उल्लिखित विभिन्न सूत्र समाधानप्रद रूप से सिद्ध कर दिए गए हैं और परिस्थितियां अपीलार्थी को संभाव्य हमलावर, युक्तियुक्त निश्चितता और समय तथा स्थिति की बाबत मृतक के सानिध्य में बताती हैं.........स्पष्टीकरण की ऐसी

---

1 [1960] 2 एस० सी० आर० 460.

2 [1952] एस० सी० आर० 1091.

3 (1969) 3 एस० सी० सी० 198.

4 ए० आई० आर० 1972 एस० सी० 656.

5 1957 की दाण्डिक अपील सं० 120 जिसका विनिश्चय 19-2-58 को किया गया।

6 1958 की दाण्डिक अपील सं० 98 जिसका विनिश्चय 4-11-1958 को किया गया।

7 [1974] 1 उम० नि० प० 1140=[1974] 2 एस० सी० आर० 694/696.

8 ए० आई० आर० 1974 एस० सी० 1144/1146.

9 [1981] 4 उम० नि० प० 924=[1981] 2 एस० सी० आर० 384/390.

10 [1963] 2 एस० सी० आर० 405/419.

11 [1955] 2 एस० सी० आर० 570/582.

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



अनुपस्थिति या मिथ्या स्पष्टीकरण में अतिरिक्त सूत्र श्रृंखला को अपने आप पूरा कर देगा।"

159. यह बात देखी जाएगी कि इस न्यायलय ने इस स्पष्टीकरण की अनुपस्थिति या मिथ्या स्पष्टीकरण पर विचार करते समय यह अभिनिर्धारित किया था कि श्रृंखला को पूरा करने वाली एक अतिरिक्त कड़ी होगी किन्तु ये मत उस परिप्रेक्ष्य में पढ़े जाने चाहिएं जो कुछ इस न्यायालय ने पहले कहा था अर्थात् यह कि इससे पहले कि मिथ्या स्पष्टीकरण का इस्तेमाल अतिरिक्त सूत्र के रूप में किया जाए, निम्नलिखित अनिवार्य शर्तें पूरी की जानी चाहिएं—

(1) अभियोजन पक्ष द्वारा दिए गए साक्ष्य की श्रृंखला की विभिन्न कड़ियां समाधानप्रद रूप से साबित कर दी गई हों,

(2) उक्त परिस्थिति युक्तियुक्त निश्चितता के साथ अभियुक्त की दोषिता का संकेत देती हो, और

(3) वह परिस्थिति समय और स्थिति की दृष्टि से नैकट्य में हो।

160. यदि ये शर्तें पूरी हो जाती हैं तभी यह न्यायालय मिथ्या स्पष्टीकरण या मिथ्या प्रतिरक्षा को अतिरिक्त कड़ी के रूप में इस्तेमाल कर सकता है ताकि न्यायालय को विश्वास दिलाया जा सके, अन्यथा नहीं। प्रस्तुत मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर यह मामला ऐसा प्रतीत नहीं होता। विषय के इस पहलू पर **शंकर लाल वाले मामले**[1] में विचार किया गया था। उस मामले में इस न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया था—

"इसके अतिरिक्त मिथ्या प्रतिरक्षा तथ्यों के सबूत का स्थान नहीं ले सकती जोकि अभियोजन पक्ष को सफल होने के लिए सिद्ध करना होगा। मिथ्या अभिवाक अधिक से अधिक एक अतिरिक्त परिस्थिति माना जा सकता है यदि अन्य परिस्थितियां निश्चित रूप से अभियुक्त की दोषसिद्धि का संकेत करती हैं।"

161. अतः इस न्यायालय ने किसी भी प्रकार **हनुमन्त वाले मामले**[2] में अधिकथित पांच शर्तों से विचलन नहीं किया है किन्तु फिर भी दुर्भाग्यवश ऐसा प्रतीत होता है कि उच्च न्यायालय ने भी इस विनिश्चय को गलत समझा और अपीलार्थी द्वारा प्रस्तुत तथाकथित मिथ्या प्रतिरक्षा को श्रृंखला से सम्बद्ध अतिरिक्त परिस्थिति के रूप में प्रयुक्त किया है। परिस्थितियों की अपूर्ण श्रृंखला और एक ऐसी परिस्थिति में भारी अन्तर होता है जो उस श्रृंखला के पूर्ण होने के बाद उसमें केवल इसलिए जोड़ी जाती है ताकि न्यायालय के निष्कर्ष

---

[1] [1981] 4 उम० नि० प० 924=[1981] 2 एस० सी० आर० 384/390.

[2] [1952] एस० सी० आर० 1091.

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



को बल प्रदान किया जा सके। जहां अभियोजन पक्ष **हनुमन्त वाले मामले**[1] में अधिकथित किसी भी अनिवार्य सिद्धांत को साबित करने में असमर्थ होता है, वहां उच्च न्यायालय मिथ्या प्रतिरक्षा या मिथ्या अभिवाक् की मदद या सहारा लेकर उस कमी या दोष को पूरा नहीं कर सकता। अतः हम अपर महासालिसिटर का तर्क स्वीकार करने में असमर्थ हैं।

162. इसके अतिरिक्त **एम० जी० अग्रवाल वाले मामले**[2] में इस न्यायालय ने हनुमंत वाले मामले में प्रतिपादित सिद्धान्तों को दोहराते हुए यह मत व्यक्त किया था—

> "यदि मामले में साबित परिस्थितियां या तो अभियुक्त की निर्दोषिता या उसकी दोषिता से संगत हैं तो अभियुक्त सन्देह के लाभ का हकदार है।"

**शंकरलाल वाले मामले**[3] में इस न्यायालय ने यह मत इस प्रकार दोहराया है—

> "विधिक सिद्धान्त कोई जादू-टोना नहीं होते और उनका महत्व निर्णय में उल्लेख किए जाने की अपेक्षा कतिपय तथ्यों में लागू होने में अधिक निहित है।"

163. इसके बाद हम एक और महत्वपूर्ण मुद्दे पर आते हैं जो उच्च न्यायालय द्वारा पूर्णत: भुला दिया गया प्रतीत होता है। यह सुस्थिर है कि जहां साक्ष्य के बारे में दो संभावनाएं उपलब्ध या खुली होती हैं, एक वह जो अभियोजन पक्ष के पक्ष में जाती है और दूसरी वह जो अभियुक्त को लाभ देती है, वहां अभियुक्त निस्संदेह सन्देह के लाभ का हकदार होता है। **कालीराम बनाम हिमाचल प्रदेश राज्य**[4] वाले मामले में इस न्यायालय ने निम्नलिखित मत व्यक्त किया था—

> "आपराधिक मामलों में न्याय-प्रशासनतंत्र में एक स्वर्णिम सिद्धांत यह है कि यदि मामले में दिए गए साक्ष्य के आधार पर दो मत संभव हैं जिनमें से एक अभियुक्त की दोषिता को इंगित करता है और दूसरा उसकी निर्दोषिता को, तो वह मत अपनाया जाना चाहिए जो अभियुक्त के पक्ष में है। यह सिद्धांत ऐसे मामलों में विशेष रूप से सुसंगत है जिनमें अभियुक्त की दोषिता पारिस्थितिक साक्ष्य द्वारा सिद्ध की गई है।"

164. अब हम विष देकर हत्या के मामलों के सबूत, ढंग और रीति

---

1 [1952] एस० सी० आर० 1091.

2 [1963] 2 एस० सी० आर० 405/419.

3 [1981] 4 उम० नि० प० 924=[1981] 2 एस० सी० आर० 384/390.

4 [1973] उम० नि० प० 1286=(1973) 2 एस० सी० सी० 808.

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



पर विचार करेंगे। **रामगोपाल वाले मामले**[1] में इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया था—

> "ऐसे मामलों में तीन प्रश्न उत्पन्न होते हैं, अर्थात् (पहला) क्या मृतक प्रश्नगत विष से मरा है, (दूसरा) क्या अभियुक्त के पास प्रश्नगत विष था और (तीसरा) क्या अभियुक्त के पास मृतक को प्रश्नगत विष देने का अवसर था ? जब हेतु हो तो ये सब तथ्य साबित हो जाएं तभी न्यायालय यह निष्कर्ष निकाल सकता है कि अभियुक्त ने मृत को विष दिया था, जिसके फलस्वरूप उसकी मृत्यु हो गई।"

165. जहां तक इस विषय का सम्बन्ध है, ऐसे मामलों में न्यायालय को साक्ष्य का ध्यानपूर्क मूल्यांकन करना चाहिए और निम्नलिखित चार महत्वपूर्ण परिस्थितियां अवधारित करनी चाहिएं क्योंकि ये ही किसी दोषसिद्धि को न्यायोचित ठहरा सकती हैं—

(1) अभियुक्त का मृतक को विष देने का स्पष्ट हेतु हो,

(2) मृतक तथाकथिक विष देने से मरा हो,

(3) अभियुक्त के पास विष हो,

(4) उसके पास मृतक को विष देने का अवसर हो।

166. प्रस्तुत मामले में, दो संघटक साबित कर दिए गए हैं। किन्तु दो साबित नहीं हुए हैं। पहले, निस्संदेह यह साबित कर दिया गया है कि मन्जु पोटाशियम सायनाइट से मरी थी और दूसरे यह भी साबित कर दिया गया है कि विष देने का मौका था किन्तु किसी भी साक्ष्य द्वारा यह साबित नहीं किया गया है कि अपीलार्थी के पास विष था। इसके विपरीत, जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, अभियोजन साक्षी दो का स्पष्ट साक्ष्य है कि पोटाशियम सायनाइड मन्जु के पास अपनी मां के प्लास्टिक के कारखाने में से उपलभ्य हो सकता था किन्तु ऐसा कोई साक्ष्य नहीं है जिससे यह जाहिर हो सके कि अभियुवत किसी उपलब्ध स्रोत से पोटाशियम सायनाइड ले सकता था। हम यहां उच्च न्यायालय के एक अत्यन्त दुर्बोध और असाधारण निष्कर्ष को उद्धृत करना चाहेंगे—

> "यह सही है कि इन दो मुद्दों पर कोई प्रत्यक्ष साक्ष्य नहीं है किन्तु अभियोजन पक्ष ऐसा कोई साक्ष्य पेश नहीं कर सका है कि अभियुक्त ने किसी विशिष्ट स्रोत से पोटाशियम साइनाइड विष प्राप्त किया था। इसी प्रकार, इस बार में भी कोई प्रत्यक्ष साक्ष्य नहीं है जो यह साबित करता है कि उसने मन्जु को विष दिया था। बहरहाल, प्रत्येक तथ्य को प्रत्यक्ष साक्ष्य से साबित करना आवश्यक नहीं है। इस तथ्य को

---

1 ए० आई० आर० 1972 एस० सी० 656.

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



साबित्त करने के लिए पारिस्थितिक साक्ष्य आधार बनाया जा सकता है।" —(पृष्ठ 160)

167. उच्च न्यायालय की टिप्पणी अत्यन्त अस्पष्ट और नितान्त दुर्बोध प्रतीत होती है। स्पष्टतम शब्दों में यह अभिनिर्धारित करते हुए कि इस मामले में ऐसा कोई साक्ष्य नहीं है जिससे यह जाहिर होता हो कि अपीलार्थी के पास जहर था, उच्च न्यायालय ने मत व्यक्त किया है कि यह तथ्य प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष (पारिस्थितिक) साक्ष्य द्वारा साबित किया जा सकता है किन्तु उसने पारिस्थितिक या अप्रत्यक्ष साक्ष्य की प्रकृति यह दर्शित करने के लिए नहीं बताई कि अपीलार्थी के पास विष था। यदि न्यायालय यह कहना चाहता है कि चूंकि अपीलार्थी को विष देने का अवसर था और विष मृतक के शरीर में पाया गया था, इसलिए यह मान लिया जाना चाहिए कि अपीलार्थी के पास विष था तो उसने विधि की गम्भीर और बहुत बड़ी गलती की है तथा इस न्यायालय द्वारा अधिकथित सिद्धान्तों का घोर उल्लंघन किया है। उच्च न्यायालय ने यह संकेत नहीं किया है कि उसके इस निष्कर्ष का क्या आधार था कि अभियुक्त के पास साइनाइड हो सकता था। इसके विपरीत, **रामगोपाल वाले मामले**[1] के विनिश्चय को ध्यान में रखते हुए, अभियुक्त के पास साइनाइड विष होना साबित न कर पाने से स्वयं अभियोजन पक्ष अपना पक्षकथन साबित करने में असफल रहेगा। हम यह मत व्यक्त करने में बाध्य हैं कि उच्च न्यायालय ने **रामगोपाल वाले मामले**[1] के विनिश्चय को बिलकुल गलत समझा है और गलत अर्थ किया है। रामगोपाल वाले मामले से पहले इस न्यायालय के दो विनिश्चय हैं, जिनमें यही मत अपनाया गया है। **चन्द्र कांत निहालचन्द सेठ वाले मामले**[2] में इस न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया था—

> "इससे पहले कि किसी व्यक्ति को विष देकर हत्या करने का सिद्धदोष ठहराया जा सके, यह साबित करना आवश्यक है कि मृतक की मृत्यु विष के कारण हुई थी, कि प्रश्नगत विष अभियुक्त के पास था और यह कि विष अभियुक्त द्वारा मृतक को दिया गया था। इस मामले में ऐसा कोई प्रत्यक्ष साक्ष्य नहीं है कि अभियुक्त के पास पोटाशियम साइनाइड था अथवा यह कि उसने मृतक को विष दिया था।"

168. ऊपर उद्धृत मामले के तथ्य प्रस्तुत अपील से बहुत मिलते-जुलते हैं। इस मामले में भी न्यायालय का निष्कर्ष था कि परिस्थितियों में हत्या करने के लिए अभियुक्त की अपेक्षा मृतक द्वारा आत्म-हत्या करने का ज्यादा हेतु,

---

1 ए० आई० आर० 1972 एस० सी० 656.

2 1957 की दाण्डिक अपील सं० 120 जिसका विनिश्चय 19-2-58 को किया गया।

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



था। यह मत धर्मवीर सिंह वाले मामले[1] में दोहराया गया था। उसमें इस न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया था—

"अतः हेतु के साथ-साथ अभियोजन पक्ष को यह भी साबित करना होगा कि मृतक की मृत्यु तथाकथित विष देने से हुई है, कि अभियुक्त के पास वह विष था और यह कि उसके पास मृतक को विष देने का अवसर था। [देखिए मुसम्मात गजरानी और एक अन्य बनाम सम्राट (ए० आई० आर० 1933 इलाहाबाद 394)] जब हेतु हो और ये सब तथ्य साबित कर दिए जाएं तभी न्यायालय पारिस्थितिक साक्ष्य के मामले में यह निष्कर्ष निकाल सकता है कि अभियुक्त ने विष मृतक को दिया था, जिसके फलस्वरूप उसकी मृत्यु हो गई।

* * *

"हम यह महसूस करते हैं कि उच्च न्यायालय के लिए यह कहना ठीक नहीं था जब यह श्रृंखला टूट गई थी कि किसी के लिए पोटाशियम साइनाइड प्राप्त करना बहुत कठिन नहीं हो सकता और इसीलिए अभियुक्त द्वारा पोटाशियम साइनाइड रखने के सबूत की अनुपस्थिति से व्यावहारिक रूप से कोई प्रभाव नहीं पड़ा। उच्च न्यायालय के अनुसार पाए गए तथ्यों के आधार पर यह अभिनिर्धारित करना होगा कि पारिस्थितिक साक्ष्य पर आधारित विष के मामले में इन तथ्यों में से दूसरे तथ्य जो साबित किए जाने हैं, साबित नहीं किया गया है और वह यह है कि अभियुक्त के पास विष था जो मृतक के शरीर में पाया गया था···इन परिस्थितियों में क्या यह कहा जा सकता है कि जब यह बहुत महत्वपूर्ण तथ्य का सबूत (अर्थात् यह कि अभियुक्त के पास पोटाशियम साइनाइड था) नहीं मिला है और इस प्रकार पारिस्थितिक साक्ष्य की श्रृंखला इतनी पूर्ण है कि अभियुक्त की निर्दोषिता के अनुरूप निष्कर्ष निकालने के लिए कोई युक्तियुक्त आधार नहीं रह सकता और यह कि जो साक्ष्य इस तथ्य की अस्वीकृति के बाद रहता है, वह यह है कि यह दर्शित किया जाए कि सभी मानवीय संभावना के अन्तर्गत वह कृत्य अभियुक्त द्वारा ही किया गया हो।"

169. अतः हमारी स्पष्ट राय है कि वर्तमान अपील के तथ्य उपरोक्त विनिश्चयों के आधार के अन्तगर्त आते हैं, फिर भी यदि इस मामले में प्रस्तुत किए गए साक्ष्य के बारे में खराब से खराब दृष्टिकोण अपनाएं तो भी दो संभावनाएं साफ प्रकट होती हैं—

(1) यह आत्म-हत्या का मामला हो सकता है, अथवा

---

[1] 1958 की दाण्डिक अपील सं० 98 जिसका विनिश्चय 4-11-1958 को किया गया था।

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



(2) यह हत्या का मामला हो सकता है

और दोनों समान रूप से संभाव्य हैं, इसलिए अभियोजन पक्ष कथन नासाबित है।

170. अब हम इस न्यायालय के कुछ विनिश्चयों पर विचार करने के लिए अग्रसर होते हैं, जिनका उच्च न्यायालय ने बहुत अवलम्ब लिया है। पहले तो उच्च न्यायालय ने **प्रशादी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य**[1] वाले मामले का का अवलम्ब लिया है। यह मामला स्पष्टतः प्रभेद्य प्रतीत होता है क्योंकि उसमें विधि का कोई मुद्दा नहीं था और साबित किए गए तथ्यों पर तथा अभियुक्त के अत्यन्त असाधारण आचरण पर न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया था कि पारिस्थितिक साक्ष्य केवल अभियुक्त के दोष के अनुरूप है तथा किसी अन्य तर्क-संगत स्पष्टीकरण से असंगत है।

171. उच्च न्यायालय द्वारा बहुत अवलम्बित अगला मामला **लागू वाला मामला**[2] है। ऐसा प्रतीत होता है कि यह मामला भी अभियोजन पक्ष के लिए सहायक नहीं है। पहले तो यह मामला विचित्र तथ्यों पर विनिश्चित किया गया था। दूसरे, यद्यपि अपराध-सार (कार्पस डैलीसिटी) साबित किया अभिनिर्धारित नहीं किया गया, फिर भी चिकित्सा-साक्ष्य के और अभियुक्त के आचरण से यही अनिवार्य निष्कर्ष अचूक संकेत करता था कि मृतक की मृत्यु जहर देने से हुई और यह कि अभियुक्त ही वह व्यक्ति था, जिसने उसे जहर दिया था। किन्तु इस मामले में ऐसी स्थिति नहीं है। इसके विपरीत, हम यह अभिनिर्धारित कर चुके हैं कि अपीलार्थी का आचरण उसकी दोषिता से असंगत साबित नहीं किया गया है और इसी आधार पर वर्तमान मामला आसानी से प्रभेद्य किया जा सकता है। यदि यह मामला कोई नज़ीर प्रस्तुत करता है तो वह केवल इस मुद्दे पर करता है कि इस न्यायालय से यह अपेक्षित नहीं है कि वह साक्ष्य की विस्तृत जांच-पड़ताल करे जब तक कि इसे न्यायोचित ठहराने के लिए कोई विशेष परिस्थितियां न हों। चूंकि उस मामले में इस न्यायालय का स्पष्ट रूप से यह मत था कि उच्च न्यायालय ने तथ्यों पर पूरी तरह विचार किया है और अभियुक्त के विरुद्ध कुल परिस्थितियां स्पष्ट नहीं हो सकीं, इसलिए निर्दोषिता की उपधारणा नष्ट हो गई और इसीलिए उच्च न्यायालय ने दोषसिद्धि की पुष्टि करके ठीक किया। निस्संदेह न्या० सरकार ने विसम्मत नर्णिय दिया था। उपरोक्त विनिश्चय (**लागू**[2] **वाला मामला**) की सूक्ष्म संवीक्षा करने पर हमें पता चलता है कि उस मामले के और वर्तमान मामले के तथ्यों में

---

[1] ए० आई० आर० 1957 एस० सी० 211.

[2] *[1960] 2 एस० सी० आर० 460.*

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



कोई समानता नहीं है। इसलिए यह नज़ीर भी अभियोजन पक्ष के लिए सहायक नहीं है।

172. इसके बाद **रामदास बनाम महाराष्ट्र राज्य**[1] वाले मामले का अवलम्ब लिया गया। किन्तु हम नहीं समझ सके कि अभियोजन पक्ष को इससे कैसे मदद मिलती है। उच्च न्यायालय ने इस तथ्य का अवलम्ब लिया था कि चूंकि अभियुक्त मृतक को तुरन्त सिविल अस्पताल ले गया था ताकि जहर न फैल सके इसलिए यह तथ्य विशेष अभियुक्त की निर्दोषिता बताने के लिए काफी है। उस विनिश्चय के ध्यानपूर्वक परिशीलन से पता चलता है कि इस न्यायालय ने उस मामले की परिस्थितियों के बावजूद अभियोजन पक्ष का कथन स्वीकार नहीं किया। वे परिस्थितियां प्रायः वैसी ही हैं जैसी परिस्थितियां इस मामले में पाई गई हैं। इसके अतिरिक्त, इस मामले में भी जब उन्होंने यह देखा कि मन्जु मर चुकी है तो उन्होंने तुरन्त अपने परिवार के डाक्टर को बुलवाया। प्रथम इत्तिला रिपोर्ट कुछ देर से लिखने का कारण हम तथ्यों का उल्लेख करते समय पहले ही बता चुके हैं। ऊपर उद्धृत विनिश्चय में यह साफ अभिनिर्धारित किया गया था कि अभियुक्त के विरुद्ध मामला निश्चायक रूप से और असंदिग्ध रूप से साबित नहीं हुआ है और दो युक्तियुक्त मत सम्भव हैं। उसका सुसंगत भाग यहां उद्धृत किया जा सकता है—

> "साक्ष्य और ऊपर निर्दिष्ट परिस्थितियों पर विचार करने के बाद हमारा समाधान हो गया है कि यह एक ऐसा मामला है, जिसमें पारिस्थितिक साक्ष्य से अभियुक्त के विरुद्ध मामला निश्चायक रूप से और असंदिग्ध रूप से साबित नहीं हुआ है और हर दशा में दो युक्ति-युक्त मत सम्भव हैं।"

173. प्रस्तुत मामले में हम पहले ही देख चुके हैं कि अधिक से अधिक अभियोजन पक्ष की यह बात मानी जा सकती है कि दो-मत एक अभियुक्त के पक्ष में और दूसरा उसके विरुद्ध सम्भव है। अतः **रामदास वाला मामला**[1] भी अभियोजन पक्ष की अपेक्षा अपीलार्थी का समर्थन करता है।

174. उच्च न्यायालय द्वारा अवलम्बित अन्तिम मामला **शंकर लाल वाला मामला**[2] है। किन्तु हम यह समझने में असमर्थ हैं कि इससे अभियोजन पक्ष को कैसे मदद मिलती है। ऐसा प्रतीत होता है कि उच्च न्यायालय ने जिन मताभिव्यक्तियों का अवलम्ब लिया है, वे सन्दर्भ से हटकर हैं। इसके विपरीत, इस विनिश्चय से अपीलार्थी के पक्षकथन की पूरी तरह से पुष्टि हो जाती है कि

---

[1] ए० आई० आर० 1977 एस० सी० 1164.

[2] [1981] 4 उम० नि० प० 924=[1981] 2 एस० सी० आर० 384।390.

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



प्रतिरक्षा का मिथ्यापन तथ्यों के सबूत का स्थान नहीं ले सकता जो सफल होने के लिए अभियोजन पक्ष को सिद्ध करना होगा। हम प्रस्तुत मामले के गुणागुण की चर्चा करते समय इस विनिश्चय पर पहले ही विचार कर चुके हैं। अतः इसे दोहराना आवश्यक नहीं है।

175. इस न्यायालय के यही महत्वपूर्ण मामले हैं, जिनका उच्च न्यायालय ने अवलम्ब लेना चाहा है। किन्तु सूक्ष्म परीक्षा करने के बाद पता चलता है कि ये किसी भी प्रकार से अभियोजन पक्ष के लिए सुसंगत या सहायक नहीं हैं। इसके विपरीत इन मामलों में व्यक्त किए गए कुछ मत अभियोजन पक्ष की अपेक्षा अभियुक्तों का समर्थन करते हैं।

176. अब हम अपने निर्णय के अन्तिम भाग पर आते हैं। साक्ष्य, मामले की परिस्थितियों और इस न्यायालय के विनिश्चयों के निर्वचन की विस्तारपूर्वक चर्चा करने के बाद विधिक या तथ्यात्मक स्थिति का सारांश इस प्रकार दिया जा सकता है—

(1) हनुमन्त वाले मामले ([1952] एस० सी० आर० 1091) में इस न्यायालय द्वारा प्रतिपादित चार स्वर्णिम सिद्धान्तों की प्रस्तुत मामले में पूर्ति नहीं की गई है। तार्किक नियम के रूप में निष्कर्ष यह निकलता है कि यह अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता कि अभियुक्त का कृत्य अपीलार्थी की दोषसिद्धि के सिवाय किसी अन्य उप-कल्पना के आधार पर स्पष्ट नहीं किया जा सकता और न ही यह कहा जा सकता है कि किसी भी मानवीय सम्भावना में अभियुक्त ने मन्जु की हत्या की थी। दूसरे शब्दों में, अभियोजन पक्ष ने दाण्डिक मामले की अनिवार्य अपेक्षाओं की पूर्ति नहीं की है। वह केवल पारिस्थितिक साक्ष्य पर निर्भर है।

(2) किसी भी दशा में साक्ष्य से यह स्पष्ट पता चलता है कि दो मत सम्भव हैं—एक अभियुक्त की दोषसिद्धि की ओर इंगित करता है और दूसरा उसकी निर्दोषिता की ओर। बहुत सम्भव है कि अपीलार्थी ने मन्जु को किसी समय पोटाशियम साइनाइड विष दिया हो किन्तु यह सम्भावना कि उसने स्वयं आत्म-हत्या की हो, सुरक्षित रूप से अपवर्जित या निराकृत नहीं की जा सकती। इस प्रकार इसी आधार पर अपीलार्थी सन्देह का लाभ पाने का हकदार है, जिसके फलस्वरूप उसकी दोषमुक्ति की जानी चाहिए।

(3) अभियोजन पक्ष विष देकर कारित की गई मृत्यु के मामले के सर्वाधिक अनिवार्य संघटकों में से एक को साबित करने में बुरी तरह से असफल रहा है और वह यह है कि (प्रत्यक्ष या पारिस्थितिक साक्ष्य के

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



आधार पर) अभियुक्त के पास विष था और इसी आधार पर अभियोजन को अवश्य ही असफल होना चाहिए ।

(4) साक्ष्य का मूल्यांकन करने में उच्च न्यायालय ने अनेक मुद्दों पर गलत धारणा प्रकट की है, जैसा कि हम पहले ही उल्लेख कर चुके हैं और इस प्रकार विधि सम्बन्धी भारी गलती की है ।

(5) उच्च न्यायालय ने इस न्यायालय के उन विनिश्चयों का अवलम्ब लिया है जो या तो लागू नहीं होते अथवा जो सूक्ष्म परीक्षा करने पर स्पष्टतः प्रभेद्य होने के कारण उच्च न्यायालय के मत का समर्थन नहीं करते ।

(6) उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित करने के लिए विधि के प्रति पूरी तरह गलत दृष्टिकोण अपनाया है कि यद्यपि अभियोजन पक्ष के कथन में गम्भीर कमियां हैं, फिर भी मिथ्या प्रतिरक्षा में अतिरिक्त सूत्र द्वारा उसे प्रबल किया जा सकता है जिससे कि उसमें दोष आ गया है और इस प्रकार विधि की मूलभूत गलती की है ।

(7) उच्च न्यायालय ने साक्ष्य का गलत मूल्यांकन ही नहीं किया है, बल्कि विधि के सुस्थापित सिद्धान्तों की पूरी तरह अवहेलना भी है और हमारे निष्कर्षों को देखते हुए यह पूरी तरह से स्पष्ट है कि उच्च न्यायालय ने असमंजस की अवस्थाओं और छोटी-छोटी बातों पर आधारित अभियोजन पक्ष को स्वीकार करने का प्रयास किया है ।

(8) हम उच्च न्यायालय से पूरी तरह सहमत हैं कि डाक्टर बनर्जी (अभियोजन साक्षी-33) के साक्ष्य के उस भाग पर निर्भर करना पूरी तरह असुरक्षित है जिससे यह पता चलता है कि विष यांत्रिक श्वासावरोध की प्रक्रिया द्वारा जबरदस्ती दिया गया था ।

(9) हम उच्च न्यायालय से यहां भी सहमत हैं कि पुलिस द्वारा किए गए अन्वेषण में कोई प्रत्यक्ष दोष नहीं है । वह ईमानदारी से और ध्यानपूर्वक किया गया प्रतीत होता है । इस बात का प्रत्यक्ष सबूत यह है कि यद्यपि रामेश्वर बिरधीचन्द और उसके कुटुम्ब के अन्य सदस्यों की, जिनकी व्यावहारिक दृष्टि से कोई भूमिका नहीं थी, अभियुक्त बना लिया गया किन्तु उच्च न्यायालय को उन्हें विधिक साक्ष्य के अभाव में छोड़ना पड़ा ।

(10) हमारे इस निष्कर्ष की दृष्टि से प्रस्तुत मामले में दो मत स्पष्टतः सम्भव हैं । प्रतिरक्षा का प्रश्न मिथ्या होने के कारण उत्पन्न नहीं होता और उच्च न्यायालय का यह तर्क कि प्रतिरक्षा मिथ्या है, कायम नहीं रह सकता ।

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



177. यह उचित मामला था, जिसमें उच्च न्यायालय को यह चाहिए था कि वह अपीलार्थी को सन्देह का लाभ देता।

178. आमतौर पर बहुत विशिष्ट परिस्थितियों के अभाव में या उच्च न्यायालय द्वारा की गई विधि की घोर गलती के बिना यह न्यायालय हस्तक्षेप नहीं करता किन्तु जहां उच्च न्यायालय विद्यमान परिस्थितियों और साबित तथ्यों की अपेक्षा या अवहेलना कर देता है तथा अपराध-शास्त्र के सुस्थापित सिद्धान्तों या पारिस्थितिक साक्ष्य के मूल्यांकन पर इस न्यायालय द्वारा किए गए विनिश्चयों का उल्लंघन करता है और उन्हें गलत लागू करता है तथा संदेह का लाभ अभियुक्त को अभिलेख पर प्रत्यक्षतः विद्यमान तथ्यों के बावजूद या स्वयं अपने निष्कर्षों पर देने से इनकार करता है अथवा कोई युक्तियुक्त स्पष्टीकरण दिए बिना उन्हें अनदेखा करने का प्रयास करता है या अभिलेख पर प्रत्यक्ष विधि की गलती करता है जिससे अभियुक्त के प्रति घोर अन्याय हो जाए, वहां इस न्यायालय का कर्त्तव्य है कि वह आगे आए और उच्च न्यायालय के विधि की दृष्टि से त्रुटिपूर्ण विनिश्चय को सही करे।

179. हम यह पूरी तरह समझ सकते हैं कि यद्यपि ऊपर से देखने पर यह मामला बहुत भद्दा प्रतीत होता है जिससे कि प्रथमदृष्टया किसी भी न्यायालय की अन्तरात्मा को आघात पहुंच सकता है, फिर भी आशंका, चाहे वह कितनी भी बड़ी हो, विधिक सबूत का स्थान नहीं ले सकती। नैतिक दोषसिद्धि चाहे वह कितनी भी प्रबल या वास्तविक हो, वह विधि की दृष्टि से समर्थनीय दोषसिद्धि के समान नहीं हो सकती।

180. स्मरण रहे कि अपराध-शास्त्र का सुस्थापित सिद्धान्त यह है कि 'जितना बड़ा अपराध, उतना ही बड़ा सबूत' चाहिए। प्रस्तुत मामले में एक नागरिक का जीवन और उसकी स्वाधीनता खतरे में थी क्योंकि अभियुक्त को मृत्यु दण्डादेश दिया गया था, इसलिए अत्यन्त ध्यानपूर्वक, सावधानीपूर्वक और सूक्ष्म निरीक्षण आवश्यक था।

181. अभिलेख के साक्ष्य से मंजु अत्यन्त संवेदनशील स्त्री प्रतीत नहीं होती जो अपने पति से सम्पूर्ण प्रेम और प्यार चाहती थी बल्कि उद्विग्न, विफलता और परेशानी से पूरी तरह निराश होने के कारण उसने अपना जीवन समाप्त करने का चुनाव किया होगा। कम-से-कम यह संभावना उसके पत्रों और मनःस्थिति से स्पष्टतया सामने आती है। हो सकता है उसने यह प्रत्याशा करके पूरी तरह से न्यायोचित किया हो कि विवाह के पश्चात् उसका पति प्यार और सम्मान से उसकी पूरी देख-रेख करेगा। यह बात उसके पत्रों से स्पष्ट हो जाती है, जिसमें उसने यह संकेत किया था कि उसका पति इतना व्यस्त रहता है कि उसके पास उसके लिए समय नहीं है। जिन्दगी का एक कटु सत्य जिससे इनकार

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh


नहीं किया जा सकता है, यह है कि अपने व्यवसाय या पेशे में कुछ लोग इतने व्यस्त रहते हैं कि वे अपने परिवार के लिए समय नहीं दे पाते। मामूली तौर पर हम यह कह सकते हैं कि वकील, प्रोफेसर, डाक्टर और संभवतः न्यायाधीश इस प्रवर्ग के अन्तर्गत आते हैं और मंजु के मामले से उनकी आंखें खुल जानी चाहिएं।

182. ऊपर दिए गए कारणों से हम यह अभिनिर्धारित करते हैं कि अभियोजन पक्ष अपीलार्थी के विरुद्ध अपना पक्षकथन सन्देह से परे साबित करने में असफल रहा है। अतः हम अपील मंजूर करते हैं, निचले न्यायालय के निर्णय अपास्त करते हैं और अपीलार्थी, शरद बिरधीचन्द शारदा को उसके विरुद्ध लगाए गए आरोप से दोषमुक्त करते हैं और उसे तुरन्त रिहा और स्वतन्त्र किए जाने का निदेश देते हैं।

**न्यायाधिपति वरदराजन—**

183. विशेष इजाजत लेकर की गई यह अपील 1983 का दाण्डिक अपील सं० 265 और 1983 के पुष्टि मामला सं० 3 में मुम्बई उच्च न्यायालय के खण्ड न्यायपीठ के निर्णय के विरुद्ध फाइल की गई है। उच्च न्यायालय ने 1982 के सेशन मामला सं० 203 में पुणे के अपर सेशन न्यायाधीश द्वारा प्रथम अभियुक्त शरद बिरधीचन्द शारदा (जिसे इसमें इसके पश्चात् अपीलार्थी कहा है) को दिए गए मृत्यु दण्डादेश की पुष्टि कर दी थी और अपील खारिज कर दी थी। सेशन मामला में अपीलार्थी, रामेश्वर बिरधीचन्द शारदा और रामविलास रामबगस क्रमशः अभियुक्त 1, 2 और 3 थे।

184. अपीलार्थी और दूसरा अभियुक्त पुणे के बिरधीचन्द नामक एक व्यक्ति के पुत्र हैं। इनके परिवार का कपड़े का कारबार है। इसके अतिरिक्त अपीलार्थी ने पुणे के एक उपनगर भोसारी में रसायन का एक कारखाना लगा लिया है। अपीलार्थी के बारे में कहा जाता है कि वह रसायन इंजीनियरी में स्नातक है। तीसरा अभियुक्त अपीलार्थी और दूसरे अभियुक्त का चाचा है। अपीलार्थी मंजुश्री उर्फ मंजु का पति है, जबकि दूसरा अभियुक्त अनुराधा (अभियोजन साक्षी-35) का पति है। बिरधीचन्द के कुटुम्ब का आवास-गृह पुणे में रविवार पेठ में है और उनके पास पुणे के मुकुन्द नगर क्षेत्र में तक्षशिला अपार्टमैंट नामक भवन में एक फ्लैट है।

185. अभिकथित मृत मंजु, रामेश्वर (अभियोजन साक्षी-2) और पार्वती (अभियोजन साक्षी-20) के पांच बच्चों में सबसे बड़ी थी। अंजु (अभियोजन साक्षी-6) अभियोजन साक्षी-2 की दूसरी पुत्री है। वह 1960 से वाणिज्यिक कर और आयकर की परामर्शदाता है। अभियोजन साक्षी-2 1973 से बीड सीटी में सुभाष नगर स्थित अपने मकान में रहता है। इससे

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



पहले वह इसी शहर में कर्मपुरा पेठ में किराए के मकान में रहता था। मीना (अभियोजन साक्षी-5) मंजु की स्कूल और कालेज की सहपाठी तथा मित्र है। उसने रसायन में बी० एससी० परीक्षा प्रथम श्रेणी में 1980 में पास की थी जबकि अभियोजन साक्षी-5, जिसने मंजु के साथ दसवीं परीक्षा पास की थी, अभी कालेज में पढ़ रही है। रेखा (अभियोजन साक्षी-3), जिसे मंजु वाहिनी कहकर बुलाती थी, मंजु की एक अन्य मित्र है। वह सुभाष रोड, पुणे, में अभियोजन साक्षी-2 के मकान के एक हिस्से में उसके किराएदार के रूप में अपने पति डा० दिलीप दलवी के साथ रहती है। अभियोजन साक्षी-20 का बड़ा भाई धनराज राठी (अभियोजन साक्षी-22) पुणे का निवासी है। यहां पर वह प्लास्टिक के थैले बेचने का कारबार करता है। थैले बनाने के लिए उसके पास बीड में एक प्लास्टिक का कारखाना है, जिसे दीपक प्लास्टिक्स कहते हैं। यह अभियोजन साक्षी-20 और कुछ अन्य जिनमें अभियोजन साक्षी-22 का तीसरा पुत्र श्रीगोपाल भी सम्मिलित है, की भागीदारी है। दीपक अभियोजन साक्षी-2 और 20 के दो पुत्रों में से एक है।

186. 1980 में मंजु के बी० एससी० डिग्री की परीक्षा पास करने के पश्चात् अपीलार्थी के साथ उसका विवाह एक औपचारिक सगाई द्वारा तय किया गया, जो जून, 1981 में हुई थी। अपीलार्थी और मंजु का विवाह 11-2-1982 को बीड में अभियोजन साक्षी-2 के खर्च पर हुआ था। विवाह के बाद अपीलार्थी और मंजु 12-2-1982 को पुणे चले गए। बाद में अभियोजन साक्षी-2 ने अपने बड़े पुत्र दीपक को पुणे में अपीलार्थी के घर से मंजु को लाने के लिए भेजा और तदनुसार वे 22-2-1982 को बीड वापस आ गए। अपीलार्थी चार या पांच दिन बाद बीड गया और यह कहकर कि वह अभियोजन साक्षी-2 के घर में आगे रहने में असमर्थ है, मंजु को लेकर वापस पुणे आ गया। अपीलार्थी से विवाह के बाद मंजु पहली बार अपने मां-बाप के घर आई थी। बताया गया कि इस दौरान वह बहुत खुश रही। तत्पश्चात् मंजु 2-4-1982 को या के लगभग अपने मामा धनराज राठी (अभियोजन साक्षी-22) के साथ अपने माता-पिता के घर आई। अभियोजन पक्ष का कहना है कि इस बार मंजु खुश नहीं थी और अभियोजन साक्षी-3 और 6 से अपीलार्थी के विरुद्ध सामान्य तौर पर शिकायत की थी। इस बार अभियोजन साक्षी-2 ने मंजु को लगभग तीन सप्ताह अपने घर में रखने की योजना बनाई। किन्तु बीड में अभियोजन साक्षी-2 के घर पर यह सूचना मिली कि अपीलार्थी के दादा का देहान्त हो गया है, अतः अभियोजन साक्षी-2 और 20 तथा मंजु 11-4-1982 को शोक प्रकट करने के लिए पुणे गए। पुणे में अपीलार्थी के पिता और दूसरों से मिलने के बाद अभियोजन साक्षी-2 और 20 मंजु को पुणे में अपीलार्थी के घर छोड़कर वापस

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh


लौट आए। अपीलार्थी से विवाह करने के बाद मंजु अपने माता-पिता के घर दूसरी बार आई थी। अभियोजन साक्षी-2 और 20 ता० 13-5-1982 के लगभग पुणे आए। अभियोजन साक्षी-22 के घर में सामान्य तौर पर कुछ समय ठहरने के बाद अभियोजन साक्षी-2 और 20 इस बार बिरधीचन्द के घर गए। अभियोजन पक्ष का कहना है कि अभियोजन साक्षी-2 और 20 ने देखा कि मंजु कुछ खिन्न और परेशान है। अतः वे उसे बिरधीचन्द की इजाजत से अभियोजन साक्षी-22 के घर ले गए। अभियोजन पक्ष का यह भी कहना है कि अभियोजन साक्षी-22 के घर पहुंचने पर मंजु अभियोजन साक्षी-22 की बाहों में फूट-फूट कर रोने लगी। अभियोजन साक्षी-2 और 20 पुणे से बीड लौट आए और उन्होंने मंजु को लिवा लाने के लिए 4 या 5 दिन बाद अपने दूसरे पुत्र प्रदीप को भेजा। किन्तु वह तब तक अपीलार्थी के साथ आन्ध्र प्रदेश में तिरूपति जा चुकी थी। जब यह पता चला कि अपीलार्थी और मंजु पुणे लौट आए हैं, तभी अभियोजन साक्षी-2 ने मंजु को बीड लाने के लिए अपने पुत्र दीपक को भेजा। तदनुसार दीपक 25-5-1982 को तीसरे अभियुक्त की पुत्री कविता के साथ मंजु को बीड ले आया। अपीलार्थी से विवाह के बाद मंजु का अपने माता-पिता के घर यह तीसरा और अन्तिम दौरा था। अपीलार्थी का कहना है कि मंजु इस बार पूर्णतः खिन्न और भयभीत थी तथा उसने अपीलार्थी के खिलाफ अपनी मां, अभियोजन साक्षी-20 से शिकायत की थी। उसकी मां ने जो कुछ मजु से सुना था, अभियोजन साक्षी-2 को बता दिया। बिरधीचन्द मंजु को पुणे लाने के लिए इस आधार पर बिना किसी पूर्व सूचना के 2-6-1982 को बीड पहुचा कि पुणे में उसके खानदानी मकान में मंजु की उपस्थिति 13-6-1982 के लिए नियत उसकी पुत्री शोभा की सगाई के लिए एवं 30-6-1982 को नियत उसके विवाह के लिए आवश्यक है। अभियोजन पक्ष का कहना है जब मजु को यह पता चला कि उसके ससुर बिरधीचन्द उसे पुणे ले जाए जाने के लिए आए हैं, यो वह रोई और उसने पुणे जाने की अपनी अनिच्छा प्रकट की। किन्तु बिरधीचन्द के आश्वासन पर कि मंजु की जिन्दगी को कोई खतरा नहीं होगा अभियोजन साक्षी-2 ने मंजु को बिरधीचन्द के साथ पुणे जाने की इजाजत दे दी। तदनुसार वह कविता और बिरधीचन्द के साथ 3-6-1982 को पुणे चली गई।

187. बिरधीचन्द और अपीलार्थी सहित उसके पुत्र का कुटुम्ब संयुक्त है। जैसा कि पहले कहा जा चुका है, उनके पास पुणे में रविवार पेठ में अपना खानदानी मकान है। इसके अलावा उनके पास उनके खानदानी मकान से कुछ दूर तक्षशिला अपार्टमैंट्स में भी एक फ्लैट है। उनके फ्लैट में दो शयन-कक्ष और एक हाल तथा अन्य हिस्से हैं। बिरधीचन्द के दो विवाहित पुत्र अपीलार्थी और

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



दूसरा अभियुक्त रात में सोने के लिए तक्षशिला अपार्टमैंट्स में परिवार के फ्लैट में जाया करते थे। अपीलार्थी और मंजु दो शयन कक्षों में से एक में सोते थे, जबकि दूसरा अभियुक्त और उसकी पत्नी अनुराधा (अभियोजन साक्षा-35) और उनके बालक दूसरे शयन-कक्ष में सोते थे।

188. मंजु ने अन्य पत्रों के साथ-साथ तीन पत्र, प्रदर्श 33, तारीख 25-4-1982 अपनी मित्र वाहिनी (अभियोजन साक्षी-3) को और प्रदर्श 30, तारीख 8-5-1982 और प्रदर्श 32 तारीख 8-6-1982 को अपनी छोटी बहन अंजु (अभियोजन साक्षी-6) को लिखे थे। प्रदर्श 33 में मंजु ने अन्य बातों के साथ-साथ यह कहा था कि हालांकि पुणे में सभी लोग बहुत अच्छे हैं और हरेक उसे प्यार करता है, फिर भी वह अकेलापन महसूस करती है और एक कारण यह है कि घर में कई बड़े बूढ़े हैं, अतः वह स्वतंत्र होकर कोई काम करने का साहस नहीं करती तथा उसके मन में हमेशा डर बना रहता है जिससे वह परेशान रहती है। उस पत्र में उसने यह भी कहा था कि यदि अपीलार्थी उसके दस बार जाने और बोलने पर भी बात नहीं करता तो उसे गुस्सा आ जाता है और अभी तक इस आदमी (अपीलार्थी) के पास अपनी पत्नी के लिए कोई समय नहीं है। इस पत्र में उसने कहा था कि वह अपीलार्थी से यह कहने का साहस नहीं कर सकती कि क्या धोने के लिए उनके कपड़े ले लिए जाएं और इस समय उसकी प्रास्थिति एक बिना वेतन की नौकरानी जैसी है। अंत में उसने उस पत्र में कहा है कि जिस दिन अपीलार्थी का स्वाभिमान कम हो जाएगा, उस दिन वह सबसे अधिक भाग्यशालिनी होगी, किन्तु कह नहीं सकती कि वह तब तक जीवित भी रहेगी या नहीं। प्रदर्श पी-30 में उसने अन्य बातों के साथ-साथ कहा है कि वह बहुत कठिन परीक्षा से गुजर रही है और अपने उद्देश्य को पाने में असमर्थ है। यही अच्छा और भला होगा कि वह अपने आप पर काबू रखे और जब यह असंभव हो जाएगा तो कोई और उपाय खोजना होगा। प्रदर्श 32 में उसने लिखा है कि यद्यपि वह पुणे में खुश थी, फिर भी उसे मालूम नहीं है कि वहां घर में इतना गन्दा वातावरण क्यों है और हर क्षण यह महसूस होता है कि कुछ हो जाएगा। उस पत्र में उसने यह भी कहा है कि घर में कोई काम शुरु नहीं हुआ है, हालांकि शोभा की सगाई 13-6-1982 को सम्पन्न होगी, अतः वह बड़ी व्याकुल है।

189. 11/12-6-1982 की रात को जो घटना घटी हुई बताई गई, उसके बारे में अभियोजन पक्ष का कथन इस प्रकार हैं: तारीख 11-6-1982 को रात के लगभग, 10.30 बजे मंजु, अनुराधा (अभियोजन साक्षी-35) और अनुराधा के तीन बच्चों के साथ एक आटो-रिक्सा में बैठकर तक्षशिला अपार्टमेंट्स आई। इस तथ्य के बारे में तक्षशिला अपार्टमेंट्स के, चौकीदार, करब

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



(अभियोजन साक्षी-28) ने अभिसाक्ष्य दिया है। सैयद मोहिद्दीन (अभियोजन साक्षी-7) जोपुणे में गणेश पेठ और रविवार पेठ की सीमा-क्षेत्र का निवासी है, आटो-रिक्शा चालक का कहना है कि वह उस रात लगभग 11 बजे अपने आटो-रिक्शा से दो महिलाओं, तीन बालकों और एक बेबी को मुकन्द नगर ले गया था। उसने दो या तीन दिन बाद समाचारपत्र में प्रकाशित मंजु की फोटो के बारे में बताया कि दो महिलाओं में से एक का है, जिन्होंने उसकी आटो-रिक्शा में यात्रा की थी, जैसा कि ऊपर कहा जा चूका है। दूसरा अभियुवत तक्षशिला अपार्टमेंट्स के फ्लैट में पहले ही जा चुका था। अपीलार्थी लगभग 15 मिनट बाद स्कूटर से फ्लैट पहुंचा। जब चौकीदार (अभियोजन साक्षी-28) ने कहा कि आप देर से आ रहे हैं तो उसने अभियोजन साक्षी-28 से कहा कि वह एक मीटिंग में गया था, इसलिए देर हो गई। अपीलार्थी के फ्लैट पहुंचने के बाद वह और मंजु सोने के लिए अपने कमरे में चले गए जबकि दूसरा अभियुक्त और अभियोजन साक्षी-35 अपने कमरे में चले गए। तत्पश्चात्, अपीलार्थी 12-6-1982 को रात के लगभग 2 बजे अपने कमरे में से आया और दूसरे अभियुक्त के कमरे में गया तथा दोनों थोड़ी देर में ही स्कूटरों से उस फ्लैट से बाहर चले गए। अपीलार्थी रविवार पेठ गया और अपने पिता के पास पहुंचा जबकि दूसरा अभियुक्त, डाक्टर उत्तम चन्द लौढा (अभियोजन साक्षी-24) को बुलाने गया, जो तक्षशिला अपार्टमेंट्स से लगभग डेढ़ किलोमिटर दूर रहता है, उन्होंने डाक्टर अंजली केलकर (अभियोजन साक्षी-26) और उसके पति डाक्टर श्रीकांत केलकर (अभियोजन साक्षी-27) की मदद नहीं ली। ये लोग उसी तक्षशिला अपार्टमैंट्स में पड़ोस में रहते थे अभियोजन साक्षी-24 रात को लगभग 2.30 बजे अपीलार्थी के फ्लैट में पहुंचा और उसने देखा कि मंजु मर चुकी है और उसका शरीर अकड़ चुका है किन्तु मृत्यु के कारण रूप कोई बाह्य क्षति दिखाई नहीं पड़ी। बहरहाल, उनकी राय थी कि यह अप्राकृतिक मृत्यु का मामला हो सकता है और उन्होंने सुझाव दिया कि पुलिस को सूचना दे दी जाए। जब बिरधीचन्द, जो तब तक फ्लैट में पहुंच चुका था, ने सलाह दी कि किसी और डाक्टर को बुला लिया जाए क्योंकि वह अभियोजन साक्षी-24 की राय से संतुष्ट नहीं है, तो अभियोजन साक्षी-24 ने सुझाव दिया कि यदि ऐसी इच्छा है तो डाक्टर अनिल गांधी, अभियोजन साक्षी-25 को बुला लिया जाए तत्पश्चात् अभियोजन साक्षी-24 और तीसरा अभियुक्त, जो बिरधीचन्द के साथ आया था, अभियोजन साक्षी-25 को बुलाने गए, जो तक्षशिला अपार्टमैंट्स से लगभग 7 किलोमीटर दूर रहता था। रास्ते में उन्होंने अभियोजन साक्षी-25 से फोन पर बात की और वे उसे अपीलार्थी के फलैट ले गए, जहां उसने प्रातः लगभग 4 बजे मंजु की परीक्षा की और उसे मृत घोषित किया।

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



उसकी राय थी कि हो सकता है कि वह 3 या 4 घण्टे पहले मरी हो और कहा कि कोई बाहरी साक्ष्य नहीं है, जो मृत्यु का कारण दर्शाता हो। उसने यह भी सुझाव दिया कि पुलिस को सूचना दे दी जाए ताकि कोई मुसीबत न खड़ी हो।

190. तीसरा अभियुक्त 12-6-1982 को लगभग 4-30 बजे पूर्वाह्न को मोहन असवा (अभियुक्त साक्षी-20) के पास गया और उसे यह बताने के बाद कि मंजु मर चुकी है, अपीलार्थी के फ्लैट पर बुला लाया। अभियोजन साक्षी-30 ने, जो तीसरे अभियुक्त के साथ आया था, फ्लैट में मंजु का शव देखा और वह यह कहकर वहां से चला गया कि पुलिस को सूचना दे दी जानी चाहिए। तीसरे अभियुक्त ने लगभग 6-30 पूर्वाह्न अभियोजन साक्षी-30 से फोन पर सम्पर्क किया और उससे कहा कि जाकर पुलिस को सूचना दे दीजिए कि मंजु पूर्वाह्न 5-30 बजे मर गई है। तदनुसार, अभियोजन साक्षी-30 लगभग 7 या 7-15 बजे पूर्वाह्न महर्षि नगर पुलिस थाने गया और हैड कांस्टेबल (अभियोजन साक्षी-31) को सूचना दी, जिसने इस आशय की प्रविष्टि प्रदर्श 120 की कि जब अपीलार्थी ने 12-6-1982 को पूर्वाह्न 5-30 बजे उसे जगाने का प्रयास किया तो मंजु मृत पाई गई। अभियोजन साक्षी-31 मंजु की संदिग्ध मृत्यु के बारे में पुलिस इन्स्पैक्टर, अभियोजन साक्षी-40 को फोन पर बताने के बाद लगभग 8 बजे पूर्वाह्न अपीलार्थी के फ्लैट पर चला गया।

191. 12-6-1982 को प्रातः लगभग 6 बजे फोन द्वारा अभियोजन साक्षी-22 से सूचना प्राप्त करने पर कि मंजु की हालत बहुत गम्भीर है, अभियोजन साक्षी-2, अपनी पत्नी अभियोजन साक्षी-20 और अपने पुत्र प्रदीप और हीरालाल शारदा (अभियोजन साक्षी-4) के साथ 12-6-1982 को लगभग 1 बजे अपराह्न जीप द्वारा बीड से पुणे गया और वहां जाकर उसे पता चला कि मंजु मर चुकी है। तत्पश्चात् अभियोजन साक्षी-2 हीरालाल शारदा के साथ सासन अस्पताल गया जहां पर पुलिस मंजु के शव को शव-परीक्षा के लिए ले गई थी।

192. डाक्टर कालीकृष्णन बनर्जी (अभियोजन साक्षी-33) ने जिन्होंने मंजु की शव परीक्षा की थी, कोई भी बाह्य या आन्तरिक क्षति नहीं पाई। उन्होंने मंजु के पेट के मल और कुछ आंतों आदि को परिरक्षित रखा और उसकी मृत्यु के कारणों के बारे में अपनी राय कायम रखी। रासायनिक परीक्षक की रिपोर्ट प्रदर्श-130 प्राप्त करने पर, जिसमें लिखा था कि मंजु के अन्तराग में पोटाशियम सायनाइड विष था, अभियोजन साक्षी-33 की अंतिम राय थी कि मंजु पोटाशियम सायनाइड के विष के कारण और साथ-ही-साथ यांत्रिक रूप से

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



दम घुटने के कारण मरी है। अन्वेषण पूरा करने के बाद अभियोजन साक्षी-40 ने अपीलार्थी और अन्य दो अभियुक्तों के विरुद्ध 13-9-1982 को शपथ-पत्र फाइल किया।

193. पुणे के अपर सेशन न्यायाधीश ने पोटाशियम सायनाइड विष देकर या गला घोंटकर या दोनों से मंजु की हत्या के अपराध में भारतीय दण्ड संहिता की धारा 302 के अधीन तथा सभी तीनों अभियुक्तों का मंजु की मृत्यु के समय के बारे में पुलिस को गलत सूचना देकर मंजु की हत्या के साक्ष्य को नष्ट करने के षड्यन्त्र के अपराध में भारतीय दण्ड संहिता की धारा 120ख के अधीन तथा तीसरे अभियुक्त का पुलिस को गलत सूचना देने के लिए अभियोजन साक्षी-30 को उकसाने के अपराध में तथा मंजु की हत्या के सम्बन्ध में अभियोजन साक्षी-22 को गलत सूचना देने के अपराध में भारतीय दण्ड संहिता की धारा 201 के साथ पठित धारा 109 के अधीन अपीलार्थी का विचारण किया।

194. अपीलार्थी और अन्य दो अभियुक्तों ने अपने विरुद्ध लगाए गए आरापों का प्रत्याख्यान किया। अपीलार्थी ने इस बात से इनकार किया कि उसका उज्जवला (अभियोजन साक्षी-37) से कोई सरोकार था, जिससे वह सुसंगत समय पर प्रेम करते हुए बताया गया था। उसने यह स्वीकार किया कि मंजु और अभियोजन साक्षी-35 कुछ बच्चों के साथ 11-6-1682 को लगभग 10.30 बजे अपराह्न तक्षशिला अपार्टमेंट्स में उनके फ्लैट में गए थे किन्तु इस बात से इनकार किया कि उन्होंने किसी आटो-रिक्शा में यात्रा की थी और यह कहा कि वे अपने परिवार की कार से गए थे, जिसे दूसरे अभियुक्त ने चलाया था। उसने प्रत्याख्यान किया कि वह लगभग 15 मिनट बाद फ्लैट गया था और यह कहा कि राजस्थान यूथ क्लब में एक सभा में भाग लेने के बाद 12-6-1982 को 1.30 या 1.45 बजे पूर्वाह्न ही वह फ्लैट में लौटा था।। उसने कहा कि कपड़े बदलने के बाद उसने मंजु को देखा और कुछ असामान्य पाया तथा उसे आशंका-हुई और फिर वह दूसरे अभियुक्त के पास गया और तत्पश्चात् वह अपने पिताजी तथा चाचा जी को बुलाने चला गया, जबकि दूसरा अभियुक्त डाक्टर लोढा, अभियोजन साक्षी-24 को बुलाने गया।

195. विचारण न्यायालय का निष्कर्ष था कि तीनों अभियुक्त लगाए गए आरोपों के दोषी हैं, उसने तदनुसार अपीलार्थी को भारतीय दण्ड संहिता की धारा 302 के अधीन सिद्धदोष ठहराया और मृत्यु दण्डादेश दिया तथा तीनों अभियुक्तों को भारतीय दण्ड संहिता की धारा 102ख के अधीन दो वर्ष के कठिन कारावास का और 2-2 हजार रुपए जुर्माने का दण्डादेश दिया

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



किन्तु धारा 120ख के साथ पठित धारा 201 के अधीन कोई दण्डादेश नहीं दिया।

196. अपीलार्थी और अन्य दो अभियुक्तों ने अपनी दोषसिद्धि और दिए गए दण्डादेशों के खिलाफ अपीलें फाइल कीं। राज्य ने अभियुक्त 2 और 3 को दिए गए दण्डादेश की वृद्धि के लिए दाण्डिक पुनरीक्षण आवेदन फाइल किया। इन अपीलों, पुष्टि के मामले और दाण्डिक पुनरीक्षण आवेदन की सुनवाई मुम्बई उच्च न्यायालय के एक खण्ड न्यायपीठ ने एक ही साथ की और उसने एक लम्बे निर्णय के द्वारा (हमारी पेपर बुक के पृष्ठ 195 पर) भारतीय दण्ड संहिता की धारा 120ख के अधीन अपनी दोषसिद्धि और दण्डादेश के बारे में अपीलार्थी की अपील भागतः मंजूर कर ली किन्तु भारतीय दण्ड संहिता की धारा 302 के अधीन दिए गए मृत्यु दण्डादेश और उसकी दोषसिद्धि की पुष्टि कर दी तथा अभियुक्त 2 और 3 की पूरी अपील मंजूर कर ली और उन्हें दोषमुक्त कर दिया तथा दाण्डिक पुनरीक्षण आवेदन खारिज कर दिया। इस प्रकार अकेले अपीलार्थी ने अपनी दोषसिद्धि और मृत्यु के दण्डादेश के विरुद्ध विशेष इजाजत लेकर इस न्यायालय में अपील फाइल की है।

197. मुझे अपने विद्वान बंधु न्या० फज़ल अली का निर्णय पढ़ने का अवसर मिला। मैं उनके अंतिम निष्कर्ष से सहमत हूं अपील सफल होनी चाहिए। उच्च न्यायालय के विद्वान न्यायाधीश ने अपीलर्थी की दोषसिद्धि और मृत्यु दण्डादेश पुष्टि करने के लिए 17 परिस्थितियों का अवलम्ब लिया था। मेरे विद्वान बंधु न्या० फज़ल अली ने उनमें से प्रत्येक परिस्थिति को ठीक ही अस्वीकार कर दिया क्योंकि वे अपीलार्थी की दोषिता का निश्चायक संकेत नहीं करतीं। उनमें से यह भी एक परिस्थिति है कि अपीलार्थी मंजु की मृत्यु से पहले उसके साथ अंतिम बार देखा गया था। यह इस आधार पर था कि डाक्टर बनर्जी, अभियोजन साक्षी-33 के साक्ष्य पर अधारित अभियोजन पक्ष का यह कथन कि मंजु का किसी यांत्रिक ढंग से दम घुटा था, स्वयं उच्च न्यायालय ने विश्वास नहीं किया और रासायनिक परीक्षक को भेजी गई अभियोजन साक्षी-33 की रिपोर्ट की कार्बन प्रतिलिपि प्रदर्श 134 में की गई कुछ प्रविष्टियां रासायनिक परीक्षक की प्रदर्श 32 की अपनी रिपोर्ट भेजने के बाद प्रक्षेपित की गई थीं, प्रदर्श 134 मरणोत्तर परीक्षा प्रमाण-पत्र में मूल प्रविष्टि यह थी "आत्म-हत्या का मामल हो सकता है" और यह कि अभियोजन साक्षी-33 का यह स्पष्टीकरण कि उसने "मृत्यु का समय" शब्द दो बार लिखे थे, न कि "आत्म-हत्या का मामला हो सकता है" शब्द लिखे थे। अतः यह बिल्कुल भी स्वीकार नहीं है कि उसने उनमें से एक प्रविष्टि काट दी थी। डाक्टर अभियोजन साक्षी 24 और 25 को

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



मंजु के शरीर पर कोई बाह्य क्षति नहीं मिली। उन्होंने मंजु के शरीर की परीक्षा 12-6-1982 के लगभग 2-30 और 4-30 बजे अपराह्न में की थी, अभियोजन साक्षी-33 को भी मंजु के शरीर पर कोई बाह्य या आंतरिक क्षति नहीं मिली। इन परिस्थितियों में जब तक कि अभियोजन-पक्ष इस संभावना को अपवर्जित न कर दे कि मंजू ने पोटाशियम सायनाइड विष खाकर हत्या की है, जैसा कि मेरे विद्वान न्या० बंधु फज़ल अली ने ठीक ही कहा है, तब तक अपीलार्थी के विरुद्ध इस तथ्य से दोषिता का कोई प्रतिकूल निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता कि वही अंतिम व्यक्ति था जो मंजु के साथ देखा गया था क्योंकि वह तो उसका पति था, जिसका रात के समय उसके साथ होना स्वाभाविक है। कल्पना की किसी भी उड़ान से इन 17 परिस्थितियों में से कुछ परिस्थितियां ऐसी हैं जो अपीलार्थी की दोषिता की ओर संकेत करती हैं, ऐसा नहीं माना जा सकता। परिस्थिति संख्या 6 अपीलार्थी के पिता बिरधीचन्द का 12-6-82 को पूर्वाह्न 7 बजे से पहले ही मंजु का दाह संस्कार अभियोजन साक्षी-30 के सामने ऐसी इच्छा प्रकट कराने का प्रयास है। परिस्थिति सं० 9 मंजु के शव को इस प्रकार रखना जिससे यह प्रतीत हो कि वह शान्तिपूर्वक और प्राकृतिक मृत्यु से मरी है। परिस्थिति संख्या 11 यह है कि मंजु के पैरों में पायजेब नहीं थी। परिस्थिति सं० 12 यह है कि अपीलार्थी ने चादर की तह में अभिकथित रूप से पायजेंब छिपा दी थी। परिस्थिति सं० 15 यह तथ्य है कि चिकित्सीय साक्ष्य के अनुसार मंजु 4-6 सप्ताह की गर्भवती थी और आमतौर पर यह आत्म-हत्या करने से उसे रोकने के लिए एक आधार था। उच्च न्यायालय के विद्वान न्यायाधीश के प्रति ससम्मान मेरे मतानुसार कल्पना की किसी भी उड़ान से यह नहीं कहा जा सकता कि इनमें से कोई भी परिस्थिति ऐसे मामले में अपीलार्थी की दोषिता के सिवा कुछ भी इंगित करने वाली नहीं समझी जा सकती, जो कि विशुद्ध रूप से पारिस्थितिक साक्ष्य पर आधारित है।

198. बहरहाल, चूंकि मैं चार मुद्दों पर अपने विद्वान बंधु न्या० फज़ल अली से सहमत होने में अपने आपको असमर्थ महसूस करता हूं इसलिए मैं अपना पृथक् किन्तु ससम्मत निर्णय दे रहा हूं, जिनमें इन मुद्दों के बारे में मेरा मत दिया गया है। वे हैं, (1) अपीलार्थी का मंजु के साथ दुर्व्यवहार, (2) अपीलार्थी का उज्जवला (अभियोजन साक्षी-37) से घनिष्ठ सम्बन्ध, (3) मंजु के पत्र प्रदर्श 30, 32 और 33 और अभियोजन साक्षी 2, 3, 5, 6 और 20 के अपीलार्थी के विरुद्ध मंजु द्वारा की गई अभिकथित शिकायत के बारे में भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 32 (1) के अधीन मौखिक साक्ष्य की ग्राह्यता और (4) डाक्टर बनर्जी (अभियोजन साक्षी-33) का आचरण, जिसने मंजु की शव-परीक्षा की थी।

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



199. मेरे विद्वान बंधु न्या० फज़ल अली ने अपने निर्णय के पृष्ठ 3 और 96 पर इस प्रकार मत व्यक्त किया है—

**पृष्ठ-3**

> "इसके विपरीत प्रतिरक्षा-पक्ष का अभिवाक था कि जबकि इस बात की बहुत संभावना थी कि मंजु के साथ उसके पति ने और उसके सास-श्वसुर ने दुर्व्यवहार किया और उसकी देखरेख नहीं की, अति संवेदनशील और बहुत जल्दी प्रभावित होने वाली स्त्री होने के कारण उसने भवोद्वेग से उत्पन्न मात्र निराशा और उद्विग्नता के फलस्वरूप आत्म-हत्या की।"

**पृष्ठ-96**

> "इसके विपरीत हो सकता है कि इस परिस्थिति से वह आत्म-हत्या करने के लिए प्रेरित हुई हो यदि उसे बच्चा हुआ तो उसके पति और सास-श्वसुर द्वारा उसके प्रति दुर्व्यहार की दृष्टि से बच्चे का उचित लालन-पालन नहीं हो सकेगा।

मुझे कुछ ऐसा ध्यान नहीं आता कि अपनी बहस के दौरान अपीलार्थी के विद्वान् काउन्सेल श्री राम जेठमलानी ने अपीलार्थी और उसके माता-पिता की ओर से मंजु के साथ कोई क्रूरता या दुर्व्यवहार का जिक्र किया था। अभियोजन साक्षी-3 का साक्ष्य है कि अपीलार्थी के साथ विवाह के बाद मंजु के बीड के दूसरे दौरे के दौरान उसने देखा कि मंजु बहुत खुश नहीं है और अपीलार्थी से बहुत डरी हुई है। अभियोजन साक्षी-5 का साक्ष्य है कि दूसरी बार बीड जाने के बाद उसने उससे शिकायत की थी कि अपीलार्थी रात को देर से घर आता है और उससे कतराता है तथा मंजु ने यह कहा था कि वह अपीलार्थी से भयभीत है और उसे उसके हाथों अपने जीवन का खतरा बना हुआ है। अभियोजन साक्षी-5 का यह साक्ष्य है कि तीसरी बार बीड जाने पर उसे मंजु के चेहरे को देखकर ऐसा अनुमान हुआ था कि उस पर भय की छाया है। अभियोजन साक्षी-6 का साक्ष्य है कि दूसरी बार बीड जाने पर मंजु ने उससे कहा था कि अपीलार्थी प्रातः घर से जल्दी चला जाता है और फैक्ट्री में काम करने के बहाने रात को देर से लौटता है औद यह कि वह उससे बात करने के लिए तैयार नहीं रहता है। अभियोजन साक्षी-6 का कहना है कि मंजु के तीसरी बार बीड जाने के दौरान वह अत्यन्त बेचैन, परेशान और भयभीत थी, कि मंजु ने उसे बताया था कि अपीलार्थी उसके इस प्रश्न को पसन्द नहीं करता कि वह उसके साथ मात्र बातचीत करने के लिए भी क्यों तैयार नहीं है तथा तीसरी बार बीड जाने के दौरान जब बिरधीचन्द मंजु को पुणे ले जाने के लिग 2-6-1982 को बीड गया तो मंजु ने पुणे जाने की अपनी अनिच्छा प्रकट की। अपने अंतिम दो दौरों के दौरान मंजु कैसे

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



महसूस करती थी और उसने क्या-क्या बताया था, अभियोजन साक्षी-2 और 20 का साक्ष्य भी इसी प्रकार का है। मेरे विद्वान् बन्धु न्या० फजल अली ने अभियोजन साक्षी-2, 3, 5, 6 और 20 का मौखिक साक्ष्य ठीक ही नामंजूर किया है। उन्होंने अपने निर्णय में प्रदर्श 30, 32 और 33 के पत्रों में से सुसंगत अंश उद्धृत किए है और पृष्ठ 23 पर यह कहा है कि प्रदर्श-30 में एक बात यह साफ-साफ दिखाई पड़ती है कि मंजु अपने पति या उसके माता-सिता को अपराध में फंसाने की बजाय सारा दोष अपने ऊपर लेने के लिए तैयार थी, पृष्ठ 24 पर यह कि विद्वान् अपर महासालिसिटर ने यह मान लिया था कि प्रदर्श 32 का सुसंगत अंश अपीलार्थी या उसके माता-पिता द्वारा मंजु के साथ किसी दुर्व्यवहार का संकेत नहीं करता, और पृष्ठ 30 पर यह कि प्रदर्श 33 से यह आसानी से अनुमान लगाया जा सकता है कि मंजु को अपीलार्थी से कोई गम्भीर शिकायत नहीं थी। उसकी शिकायत केवल यह थी कि वह उसके प्रति इतना ध्यान नहीं देता, जितना देना चाहिए। इन तीन पत्रों से यह सिद्ध नहीं होता कि मंजु ने अपीलार्थी या उसके माता-पिता द्वारा किसी दुर्व्यवहार की कोई शिकायत की थी। मेरे मतानुसार ये तीन पत्र और अभियोजन साक्षी2, 3, 5, 6 और 20 का उपरोक्त मौखिक साक्ष्य भारती साक्ष्य अधिनियम की धारा 32 (1) के अधीन साक्ष्य में अग्राह्य है। इसके कारण मेरे निर्णय में अन्यत्र दिए गए हैं। इस प्रकार अभिलेख पर ऐसा कोई स्वीकार्य साक्ष्य नहीं है जिससे यह पता चलता हो कि अपीलार्थी या उसके माता-पिता ने मंजु के साथ दुर्व्यवहार किया था। उच्च न्यायालय ने भी अपने निर्णय में ऐसे किसी दुर्व्यवहार का निष्कर्ष नहीं निकाला है। इसके विपरीत अपने निर्णय के पैरा 104 में उच्च न्यायालय का निष्कर्ष है कि अपीलार्थी ने मंजु के साथ अपमानजनक व्यवहार किया था। अभियोजअ पक्ष के कथन का उल्लेख करते समय भी उच्च न्यायालय ने अपने निर्णय के पैरा 7 में कहा है कि अभिकथन है कि अपीलार्थी ने मंजु के साथ अपमानजनक व्यवहार करना शुरू कर दिया था और पैरा 20 में कहा है कि अपीलार्थी ने दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन लेखबद्ध अपने कथन में यह प्रत्याख्यान किया है कि मंजु के साथ अपमानजनक व्यवहार किया गया है। दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन की गई परीक्षा के दौरान अपीलार्थी या उसके माता-पिता द्वारा मंजु के साथ किसी दुर्व्यवहार के बारे में अपीलार्थी से कोई भी प्रश्न नहीं पूछा गया। मेरे विद्वान् बंधु न्या० फजल अली ने अपने निर्णय के पृष्ठ 97 और 98 पर **फतह सिंह भगत सिंह** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य**[1], **शामू बाबू चोगले** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[2] और **हरिजन मेघा जेसा** बनाम

1 ए० आई० आर० 1953 एस० सी० 468.

2 (1976) 1 एस० सी० सी० 438.

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



गुजरात राज्य[1] में इस न्यायालय के विनिश्चयों का हवाला दिया है और अपने निर्णय के पृष्ठ 98 पर यह मत व्यक्त किया है कि जो परिस्थितियां दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन की गई परीक्षा में अपीलार्थी के सामने नहीं रखी गई, उन्हें उपरोक्त विनिश्चयों की दृष्टि से विचार-क्षेत्र से एकदम बाहर रखना होगा। अतः चूंकि दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन की गई परीक्षा के दौरान इस बारे में अपीलार्थी से कोई प्रश्न नहीं पूछा गया, इसलिए यदि अपीलार्थी या उसके माता-पिता द्वारा मंजु के साथ किसी दुर्व्यवहार के बारे में कोई साक्ष्य है तो भी उसे विचार-श्रेत्र से पूर्णतः बाहर रखना होगा। अपने निर्णय में इसक उल्लेख करना मैंने आवश्यक समझा क्योंकि मेरा विचार है कि अपीलार्थी के प्रति न्याय करने के लिए ऐसा करना होगा।

200. मेरे विद्वान् बन्धु न्या० फजल अली ने अपने निर्णय के पृष्ठ 3 पर अभियोजन पक्ष के उस कथन का उल्लेख किया है, जहां तक वह अभियोजन साक्षी 37 को अपीलार्थी के साथ जोड़ता है। उन्होंने कहा है कि अभियोजन पक्ष का यह निश्चित कथन है कि अपीलार्थी मंजु से बिल्कुल भी दिलचस्पी नहीं रखता था और अभियोजन साक्षी-37 के साथ उसकी अयुक्त घनिष्ठता थी। इस मुद्दे पर अभियोजन साक्षी 3, 5 और 6 का साक्ष्य है। अभियोजन साक्षी-3 का साक्ष्य है कि बीड के अपने दूसरे दौरे के दौरान मंजु ने उसे बताया था कि अपीलार्थी की एक लड़की मित्र है, जिसका नाम उज्जवला कोठारी है और यह कि उसने उसे उसका (उज्जवलता कोठारी का) परिचय करवाया था और यह कहा था कि उसे उज्जवला कोठारी से यह सीखना चाहिए कि उसे उसके साथ कैसे व्यवहार करना चाहिए। अभियोजन साक्षी-5 का साक्ष्य है कि बीड के दूसरे दौरे के दौरान मंजु ने उसे यह बताया था कि अपीलार्थी एक लड़की से प्रेम करता है, जिसका नाम उज्जवला कोठारी है और यह कि उसने अपीलार्थी की सम्बोधित उज्जवला का पत्र तथा उस लड़की को सम्बोधित अपीलार्थी का एक अधूरा पत्र देखा था। साक्ष्य में ऐसे कोई पत्र पेश नहीं किए गए। अभियोजन साक्षी-6 का साक्ष्य है कि बीड के दूसरे दौरे के दौरान मंजु ने उसे बताया था कि अपीलार्थी एक लड़की से प्रेम करता है, जिसका नाम उज्जवला कोठारी है और उसने पर्ल होटल में उसे उस लड़की का परिचय करवाया था और यह कहा भी था कि वह उस पर पूरी तरह हावी है लेकिन उसे (मंजु) उज्जवला कोठारी से सीखना चाहिए कि उसे उसके साथ कैसा व्यवहार करना चाहिए। अपीलार्थी और अभियोजन साक्षी-37 के बीच इस अभिकथित अयुक्त घनिष्ठता के

1 ए० आई० आर० 1979 एस० सी० 1566.

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



बारे में कोई दूसरा साक्ष्य नहीं है। इस अभिकथित अयुक्त घनिष्ठता का अपीलार्थी ने ही नहीं बल्कि अभियोजन साक्षी-37 ने भी पूर्णतः प्रत्याख्यान किया है। अभियोजन पक्षकथन के अनुसार पर्ल होठल में अभिककथित घटना 17-3-1982 की है। किन्तु प्रदर्श 30, 32 और 33 तारीख 25-4-1982, 8-5-1982 और 8-6-1982 के मंजु के बाद के तीन पत्रों में से किसी में भी ऐसी किसी घटना का हवाला नही दिया गया है। मेरे विद्वान् बन्धु न्या० फज़ल अली ने अभियोजन साक्षी 3, 5 और 6 का ही नहीं बल्कि अभियोजन साक्षी 2 और 30 का मौखिक साक्ष्य भी अने निर्णय के पृष्ठ 65 पर अविश्वसनीय मानकर ठीक ही अस्वीकार किया है। फिर भी पृष्ठ 68 पर उन्होंने कहा है कि एक सीमा तक यह सिद्ध कर दिया गया है कि अपीलार्थी की उज्जवला कोठारी से एक प्रकार की घनिष्ठता थी और इससे अपीलार्थी और मंजु के सम्बन्धों में कटुता आ गई थी। जैसा कि पहले उल्लेख किया जा चुका है, मेरे मतानुसार मंजु द्वारा अपीलार्थी और उसके परिवार के खिलाफ जो कुछ बताया गया, कहा गया, उसके बारे में अभियोजन साक्षी 2, 3, 5, 6 और 20 का मौखिक साक्ष्य और प्रदर्श 30, 32 और 33 के उसके पत्र भी साक्ष्य अधिनियम की धारा 32 (1) के अधीन साक्ष्य में अग्राह्य हैं। इस प्रकार अभिलेख पर कोई भी विश्वसनीय या ग्राह्य साक्ष्य नहीं है, जो यह दर्शाता हो कि अपीलार्थी की उज्जवला (अभियोजन साक्षी 37) के साथ कोई घनिष्ठता थी। अतः मैं अपने विद्वान् बन्धु न्या० फज़ल अली के इस मत से सहमत होने में असमर्थ हूं कि अभियोजन पक्ष ने एक सीमा तक यह सिद्ध कर दिया है कि अपीलार्थी की अभियोजन साक्षी-37 के साथ एक प्रकार की घनिष्ठता थी और इससे अपीलार्थी और मंजु के सम्बन्धों में कटुता आ गई थी। मेरा विचार है कि अपीलार्थी ही नहीं बल्कि अभियोजन साक्षी-37 के प्रति भी यही उचित होगा, जो न्यायालय में अपनी परीक्षा की तारीख को 19 वर्षीय छात्रा थी और जिसने अपने साक्ष्य में कहा है कि वह जब वह सन् 1979 में राजस्थान यूथ क्लब की लगभग 5-6 महीने सदस्य रही थी, तब वह अपीलार्थी को उस क्लब के अध्यक्ष के नाते जानती थी।

201. मेरे विद्वान् बन्धु न्या० फज़ल अली ने इस सम्बन्ध में अभियोजन साक्षी 2, 3, 5, 6 और 20 के मौखिक साक्ष्य का हवाला दिया है कि अभिकथित रूप से मंजु ने अपीलार्थी और उसके माता-पिता के विरुद्ध शिकायत की थी तथा प्रदर्श 30, 32 और 33 वाले मंजु के पत्रों की अन्तर्वस्तु के प्रति भी निर्देश किया है। मैं उस मौखिक साक्ष्य और उन तीन पत्रों का सारांश ऊपर दे चुका हूं। मेरे विद्वान् बन्धु ने उक्त मौखिक साक्ष्य और उन तीन पत्रों को साक्ष्य अधिनियम की धारा 32 (1) के अधीन ग्राह्य अभिनिर्धारित किया

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



है जबकि उन पांच साक्षियों का मौखिक साक्ष्य अपने निर्णय के पृष्ठ 64 और 65 पर मुख्यतः इस आधार पर अविश्वसनीय बताकर अस्वीकृत कर दिया है कि वह मौखिक साक्ष्य उन पत्रों की भावना और अन्तर्वस्तु से नितान्त असंगत है। ऐसा प्रतीत होता है कि उन्होंने उन तीन पत्रों का अवलम्ब दो प्रयोजनों के लिए अर्थात् उन पांच साक्षियों के मौखिक साक्ष्य को अविश्वसनीय होने के कारण अस्वीकार करने के लिए तथा प्रतिरक्षा पक्ष के इस कथन की पुष्टि के लिए कि हो सकता है कि यह आत्म-हत्या का मामला हो लिया है। मेरी राय में मंजु द्वारा अभिकथित रूप से अपीलार्थी और/या उसके माता-पिता के विरुद्ध बताए जाने के बारे में तथा उन तीन पत्रों के बारे में उन पांच साक्षियों का मौखिक साक्ष्य साक्ष्य अधिनियम की धारा 32 (1) के अधिनियम की धारा 32 (1) के अधीन अग्राह्य है। यह धारा निम्न प्रकार है—

> "32. सुसंगत तथ्यों के लिखित या मौखिक कथन, जो ऐसे व्यक्ति द्वारा किए गए थे, जो मर गया है या मिल नहीं सकता है या जो साक्ष्य देने के लिए असमर्थ हो गया है या जिसकी हाजिरी इतने विलम्ब या व्यय के बिना उपाप्त नहीं की जा सकती, जितना मामले की परिस्थितियों में न्यायालय को अयुक्तियुक्त प्रतीत होता है, निम्नलिखित दशाओं में स्वयंमेव सुसंगत हैं—
>
> (1) जबकि यह कथन किसी व्यक्ति द्वारा अपनी मृत्यु के कारण के बारे में या उस संव्यवहार की किसी परिस्थिति के बारे में किया गया है, जिसके फलस्वरूप उसकी मृत्यु हुई, तब उन मामलों में, जिनमें उस व्यक्ति की मृत्यु का कारण प्रश्नगत हो।"

202. अभियोजन साक्षी 2, 3, 5, 6 और 20 से मंजु द्वारा अभिकथित मौखिक कथन 11/12-6-1982 की रात को उसकी मृत्यु से पूर्व क्रमशः फरवरी, 1982 के अन्त में तथा मई, 1982 के अन्त में बीड के अपने दूसरे और तीसरे दौरे के दौरान किए गए बताए गए हैं। जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, उसने 25-4-1982, 8-5-1982 और 8-6-1982 को प्रदर्श 33, 30 और 32 के पत्र लिखे थे। इन साक्षियों का मौखिक साक्ष्य और ये तीन पत्र मंजु की मृत्यु के कारण के बारे में या उस संव्यवहार की किसी परिस्थिति के बारे में नहीं हैं, जिसके फलस्वरूप उस रात को उसकी मृत्यु हुई थी। धारा 32 (1) के अधीन साक्ष्य की ग्राह्यता विषयक विधि की स्थिति सुस्थिर है। अतः यह आवश्यक नहीं है कि इस न्यायालय के या प्रिवी कौंसिल या अपने अन्य उच्च न्यायालयों के विनिश्चयों का विस्तारपूर्वक उल्लेख किया जाए। विद्वान् लेखक वुडरोफ तथा अमीर अली ने अपनी ला आफ एवीडेन्स, 14वां संस्करण

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



में तथा रतनलाल और धीरजलाल ने अपनी ला आफ एवीडेन्स (1982 का संस्करण) में जो कुछ कहा है, उसे यहां उद्धृत करना पर्याप्त होगा। अधिकांशतः ये सिद्धांत उन न्यायालयों के विनिश्चयों पर आधारित हैं जिनके निर्देश अन्त में दिए गए हैं, वे हैं—

**वुडरोफ तथा अमीर अली कृत लॉ आफ एवीडेन्स, 14वां संस्करण।**

**पृष्ठ-937**

"अनुश्रुति को अपवर्जित किया जाता है क्योंकि इसे पर्याप्त रूप से विश्वसनीय नहीं माना जाता है। इसे अस्वीकार किया जाता है क्योंकि यह ग्राह्य साक्ष्य की कसौटी पर अर्थात् शपथ और प्रतिपरीक्षा पर खरी नहीं उतरती। किन्तु जहां विशेष परिस्थितियां होती हैं जो परिसाक्ष्य को विश्वसनीय प्रत्याभूत करती हैं, वहां इसे स्वीकार किया जाता है, भले ही वह दूसरे किसी स्रोत से प्राप्त हुई हो।"

**पृष्ठ-941**

"इस धारा (धारा-32) के खण्ड (1) के अधीन जो कुछ सुसंगत और ग्राह्य है, वह वह कथन है जो मृतक द्वारा अपनी मृत्यु के कारण के बारे में या उस संव्यहार की परिस्थितियों के बारे में वस्तुतः किया गया हो, जिसके फलस्वरूप उसकी मृत्यु हुई है।"

**पृष्ठ 945-946**

"वह कथन घोषणाकर्ता की मृत्यु के कारण के बारे में या उस संव्यवहार की परिस्थितियों के बारे में हो, जिसके फलस्वरूप उसकी मृत्यु हुई है अर्थात् मृत्यु का कारण और परिस्थितियां, न कि पूर्व या पश्चात्वर्ती संव्यवहार, क्योंकि ऐसे स्वतन्त्र संव्यवहार अपवर्जित किए जाते हैं क्योंकि वे आवश्यकता के सिद्धान्त के अन्तर्गत नहीं आते, जिसके आधार पर ऐसा साक्ष्य लिया जाता है। जब यह साबित नहीं होता कि कोई व्यक्ति प्रश्नगत घटना में हुई क्षतियों के फलस्वरूप मरा है तो उसका कथन उसकी मृत्यु के कारण के बारे में या ऐसी परिस्थिति के बारे में किया गया नहीं कहा जा सकता, जिसके फलस्वरूप उसकी मृत्यु हुई है। (ए० आई० आर० 1964 एस० सी० 900)। जहां यह दर्शाने वाली कोई बात न हो कि वह क्षति जिससे मृत्युकालिक घोषणा में किया गया कथन सम्बन्धित है, क्षतिग्रस्त व्यक्ति की मृत्यु का कारण था या उन परिस्थितियों के फलस्वरूप, जिनके अन्तर्गत वह हुई थी, उसकी मृत्यु हो गई, वहां वह कथन इस खण्ड के अधीन ग्राह्य नहीं है।" (एल० आर० 25 बाम्बे 45)।

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



पृष्ठ-947

"संव्यवहार की परिस्थितियां जिनके फलस्वरूप उसकी मृत्यु हुई है।" यह खण्ड दो प्रकार के कथनों के प्रति निर्देश करता है: (i) जब कथन किसी व्यक्ति द्वारा अपनी मृत्यु के कारण के बारे में किया जाए या (ii) जब वह कथन किसी व्यक्ति द्वारा सव्यवहार की उन परिस्थितियों में से किसी के बारे में किया जाए, जिसके फलस्वरूप उसकी मृत्यु हुई है। "जिसके फलस्वरूप उसकी मृत्यु हुई है" शब्दों से "उसकी मृत्यु कारित हुई है" अभिप्रेत नहीं है। "उस संव्यवहार की परिस्थितियों में से किसी के बारे में, जिसके फलस्वरूप उसकी मृत्यु हुई है" पद "उसकी मृत्यु के कारण" पद की अपेक्षा अधिक व्यापक है। यह आवश्यक नहीं है कि घोषणाकर्ता को वस्तुतः मृत्यु की आशंका रही हो। (ए० आई० आर० 1964 मध्य प्रदेश 30)।

पृष्ठ-947

"धारा 32 के खण्ड (1) में आए हुए "संव्यवहार की परिस्थितियां" पद न्यायालयों के लिए हमेशा आश्चर्य का कारण रहा है जब कभी उनके सामने यह प्रश्न आया है कि इस पद के अर्थ में क्या-क्या बातें मान्य हैं। पकाला नारायण स्वामी **बनाम** (एल० आर० 66 इण्डियन अपील्स 66) में प्रिवी कौंसिल के माननीय न्यायाधिपतियों के विनिश्चय के अनुसार उन विषयों को परिसीमित कर दिया गया है, जिन्हें इस पद की परिधि के अन्तर्गत विधिसम्मत रूप से लाया जा सकता है। किन्तु लार्ड एटकिन, ने जिन्होंने बहुमत का निर्णय दिया था, यह पूरी तरह से साफ कर दिया था कि विशेष परिस्थितियों के सिवाय कोई भी परिस्थिति उस संव्यवहार की परिस्थिति नहीं हो सकती यदि वह या तो संव्यवहार में वस्तुतः लिए गए समय तक सीमित नहीं है, जिसके फलस्वरूप मृत्यु हुई है अथवा वह दृश्य, जिसमें वह वास्तविक संव्यवहार हुआ है, जिसके फलस्वरूप मृत्यु हुई है। उदाहरण के लिए, समय के संघटक का अतिलंघन अनुज्ञात करने वाली विशेष परिस्थिति लम्बे समय तक विषावत करने का मामला है, जबकि दूरी के संघटक का अतिलंघन अनुज्ञात करने वाली विशेष परिस्थिति, उदाहरण के लिए, हत्या करने के आशय से फंसाने का मामला है···किन्तु वे परिस्थितिया उस संव्यवहार की परिस्थितियां होनी चाहिएं और उनका वास्तविक घटना से कुछ निकट सम्बन्ध होना चाहिए।"

पृष्ठ-948

" "संव्यवहार की परिस्थितियां" निस्सन्देह एक ऐसा वाक्यांश

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



है जो कुछ परिसीमाएं बताता है। यह उतना विस्तृत नहीं है जितना पारिस्थितिक साक्ष्य में सदृश्य प्रयोग होता है, जिसके अन्तर्गत सभी सुसंगत तत्वों का साक्ष्य आता है। इसके विपरीत यह सम्बन्धित तथ्य और कार्य की अपेक्षा संकीर्ण है। परिस्थितियों का वास्तविक घटना से कुछ निकट सम्बन्ध होना चाहिए, हालांकि, उदाहरण के लिए, लम्बे समय तक विष देने की स्थिति में उनका सम्बन्ध वास्तविक प्राणान्तक खुराक देने की तारीख से भी दूर की तारीखों से हो सकता है।"

**पृष्ठ-948**

"शिव कुमाम **बनाम** उत्तर प्रदेश राज्य [1966 क्रिमिनल अपील आर (एस० सी०) 281] वाले मामले में उच्चतम न्यायालय ने इसी प्रकार का मत व्यक्त किया है कि परिस्थितियों का वास्तविक घटना से कुछ निकट सम्बन्ध होना चाहिए और यह कि साधारण अभिव्यक्तियों, जो भय या आशंका इंगित करती हों, चाहे वे किसी व्यक्ति विशेष की हों या अन्यथा और मृत्यु के अवसर से सीधे सम्बन्धित न हों, ग्राह्य नहीं होंगी।"

**पृष्ठ-949**

"वह खण्ड किसी मृत व्यक्ति के ऐसे सत्य कथन को साक्ष्य में ग्रहण करना अनुज्ञात नहीं करता, जिनका सम्बन्ध उसकी मृत्यु के कारण या परिस्थितियों से चाहे कितना भी दूर का हो, यह केवल ऐसे कथनों तक सीमित है, जिनका सम्बन्ध उन विषयों तक है जो उन घटनाओं से घनिष्ठ रूप से संसक्त हैं, जिनके परिणामस्वरूप उसकी मृत्यु हुई है, जिसे संव्यवहार की परिस्थितियों के सम्बन्ध में कहा जा सकता है, जिनके फलस्वरूप उसकी मृत्यु हुई है। (एल० आर० 66 इण्डियन अपील्स 66)। "संव्यवहार की वे परिस्थितियां, जिनके फलस्वरूप उसकी मृत्यु हुई" से केवल ऐसे तथ्य या तथ्य श्रृंखला अभिप्रेत है, जिनका प्रत्यक्ष या आंगिक सम्बन्ध मृत्यु से है। अतः हत्या की घटना से बहुत पहले किया गया कथन ग्राह्य नहीं है।" [1974 सी० एल० जे० (एम० पी०) 1200]।

**रतनलाल और धीरजलाल कृत 'ला आफ एविडेन्स' (1982 संस्करण)**

**पृष्ठ-94**

"संव्यवहार की परिस्थितियां; साधारण अभिव्यक्तियां जो तथ्य या ;आशंका इंगित करती हों, चाहे किसी व्यक्ति विशेष की हों या अन्यथा और जो मृत्यु के अवसर से सीधे सम्बन्धित नहीं हैं, ग्राह्य नहीं हैं।" (एल० आर० 66 आई० ए० 66) (18 [illegible] 234)।

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



पृष्ठ-95

> "परिस्थितियों का वास्तविक घटना से कुछ निकट सम्बन्ध होना चाहिए और वे ऐसे संव्यवहार की होनी चाहिएं, जिनके फलस्वरूप कथनकर्ता की मृत्यु हुई। साक्ष्य की ग्राह्यता की शर्त यह है कि कथनकर्ता की मृत्यु का कारण प्रश्नगत हुआ हो। यह आवश्यक नहीं है कि वह कथन संव्यवहार हो जाने के बाद किया गया हो अथवा यह कि कथन करने वाला व्यक्ति मरणासन्न हो या यह कि परिस्थिति के अन्तर्गत वे कृत्य आते हैं जो उस समय और उसी स्थान पर किए गए थे जब और जहां मृत्यु हुई है।......मृत्युकालिक कथन इस खण्ड के अधीन ग्राह्य हैं।"

203. मंजु के अभिकथित मौखिक कथन और जो कुछ प्रदर्श 30, 32 और 33 के उसके पत्रों में कहा गया है, वह उन विषयों से सम्बन्धित हो सकता है, जिनका संभवतः उसकी मृत्यु के कारण या परिस्थितियों से बहुत दूर का सम्बन्ध है। उन परिस्थितियों का उस वास्तविक घटना से कोई निकट का सम्बन्ध नहीं है, जिसके फलस्वरूप पोटाशियम साइनायड से उसकी मृत्यु हुई, यद्यपि उदाहरण के लिए, लम्बे समय तक विष देने के मामले में उनका सम्बन्ध वास्तविक प्राणान्तक खुराक की तारीख से बहुत दूर की तारीखों से हो सकता है। वे मंजु की सामान्य धारणाएं है, जिनसे भय या आशंका इंगित होती हैं, वे चाहे किसी व्यक्ति विशेष की हो या अन्यथा और उसकी मृत्यु के अवसर से सीधे सम्बन्धित न हों। अभियोजन-पक्ष का यह कथन नहीं है कि वर्तमान मामला लम्बे समय तक विष देने का मामला है। विद्वान् लेखक वुडराफ और अमीर अली ने अपने ग्रन्थ में पृष्ठ 947 में यह कहा है कि **पकाला नारायण स्वामी बनाम सम्राट**[1] वाले मामले में प्रिवी कौंसिल के माननीय न्यायाधिपतियों के विनिश्चय द्वारा उन विषयों को सीमित कर दिया गया है, जिन्हें "संव्यवहार की परिस्थितियां" पद की परिधि के अन्तर्गत विधिसम्मत रूप से लाया जा सकता है और यह कि वह विनिश्चय हमारे न्यायालयों के अन्य अनेक विनिश्चयों में निर्दिष्ट किया गया है। अतः इस निर्णय में सुसंगत अंश को उद्धृत करना आवश्यक होगा। विद्वान् न्यायाधिपति ने पृष्ठ 75 और 76 पर यह मत व्यक्त किया है—

> "इस धारा का प्रभाव क्या है, इस सम्बन्ध में भारतीय न्यायालयों में विविध प्रकार के प्रश्न उठे हैं। सुझाव दिया गया है कि कथन संव्यवहार हो जाने के बाद किया गया हो, कथन करने वाला व्यक्ति मरणासन्न हो, परिस्थितियों के अन्तर्गत केवल वे ही कृत्य आ सकते हैं,

---

1 ए० आई० आर० पी० सी० 47 = [illegible] आर० 66 इण्डियन अपील्स 66.

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



जो उस समय और उस स्थान पर किए गए हों जब और जहां मृत्यु हुई है। माननीय न्यायाधिपतियों की राय है कि प्रयुक्त शब्दों के सहज अर्थ से इन परिसीमाओं में से कोई सम्प्रेषित नहीं होती। कथन मृत्यु का कारण उत्पन्न होने से पहले या मृतक के मारे जाने की प्रत्याशा करने के किसी कारण से पहले किया गया हो। परिस्थितियां संव्यवहार की परिस्थितियां हों, भय या आशंका इंगित करने वाली साधारण अभिव्यक्ति, चाहे वह किसी व्यक्ति विशेष द्वारा की गई हों या अन्यथा जो मृत्यु के अवसर से सीधे सम्बन्धित न हों, ग्राह्य नहीं होगी। किन्तु मृतक द्वारा किए गए कथन कि वह किस स्थान पर जा रहा था, वह जहां वस्तुतः मारा गया अथवा वहां जाने के उसके कारण के बारे में किया गया कथन, अथवा यह कि किसी व्यक्ति विशेष से मिलने जा रहा था या वह व्यक्ति द्वारा मिलने के लिए बुलाया गया था, इनमें से प्रत्येक उस संव्यवहार की परिस्थिति होगी और उसका इसी प्रकार अर्थ लगाया जाएगा, चाहे वह व्यक्ति अज्ञात हो या अभियुक्त व्यक्ति न हो। ऐसा कथन वस्तुतः अभियुक्त व्यक्ति को अपराध से मुक्त करने वाला हो सकता है। "संव्यवहार की परिस्थितियां" निस्सन्देह ऐसा वाक्यांश है, जो कुछ परिसीमा बताता है या उतना विस्तृत नहीं है, जितना पारिस्थितिक साक्ष्य में सदृश्य प्रयोग, जिसके अन्तर्गत सभी सुसंगत तथ्यों का साक्ष्य आता है। इसके विपरीत, यह सम्बन्धित तथ्य और कार्य की अपेक्षा संकीर्ण होता है। परिस्थितियों का वास्तविक घटना से कुछ निकट का सम्बन्ध होना चाहिए, जैसे उदाहरण के लिए, लम्बे समय तक विष देने के मामले में, उनका सम्बन्ध वास्तविक प्राणान्तक खुराक की तारीख से भी दूर की तारीखों से हो सकता है।"

204. अतः मेरी राय है कि मन्जु ने जो कुछ अपीलार्थी और/या उसके माता-पिता के विरुद्ध अभियोजन साक्षी 2, 3, 5, 6 और 20 से कहा है और जो कुछ उसने प्रदर्श 30, 32 और 33 के अपने पत्रों में कहा है, उसके बारे में उन साक्षियों का मौखिक साक्ष्य साक्ष्य अधिनियम की धारा 32(1) के अधीन साक्ष्य में अग्राह्य है और उन पर किसी भी प्रयोजन के लिए विचार नहीं किया जा सकता। इस प्रक्रम पर यह उल्लेखनीय है कि अपीलार्थी के विद्वान् काउन्सेल श्री राम जेठमलानी ने निवेदन किया कि इन पांच साक्षियों का मौखिक साक्ष्य धारा 32(1) के अधीन अग्राह्य है और यह कि यद्यपि पहले तो उन्होंने प्रदर्श 30, 32 और 33 के पत्रों का अवलम्ब लेना चाहा जो प्रतिरक्षा पक्ष को कुछ समर्थन देते प्रतीत होते हैं कि यह आत्म-हत्या का मामला हो सकता है लेकिन

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



उन्होंने अन्ततोगत्वा यह मान लिया कि अभियोजन साक्षी 2, 3, 5, 6 और 20 के सापेक्षिक मौखिक साक्ष्य के सम्बन्ध में जो कुछ लागू होता है, वह उसी प्रकार प्रदर्श 30, 32 और 33 के पत्र को भी लागू होता है और यह कि वे भी साक्ष्य में आग्रह्य होंगे। अपर महालिसिटर, जिन्होंने इन पांच साक्षियों के उक्त मौखिक साक्ष्य का और प्रदर्श 30, 32 और 33 के पत्रों का दृढ़ अवलम्ब लिया था, पहले तो अपनी बहस के अन्त में इस आधार पर चले कि वे साक्ष्य में अग्राह्य हैं। इन परिस्थितियों में मेरी पक्की राय है कि उसके बारे में जिसकी बाबत यह अभिकथित किया गया है कि मन्जु ने अपीलार्थी और/या उसके माता-पिता के विरुद्ध अभियोजन साक्षी 2, 3, 5, 6 और 20 से कहा है, उनके मौखिक साक्ष्य, और पत्र प्रदर्श 30, 32 और 33, साक्ष्य अधिनियम की धारा 32(1) के अधीन साक्ष्य में अग्राह्य हैं।

205. मन्जु की मृत्यु-समीक्षा करने वाले डाक्टर बनर्जी (अभियोजन साक्षी-33) के बारे में मेरे विद्वान् बन्धु न्या० फज़ल अली ने निर्णय में जो कुछ कहा है, वह इस प्रकार है—

"मरणोत्तर-टिप्पण के स्तम्भ 5 में डाक्टर बनर्जी ने स्पष्ट लिखा है कि "केन वी ए केस आफ स्वसाइडल डेथ" जिससे यह संकेत मिलता है कि रासायनिक परीक्षक की रिपोर्ट की अनुपस्थिति में उनकी राय थी कि यह एक आत्महत्या का मामला हो सकता है। अपने साक्ष्य में अभियोजन साक्षी-33 ने कहा है कि स्तम्भ सं० 5 में प्रदर्श 128 में काटे गए शब्द हैं "टाइम सिन्स डेथ" और चूंकि अगली पंक्ति में इनकी पुनरावृत्ति की गई थी, इसलिए उन्होंने दूसरी पंक्ति के शब्द काट दिए। अनवरत प्रतिपरीक्षा के बावजूद डाक्टर अपनी बात पर डटा रहा प्रतीत होता है। अतः यह कहने से कोई प्रयोजन सिद्ध नहीं होगा कि यह बात बहुत महत्त्वपूर्ण थी और हम उच्च न्यायालय से यह प्रत्याशा करते हैं कि इस पहलू पर गम्भीरता से ध्यान दिया जाता जोकि अभियुक्त के पक्ष में जाती है।

ऐसा प्रतीत होता है कि मूल में उक्त स्तम्भ भरते समय डाक्टर ने कोई चीज़ काटी है। भरी गई प्रविष्टि इस प्रकार प्रतीत होती है "माउथ इज़ क्लोज़्ड विद टिप (समथिंग स्कोर्ड आउट) सीन काट बिटविन दी टीथ"। किन्तु रिपोर्ट की कार्बन प्रतिलिपि में, जो रासायनिक परीक्षक को भेजी गई थी (प्रदर्श 132) उन्होंने "काट बिटविन दी टीथ" स्याही से जोड़े हैं किन्तु मूल में कुछ और है। यह इस तथ्य से समर्थित है कि रिपोर्ट की जो प्रतिलिपि रासायनिक परीक्षक के पास वास्तव में भेजी गई थी, उसमें उक्त स्तम्भ के सामने कोई प्रक्षेपण नहीं है, जहां पर "इनसाइड माउथ" ("मुंह के अन्दर") लिखा गया है।

इन परिस्थितियों का संयुक्त प्रभाव यह है कि डाक्टर बनर्जी (अभियोजन

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



साक्षी-33) ने जीभ की स्थिति के बारे में कुछ अतिरिक्त तथ्य प्रस्तुत करने का प्रयास किया था। कदाचित यह उनकी अन्तिम राय के कारण था कि मृतक की मृत्यु यांत्रिक श्वासावरोध के कारण हुई थी जिससे जीभ दांतों के बीच में दब सकती है। किन्तु इससे उनके द्वारा लिखी गई और रासायनिक परीक्षा को भेजी गई वास्तविक रिपोर्टों के सही या गलत होने पर बहुत सन्देह उत्पन्न होता है। इस प्रकार यह प्रकट है कि कार्बन प्रतिलिपि में जो डाक्टर ने अपने पास रखी थी, प्रविष्टियां रासायनिक परीक्षक को भेजी गई प्रति के बाद की गई होंगी।

206. मैं अपने विद्वान् बन्धु न्या० फज़ल अली के निष्कर्षों से पूरी तरह सहमत हूं। किन्तु मैं उनके मत को मानने में असमर्थ हूं कि 'इन परिस्थितियों का बहुत महत्त्व नहीं है' क्योंकि डा० की राय थी कि मंजु पोटाशियम सायनाइड जबरदस्ती देने से या यांत्रिक श्वासावरोध के कारण मरी है और यह कि इस पहलू पर न्यायालय को अधिक सोचने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि उच्च न्यायालय ने यांत्रिक ढंग से दम घुटने की बात स्वीकार नहीं की है और यह कि यद्यपि डाक्टर बनर्जी की सत्यनिष्ठा की गलत रिपोर्ट के बारे में अपीलार्थी की ओर से अनेक टिप्पणियां की गईं, फिर भी इस बात के अधीन रहते हुए जो कुछ उन्होंने उसके बारे में कहा है, इन दलीलों में कोई सार दिखाई नहीं पड़ता।

207. यह तथ्य कि उच्च न्यायालय ने डाक्टर बनर्जी की रिपोर्ट और साक्ष्य पर आधारित अभियोजन पक्ष का यह कथन अस्वीकार कर दिया है कि यह भी एक यांत्रिक ढंग श्वासावरोध का मामला था, ऐसा तथ्य नहीं है जिसे डाक्टर के आचरण का मूल्यांकन करने के लिए, जिन्होंने संदिग्ध मृत्यु के मामले में मृत्यु-समीक्षा की थी, शमनकारी परिस्थिति के रूप में ध्यान में रखा जा सके। यह तथ्य कि मृत्यु के कारण के बारे में उन्होंने अपनी राय आरक्षित कर ली थी और फिर अपनी रिपोर्ट में यह कहा था कि जिह्वा मुंह के अन्दर थी किन्तु बीच में ये शब्द प्रक्षेपित कर दिए "मुंह का अग्र भाग बन्द है (कोई चीज काटी गई) जो दांतों के बीच पकड़ा हुआ दिखाई दिया" और "दांतों के बीच पकड़ा हुआ" ये शब्द केवल रासायनिक परीक्षक की रिपोर्ट मिलने के बाद ही इस मत के समर्थन में लिखे गये कि यह भी यांत्रिक श्वासावरोध का मामला था, अभियोजन साक्षी-33 के पक्ष में प्रशमनकारी परिस्थिति नहीं है। डाक्टर ने "आत्महत्या का मामला हो सकता है" शब्द रेखांकित किए थे और अपने उत्तर में बराबर यह कहा है कि उसने 'मृत्यु के समय से' शब्दों को ही रेखांकित किया था, जिनके बारे उसका कहना है कि उसने दोबारा लिखे थे किन्तु इस स्पष्टीकरण को मेरे विद्वान् बन्धु न्या० फज़ल अली ने ठीक ही अस्वीकार कर दिया है। संदिग्ध मृत्यु के मामले में, जिसमें अपीलार्थी को निचले दो न्यायालयों द्वारा

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



मृत्यु दण्डादेश दिया गया है, मरोणत्तर परीक्षा के अभिलेखों में इन पश्चात्तर प्रक्षेपण और परिवर्तन करने में डाक्टर का आचरण अत्यन्त निन्दनीय है। डाक्टर ने अभिकथित हत्या के मामले में तात्विक साक्ष्य में फेरबदल की है भले ही किसी अन्य के कहने पर किया हो और अपने कृत्य के अधिसंभाव्य परिणामों को अनदेखा कर दिया है। इन परिस्थितियों में, मेरी राय है कि डाक्टर बनर्जी (अभियोजन साक्षी-33) ऐसा व्यक्ति है जिसे लोकहित में मृत्यु समीक्षा करने जैसा कोई गम्भीर और उत्तरदायित्वपूर्ण काम नहीं सौंपा जाना चाहिए। इस मामले में अपीलार्थी, अभियोजन साक्षी-33 के साक्ष्य, जैसा कि वह न्यायालय को विश्वास कराना चाहता था, के आधार पर फांसी के फंदे पर चढ़ जाता यदि ये साक्ष्य स्वीकार कर लिए जाते, किन्तु मेरे विद्वान् बन्धु न्या० फज़ल अली ने इन्हें अपीलार्थी के विरुद्ध स्वीकृति के अयोग्य बता कर ठीक ही अस्वीकार किया है।

208. मैं अपने विद्वान् बन्धु न्या० फज़ल अली की इस बात से सहमत हूं कि उच्च न्यायालय ने साक्ष्य का अधिमूल्यन करते समय कई मुद्दों पर स्पष्ट रूप से गलत विचार किया है और इस प्रकार विधि की गम्भीर त्रुटि की है।

209. मैं यह महसूस करता हूं कि जिस ढंग से अन्वेषण अधिकारी ने और विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश, पुणे ने, जिन्होंने इस मामले का विचारण किया था, अपना-अपना काम किया है, उसके बारे में इस मामले के निर्णय में कुछ-न-कुछ अवश्य कहना होगा। आरोप सं० 3 तीसरे अभियुक्त के विरुद्ध लगाया गया है कि उसने मोहन असवा (अभियोजन साक्षी-30) को हत्या के अपराध के बारे में अर्थात् इस सम्बन्ध में कि अपीलार्थी ने जब 12-6-1982 को प्रातः 5.30 बजे मंजु को जगाने का प्रयास किया था तो उसने देखा था कि वह मर चुकी थी, पुलिस को झूंठी जानकारी देने को उकसाया। यह तो स्वयं अभियोजन-पक्ष का कथन है कि अभियोजन साक्षी-30 ने उस दिन प्राता 6.30 बजे तीसरे अभियुक्त से फोन पर अनुदेश प्राप्त करने के बाद उस दिन 7 या 7.15 बजे पुलिस को तदनुसार सूचना दे दी थी, यद्यपि उसने स्वयं अपीलार्थी के फ्लैट में इससे पहले मंजु का शव देखा था, जहां उसे तीसरा अभियुक्त ले गया था, तीसरा अभियुक्त अपने फ्लैट पर प्रातः 4 या 4.15 बजे के लगभग गया था और उसने उसे यह बताया था कि मंजू मर गई है, तथा वह (अभियोजन साक्षी-30) डाक्टर लोढा (अभियोजन साक्षी-34) को यह बताने के बाद कि वह पुलिस को रिपोर्ट करने जा रहा है; प्रातः लगभग 5 या 5.15 बजे थोड़ी देर बाद अपीलार्थी के फ्लैट से चला गया था। इस प्रकार यह दिखाई देगा कि स्वयं अभियोजन-पक्ष का यह कथन है कि अभियोजन साक्षी-30 मन्जु की मृत्यु के

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



बारे में पुलिस को झूठी सूचना देने के सम्बन्ध में प्रमुख अपराधी है। फिर भी अन्वेषण अधिकारी ने अभियोजन साक्षी-30 के विरुद्ध कोई आरोप-पत्र फाइल नहीं किया और उसे सुविधापूर्वक अभियोजन साक्षी माना। ऐसा प्रतीत होता है कि पुणे के अपर सेशन न्यायाधीश ने इस मामले में दिए गए साक्ष्य पर कोई नियन्त्रण नहीं रखा तथा दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन अभियुक्त की परीक्षा की व्याप्ति को भुला दिया। इस की झलक अपीलार्थी से पूछे गए कुछ प्रश्नों से मिलती है। प्रश्न सं० 24 का सम्बन्ध इस बात से है कि अभियोजन साक्षी-20 का स्वास्थ्य अच्छा नहीं रहता और यदा-कदा बिमार होता रहता है। प्रश्न सं० 25 इस सम्बन्ध में है कि अभियोजन साक्षी-22 उच्च रक्तचाप का रोगी है और वह सात वर्ष पहले अधरंग के आघात का शिकार हुआ था। प्रश्न सं० 30 अपीलार्थी के मन्जु से विवाह के सम्बन्ध में 13-2-1982 को पूणे में आयोजित स्वागत-समारोह से सम्बन्धित है। प्रश्न सं० 32 का सम्बन्ध इस बात से है कि अभियोजन साक्षी-6 ने अपीलार्थी के पिता बिरधीचन्द से मन्जु को बीड अपने साथ ले जाने की इजाजत मांगी थी जब अभियोजन साक्षी-2 के पक्ष वाले लोग 14-2-1982 को पुणे से बीड के लिए रवाना हुए थे। प्रश्न सं० 115 अभियोजन साक्षी-30 के बारे में है कि वह गुन्डागर्दी, कर-अपवन्चन आदि के आपराधिक कृत्य करता रहता है और पुलिस का अपना आदमी माना जाता है। दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 में अधिकथित है कि अपने विरुद्ध साक्ष्य में उपस्थित किसी परिस्थिति का स्वयं स्पष्टीकरण देने में अभियुक्त को समर्थ बनाने के प्रयोजन के लिए प्रत्येक जांच या विचारण में न्यायालय किसी भी प्रक्रम पर अभियुक्त को पहले से चेतावनी दिए बिना उससे ऐसा प्रश्न पूछ सकता है जैसे न्यायालय आवश्यक समझे और अभियोजन साक्षियों की परीक्षा किए जाने के बाद तथा उसे उसकी प्रतिरक्षा में बुलाए जाने से पहले मामले के बारे में उससे साधारण तौर पर प्रश्न पूछ सकता है। यह स्पष्ट है कि जिस साक्ष्य के आधार पर अपीलार्थी से प्रश्न पूछे गए हैं, वह पूर्णत: असंगत हैं और यह कि वे प्रश्न अपीलार्थी के विरुद्ध साक्ष्य में उपस्थित किसी भी परिस्थिति से सम्बन्धित नहीं हैं। विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश अपने न्यायालय में प्रस्तुत साक्ष्य पर नियन्त्रण का प्रयोग करने तथा दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन अभियुक्त की परीक्षा की परिधि जानने के लिए आबद्ध था।

210. अन्त में, जैसा कि मैंने ऊपर कहा था, मैं अपने विद्वान् बन्धु न्या० फजल अली से सहमत हूं कि अपील मंजूर की जाएगी। तदनुसार मैं अपील मन्जूर करता हूं और अपीलार्थी की दोषसिद्धि और उसे दिए गए दण्डादेश

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



को अपास्त करता हूं और यह निदेश देता हूं कि उसे तुरन्त रिहा कर दिया जाए।

**न्या० सब्यसाची मुखर्जी—**

211. मुझे अपने विद्वान् बन्धु न्या० फज़ल अली और न्या० वरदराजन द्वारा तैयार किए गए निर्णय को पढ़ने का अवसर मिला है। मैं प्रस्थापित आदेश से सहमत हूं कि अपील मन्जूर की जानी चाहिए और निचले न्यायालयों के निर्णय अपास्त किए जाने चाहिएं और अपीलार्थी शरद बिरधीचन्द शारदा को उसके विरुद्ध लगाए गए आरोपों से दोषमुक्त किया जाना चाहिए तथा उसे तुरन्त रिहा किया जाना चाहिए। मैं ऐसा कुछ संकोच और बहुत चिन्ता के साथ कर रहा हूं क्योंकि ऐसा करना विशुद्ध रूप से तथ्यों के मूल्यांकन पर निचले दोनों न्यायालयों के निष्कर्षों में हस्तक्षेप करना होगा। मामले के तथ्यों और परिस्थितियों का बहुत विस्तृत और सूक्ष्म उल्लेख मेरे विद्वान् बन्धु न्या० फज़ल अली ने निर्णय में किया गया है। मेरे विद्वान् बन्धु न्या० वरदराजन ने भी कुछ सीमा तक इनका उल्लेख किया है। अतः उन्हें यहां दोहराने से कोई उपयोगी प्रयोजन सिद्ध नहीं होगा। फिर भी मेरे लिए यह आवश्यक है कि निम्नलिखित मत व्यक्त किया जाए।

212. यह मामला पारिस्थितिक साक्ष्य का मामला है। यह भी निर्विवाद है कि मृतक 11 और 12 जून की रात को पोटाशियम सायनाइड से मरी थी। 13 जून अभियुक्त की बहन की सगाई के लिए नियत की गई तारीख थी। इस बारे में कोई साक्ष्य नहीं है कि अभियुक्त अपनी बहन के किसी भी प्रकार खिलाफ या उससे अप्रसन्न था। मृतक बहुत संवेदनशील थी और प्रायः उसे बहुत जल्दी विषाद हो जाता था, जो भागतः एक नए परिवार में अपने तालमेल न बैठाने के कारण था और भागतः उसकी विशिष्ट मानसिकता के कारण था, किन्तु मुख्यतः कदाचित अभियुक्त पति के परिवार के ढांचे के कारण था। विष देने का कोई प्रत्यक्ष साक्ष्य नहीं है और न ही कोई यह साक्ष्य है कि मृतक के पास या अभियुक्त के पास कोई पोटाशियम सायनाइड था। इन परिस्थियियों में मेरे विद्वान् बन्धु सम्पूर्ण साक्ष्य और पत्रों तथा अन्य परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि अभियुक्त का दोष सभी युक्तियुक्त सन्देह से परे साबित नहीं हुआ है।

213. जैसा कि मैं ऊपर उल्लेख कर चुका हूं, मैंने अपने दोनों विद्वान् बन्धुओं के निर्णय पढ़े हैं तथा कुछ मुद्दों पर अर्थात् मेरे विद्वान् बन्धु न्या० वरदराजन द्वारा तैयार किए गए निर्णय वर्णित चार मुद्दों पर उन्होंने न्या० फज़ल अली द्वारा व्यक्त मत से भिन्न मत व्यक्त किया है। वे हैं—

**(1) अपीलार्थी द्वारा मंजु के साथ दुर्व्यवहार ;**

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



(2) उज्जवला (अभियोजन साक्षी-37) के साथ अपीलार्थी की घनिष्ठता ;

(3) साक्ष्य अधिनियम की धारा 32 (1) के अधीन अपीलार्थी के विरुद्ध मंजु द्वारा अभिकथित परिवादों के बारे में प्रदर्श 30, 32 और 33 के मंजु के पत्रों और अभियोजन साक्षी 2, 3, 5, 6 और 20 के मौखिक साक्ष्य की ग्राह्यता ; और

(4) डाक्टर बनर्जी (अभियोजन साक्षी-33) का आचरण, जिन्होंने मंजु के शव की परीक्षा की थी ।

214. तीन मुद्दों पर, अर्थात् अपीलार्थी का मंजु के साथ दुर्व्यवहार, उज्जवला (अभियोजन साक्षी-37) के साथ अपीलार्थी की घनिष्टता और डाक्टर बनर्जी (अभियोजन साक्षी-33) का आचरण, जिन्होंने मंजु की शव-परीक्षा की थी, के बारे में मैं अपने विद्वान् बन्धु, न्या० फज़ल अली द्वारा व्यक्त किए गए मत को अधिक ठीक मानता हूं। साक्ष्य अधिनियम की धारा 32 (1) के अधीन अभियुक्त के विरुद्ध मंजु द्वारा की गई अभिकथित शिकायतों के बारे में प्रदर्श 30, 32 और 33 के मंजु के पत्रों तथा अभियोजन साक्षी 2, 3, 5, 6 और 20 के मौखिक साक्ष्य की ग्राह्यता के प्रश्न पर मेरे विद्वान् बन्धु फज़ल अली ने धारा 32 (1) के बारे में निम्नलिखित मत व्यक्त किया है—

"निकटता की कसौटी का अति शाब्दिक अर्थ नहीं किया जा सकता और इसे ऐसे सार्वभौमिक अकाट्य सूत्र में, व्यावहारिक दृष्टि से, नहीं बांधा जा सकता जिससे कि यह एक नियत ढांचे में सीमित रह जाए। समय की दूरी प्रत्येक मामले की परिस्थितियों पर निर्भर करेगी या भिन्न-भिन्न होगी, उदाहरण के लिए, जहां मृत्यु एक लम्बे निरन्तर नाटक की तार्किक परिणिति है और जैसा कि होता है, कहानी की चरम स्थिति है, वहां नाटक के अन्त से सीधे सम्बद्ध प्रत्येक कदम के बारे में किया गया कथन ग्राह्य होगा क्योंकि सम्पूर्ण कथन को सम्पूर्ण रूप में पढ़ना होगा तथा सन्दर्भ से विच्छिन्न नहीं किया जाएगा। कभी-कभी तत्काल हेतु के लिए सुसंगत या इंगित करने वाले कथन भी मृत्यु के संव्यवहार के भाग रूप होने के कारण ग्राह्य हो सकते हैं। प्रकट है कि ये सब कथन मृतक की मृत्यु के बाद ही प्रकाश में आते हैं, जो मर कर बोलता है। उदाहरणों के लिए, जहां मृत्यु विवाह के थोड़े समय के अन्दर होती है, अथवा समय की दूरी 3-4 मास से अधिक नहीं होती, वहां कथन धारा 32 के अधीन ग्राह्य हो सकता है।

(रेखांकन मैंने किया है)

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



215. फिर भी, मैं यहां यह कहना चाहूंगा कि यह दृष्टिकोण बड़ी सतर्कता और सावधानी से अपनाया जाना चाहिए और यद्यपि मैं न्या० फज़ल अली से ससम्मान सहमत हूं कि निकटता की कसौटी का शाब्दिक अर्थ नहीं किया जा सकता और न ही किया जाना चाहिए और इसे व्यावहारिक रूप में ऐसे सार्वभौमिक अकाट्य सूत्र के रूप में नहीं बांधा जा सकता, फिर भी इस बात पर जोर दिया जाना चाहिए कि जब कभी इसका विस्तार तत्काल समय से परे किया जाए तो यह अपवादस्वरूप होना चाहिए और ऐसा बहुत ही सावधानी और सतर्कता से किया जाना चाहिए। सामान्य सिद्धान्त के रूप में सभी प्रयोजनों के लिए यह अधिकथित नहीं किया जा सकता कि उदाहरण के लिए जहां मृत्यु विवाह के थोड़े समय के अन्दर होती है और समय की दूरी 3 या 4 मास से अधिक नहीं होती, वहां कथन साक्ष्य अधिनियम की धारा 32 के अधीन ग्राह्य होगा। ऐसा हमेशा नहीं होता और न हो सकता है। वर्तमान मामले की परिस्थितियों जैसी अत्यन्त आपवादिक परिस्थितियों में ऐसे कथन ग्राह्य हो सकते हैं और वे भी निश्चित तथ्य को साबित करने के लिए नहीं, बल्कि निषेधात्मक तथ्य को इंगित करने के लिए अर्थात् अभियुक्त की दोषिता के बारे में कुछ सन्देह पैदा करने के लिए, जैसा कि इस मामले में है।

216. न्या० फजल अली के मत से अपनी ससम्मान सहमति व्यक्त करने के लिए मेरे लिए सभी विस्तृत निष्कर्षों से सहमत होना आवश्यक नहीं है और मैं ऐसा नहीं करता हूं। जो निष्कर्ष मेरे विद्वान् न्या० बन्धु ने इस मामले के प्रदर्शों से अनेक विषयों की बाबत निकाले हैं, मैं उन सभी निष्कर्षों से ससम्मान सहमत नहीं हूं। जो निष्कर्ष मेरे विद्वान् बन्धु ने "इस पत्र के ध्यानपूर्वक परिशीलन से निम्नलिखित बातें सामने आती हैं" अभिव्यक्ति से आरम्भ होने वाले पैरा में निकाले हैं मैं उन सबसे भी सहमत नहीं हूं। ऐसा मेरे विद्वान् बन्धु ने प्रदर्श-33 की बाबत बोलते हुए किया था। किन्तु मैं फिर भी अपने विद्वान् बन्धु से सम्मान सहमत हूं कि प्रदर्श-33 वाले पत्र के सूक्ष्म विश्लेषण और वाचन से यह साफ पता चलता है—

(क) कि मृतक अत्यन्त हताश थी।

(ख) कि उसकी मानसिकता के परिणासस्वरूप प्राणान्त करने या आत्म-हत्या करने की स्पष्ट प्रवृत्ति थी।

217. इसी प्रकार मुझे प्रदर्श-32, जो 8 जून, 1982 का पत्र है, के अंग्रेजी अनुवाद के बारे में कुछ संकोच है। इस पत्र का उल्लेख मेरे विद्वान् बन्धु ने अपने निर्णय में किया है। इसमें यह पद आया है "मुझे पता नहीं कि घर में इतना गन्दा (dirty) वातावरण क्यों है।" चूंकि न्यायालय में मूल पत्र पढ़ा गया और हमें उसे सुनने का अवसर मिला, इसलिए मैं उसे मानने के लिए तैयार हूं कि

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



सही और अधिक अभिव्यक्त करने वाला पद होगा "मुझे पता नहीं कि घर में इतना खराब (foil) वातावरण क्यों है।" इस दृष्टि से और अन्य बातों के संदर्भ में पढ़ने पर इस पत्र से कुछ चिन्ता पैदा हो जाती है। यदि मृतक को खराब वातावरण का कुछ आभास था तो ऐसा क्यों था। किन्तु यह भी केवल एक सन्देह है। इससे अभियुक्त का दोष साबित नहीं होता।

218. इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि यह पारिस्थतिक साक्ष्य का मामला है और साथ ही इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि अभिलेख के साक्ष्य से दो मत सम्भव हैं, एक से अभियुक्त के दोष का संकेत मिलता है और दूसरे से उसकी निर्दोषिता का, अभियुक्त उसका लाभ पाने का हकदार है जो उसके अनुकूल है। विषय के इस दृष्टि से मैं अपने विद्वान् बन्धु से सहमत हूं कि अभियुक्त की दोषिता सब युक्तियुक्त सन्देह से परे साबित नहीं हुई है।

219. जैसा कि ऊपर इंगित किया जा चुका है, आधार वाक्य के रूप में मैं प्रस्थापित आदेश से सहमत हूं।

अपील मंजूर की गई।

क्रु०/श्री०

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

# जे० के० भारती और अन्य

बनाम

# महाराष्ट्र राज्य और अन्य

(23 जुलाई, 1984)

(न्यायाधिपति ओ० चिन्नप्पा रेड्डी, ए० पी० सेन और ई० एस० वेंकटरामय्या)

संविधान, 1950—अनुसूची 7—सूची 2, प्रविष्टि 34 (सपठित सूची 1, प्रविष्टि) 40—दांव और द्यूत—महाराष्ट्र राज्य के भीतर लाटरी के टिकटों का विक्रय किया जाना—महाराष्ट्र राज्य द्वारा टिकटों के विक्रय पर पाबंदी लगाई जानी—राज्य बिधानमण्डल दांव और द्यूत की बाबत, जिसके अंतर्गत लाटरी भी संचालित की जा सकती है, विधि बनाने के लिए सशक्त है।

बाम्बे लाटरीज (कण्ट्रोल एण्ड टैक्स) एण्ड प्राइज कम्पीटीशनों (टैक्स) ऐक्ट, 1958 (1958 का 82)—धारा 32(ग)—(सपठित संविधान का अनुच्छेद 14)—राज्य सरकार दारा प्राधिकृत लाटरियों को अधिनियम से छूट दी जानी—राज्य सरकार दारा दी गई छूट के भेदभाव बरतने वाली होने का अभिवाक् लिया जाना—छूट दिए जाने में भेदभाव अंतर्वलित नहीं है।

वर्तमान रिट पिटीशन में महाराष्ट्र राज्य सरकार द्वारा भारतीय रेड-क्रास सोसाइटी की एक शाखा द्वारा संचालित और दादरा तथा नागर हवेली प्रशासन द्वारा प्राधिकृत लाटरी के टिकटों के विक्रय पर पाबन्दी लगा दी गयी थी। राज्य सरकार द्वारा लगाई गई पाबन्दी को जो 1958 वाले अधिनियम की धारा 3 और 32 (ग) के अधीन लगाई गई थी। संविधान के अनुच्छेद 14 के अधीन चुनौती दी गई। रिट पिटीशन को खारिज करते हुए उच्चतम न्यायालय द्वारा,

अभिनिर्धारित—लाटरी के संचालन का स्रोत अनुसूची 7 की सूची 2 की प्रविष्ट 34 में खोजना होगा जो राज्य विधानमंडल को दांव और द्यूत की बाबत विधि बनाने के लिए सशक्त करती है और इस अभिव्यक्ति की बाबत सदैव यह अभिनिर्धारित किया गया है कि इसके अन्तर्गत लाटरी संचालित की जा सकती है। जबकि भारत सरकार या किसी राज्य सरकार द्वारा लाटरी

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



के संचालन को अनुसूची 7 की सूची 2 की प्रविष्ट 34 में इस सूची 1 की प्रविष्टि 40 द्वारा लिया गया है इसलिए, भारत सरकार या किसी राज्य सरकार से भिन्न किसी अभिकरण द्वारा, चाहे वह जो भी हो, संचालित समस्त लाटरियों के टिकटों के महाराष्ट्र राज्य में विक्रय या वितरण की बाबत महाराष्ट्र विधानमंडल को विधान बनाने की क्षमता का प्रश्न नहीं है। (पैरा 1)

महाराष्ट्र सरकार द्वारा प्राधिकृत लाटरियों पर अधिनियम के लागू होने से छूट देने का कारण तथा अन्य राज्यों की सरकारों द्वारा प्राधिकृत लाटरियों को छूट न देने का कारण स्पष्ट है। महाराष्ट्र सरकार द्वारा प्राधिकृत लाटरियों के मामले में महाराष्ट्र सरकार उसके विनियमन और नियन्त्रण तथा निधियों के दुरूपयोग को रोकने पर जनता के गुमराह सदस्यों के शोषण को प्रवारित करने के लिए आवश्यक शक्तियां अपने पास प्रतिधारित कर सकती है। अन्य राज्यों की सरकारों द्वारा प्राधिकृत लाटरियों के मामले में महाराष्ट्र सरकार के लिए अन्य राज्यों की सरकारों द्वारा लाटरी का संचालन करने के लिए गैर सरकारी अभिकरणों को दिए गए प्राधिकार के दुरुपयोग को प्रवारित करने के लिए पर्याप्त विनियमनकारी कदम उठाना कठिन ही नहीं अपितु असंभव होगा। इसी प्रकार अन्य राज्यों की सरकारों के लिए भी महाराष्ट्र राज्य के भीतर ऐसे प्राधिकार के दुरुपयोग को प्रवारित करने के लिए पर्याप्त उपाय करना समान रूप से कठिन होगा। इसलिए अन्य राज्यों की सरकारों द्वारा प्राधिकृत किन्तु संचालित न की गई लाटरियों को अधिनियम के लागू होने से छूट न देने में कोई घोर भेदभाव, चाहे जो भी हो, अन्तर्वलित नहीं है। (पैरा 2)

**आरंभिक अधिकारिता 1984 का रिट पिटीशन (सिविल) : सं० 12820, 12592, 12714, 12736, 12747, 12821, 13035 और 13022.**

**पिटीशनरों की ओर से** — सर्वश्री (डा०) वाई० एस० चितले, विमल दवे, रणधीर सिंह, ओ० स्वामी, विनीत कुमार, एन० के० शर्मा, कुमारी दिपिका सक्सेना, श्री एस० एम० अश्री और श्री एम० विरप्पा

**प्रत्यर्थी की ओर से** — सर्वश्री एन० एच० गुरसाहनी और एम० एन० श्रॉफ

न्यायालय का निर्णय न्यायाधिपति ओ० चिन्नप्पा रेड्डी ने दिया।

**न्यायाधिपति चिन्नप्पा रेड्डी—**

यह आदेश वस्तुतः एच० अन्नराज और अन्य बनाम महाराष्ट्र

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



राज्य वाले मामले में हमने बाद में लिखा है। अन्नराज और अन्य बनाम महाराष्ट्र राज्य वाले मामले में महाराष्ट्र सरकार द्वारा अन्य राज्य सरकारों द्वारा महाराष्ट्र राज्य में संचालित लाटरी के टिकटों के विक्रय पर लगाई गई पाबन्दी को प्रश्नगत किया गया था। हमारे समक्ष लाए गए रिट पिटीशनों में वर्तमान प्रश्न अन्य राज्यों की सरकारों द्वारा प्राधिकृत किन्तु संचालित न किए गए लाटरी के टिकटों के विक्रय पर लगाई गई पाबंदी की बाबत उठाया गया है। विनिर्दिष्ट रूप से हमारा संबंध महाराष्ट्र राज्य के भीतर भारतीय रेडक्रास सोसाइटी की, दादरा और नागर हवेली शाखा द्वारा संचालित और दादरा तथा नागर हवेली प्रशासन द्वारा प्राधिकृत लाटरी के टिकटों के विक्रय पर लगाई गई पाबंदी से है। अन्नराज और अन्य ब० महाराष्ट्र राज्य वाले मामले में हमने यह अभिनिर्धारित किया था कि "भारत सरकार द्वारा या किसी राज्य सरकार द्वारा संगठित लाटरी" विषय वैधानिक क्षेत्र से लिया गया है जिसमें अनुसूची 7 की सूची 2 के परिशिष्ट 34 में आने वाले "दांव और द्यूत" पद समाविष्ट है और इसे अनुसूची 7 की सूची 1 की प्रविष्ट 40 के अधीन संसद द्वारा निपटाए जाने के लिए आरक्षित रखा गया है। इसी प्रकार हमने अभिनिर्धारित किया था कि संविधान का अनुच्छेद 298 किसी राज्य सरकार को कोई व्यापार या कारबार करने की स्वतंत्रता देता है जिसकी बाबत उसे विधि बनाने की शक्ति नहीं हो सकती। किन्तु ऐसा व्यापार या कारबार करने की शक्ति संसद द्वारा विधान बनाए जाने की शर्त के अधीन होगी। इसलिए, संसदीय विधान के अभाव में हमने यह कहा था कि प्रत्येक राज्य सरकार को लाटरी संचालित करने का अनिर्बंधित अधिकार प्राप्त है और यह अधिकार भारत सरकार की कार्यपालक शक्ति या राज्यों की कार्यपालक और विधायी शक्तियों के अधीन नहीं था। परिणामस्वरूप हमने यह अभिनिर्धारित किया कि राज्य सरकार को अन्य राज्यों द्वारा महाराष्ट्र राज्य में लाटरी के टिकटों के विक्रय और वितरण पर पाबंदी अधिरोपित करने का अधिकार नहीं था। वर्तमान मामले में हमारा संबंध दूसरे राज्यों की सरकारों द्वारा संचालित लाटरी पर लगाई गई पाबंदी से नहीं है अपितु उन लाटरियों से है जो ऐसी सरकार द्वारा प्राधिकृत हैं तथा सरकार से भिन्न संस्थाओं और व्यक्तियों द्वारा संचालित है। शक्ति के स्रोत को प्रश्नगत नहीं किया गया है। इसे अनुसूची 7 की सूची 2 की प्रविष्टि 34 में खोजना होगा जो राज्य विधानमंडल को दांव और द्यूत की बाबत विधि बनाने के लिए सशक्त करती है और इस अभिव्यक्ति की बाबत सदैव यह अभिनिर्धारित किया गया है कि इसके अन्तर्गत लाटरी संगठित की जा सकती है। जबकि भारत सरकार या किसी राज्य सरकार द्वारा लाटरी के

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



संचालन को अनुसूची 7 की सूची 2 की प्रविष्टि 34 में इस सूची 1 की प्रविष्टि 40 द्वारा लिया गया है इसलिए, भारत सरकार या किसी राज्य सरकार से भिन्न किसी अभिकरण द्वारा संगठित चाहे वह जो भी हो, समस्त लाटरियों के टिकटों के महाराष्ट्र राज्य में विक्रय या वितरण की बाबत महाराष्ट्र विधानमंडल को विधान बनाने की सक्षमता का प्रश्न नहीं है।

2. दि बाम्बे लाटरीज (कंट्रोल एण्ड टैक्स) एण्ड प्राइज कंपीटीशन (टैक्स) ऐक्ट, 1958 एक ऐसा अधिनियम है जो महाराष्ट्र राज्य में लाटरियों के नियन्त्रण और कर अधिरोपण तथा ईनाम स्पर्धा को नियन्त्रित करता है। अधिनियम की धारा 3 में यह घोषणा की गई है कि "अधिनियम द्वारा यथा उपबंधित के सिवाय समस्त लाटरी अवैध हैं।" अधिनियम में महाराष्ट्र राज्य के भीतर लाटरियों के अनुज्ञापन, विनियमन और नियन्त्रण की बाबत विस्तृत उपबंध अन्तर्विष्ट हैं। धारा 32 (ग) द्वारा यह उपबंध किया गया है कि अधिनियम की कोई बात "किसी राज्य सरकार द्वारा विशेष रूप से प्रधिकृत किसी लाटरी" को लागू नहीं होगी। पिटीशनरों के विद्वान् काउन्सेल डाक्टर चितले का निवेदन यह था कि "राज्य सरकार द्वारा विशेष रूप से प्राधिकृत" लाटरियों को अधिनियम के लागू होने से दी गई छूट अर्थात् महाराष्ट्र सरकार द्वारा दी गई छूट भेदभाव बरतने वाली थी। इस छूट का विस्तार किसी राज्य सरकार द्वारा चाहे वह जो भी हो प्राधिकृत लाटरियों तक होना चाहिए। इस निवेदन की सहायता के लिए संविधान के अनुच्छेद 14 का आश्रय लिया गया है। महाराष्ट्र सरकार द्वारा प्राधिकृत लाटरियों पर अधिनियम के लागू होने से छूट देने का कारण तथा अन्य राज्यों की सरकारों द्वारा प्राधिकृत लाटरियों को छूट न देने का कारण स्पष्ट है। महाराष्ट्र सरकार द्वारा प्राधिकृत लाटरियों के मामले में महाराष्ट्र सरकार उसके विनियमन और नियंत्रण तथा निधियों के दुरुपयोग को रोकने पर जनता के भोले-भाले से सदस्यों के शोषण को प्रवारित करने के लिए आवश्यक शक्तियां अपने पास प्रतिधारित कर सकती है। अन्य राज्यों की सरकारों द्वारा प्राधिकृत लाटरियों के मामले में महाराष्ट्र सरकार के लिए अन्य राज्यों की सरकारों द्वारा लाटरी का संचालन करने के लिए गैर सरकारी अभिकरणों को दिए गए प्राधिकार के दुरुपयोग को प्रवारित करने के लिए पर्याप्त विनियमनकारी कदम उठाना कठिन ही नहीं अपितु असम्भव होगा। इसी प्रकार अन्य राज्यों की सरकारों के लिए भी महाराष्ट्र राज्य के भीतर ऐसे प्राधिकार के दुरुपयोग को प्रवारित करने के लिए पर्याप्त उपाय करना समान रूप से कठिन होगा। इसलिए, हमारा यह समाधान हो जाता है कि अन्य राज्यों की सर-

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



कारों द्वारा प्राधिकृत किन्तु संचालित न की गई लाटरियों को अधिनियम के लागू होने से छूट न देने में कोई घोर भेदभाव, चाहे जो भी हो, अन्तर्वलित नहीं है। तदनुसार रिट पिटीशन खर्चों सहित खारिज किए जाते हैं।

रिट पिटीशन खारिज किए गए।

द्वि०/सरोहा

---

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

# सरोज रानी (श्रीमती)

बनाम

# सुदर्शन कुमार चड्डा

(8 अगस्त, 1984)

(न्यायाधिपति एस० मुर्तजा फ़ज़ल अली और सव्यसाची मुखर्जी)

हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 (1955 का 25) — धारा 9, 13ख और 23 – तलाक का आधार — प्रत्यर्थी — पति द्वारा पत्नी को सहवास से वंचित रखना — पत्नी के पक्ष में दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन की सम्मति-डिक्री पारित की जाना — पति-पत्नी के बीच एक वर्ष तक सहवास न होने के आधार पर पति द्वारा तलाक की मांग की जाना — पति तलाक की डिक्री पाने का हकदार है ।

संविधान, 1950 — अनुच्छेद 133 (सपठित हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 — धारा 28, 9, 13 और 23) — उच्चतम न्यायालय में की गई अपील में अभिवाक् में संशोधन — पत्नी द्वारा दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन हेतु किए गए पिटीशन में सम्मति-डिक्री प्राप्त की जाना — एक वर्ष तक सहवास न होने के आधार पर पति द्वारा तलाक के लिए पिटीशन — पत्नी द्वारा लिए गए सहवास के अभिवाक् को नामंजूर करते हुए डिक्री पारित की जाना — सम्मति-डिक्री के दुरभिसंधिपूर्ण होने के आशय के अभिवाक् के संशोधन को अनुज्ञात नहीं किया जा सकता ।

हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 (1955 का 25) — धारा 9 (सपठित संविधान, 1950, अनुच्छेद 14 और 21) — धारा 9 के अधीन विहित दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन के उपचार से संविधान के अनुच्छेद 14 और 21 का उल्लंघन नहीं होता ।

वर्तमान मामले में पक्षकार पति-पत्नी हैं जिनका विवाह वैदिक रीति से 24 जनवरी, 1975 को हुआ था । इस विवाह के दौरान दो पुत्रियां उत्पन्न हुईं जिनमें से एक की मृत्यु हो गई । तत्पश्चात् पति ने 16 मई, 1977 को अपनी पत्नी को घर से निकाल दिया और वह दिन उनके बीच सहवास का अन्तिम दिन था । 17 अक्तूबर, 1977 को पत्नी-अपीलार्थी ने

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



प्रत्यर्थी-पति के विरुद्ध हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 9 के अधीन दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन के लिए वाद फाइल किया। उसने अपने साथ किए गए दुर्व्यवहार का भी उल्लेख किया और दोनों की सम्मति से एक सम्मति-डिक्री पारित कर दी गई। इसके बाद पत्नी अपने पिता के साथ पति के घर गई। अभिकथन किया गया कि वे दो दिन तक पति-पत्नी के रूप में रहे, किन्तु न्यायालयों ने इस तथ्य पर विश्वास नहीं किया। पति ने एक वर्ष तक सहवास न होने के आधार पर तलाक के लिए वाद प्रस्तुत किया। अधीनस्थ न्यायालय ने सम्मति-डिक्री पर तलाक मंजूर करने से इन्कार कर दिया। अन्ततः उच्च न्यायालय की खण्ड न्यायपीठ ने सम्मति-डिक्री को दुरभिसधिपूर्ण न मानते हुए पति द्वारा किए गए तलाक के दावे को मंजूर कर लिया। उच्च न्यायालय के निर्णय के विरुद्ध अपील किए जाने पर, उच्चतम न्यायालय द्वारा अपील खारिज करते हुए,

**अभिनिर्धारित**—मामले के तथ्यों से यह प्रकट होता है कि पक्षकारों के बीच कोई दुरभिसंधि नहीं थी। पत्नी ने पति के विरुद्ध कतिपय आक्षेप लगाते हुए पिटीशन फाइल किया। पति ने इन आक्षेपों से प्रत्याख्यान किया। उसने यह कथन किया कि वह पत्नी को पुनः स्वीकार करने का इच्छुक था। उस आधार पर डिक्री पारित की गई थी। इस प्रकार वर्तमान मामले में कोई दुरभिसंधि होना कठिन है। विवाह संबंधी मामलों में सम्मति-डिक्री प्रकटतः दुरभिसंधिपूर्ण नहीं होती जैसा कि हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 13(ख) के विधायी आशय से प्रकट होगा कि परस्पर सहमति से दिया गया तलाक भारतीय तलाक विधि के लिए कोई अनभिज्ञ बात नहीं रह गई है किन्तु यह ठीक है कि यह संशोधन बाद में किया गया है और यह उस समय लागू नहीं था जब प्रश्नगत डिक्री पारित की गई थी। (पैरा 9)

जो आधार अपनाने की वांछा की गई है वह यह है कि पति चाहता था कि पत्नी किसी न किसी प्रकार के न्यायिक जाल में फंस कर न्यायिक पृथक्करण की डिक्री ले ले और तब वह उसके साथ सहवास न करे और तत्पश्चात् तलाक की यह डिक्री उसे मिल जाए। यह बात पत्नी की ओर से की गई प्रतिरक्षा में अभिकथित तथ्यों के विपरीत है। इसलिए, इस तथ्य के अतिरिक्त कि कोई अभिवचन नहीं किया किया गया था, जो एक गंभीर और घातक गलती है, इसलिए इस क्रम में अभिवचनों में संशोधन करने का अवसर देने की कोई गुंजायश नहीं है जिससे कि पत्नी को असंगत मामला बनाने की अनुमति दी जा सके। इसके अतिरिक्त, यह बात स्पष्ट है कि चाहे

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



जो भी कारण रहा हो यह विवाह टूट चुका है और पक्षकार अब पति और पत्नी के रूप में नहीं रह सकते । (पैरा 10)

दाम्पत्य अधिकारों के बारे में 'दाम्पत्य' शब्द के शब्दकोष में दिए गए अर्थ को ध्यान में रखते हुए उसके परिप्रेक्ष्य को देखा जा सकता है। भारत में यह बात ध्यान में रखी जाती है कि दाम्पत्य अधिकार अर्थात् पति या पत्नी का एक दूसरे से संसर्ग पाने का अधिकार केवल कानून की ही उपज नहीं है, ऐसा अधिकार वैवाहिक बंधन में स्वयं निहित है । (पैरा 14 और 15)

धारा 9 पूर्व विद्यमान विधि का ही संहिताकरण है । सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 21 का नियम 32 दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन के या आदेश के विनिर्दिष्ट अनुपालन के बारे में है । संविदा के विनिर्दिष्ट अनुपालन से भिन्न दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन की डिक्री के लिए जहां ऐसी डिक्री की अवज्ञा स्वेच्छापूर्वक की गई हो या जानबूझकर की गई हो वहां अवसर दिए जाने के बावजूद न्यायालय द्वारा स्वीकृति का उपबंध किया गया है और ऐसी अन्य बाधा नहीं है जिससे कि सम्पत्ति की कुर्की द्वारा उसे प्रवृत्त न किया जा सके । इस प्रकार जहां अवज्ञा स्वेच्छा आचरण के परिणामस्वरूप हुई है अर्थात् जहां पति या पत्नी के लिए दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन की डिक्री का पालन करने की शर्तें लगाई गई हों किन्तु इन शर्तों के बावजूद वह अवज्ञा करता है या करती है, वहां दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन की डिक्री की अवज्ञा के विरुद्ध एकमात्र स्वीकृति उसके विरुद्ध सम्पत्ति की कुर्की द्वारा दी गई है, जो कि एकमात्र आर्थिक स्वीकृति है, परन्तु यह तब जबकि उसके पास कुर्क किए जाने के लिए सम्पत्ति विद्यमान हो । ऐसा किसी समुचित मामले में न्यायालय अपनी प्रेरणा से कर सकता है जबकि न्यायालय ने दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन के लिए डिक्री पारित की हो और न्यायालय तभी ऐसी डिक्री पारित कर सकता है जब दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन की डिक्री पारित न करने के लिए कोई न्यायोचित कारण न हो जिससे कि पति और पत्नी को साथ-साथ रहने के लिए प्रेरित किया जा सके जिससे कि वे अपनी समस्या को सौहार्दपूर्वक सुलझाने का अवसर पा सकें । वैवाहिक सम्बन्धों को टूटने से बचाने के लिए यह एक सामाजिक प्रयोजन के रूप में मदद करता है । यदि हिन्दू विवाह अधिनियम में दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन की डिक्री के प्रयोजन को समुचित परिप्रेक्ष्य में समझा जाए और यदि अवज्ञा के मामलों में उसके निष्पादन की पद्धति को ध्यान में रखा जाए तो उक्त अधिनियम की धारा 9 संविधान के अनुच्छेद

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



14 अथवा 21 का उल्लघंन नहीं करती है। (पैरा 16 और 17)

अनुसरित निर्णय

| | | पैरा |
|---|---|---|
| [1978] | [1978] 3 उम० नि० प० 1019=[1978] 1 एस० सी० आर० 315 : धर्मेन्द्र कुमार बनाम ऊषा कुमारी | 5 |

अनुमोदित निर्णय

| | | |
|---|---|---|
| [1969] | ए० आई० आर० 1969 पंजाब-हरियाणा 397 : जोगिन्दर सिंह बनाम श्रीमती पुष्पा | 7 |

निर्दिष्ट निर्णय

| | | |
|---|---|---|
| [1984] | ए० आई० आर० 1984 दिल्ली 66 : श्रीमती हरविन्दर कौर बनाम हरमिन्दर सिंह चौधरी | 12 |
| [1983] | ए० आई० आर० 1983 आन्ध्र प्रदेश 356 : टी० सरीथा बनाम वेंकट सुब्बैया | 11 |
| [1983] | ए० आई० आर० 1983 आन्ध्र प्रदेश 111 : गीता लक्ष्मी बनाम जी० वी० आर० के० सर्वेश्वर राव | 18 |
| [1974] | [1974] 1 उम० नि० प० 1681=[1974]3 एस० सी० आर० 121 : मूर्ति मैच वर्क्स बनाम सहायक कलक्टर, केन्द्रीय उत्पाद शुल्क | 11 |

सिविल अपीली अधिकारिता : 1983 की सिविल अपील संख्या 187.

(1979 के आदेश सं० 199-एम के खिलाफ की गयी प्रथम अपील में पंजाब-हरियाणा उच्च न्यायालय के तारीख 27 अगस्त, 1982 वाले निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील)

अपीलार्थी की ओर से — श्री आर०के० गर्ग, श्रीमती मीरा अग्रवाल और श्री आर० सी० मिश्र

प्रत्यर्थी की ओर से — श्री ई० सी० अग्रवाल, श्रीमती एच० वाही और श्री राजीव शर्मा

न्यायालय का निर्णय न्यायाधिपति सव्यसाची मुखर्जी ने दिया।

**न्यायाधिपति मुखर्जी—**

वर्तमान मामले के पक्षकारों का विवाह 24 जनवरी, 1975 को या

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



उसके आसपास जालंधर नगर में हिन्दू वैदिक पद्धति से हुआ था। विवाह से प्रथम पुत्री मेनका का जन्म 4 जनवरी, 1976 को हुआ। 28 फरवरी, 1977 को दूसरी पुत्री गुड्डी का जन्म हुआ। यह अभिकथन किया गया है कि 16 मई, 1977 पक्षकारों के बीच सहवास का अंतिम दिन था। यह अभिकथन किया गया है कि 16 मई, 1977 को प्रत्यर्थी-पति ने अपीलार्थी को अपने घर से निकाल बाहर किया और अपने को उसके साहचर्य से बाहर कर लिया। दुर्भाग्यवश, 6 अगस्त, 1977 को दूसरी पुत्री की मृत्यु प्रत्यर्थी के पिता के घर में हो गयी। 17 अक्तूबर, 1977 को पत्नी अपीलार्थी ने पति/प्रत्यर्थी के विरुद्ध हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 (जिसे इसमें आगे अधिनियम कहा गया है) की धारा 9 के अधीन दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन के लिए वाद फाइल किया।

2. उस तर्क को ध्यान में रखते हुए, जिन्हें रखने की वांछा की गई है उक्त पिटीशन के प्रतिनिर्देश करना आवश्यक है। उक्त पिटीशन में जैसा इसमें इससे पूर्व संक्षेप में उल्लेख किया गया है पत्नी ने विवाह का इतिहास उपवर्णित किया है और पति तथा अपने सास-स्वसुर दोनों द्वारा कतिपय दुर्व्यवहार किये जाने का अभिकथन किया है और तत्पश्चात् दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन की डिक्री का दावा किया। 21 मार्च, 1978 को विद्वान् उप-न्यायाधीश, प्रथम श्रेणी ने 185रु० प्रतिमास वादकालीन भरण-पोषण और 300 रु० मुकदमे के खर्चे के रूप में अनुदत्त करते हुए एक आदेश पारित किया। 28 मार्च, 1978 को विद्वान् उप-न्यायाधीश, प्रथम श्रेणी, द्वारा दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन के लिए एक सम्मत्ति-डिक्री पारित की गई। यह उल्लेख किया जा सकता है कि पत्नी द्वारा दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन के लिए किए गए पिटीशन पर पति-प्रत्यर्थी न्यायालय में उपस्थित हुआ और पक्षकारों के बीच विवाह के तथ्य को संस्वीकार करते हुए अपना लिखित कथन फाइल किया। किन्तु इस तथ्य से इन्कार किया कि प्रत्यर्थी ने कभी भी पिटीशनर से यथा अभिकथित कोई मांग की या कभी भी उसे नापसंद किया या उसके साहचर्य से अपने आपको अलग रखा अथवा जैसा कि पत्नी-पिटीशनर द्वारा दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन के लिए किए गए उसके पिटीशन में अभिकथन किया गया है उसे अपने घर से निकाल कर बाहर किया। तत्पश्चात् प्रत्यर्थी ने न्यायालय में एक बयान दिया कि उक्त अधिनियम की धारा 9 के अधीन दिया गया पिटीशनर का आवेदन-पत्र मंजूर कर लिया जाए और उस पर डिक्री पारित कर दी जाए। तदनुसार विद्वान् उप-न्यायाधीश, प्रथम श्रेणी ने 28 मार्च, 1978 को पक्षकारों के बीच दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन हेतु डिक्री पारित कर दी। पिटीशनर-पत्नी द्वारा यह कथन किया गया कि

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



अपीलार्थी प्रत्यर्थी के घर गई थी और दो दिनों तक वे पति-पत्नी के रूप में रहे। सभी न्यायालयों ने इस तथ्य पर विश्वास नहीं किया। न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन की डिक्री पारित किए जाने के पश्चात् उनके बीच सहवास नहीं हुआ और इस निष्कर्ष को हमारे समक्ष चुनौती नहीं दी गयी।

3. 19 अप्रैल, 1979 को प्रत्यर्थी-पति ने उक्त अधिनियम की धारा 13 के अधीन अपीलार्थी के विरुद्ध इस आधार पर तलाक देने के लिए पिटीशन फाइल किया कि दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन हेतु डिक्री प्राप्त होने की तारीख से एक वर्ष व्यतीत हो चुका है किन्तु पक्षकारों के बीच वस्तुतः अब तक सहवास नहीं हो सका। अपीलार्थी ने उक्त पिटीशन की बाबत अपना प्रत्युत्तर फाइल किया। अपीलार्थी ने अपने प्रत्युत्तर में जो मामला स्पष्ट किया वह यह था कि यह गलत है कि डिक्री पारित होने के पश्चात् पक्षकारों के बीच दाम्पत्य अधिकारों का प्रत्यास्थापन नहीं हुआ। अपीलार्थी का सकारात्मक मामला यह था कि डिक्री पारित होने के एक मास के पश्चात् पत्नी को उसके माता-पिता द्वारा पति के घर में ले जाया गया और यह कि पति ने अपनी पत्नी को दो दिनों तक अपने घर में रखा और दुबारा बाहर निकाल दिया। आगे यह भी अभिकथन किया गया कि पत्नी ने उक्त अधिनियम की धारा 28 के अधीन उप-न्यायाधीश, प्रथम श्रेणी, जालंधर के न्यायालय में 22 जनवरी, 1979 को यह प्रार्थना करते हुए एक आवेदन-पत्र फाइल किया कि पति को उक्त अधिनियम की धारा 9 के अधीन उसके विरुद्ध पारित डिक्री का अनुपालन करने हेतु निर्दिष्ट किया जाना चाहिए और यह कि जब तलाक के लिए किए गए पिटीशन पर पत्नी द्वारा अपना प्रत्युत्तर फाइल किया गया उस समय तक आवेदन-पत्र लम्बित था।

4. विद्वान् जिला न्यायाधीश ने 15 अक्तूबर, 1979 को पति द्वारा तलाक के लिए फाइल किए गए पिटीशन को खारिज कर दिया। विद्वान् न्यायाधीश ने दो मुद्दे विरचित किये थे। उनमें से एक यह था कि क्या दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन के लिए डिक्री पारित किए जाने के पश्चात् दाम्पत्य अधिकारों का प्रत्यास्थापन नहीं हुआ और दूसरे यह कि पति किस अनुतोष का हकदार था ? पक्षकारों के बीच लम्बित सिविल और दांडिक कार्यवाहियों के साक्ष्य पर विचार करने के पश्चात् विद्वान् न्यायाधीश इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि पक्षकारों के बीच 28 मार्च, 1978 के पश्चात् सहवास का प्रत्यास्थापन नहीं हुआ और मुद्दे का विनिश्चय पति के पक्ष में किया किन्तु अनुतोष के प्रश्न पर विद्वान् न्यायाधीश का यह मत था कि उक्त अधि-

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



नियम की धारा 23 के उपबंधों को ध्यान में रखते हुए तथा इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि डिक्री-सम्मति की डिक्री थी और उस समय उक्त अधिनियम की धारा 13-ख अर्थात् जिसमें "परस्पर सम्मति द्वारा तलाक" के उपबंधों जैसा कोई उपबंध नहीं था। इसलिए विद्वान् न्यायाधीश का मत था कि चूंकि पक्षकारों की सम्मति से दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन की डिक्री पारित की गई थी इसलिए पति तलाक की डिक्री पाने का हकदार नहीं था।

5. उक्त विनिश्चय से व्यथित होकर पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय के समक्ष एक अपील की गई। जहां तक अंतिम उल्लिखित आधार का संबंध है उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि **धर्मेन्द्र कुमार ब० उषा कुमारी**[1] वाले मामले में इस न्यायालय के विनिश्चय को ध्यान में रखते हुए पत्नी को यह दलील देने की छूट नहीं थी। न्यायालय की यह राय थी कि इस न्यायालय के उक्त विनिश्चय को ध्यान में रखते हुए यह नहीं कहा जा सकता कि पति उसके दोषों का लाभ उठा रहा है। उक्त विनिश्चय में न्यायालय ने यह उल्लेख किया कि यह अभिनिर्धारित करना युक्तियुक्त नहीं होगा कि वह अनुतोष जो पति या पत्नी को उपलब्ध है, जिसके विरुद्ध दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन की डिक्री पारित की गई है उससे इन्कार किया जाना चाहिए जो उसके विरुद्ध पारित की गई डिक्री का अनुपालन नहीं करता या करती धारा 23 (1) (क) के अर्थान्तर्गत "दोष होने के लिए" अभिकथित आचरण कुछ ऐसा आचरण होना चाहिए जो पुनर्मिलन के प्रस्ताव पर सहमत होने में मात्र अनिच्छुक रहने मात्र से अधिक हो, यह ऐसा गम्भीर कदाचार होना चाहिए जिससे उस अनुतोष को देने से इन्कार किया जाना न्यायोचित हो जिसके लिए पति या पत्नी अन्यथा हकदार हों। इसलिए धारा 23 (1) (क) में निम्नलिखित उपबंध किया गया है—

> "23 (1) यदि इस अधिनियम के अधीन होने वाली किसी कार्यवाही में, चाहे उसमें प्रतिरक्षा की गई हो या नहीं, न्यायलय का समाधान हो जाए कि—
>
> (क) अनुतोष अनुदत्त करने के आधारों में से कोई न कोई आधार विद्यमान है और अर्जीदार उन मामलों को छोड़कर, जिनमें उसके द्वारा धारा 5 के खण्ड (ii) के उपखंड(क),

---

[1] [1975] 3 उम० नि० प० 1019=[1978] 1 एस० सी० आर० 315.

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



उपखंड (ख) या उपखंड(ग) में विनिर्दिष्ट आधार पर अनुतोष चाहा गया है अनुतोष के प्रयोजनार्थ अपने ही दोष या निर्योग्यता का किसी प्रकार फायदा नहीं उठा रहा है या उठा रही है।"

6. मामले को उस दृष्टि से देखते हुए उच्च न्यायालय ने दलील नामंजूर कर दी। जहां तक दूसरे पहलू का सम्बन्ध है विद्वान् न्यायाधीश ने यह मत व्यक्त किया कि पक्षकारों की सहमति से दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन की डिक्री पारित नहीं की जा सकती और इसलिए दुरभिसंधिपूर्ण होने के नाते पति तलाक की डिक्री पाने का हकदार नहीं रहा। विद्वान् विचारण न्यायाधीश द्वारा उच्च न्यायालय के एक पूर्व विनिश्चय का आश्रय लेते हुए यह दृष्टिकोण अपनाया गया था। उच्च न्यायालय के न्यायमूर्ति गोयल ने यह महसूस किया कि इस मत पर पुन: विचार किए जाने की आवश्यकता और इसलिए उन्होंने मामला मुख्य न्यायमूर्ति को निर्दिष्ट र दिया जिससे कि इस प्रश्न पर विचार करने के लिए वे उच्च न्यायालय के खंड न्यायपीठ का गठन कर सकें।

7. तत्पश्चात् मामला पंजाब और हरियाणा उच्च यायालय के खंड न्यायपीठ के समक्ष रखा गया और उस न्यायालय के मुख्य न्यायमूर्ति संधावालिया विभिन्न नजीरों पर विचार करने के पश्चात् इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि सहमति-डिक्री को दुरभिसंधिपूर्ण डिक्री नहीं कहा जा सकता जिससे कि पिटीशनर दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन का हकदार नहीं रह सके। यह उल्लेख किया जा सकता है कि खंड न्यायपीठ के समक्ष अपीलार्थी पत्नी की ओर से उसके काउन्सेल ने विचारण न्यायालय के इस तथ्यगत निष्कर्ष का खंडन न कर सके कि दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन की डिक्री के पश्चात् उनके बीच वस्तुत: सहवास नहीं हुआ और न ही उन्होंने प्रतिरक्षा संबंधी प्रथम आधार पर जोर दिया अर्थात् अपीलार्थी उसके 'दोषों' का लाभ इसलिए नहीं उठा सकी क्योंकि डिक्री के निष्पादन में उसके साथ सहवास करने से इंकार कर दिया गया था। तथापि, यह आधार खंड न्यायपीठ के समक्ष अपनाया गया कि दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन की डिक्री दुरभिसंधिपूर्ण डिक्री के रूप में थी। पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय **जोगिन्द्र सिंह ब० श्रीमती पुष्पा** वाले[1] मामले में पूर्ण न्यायपीठ के विनिश्चय को ध्यान में रखते हुए जिसमें पूर्ण न्यायपीठ के न्यायमूर्तियों ने बहुमत से यह अभिनिर्धारित किया कि समस्त मामलों में दी गई सम्मति डिक्रियों को दुरभिसंधिपूर्ण डिक्री नहीं कहा जा सकता और जहां पक्षकार मामले को सुलझाने का प्रयास

---

[1] ए० आई० आर० [1979] पंजाब और हरियाणा पृ० 397.

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



किये जाने के पश्चात् ऐसी डिक्री पारित करने के लिए सहमत हो गए हों वहां यदि न्यायालय ने धारा 23 की भाषा को ध्यान में रखते हुए पक्षकारों के बीच मेल-मिलाप कराने का प्रयास किया है और मेल-मिलाप के लिए आदेश कर दिया गया है वहां पति डिक्री पाने के हक से वंचित नहीं किया जा सकता।

8. धारा 23 की उपधारा (2) में निम्नलिखित उपबंध किया गया है —

> "इस अधिनियम के अधीन कोई अनुतोष अनुदत्त करने के लिए अग्रसर होने के पूर्व यह न्यायालय का प्रथमतः कर्तव्य होगा कि वह ऐसी हर दशा में, जहां कि मामले की प्रकृति और परिस्थितियों से संगत रहते हुए ऐसा करना संभव हो, पक्षकारों के बीच मेल-मिलाप कराने का पूर्ण प्रयास करे :
>
> परन्तु इस उपधारा की कोई बात किसी ऐसी कार्यवाही को लागू नहीं होगी जिसमें धारा 13 की उपधारा (1) के खंड (2), खंड (3), खंड (4) खंड (5), खंड (6) या खंड (7) में विनिर्दिष्ट आधारों में किसी आधार पर अनुतोष चाहा गया है।"

9. इस मामले में अभिलेख पर उपलब्ध तथ्यों से यह प्रकट होता है कि पक्षकारों के बीच कोई दुरभिसंधि नहीं थी। पत्नी ने पति के विरुद्ध कतिपय आक्षेप करते हुए पिटीशन फाइल किया। पति ने इन आक्षेपों से इंकार किया। उसने यह कथन किया कि वह पत्नी को वापस स्वीकार करने का इच्छुक था। उस आधार पर डिक्री पारित की गई थी। इस प्रकार वर्तमान मामले में कोई दुरभिसंधि होना कठिन है। इसके अतिरिक्त हम पंजाब हरियाणा उच्च न्यायालय के **जोगिन्द्र सिंह ब० श्रीमती पुष्पा**[1] वाले मामले में खंड न्यायापीठ के विद्वान् न्यायमूर्तियों के बहुमत वाले निर्णय से सहमत हैं कि सम्मति-डिक्री के समस्त मामले दुरभिसंधिपूर्ण नहीं कहे जा सकते। विवाह संबंधी मामलों में सम्मति-डिक्री प्रकटतः दुरभिसंधिपूर्ण नहीं होती जैसा कि धारा 13 (ख) के विधायी आशय से प्रकट होगा कि परस्पर सहमति से दिया गया तलाक भारतीय तलाक विधि के लिए कोई अनभिज्ञ बात नहीं रह गई है किन्तु यह ठीक है कि यह संशोधन बाद में किया गया है और यह उस समय लागू नहीं था जब प्रश्नगत डिक्री पारित की गई थी। आधार वाक्य के रूप में हम इस प्रश्न पर पंजाब-हरियाणा उच्च न्यायालय के खंड न्यायपीठ के बहुमत द्वारा अपनाए गए दृष्टिकोण को स्वीकार करते हैं।

---

[1] ए० आई० आर० [1979] पंजाब और हरियाणा ए० 397

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



10. इस न्यायालय के समक्ष की गई इस अपील में पत्नी के काउंसेल ने खंड न्यायपीठ के इस निष्कर्ष को चुनौती नहीं दी कि सम्मति-डिक्री अपने आप में गलत थी या दुरभिसंधिपूर्ण थी। उन्होंने हमारे समक्ष इस बात पर जोर देने का प्रयास किया कि अधिनियम की धारा 23 (1) (क) में आने वाले 'दोष' पद को ध्यान में रखते हुए इस मामले में पति तलाक की डिक्री पाने का हकदार नहीं था। इस बात पर जोर देने का प्रयास किया कि आरंभ से ही पति यह चाहता था कि तलाक की डिक्री पारित कर दी जाए इसलिए उसने जानबूझकर दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन की डिक्री का विरोध नहीं किया, दूसरी ओर यह निवेदन किया गया कि प्रत्यर्थी-पति ने अंततः तलाक देने के आशय से ही पत्नी को दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन की डिक्री लेने दी क्योंकि वह पूर्ण रूप से यह जानता था कि वह इस डिक्री को कार्यरूप नहीं देगा। और इस प्रकार उसने अपनी पत्नी और न्यायालय दोनों को गुमराह किया और तत्पश्चात् पत्नी के साथ सहवास करने से इंकार कर दिया और अब, यह निवेदन किया गया कि उसे उसके 'दोष' का लाभ उठाने की अनुमति नहीं दी जा सकती। तथापि, अभिवचनों में इन अभिकथनों की लेशमात्र भी चर्चा नहीं है इसलिए इस बात का उल्लेख किए जाने पर काउंसेल ने यह याचना की कि उसे अपने अभिवचनों मे संशोधन करने का अवसर दिया जाए और सामान्य अभिवाक् यह है कि पक्षकारों को वकीलों की गलती के कारण परेशान न होना पड़े। तथापि इस मामले में कुछ अलंघ्य कठिनाइयाँ हैं। पहली बात तो यह कि ऐसा अभिवचन नहीं था, दूसरा यह कि इस आधार पर इससे पूर्व किसी भी निचले न्यायालय में जोर नहीं दिया गया था, जो एक तथ्य संबंधी प्रश्न है। तीसरी बात यह है कि जिन तथ्यों का अभिवचन किया गया और पत्नी द्वारा विचारण न्यायालय में और खंड-न्यायपीठ के समक्ष किए गए अभिकथन उन तथ्यों के प्रतिकूल हैं जिन पर अपनी अपील के समर्थन में हमारे समक्ष जोर दिया गया है। पत्नी का यह निश्चित मामला था कि दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन की डिक्री के पश्चात् पति और पत्नी ने दो दिन तक सहवास किया। अब जो आधार अपनाने की वांछा की गई है यह है कि पति चाहता था कि पत्नी किसी न किसी प्रकार के न्यायिक जाल में फंस कर न्यायिक पृथक्करण की डिक्री ले ले और तब वह उसके साथ सहवास न करे और तत्पश्चात् तलाक की यह डिक्री उसे मिल जाए। यह बात पत्नी की ओर से की गई प्रतिरक्षा में अभिकथित तथ्यों के विपरीत है। इसलिए इस तथ्य के अतिरिक्त कोई अभिवचन नहीं किया गया था जो एक गम्भीर और घातक गलती है इसलिए, इस क्रम में अभिवचनों में संशोधन करने का अवसर

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



देने की कोई गुंजायश नहीं है। जिससे कि पत्नी को असंगत मामला बनाने की अनुमति दी जा सके।

अपीलार्थी के काउंसेल ने इस बात पर जोर देने का प्रयास किया है कि धारा 23 की उपधारा (1) के खंड (क) में आने वाले "अपने ही दोष का किसी प्रकार फायदा नहीं उठा रहा था" अभिव्यक्ति का अर्थान्वयन इस रीति में किया जाना चाहिए जिससे कि भारतीय पत्नियां चालाक और बेईमान पतियों द्वारा सतायी न जा सकें। प्रथमतः यदि इस व्यापक तर्क को स्वीकार कर भी लिया जाय तो भी इस मामले में वस्तुतः यह लागू नहीं होता और दूसरे यह कि यदि ऐसा है तो उसके लिए उस प्रभाव का विधान विरचित किए जाने की अपेक्षा है। इसलिए, हम अपीलार्थी के काउन्सेल की यह दलील स्वीकार करने में असमर्थ हैं कि पति का वह आचरण जिसके विरुद्ध जोर दिया गया है संभवतः धारा 31 (1) (क) में आने वाले "अपने ही दोषों" पद के भीतर आता है जिससे कि वह तलाक की डिक्री के लिए जिसके लिए कि वह अन्यथा हकदार है। जैसाकि निचले न्यायालयों द्वारा अभिनिर्धारित किया गया है हकदार नहीं रह जाता है। इसके अतिरिक्त हम बिना किसी मानसिक अनुताप के इस निष्कर्ष पर इसलिए पहुंचे हैं कि यह बात स्पष्ट है कि चाहे जो भी कारण रहा हो यह विवाह टूट चुका है और पक्षकार अब पति और पत्नी के रूप में नहीं रह सकते। यदि ऐसी स्थिति है तो इस अध्याय को यहीं समाप्त कर देना चाहिए।

11. तथापि, हमारा ध्यान **टी० सरीथा ब० वेंकट सुबैय्या**[1] वाले मामले में आन्ध्र प्रदेश उच्च न्यायालय के विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा दिए गए विनिश्चय की ओर आकर्षित किया गया। उक्त विनिश्चय में विद्वान् न्यायाधीश ने यह अवलोकन किया कि उक्त अधिनियम की धारा 9 द्वारा उपबंधित दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन का उपचार जंगली और बर्बर उपचार है जो एकांतता के अधिकार और संविधान के अनुच्छेद 21 द्वारा गारंटीशुदा मानवीय मर्यादा के अधिकार का उल्लंघन करता है। इसलिए विद्वान् न्यायाधीश के अनुसार धारा 9 संवैधानिक रूप से अवैध है। संविधान के अनुच्छेद 13 के अनुसार कोई भी कानूनी उपबंध जो संविधान के भाग 3 में गारंटीशुदा अधिकारों को कम करने वाला है उसे अवैध घोषित किया जाएगा। उक्त विद्वान् न्यायाधीश के अनुसार अनुच्छेद 21 में राज्य की कार्यवाही के विरुद्ध प्राण और व्यक्तिगत स्वतन्त्रता की गारंटी दी गई है। यह साधारण नकारात्मक भाषा में विरचित है, किन्तु इसके प्रभावी किए जाने का क्षेत्र सका-

---

[1] ए० आई० आर० 1983, आन्ध्र प्रदेश, 356.

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



रात्मक है अर्थात् किसी व्यक्ति के प्राण या दैहिक स्वतन्त्रता से विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अनुसार ही वंचित किया जाएगा और अन्यथा न वंचित करने के लिए राज पर रोक लगाती है जिसका विस्तार अत्यन्त व्यापक है और जो अत्यधिक संवैधानिक महत्व का है। विद्वान् न्यायाधीश ने यह अवलोकन किया कि दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन की डिक्री किसी व्यक्ति के एकांतता के अधिकार का घोर उल्लंघन करती है। विद्वान् न्यायाधीश के अनुसार इसके द्वारा किसी महिला को उसकी इस स्वतन्त्र इच्छा से वंचित किया जाता है कि कब और कैसे उसके शरीर को किसी अन्य मानव का प्रजनन करने हेतु साधन बनाया जाए। विद्वान् न्यायाधीश के अनुसार दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन की डिक्री किसी महिला को उसकी इस इच्छा से वंचित करती है कि कब और किसके द्वारा उसके शरीर के विभिन्न अंग स्पन्दित किए जाएं। महिला को अपने अत्यन्त व्यक्तिगत विनिश्चयों से नियंत्रण खो देना पड़ता है। इसलिए, विद्वान् न्यायाधीश का यह मत था कि अनुच्छेद 21 द्वारा गारंटी किए गए एकांतता के अधिकार का दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन की डिक्री द्वारा घोर रूप से उल्लंघन होता है। विद्वान् न्यायाधीश का यह मत था कि कोई पत्नी जो किसी स्थायी या अस्थायी मन-मुटाव के कारण अपने पति से अलग रह रही थी उसे उसके एकांतता के अधिकार का उल्लंघन किए बिना पति द्वारा गर्भ धारण करने के लिए विवश नहीं किया जा सकता। उस समय "सम्भवतः वह तलाक की कार्यवाही की रूपरेखा बना रही थी उस समय विरक्त पत्नी के विरुद्ध उक्त अधिनियम की धारा 9 का प्रयोग और प्रवर्तन किए जाने से और बलपूर्वक गर्भ धारण कराने से उसकी स्थिति इस प्रकार बिगड़ जाएगी जिसका उपचार नहीं किया जा सकता और उससे स्थायी रूप से उसका मन, शरीर और जीवन और उससे सम्बद्ध समस्त चीजें स्थायी रूप से बर्बाद हो जाएंगी। इसलिए, विद्वान् न्यायाधीश का यह स्पष्ट मत था कि उक्त अधिनियम की धारा 9 संविधान के अनुच्छेद 21 का उल्लंघन करती है। उन्होंने इंग्लैण्ड में इसके उत्सादन की सिफारिश करने वाली स्कारमैन आयोग की रिपोर्ट के प्रति भी निर्देश किया। विद्वान् न्यायाधीश का यह भी मत था कि उक्त अधिनियम की धारा 9 वैध रूप से कोई भी सार्वजनिक प्रयोजन को लाभ नहीं पहुंचाती चाहे वह सामान्य भलाई की किसी भी धारणा पर आधारित क्यों न हो। इसलिए, इससे कोई भी सामाजिक भलाई सिद्ध नहीं होती। इसलिए, उक्त अधिनियम की धारा 9 को संविधान के अनुच्छेद 14 को क्षति पहुंचाने के आधार पर मनमानी और अवैध अभिनिर्धारित किया गया था। विद्वान् न्यायाधीश ने आगे यह भी अवलोकन किया कि यद्यपि उक्त अधिनियम की धारा 9 अपने स्वरूप में

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



वर्गीकरण के परीक्षण को क्षति नहीं पहुंचाती क्योंकि इसमें पति या पत्नी के बीच भेदभाव नहीं किया गया है तो भी दूसरी ओर दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन के उपचार को पति और पत्नी दोनों के लिए समान रूप से सुलभ बनाकर प्रकटतः उसने समता के परीक्षण को पूरा कर दिया है किन्तु वास्तविकताओं की असमता पर ध्यान दिए बिना मात्र व्यवहार की क्षमता न ही उनके प्रति न्याय है और न ही संवैधानिक सिद्धान्तों का यह संदेश था। उन्होंने **मूरथी मैच वर्क्स आदि ब० सहायक कलैक्टर, केन्द्रीय उत्पाद शुल्क**[1] वाले मामले में दिए गए इस न्यायालय के विनिश्चय का आश्रय लिया, तथापि विद्वान् न्यायाधीश की यह राय थी कि जो इस बात पर आधारित थी कि इस उपचार का हमारी सामाजिक वास्तविकता की अपेक्षा जीवन में किस प्रकार प्रयोग किया जा सकता है अर्थात् वैवाहिक उपचार के बारे में पाया गया है कि वे अधिकांशतः अनन्य रूप से पति द्वारा ही प्रयोग किया गया है और पत्नी द्वारा इसका आश्रय लिया जाना बहुत विरल था।

12. विद्वान् न्यायाधीश ने यह उल्लेख किया और यह अत्यन्त महत्वपूर्ण है कि दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन की डिक्री सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 21 नियम 32 के अधीन ही प्रवृत्त की जा सकती है। उन्होंने अमेरिकी विधि के कतिपय रुझानों के प्रति भी निर्देश किया और इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि उक्त अधिनियम की धारा 9 अकृत और शून्य है। आन्ध्र प्रदेश उच्च न्यायालय के विद्वान् एकल न्यायाधीश के उक्त मत के प्रतिकूल मत दिल्ली उच्च न्यायालय के विद्वान् न्यायाधीश द्वारा **श्रीमती हरविन्दर कौर ब० हरमिन्दर सिंह चौधरी**[2] वाले मामले में व्यक्त किया गया। उक्त विनिश्चय में दिल्ली उच्च न्यायालय के विद्वान् न्यायाधीश ने यह मत व्यक्त किया कि उक्त अधिनियम की धारा 9 संविधान के अनुच्छेद 14 और 21 का उल्लंघन करने वाली नहीं है। विद्वान् न्यायाधीश ने यह उल्लेख किया कि प्रत्यास्थापन की डिक्री का उद्देश्य विरक्त पक्षकारों के बीच सहवास कराना था, जिससे कि वे मिलजुल कर वैवाहिक घर में साथ-साथ रह सकें। धारा 9 का मुख्य विचार विवाह को परिरक्षित करना था सहवास और मेलजोल की परिभाषा से एकल न्यायाधीश को यह प्रतीत हुआ कि मैथुन उन तत्वों में से एक था जिसके कारण विवाह किया गया किन्तु वही सब कुछ नहीं था। न्यायालय मैथुन को प्रवृत्त नहीं करते और न तो ऐसा कर ही सकते हैं। विवाह की धारणा में लैंगिक संबंध एक महत्वपूर्ण

[1] [1974] 3 एस० सी० आर० पृष्ठ 121.
[2] ए० आई० आर० 1984, दिल्ली 66.

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



तत्व है किन्तु यह भी सत्य था कि वे उसके सम्पूर्ण अवयव नहीं थे न ही वैवाहिक मेल-जोल के शेष पहलुओं के बारे में यह कहा जा सकता है कि वे पूर्णत: सारहीन या नगण्य प्रकृति के हैं। प्रत्यास्थापन के उपचार का लक्ष्य सहवास और मेल-जोल का था न कि मात्र मैथुन का। विद्वान् न्यायाधीश ने यह मत व्यक्त किया कि प्रत्यास्थापन डिक्री द्वारा मैथुन प्रवृत्त नहीं किया गया था। यह अभिनिर्धारित किया जाना गलत था कि वैवाहिक अधिकारों का प्रत्यास्थापन 'वैवाहिक एकांतता' का 'घोरतम सरकारी अतिक्रमण है'।

13. वर्तमान मामले में इस विषय के अर्थात् उक्त अधिनियम की वैधता के बारे में निचले न्यायालयों में कोई पैरवी नहीं की गई थी तथापि, अपीलार्थी के काउन्सेल ने विधिक प्रतिपादना के रूप में इस विषय पर हमारे समक्ष जोर देना चाहा। हमने उन्हें ऐसा करने की अनुमति दे दी।

14. आन्ध्र प्रदेश उच्च न्यायालय और दिल्ली उच्च न्यायालय के विद्वान् एकल न्यायाधीशों के मतों पर विचार करने के पश्चात् हम इस पहलू पर अर्थात् उक्त अधिनियम की धारा 9 की वैधता के बारे में दिल्ली उच्च न्यायालय के विद्वान् एकल न्यायाधीश के मत को स्वीकार करते हैं। यह उल्लेख किया जा सकता है कि दाम्पत्य अधिकारों के बारे में "दाम्पत्य" पद के शब्दकोष में दिए गए अर्थ को ध्यान में रखते हुए उसके परिप्रेक्ष्य को देखा जा सकता है। शार्टर आक्सफोर्ड इंगलिश डिक्सनरी, तृतीय संस्करण, जिल्द I पृष्ठ 371 पर 'दाम्पत्य' का अर्थ इस प्रकार दिया गया है 'विवाह का या इससे संबंधित या पति और पत्नी के परस्पर संबंध में इंगलिश ला डिक्शनरी, 1959 वाले संस्करण में पृष्ठ 453 पर अर्ल जोवेट ने 'दाम्पत्य अधिकार' की परिभाषा इस प्रकार दी है —

> *"वह अधिकार जो पति और पत्नी को एक दूसरे के संसर्ग के लिए और वैवाहिक मैथुन के लिए प्राप्त है। दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन का वाद एक वैवाहिक वाद है जो तलाक-न्यायालय में संज्ञेय है जो उस समय लाया जाता है जब पति या पत्नी पर्याप्त कारण से एक दूसरे से पृथक् रहते हैं उस मामले में न्यायालय दाम्पत्य

---

*अंग्रेजी में यह इस प्रकार है :—

"The right which husband and wife have to each other's society and marital intercourse. The suit for restitution of conjugal rights is a matrimonial suit, cognisable in the Divorce court, which is brought

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



अधिकारों के प्रत्यास्थापन की डिक्री पारित करेगा (मैट्रिमोनियल काजेज ऐक्ट, 1950 धारा 15) किन्तु उसे कुर्की द्वारा प्रवृत्त नहीं करेगा तथापि कुर्की के स्थान पर यदि पत्नी पिटीशनर है तो पति द्वारा पत्नी को नियतकालिक संदाय का आदेश करेगा। (धारा 22)

दाम्पत्य अधिकारों को किसी पक्षकार के कृत्य द्वारा प्रवृत्त नहीं किया जा सकता और पति अपनी पत्नी को बलपूर्वक पकड़ नहीं सकता और निरुद्ध नहीं कर सकता [आर० वर्शिज जैक्सन (1891) 1 क्यू० बी० 671"]

15. भारत में यह बात ध्यान में रखी जा सकती है कि दाम्पत्य अधिकार अर्थात् पति या पत्नी का एक दूसरे का संसर्ग पाने का अधिकार केवल कानून की ही उपज नहीं है ऐसा अधिकार वैवाहिक बंधन में अपने आप निहित है। इस संबंध में देखिए मुल्ला द्वारा रचित हिन्दी विधि— 15 वां संस्करण पृष्ठ 567, पैरा 443—इसे निरंकुश बनाने से प्रवारित करने के लिए धारा 9 में पर्याप्त सुरक्षा उपाय किए गए हैं। दाम्पत्य अधिकारों के महत्व को विधि आयोग की 71 वीं रिपोर्ट के प्रकाश में देखा जा सकता है जो हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 के बारे में दी गई थी—तलाक के लिए आधार के रूप में विवाह के बिना तनाव के विघटन, पैरा 6.5 जिसमें निम्नलिखित कथन दिया गया है —

"इसके अतिरिक्त विवाह का सार है सामान्य जीवन का सहभागी होना, जीवन में मिलने वाली तमाम खुशियों और जीवन में आने वाले समस्त दुखों में सहभागी होना, मिल-जुलकर आनन्द प्राप्त करने से मिलने वाली खुशी की अनुभूति प्राप्त करना, वस्तु रूप में और भावना से उसे प्राप्त करना अपने बच्चों पर प्यार अनुराग

---

whenever either the husband or the wife lives separate from the other without any sufficient reason in which case the court will decree restitution of conjugal rights (Matrimonial Causes Act, 1950, S. 15), but will not enforce it by attachment, substituting however for an attachment, if the wife be the petitioner, an order for periodical payments by the husband to the wife. (s. 22)

Conjugal rights cannot be enforced by the act of either party, and a husband cannot seize and detain his wife by force [R.Vs. Jackson (1891) 1 Q. B. 671]"

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



लुटाना साथ-साथ रहना ही अपने समस्त पहलुओं का दिग्दर्शक है। अलग-अलग रहना ही यह उपदर्शित करता है कि वे इस प्रकार सहभागी नहीं हो रहे हैं। इससे यह उपदर्शित होता है कि विवाह का लक्ष्य निष्फल हो रहा है—टूट रहा है और यदि यह पर्याप्त अवधि तक चलता रहे तो इससे यह उपदर्शित होगा कि विवाह का सार-तत्व ही नष्ट हो गया—तनावपूर्ण विघटन।"

16. धारा 9 पूर्व विद्यमान विधि का ही संहिताकरण है। सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 21 के नियम 32 दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन के या व्यादेश के विनिर्दिष्ट अनुपालन के बारे में है। नियम 32 इस प्रकार है —

"32. (1) जहां उस पक्षकार को, जिसके विरुद्ध संविदा के विनिर्दिष्ट पालन के लिए या दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन के लिए या व्यादेश के लिए कोई डिक्री पारित की गई है, उस डिक्री के आज्ञानुवर्तन के लिए अवसर मिल चुका है और उसका आज्ञानुवर्तन करने में वह जानबूझकर असफल रहा है वहां वह डिक्री दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन के लिए डिक्री की दशा में, उसकी सम्पत्ति की कुर्की के द्वारा या संविदा के विनिर्दिष्ट पालन के लिए या व्यादेश के लिए डिक्री की दशा में सिविल कारागार में उसके अवरोध द्वारा या उसकी सम्पत्ति की कुर्की द्वारा, या दोनों रीति से प्रवृत्त की जा सकेगी।"

17. यह उल्लेख करना महत्वपूर्ण है कि सविदा के विनिर्दिष्ट अनुपालन से भिन्न दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन की डिक्री के लिए जहाँ ऐसी डिक्री की अवज्ञा स्वेच्छापूर्वक की गयी हो या जानबूझकर की गयी हो वहां अवसर दिए जाने के बावजूद न्यायालय द्वारा स्वीकृति का उपबंध किया गया है और ऐसी अन्य बाधा नहीं है जिससे कि सम्पत्ति की कुर्की द्वारा उसे प्रवृत्त न किया जा सके। इस प्रकार जहां अवज्ञा स्वेच्छा आचरण के परिणामस्वरूप हुई है अर्थात जहां पति या पत्नी के लिए दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन की डिक्री का पालन करने की शर्तें लगायी हों किन्तु इन शर्तों के बावजूद वह अवज्ञा करता है या करती है वहां दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन की डिक्री की अवज्ञा के विरुद्ध एकमात्र स्वीकृति उसके विरुद्ध सम्पत्ति की कुर्की द्वारा दी गयी है जो कि एकमात्र आर्थिक स्वीकृति है परन्तु यह तब जबकि उसके पास कुर्क किए जाने के लिए सम्पत्ति विद्यमान हो। ऐसा किसी समुचित मामले में न्यायालय अपनी प्रेरणा से कर सकता है जबकि न्यायालय ने दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्या-

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



स्थापन के लिए डिक्री पारित की हो और न्यायालय तभी ऐसी डिक्री पारित कर सकता है जब दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन की डिक्री पारित न करने के लिए कोई न्यायोचित कारण न हो जिससे कि पति और पत्नी को साथ-साथ रहने के लिए प्रेरित किया जा सके जिससे कि वे अपनी समस्या को सौहार्दपूर्वक सुलझाने का अवसर पा सकें। वैवाहिक सम्बन्धों को टूटने से बचने के लिए यह एक सामाजिक प्रयोजन के रूप में मदद करता है। इसे उस दृष्टि से नहीं देखा जा सकता जिस दृष्टि से आन्ध्र प्रदेश उच्च न्यायालय के विद्वान् एकल न्यायाधीश ने देखा है और इसलिए, हम इस स्थिति को स्वीकार करने में असमर्थ हैं कि यदि उक्त अधिनियम में दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन की डिक्री के प्रयोजन को समुचित परिप्रेक्ष्य में समझा जाए और यदि अवज्ञा के मामलों में उसके निष्पादन की पद्धति को ध्यान में रखा जाए तो उक्त अधिनियम की धारा 9 संविधान के अनुच्छेद 14 और 21 का उल्लंघन करती है।

18. एक दूसरा विनिश्चय जिसकी ओर हमारा ध्यान आकर्षित किया गया था वह भी आन्ध्र प्रदेश उच्च न्यायालय के न्यायपीठ का विनिश्चय है जो गीता लक्ष्मी बनाम जी० वी० आर०के० सर्वेश्वर राव[1] वाले मामले में दिया गया था। उस मामले में पति का संस्वीकृत कदाचार न केवल दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन के अनुपालन तक सीमित था बल्कि पत्नी के साथ दुर्व्यवहार किया गया और अंततः उसे घर से बाहर निकाल दिया गया था। यह निर्धारित किया गया था कि अधिनियम की धारा 23(1)(क) के अधीन अनुध्यात पति के दोष को ध्यान में रखते हुए उक्त अधिनियम की धारा 13(1)(क) के अधीन डिक्री के लिए हकदार नहीं था। उस मामले के तथ्य हमारे समक्ष रखे गए वर्तमान मामले के तथ्यों से पूर्णतः भिन्न थे। किसी पति द्वारा इस प्रकार के किसी दुर्व्यवहार का अभिकथन नहीं किया गया न ही ऐसी साक्ष्य दी गयी है कि पति ने पत्नी को बाहर निकाल दिया हो। मामले को इस दृष्टि से देखते हुए यह विनिश्चय वर्तमान मामले में अपीलार्थी की कोई सहायता नहीं कर सकते।

19. तथापि, अपीलार्थी के काउन्सेल ने हमारे समक्ष यह दलील दी कि भारतीय समाज की सामाजिक वास्तविकता को ध्यान में रखते हुए तलाक शुदा पत्नी सारभूत रूप में बहुत अधिक नुकसान उठाती है। उनका यह निवेदन ठीक है तथापि, विधि की स्थिति को ध्यान में रखते हुए हम यह निदेश देना चाहेंगे कि तलाक की अंतिम डिक्री पारित किए जाने के पश्चात्

---

1 ए० आई० आर० [1983] आं० प्र० 111.

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



भी पति अपनी पत्नी को तब तक भरण-पोषण का संदाय करेगा जब तक वह पुनः विवाह नहीं कर लेती और विवाह से उत्पन्न एकमात्र जीवित पुत्री का भरण-पोषण करेगा। पत्नी और जीवित पुत्री के लिए तब तक पृथक्तः भरण-पोषण संदत्त किया जाना चाहिए जब तक समुचित आधार पर आवेदन दिए जाने पर आदेश परिवर्तित नहीं कर दिया जाता। ऐसे भरण-पोषण की रकम अपीलार्थी पत्नी के लिए 200 रु० प्रतिमास और पुत्री मेनका के लिए 300 रु० प्रतिमास होगी। पत्नी भरण-पोषण पाने की हकदार तब तक रहेगी जब तक वह पुनः विवाह नहीं कर लेती और पुत्री मेनका तब तक रहेगी जब तक उसका विवाह नहीं हो जाता। पक्षकार को उप-न्यायाधीश, प्रथम श्रेणी, जालन्धर के समक्ष समुचित आधारों पर आवेदन पत्र देकर इन रकमों में फेर-बदल कराने की छूट होगी। प्रत्यर्थी अपील का खर्च अपीलार्थी को संदत्त करेगा जो 1500 रुपए निर्धारित किया गया है।

20. पूर्वोक्त निदेशों के साथ, अपील खारिज की जाती है।

अपील खारिज की गयी।

द्वि०/भू०

---

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

# मिली तालीमी मिशन का प्रबन्ध बोर्ड, बिहार, रांची और अन्य

बनाम

# बिहार राज्य और अन्य

**(14 अगस्त, 1984)**

**(न्यायाधिपति एस० मुर्तजा फजल अली, ए० वरदराजन और सब्यसाची मुखर्जी)**

**संविधान, 1950—अनुच्छेद 30—अल्पसंख्यक-वर्गों के शिक्षा संबंधी अधिकार की व्याप्ति—विवादग्रस्त संस्था मिली तालीमी मिशन, बिहार, रांची द्वारा शिक्षक प्रशिक्षण कालेज चलाया जाना—उक्त संस्था का एक अल्पसंख्यक संस्था होना—संस्था द्वारा 1977 में सम्बंधन किये जाने और मान्यता प्राप्त करने के लिए आवेदन किया जाना—प्रश्नगत कालेज के निरीक्षण के लिए सरकार द्वारा रांची विश्वविद्यालय को निदेश दिया जाना—मार्च, 1980 में विश्वविद्यालय प्राधिकारियों द्वारा सम्बंधन किए जाने और मान्यता की सिफारिश के बावजूद सरकार द्वारा कोई अन्तिम विनिश्चय न किया जाना—उच्च न्यायालय में आवेदन किये जाने पर उसके निदेशानुसार सरकार द्वारा केवल तीन सत्रों के लिए मान्यता अनुमोदित की जानी किन्तु बाद में सरकार द्वारा मान्यता रद्द की जानी—बिहार के शिक्षा आयुक्त द्वारा कालेज को सम्बंधन करने और मान्यता देने की सिफारिश की जानी—इसपर भी कोई कार्रवाई न की जानी—ऐसी स्थिति में, पर्याप्त कारण बताए बिना सम्बंधन करने और मान्यता मंजूर करने से इन्कार करना, संविधान के अनुच्छेद 30 के उपबंधों का उल्लंघन माना जाएगा।**

विवादग्रस्त संस्था मिली तालीमी मिशन बिहार, रांची एक सोसाइटी के अधीन टीचर्स ट्रेनिंग कालेज के नाम से शुरू हुआ था। तारीख 22-9-1977 को संस्था ने संबंधन या मान्यता देने के लिए सरकार से आवेदन किया जिसके उत्तर में सरकार ने एक अत्यन्त असाधारण आदेश पारित करके विश्वविद्यालयों को संबंधन इस विचित्र आधार पर इंकार करने का निदेश दिया कि गैर-शासकीय शिक्षकों के प्रशिक्षण कालेजों द्वारा सम्बन्धन के सभी प्रस्ताव अस्वीकार कर दिए जाएं तथा किसी भी छात्र को प्राइवेट रूप में बैठने की अनुमति न दी जाए। इसके पश्चात् 5 जून, 1978 को बिहार गैर-शासकीय शिक्षक प्रशिक्षण

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



कालेज अध्यादेश जारी किया गया। तारीख 15 जून, 1978 को सरकार ने अपीलार्थी के कालेज के निरीक्षण के लिए रांची विश्वविद्यालय को लिखा। तारीख 13 अगस्त, 1979 को सरकार ने यह अधिसूचित किया कि सम्बन्धन विषयक विनिश्चय उसके तारीख 1-10-1973 के परिपत्र (उपाबंध बी) द्वारा शासित होगा। उस परिपत्र में संबंधन की मंजूरी की कुछ शर्तें दी गई थीं और यह कि अल्पसंख्यक संस्थाओं के संबंधन में अंतिम विनिश्चय बाद में किया जाएगा। तत्पश्चात् पटना उच्च न्यायालय में एक रिट पिटीशन फाइल किया गया। उसमें यह विनिश्चय किया गया कि ऊपर निर्दिष्ट अध्यादेश की धारा-2 अल्पसंख्यक प्रशिक्षण कालेजों को लागू नहीं होगी। तारीख 6 फरवरी, 1980 को बिहार सरकार के संयुक्त सचिव ने अपीलार्थी के कालेज के निरीक्षण के लिए रांची विश्वविद्यालय और रांची के उपायुक्त को पत्र भेजे। यह दिखाई देगा कि संस्था ने 1977 में संबंधन के लिए आवेदन किया था और अल्पसंख्यक संस्था होने का दावा किया था, जिसके बारे में किसी भी समय विवाद नहीं किया गया। फिर भी सरकार को अपीलार्थी के कालेज के संबंधन के बारे में विनिश्चय करने में तीन वर्ष लगे। तारीख 5 मार्च, 1980 को विश्वविद्यालय प्राधिकारियों ने अपीलार्थी के कालेज का निरीक्षण किया और उसके संबंधन की सिफारिश की। इसके बाद रांची के जिला विकास अधिकारी ने 30-6-1980 को अपनी रिपोर्ट में संबंधन की सिफारिश की। किन्तु इन तथ्यों के बावजूद सरकार ने कोई अंतिम विनिश्चय नहीं किया जिसके फलस्वरूप अपीलार्थियों को संबंधन मंजूर करने के लिए सरकार को निदेश देने के लिए उच्च न्यायालय में समावेदन करना पड़ा और उच्च न्यायालय ने विनिर्दिष्ट समय के भीतर अपीलार्थी के कालेज की मान्यता और संबंधन का विनिश्चय करने के लिए सरकार को निदेश दिया। 3-11-1980 को सरकार ने केवल तीन सत्रों के लिए ही मान्यता मंजूर की और संबंधन के लिए अनुमोदन दिया। तत्पश्चात्, 17 अगस्त, 1981 को बिहार राज्य ने इस न्यायालय के समक्ष विशेष इजाजत अर्जी फाइल की, जो 30-11-1981 को खारिज कर दी गई। फिर भी 7-9-1981 को अपीलार्थियों के कालेज के साथ-साथ तीन अल्पसंख्यक कालेजों को सरकार द्वारा मान्यता और संबंधन प्रदान किया गया। अन्ततोगत्वा, उच्च न्यायालय को पुनः दखल देना पड़ा। उसने राज्य सरकार को निदेश दिया कि स्थायी मान्यता के लिए अपीलार्थियों द्वारा दिए गए आवेदन-पत्र का निपटारा किया जाए, जो उन्होंने 22-11-1980 को फाइल किया था। 16-9-1982 को बिहार के शिक्षा आयुक्त ने अपीलार्थी के कालेज को संबंधन देने की सिफारिश की। इसके बावजूद कुछ भी विशेष कार्रवाई की गई प्रतीत नहीं होती, जिससे बाध्य होकर अपीलार्थियों ने अपने कालेज के छात्रों की जिन्होंने

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



1982-83 सत्र पास किया था, परीक्षा के लिए 3 मई, 1983 को उच्च न्यायालय में एक दूसरा रिट पिटीशन फाइल किया। किन्तु उच्च न्यायालय ने वह रिट पिटीशन प्रारम्भ में ही खारिज कर दिया। इस प्रकार विशेष इजाजत लेकर उच्चतम न्यायालय में अपील फाइल की गई है। अपील मंजूर करते हुए।

**अभिनिर्धारित**—बड़ी विचित्र बात है कि जबकि उक्त संस्था का निरीक्षण करने के बाद एक पूर्व विशेषज्ञ समिति का निष्कर्ष था कि वह सुव्यवस्थित है किन्तु बाद में सरकार ने विशेषज्ञ समिति द्वारा प्रस्तुत आंकड़ों का हवाला दिए बिना, उसे अकस्मात छोड़ दिया और प्रतिवाद किया कि कमियों की दृष्टि से और शर्तों की पूर्ति न करने की दृष्टि से सम्बद्ध करना संभव नहीं है। उसने इस बात का भी उल्लेख नहीं किया कि किस ढंग से और किस हद तक शिक्षा आयुक्त की सिफारिश और वह सामग्री जिस पर वह सिफारिश आधारित थी, गलत है और पांच नई शर्तें क्यों अधिरोपित की गई हैं। (पैरा 20)

राज्य ने केवल भ्रामक आधारों पर सम्बद्ध करने से इन्कार किया है, जो विद्यमान नहीं हैं और उसने शिक्षा आयुक्त की सिफारिश पर विचार नहीं किया, जो सम्बद्ध करने के लिए पूर्ण निरीक्षण के बाद की गई थी। दूसरे शब्दों में, सम्बद्ध किया जाना कोई पर्याप्त कारण बताए बिना इन्कार किया गया और ऐसी इन्कारी से संविधान के अनुच्छेद 30 के उपबंधों का उल्लंघन होता है। (पैरा 23)

यह एक उपयुक्त मामला है, जिसमें उच्चतम न्यायालय को उस सरकारी कारंवाई को अवैध घोषित करने के लिए कदम उठाना चाहिए, जो संविधान के अनुच्छेद 30 का उल्लंघन करती है और जो हमारे निर्णय में उद्धृत विभिन्न नज़ीरों में इंगित निदेशक सिद्धांतों के अन्तर्गत नहीं आती। कहने का आशय यह है कि चूंकि सरकार ने शिक्षा आयुक्त की सिफारिश पसन्द नहीं की और वह अप्रकट कारणों से संबद्ध किया जाना मंजूर करने के लिए तैयार नहीं थी, इसलिए सरकार की कारंवाई अधिकारिता का आभासी प्रयोग था जिससे अपीलार्थियों की संस्था अपने सांविधानिक अधिकारों से वंचित हो गई। (पैरा 24)

जबकि सम्बद्ध किया जाना अपने आप में एक मूल अधिकार नहीं है फिर भी ऐसे निबंधनों, शर्तों या स्थिति पर सम्बद्ध किया जाना मंजूर करने से इन्कार करना जिनसे संस्था की प्रगति और स्वायत्ता व्यावहारिक रूप से खत्म हो जाए, संविधान के अनुच्छेद 30 के उल्लंघन में होने के कारण अनुज्ञेय नहीं है। (पैरा 8)

**अवलम्बित निर्णय** **पैरा**

[1981] [1981] 1 उम० नि० प० 259=(1980) 2 एस० सी० सी० 178 :
**आल सेन्ट्स हाई स्कूल, हैदराबाद और अन्य बनाम आन्ध्र प्रदेश सरकार और अन्य** **2**

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



[1974] [1974] 2 उम० नि० प० 1303=[1975] 1 एस० सी० आर० 17 :
अहमदाबाद सेंट जेवियर्स कालेज सोसाइटी और अन्य बनाम गुजरात राज्य और एक अन्य 2

[1959] [1959] एस० सी० आर० 995 :
केरल एजुकेशन बिल वाला मामला 2

**सिविल अपीली अधिकारिता : 1984 की सिविल अपील सं० 404.**

1983 के सिविल रिट अधिकारिता मामला सं० 623 में पटना उच्च न्यायालय के तारीख 11 जुलाई, 1983 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध विशेष इजाजत लेकर की गई अपील।

**अपीलार्थी की ओर से** डा० एल० एम० सिंघवी, श्रीमती लक्ष्मी कांत पाण्डे और श्री एस० के० सिन्हा

**प्रत्यर्थियों की ओर से** सर्वश्री डी० गोवर्धन और बी० बी० सिंह

न्यायालय का निर्णय न्यायाधिपति एस० मुर्तज़ा फज़ल अली ने दिया।

**न्यायाधिपति फज़ल अली—**

विश्व के सबसे बड़े लोकतंत्र के संविधान का निर्माण करते समय हमारे संविधान निर्माताओं के सामने सबसे कठिन और नाजुक कार्य अल्पसंख्यकों तथा पिछड़े वर्ग के हितों का संरक्षण, परिरक्षण और रक्षण करना था, जिससे कि हमारे संविधान की धर्मनिरपेक्ष प्रकृति बनी रहे। कदाचित् उन्हें भय था कि एक समय ऐसा आ सकता है जब बहुत बड़ा बहुसंख्यक वर्ग अल्पसंख्यकों के शैक्षिक, सांस्कृतिक और सामाजिक अधिकारों को दबा दे या उन पर हावी हो जाए, समाप्त या नष्ट कर दे और उनकी व्यष्टिकता तथा व्यक्तित्व को मिटा दे। हमारे सम्पूर्ण संविधान का केन्द्रीय कथानक यही है, इसके द्वारा अल्पसंख्यक शिक्षा संस्थाओं के संरक्षण और परिरक्षण के पर्याप्त रक्षोपायों सुलभ हैं, शिक्षा संस्थाएं अत्यन्त महत्वपूर्ण और मुखरित माध्यम हैं, जिसके माध्यम से समाज का यह वर्ग अपनी बात कह सकता है और अपनी व्यथाओं का प्रतितोष मांग सकता है।

2. इस अपील में हमारा संबंध अल्पसंख्यक संस्थाओं के संरक्षण के लिए राज्य के अधिकारों और बाध्यताओं से ही है और इस संकल्पकृत प्रयोजन के लिए हमारे संविधान में अनुच्छेद 30 अधिष्ठापित किया गया था, जिससे कि उनमें हीन भावना न आए और वे देश के आर्थिक तथा राजनीतिक जीवन की मुख्य धारा में भागीदार बन सकें, ताकि समय के प्रवाह के साथ-साथ तथा राष्ट्र की आवश्यकताओं के अनुसार वे भी आगे बढ़ सकें। अनुच्छेद 30 भारत के संविधान के भाग III में स्पष्टरूप से सम्मिलित है, जिसमें मूल अधिकार दिए

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



गए हैं, और इस न्यायालय ने केरल एजुकेशन बिल[1] वाले मामले से लेकर जोकि विवाद्य विषय पर एक शास्त्रीय नजीर है, अहमदाबाद सेंट जेवियर्स कालेज सोसाइटी और अन्य बनाम गुजरात राज्य और एक अन्य[2] वाले मामले तक तथा अंत में आल सेंट्स हाई स्कूल, हैदराबाद और अन्य बनाम आन्ध्र प्रदेश सरकार और अन्य[3] वाले मामले तक स्पष्ट रूप से यह माना है कि अल्पसंख्यक संस्थाएं चलाना भी उतना मूल और महत्वपूर्ण अधिकार है जितने देश के नागरिकों को प्रदत्त अन्य अधिकार हैं। संभवतः, एकमात्र अंतर यह है कि अनुच्छेद 30 में दिए गए अधिकारों का अपना एक स्वयं पूर्ण क्षेत्र है। इस न्यायालय के विभिन्न विनिश्चयों की सूक्ष्म-संवीक्षा और अध्ययन से पता चलता है कि अनुच्छेद 30 द्वारा प्रत्याभूत स्वतंत्रताओं को भी उस क्षेत्र के अन्तर्गत जिसमें वे प्रवर्तित हैं, पूर्ण मूल अधिकार का स्तर प्रदान किया गया है। दूसरे शब्दों में, राज्य की ऐसी कोई भी कार्रवाई, जो किसी भी प्रकार से ऐसे अधिकारों को नष्ट करती है, दबाती है या उनमें हस्तक्षेप करती है, संविधान के अनुच्छेद 30 के उल्लंघन में होगी।

3. प्रस्तुत मामले में, हमारा मुख्य संबंध अल्पसंख्यक संस्थाओं के अधिकारों, विशेषाधिकारों और प्रास्थिति से है। इन विषयों पर विचार करने के लिए इस न्यायालय ने चार महत्वपूर्ण पहलुओं या बिन्दुओं पर विचार किया है, वे हैं —

(1) सरकार से सहायता प्राप्त करने का अल्पसंख्यक संस्थाओं का अधिकार,

(2) विश्वविद्यालयों से सम्बद्ध किए जाने का अधिकार,

(3) स्वायत्ता की प्रकृति और सीमा, जो ऐसी संस्थाओं को अपने आन्तरिक अनुशासन और प्रशासन में प्राप्त है, तथा

(4) शिक्षा के स्तर में निपुणता हासिल करने के बहाने संस्थाओं की स्वतंत्रता में असम्यक् या बार-बार हस्तक्षेप से बचने का अधिकार।

4. प्रथम विचारणीय प्रश्न यह है कि क्या अल्पसंख्यक संस्थाओं को सरकार से सहायता प्राप्त करने या विश्वविद्यालय से सम्बन्धन प्राप्त करने का, सामान्य तौर पर, मूल अधिकार प्राप्त है। दूसरे शब्दों में, प्रश्न यह है कि क्या संबद्ध किए जाने या सरकार से सहायता प्राप्त करने का अधिकार अपने आप में एक मूल अधिकार है या नहीं, जिससे कि अनुच्छेद 30 का उल्लंघन होता है। तकनीकी दृष्टि से इस प्रश्न का उत्तर नकारात्मक है। किन्तु इस बात

---

[1] [1959] एस० सी० आर० 995.

[2] [1974] 2 उम० नि० प० 1303=[1975] 1 एस० सी० आर० 173.

[3] [1981] 1 उम० नि० प० 259=(1980) 2 एस० सी० सी० 178.

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



पर जोर देना होगा कि न्यायसंगत और पर्याप्त आधारों के बिना कानूनी प्राधिकारियों द्वारा सहायता देने से या संबद्ध किए जाने से इन्कार करना संविधान के अनुच्छेद 30 में अधिष्ठापित मूल स्वतंत्रताओं के उल्लंघन के समान है। यदि सरकार सहायता नहीं देती है या विश्वविद्यालय संबद्ध करने से इन्कार कर देता है तो इसका सीधा परिणाम यह होगा कि इससे उस संस्था का अस्तित्व ही नष्ट हो जाएगा क्योंकि ऐसी अनेक अल्पसंख्यक संस्थाएं हो सकती हैं जो सरकार की सहायता के बिना अस्तित्व में न रहें और इन संस्थाओं में प्रवेश के बिना असंख्य छात्र संबद्ध किए जाने के अभाव में उच्चतर शैक्षणिक स्तर प्राप्त करने से वंचित रह जायेंगे। यह केवल संस्था की ही हानि नहीं होगी बल्कि राष्ट्र की हानि होगी। इसी प्रयोजन के लिए इसे अनुच्छेद 30 संविधान में रखा गया था।

5. प्रस्तुत मामले में हम अपने निर्णय को राज्य और विश्वविद्यालय द्वारा अल्पसंख्यक संस्था को संबद्ध किए जाने से इन्कार करने के प्रश्न तक ही सीमित रखना चाहेंगे। सबसे पहले, **केरल एजुकेशन बिल**[1] वाले मामले में मु० न्या० दास ने बहुमत का निर्णय देते हुए (न्या० वेंकटराम अय्यर ने अपना पृथक् निर्णय दिया था) इस प्रकार मत व्यक्त किया था—

> "प्रकट है कि अल्पसंख्यक चाहते हैं कि उनके समुदाय के बालकों को शिक्षा ऐसे वातावरण में दी जाए जो उनकी संस्कृति के विकास के अनुरूप हो। हमारे संविधान निर्माताओं ने उनकी मांग को उचित माना और उनकी आशंका का निवारण करने के लिए उन्हें ऊपर निर्दिष्ट मूल अधिकार प्रदान किए"। उनकी यह भी इच्छा थी कि उनकी शिक्षा संस्थाओं के विद्वान् उपयोगी जीवन के लिए आवश्यक अर्हताओं से भली-भांति और पर्याप्त रूप से युक्त होकर विश्व में बाहर जाएं। किन्तु·········अमान्यता प्राप्त विद्यालयों के विद्वानों को विश्वविद्यालय में उच्च शिक्षा प्राप्त करने के अवसर प्राप्त करने की सुविधा नहीं है और वे लोक सेवाओं में प्रवेश पाने के लिए पात्र नही हैं। अतः मान्यता के बिना अल्पसंख्यक समुदायों द्वारा स्थापित या स्थापित की जाने वाली शिक्षा संस्थाएं अपने विकल्प के वास्तविक लक्ष्यों की पूर्ति नहीं कर सकतीं और अनुच्छेद 30(1) में दिए गए अधिकारों का कारगर ढंग से प्रयोग नहीं कर सकती। अतः अपनी पसन्द की शिक्षा संस्थाएं स्थापित करने के अधिकार से शैक्षिक संस्थाएं स्थापित करने का अधिकार अभिप्रेत है जो उनके समुदाय और विद्वानों की आवश्यकताओं को कारगर ढंग से पूरी करेंगे जो अपनी शिक्षा

1. [1959] एस० सी० आर० 995.

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



संस्थाओं का आश्रय लेते हैं। निस्संदेह, राज्य द्वारा मान्यता का अधिकार मूल अधिकार जैसी कोई चीज नहीं है किन्तु अपनी पसन्द की शिक्षा संस्थाओं को चलाने के अपने सांविधानिक अधिकार के अभ्यर्पण जैसे निबंधनों के सिवाय शिक्षा संस्थाओं को मान्यता देने से इन्कार करना वस्तुतः और असल में उन्हें अनुच्छेद 30(1) के अधीन वाले उनके अधिकारों से वंचित करना है। हम पुनः यह कहना चाहेंगे कि विधायी शक्ति मूल अधिकारों के अधीन है तथा विधानमण्डल अप्रत्यक्ष रूप से उन मूल अधिकारों को न छीन सकता है और न उनका अल्पीकरण कर सकता है, जिनका वह प्रत्यक्ष रूप से नहीं कर सकता। फिर भी, यदि किसी अतिवर्तनकारी खण्ड से युक्त उपरोक्त विधेयक विधि बन जाएगा तो यही परिणाम निकलेगा।"

(रेखांकन हमने किया है)

6. इस मामले के मत और विनिश्चयाधार को इस न्यायालय ने **सेंट जेवियर्स कालेज वाले मामले**[1] में 9 न्यायाधीशों के न्यायपीठ के विनिश्चय में पूरी तरह अभिपुष्ट और प्रतिपादित किया है। उस मामले में एक ही धारा में बोलते हुए समस्त न्यायाधीशों ने यह अभिनिर्धारित किया था कि सहायता या संबंधन को ऐसी रीति से रोक रखना जिससे अल्पसंख्यक संस्था की स्वायत्तता और व्यष्टिकता नष्ट हो जाए या निर्मूल हो जाए, उससे अनुच्छेद 30 का उल्लंघन होता है। इस सम्बन्ध में पृथक्-पृथक् निर्णयों द्वारा न्यायाधीशों ने निम्नलिखित मत व्यक्त किए थे—

"इस न्यायालय का दृष्टिकोण बराबर यह है कि किसी भी अल्पसंख्यक संस्था को सम्बन्धन का कोई मूल अधिकार नहीं है। विधि के इस कथन का एक स्पष्टीकरण किया गया है। वह यह है कि सम्बन्धन साधारण धर्म-निरपेक्ष शिक्षा देने के मामले में अल्पसंख्यक संस्थाओं के लिए शक्ति का वास्तविक और अर्थपूर्ण प्रयोग होना चाहिए। कोई भी ऐसी विधि, जिसमें सम्बन्धन के लिए उपबन्ध ऐसी शर्तों पर किया गया है, जिसके फलस्वरूप अपनी रुचि की शिक्षा संस्थाओं की स्थापना और उनका प्रशासन करने के सम्बन्ध में धर्म और भाषा पर आधारित अल्पसंख्यक वर्गों के अधिकार का न्यूनन हो सकता है, अनुच्छेद 30 (1) का उल्लंघन करने वाली होगी। अल्पसंख्यक वर्गों द्वारा स्थापित शिक्षा संस्थाओं की उपादेयता उस दशा में समाप्त हो

[1] [1974] 2 उम० नि० प० 1303=[1975] 1 एस० सी० आर० 173.

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



जाएगी जिसमें लड़कों और लड़कियों को इन संस्थाओं में विश्वविद्यालय की डिग्रियों के लिए प्रशिक्षण न दिया जा सके। यदि सम्बन्धन ऐसी शर्तों पर किया जाता है जिसके अधीन अल्पसंख्यक वर्गों को अनुच्छेद 30 के अधीन अपनी रुचि की शिक्षा संस्थाएं स्थापित करने और उनका प्रशासन करने के अपने अधिकारों से हाथ धोना पड़ता है तो सामान्य वृत्तियों के लिए अपनी संतान को तैयार करने का अपना अधिकार इन अल्पसंख्यक वर्गों के हाथ से वास्तव में निकल जाएगा... जब तक ऐसी संस्था विद्यार्थियों को डिग्रियां प्रदान करने के प्रयोजन के लिए किसी विश्वविद्यालय से सम्बद्ध नहीं की जाती हैं तब तक अल्पसंख्यक संस्थाओं की स्थापना प्रभावहीन ही नहीं बल्कि अवास्तविक भी है।

... ... ...

अल्पसंख्यक संस्थाओं के सम्बन्धन का आशय पढ़ाई-लिखाई के क्षेत्र में उनकी सन्तानों तथा अन्य विद्यार्थियों की उन्नति और विकास को सुनिश्चित बनाना है। संबन्धन विशेष रूप से संस्था के पठन-पाठन तथा शैक्षणिक स्वरूप से सम्बद्ध है।"

(मु० न्या० रे)

हम माननीय मुख्य न्यायाधिपति के अभी-अभी सुनाए गए निर्णय और उनके इन निष्कर्षों से सहमत हैं कि ऐक्ट की धारा 40, 41, 33-ए (1) (ए), 33-ए (1) (बी), 51-ए और 52-ए अल्पसंख्यक वर्गों के मूल अधिकारों का अतिलंघन करती हैं और इसीलिए उन संस्थाओं को लागू नहीं हो सकती हैं जो उनके द्वारा स्थापित की गई तथा उनके प्रशासनाधीन हैं।

... ... ...

अनुच्छेद 30 के अधीन दिए गए अधिकार का प्रयोग निरुद्देश्य रूप से नहीं किया जा सकता है और न सम्बन्धन या मान्यता को राज्य द्वारा प्रदत्त विशेषाधिकारों की संज्ञा देना ठीक होगा। शासन की ऐसी जनतन्त्रात्मक प्रणाली में, जो अपने नागरिकों की शिक्षा तथा बौद्धिक उन्नति पर जोर देती हो, ऐसे तत्वों का होना आवश्यक है जो उन्हें संरक्षण प्रदान करते हों। अनुच्छेद 30 (1) के अधीन दिए गए अधिकार का अर्थपूर्ण प्रयोग तभी किया जा सकता है जब यह आवश्यक है कि उसके साथ अल्पसंख्यक संस्थाओं द्वारा दी गई धर्म-निरपेक्ष शिक्षा की मान्यता भी शामिल हो जिसके बिना अधिकार केवल मात्र भूसी के समान है। अभी तक यह न्यायालय ऐसे सब प्रयासों को निरन्तर रूप से

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



यह कह कर अविधिमान्य घोषित करता रहा है कि वे उन अधिकारों का न्यूनन करते हैं तथा उन्हें छीन लेते हैं जिनके द्वारा ऐसे निबन्धनों पर सम्बन्धन या मान्यता देने की बात कही गई है जो अनुच्छेद 30(1) के अधीन दिए गए उसके अधिकारों के अभ्यर्पण के बराबर हैं। इसके अतिरिक्त, चूंकि सम्बन्धन के बिना अनुच्छेद 30(1) के अधीन दिए गए अधिकार का अर्थपूर्ण प्रयोग नहीं किया जा सकता, इसलिए जो सम्बन्धन दिया जाए वह उस अधिकार से सुसंगत होना चाहिए और न यही हो सकता है कि जो कुछ वह प्रत्यक्ष रूप से नहीं कर सकता उसे वह अप्रत्यक्ष रूप से प्राप्त करने की कोशिश करे।

(न्या० जगनमोहन रेड्डी)

जहां तक इस पहलू का सम्बन्ध है, मेरा मत है कि ऐसे विनियम की भांति विनियम विहित करना जिसका मैंने उल्लेख किया है और इसे अल्पसंख्यक संस्था की मान्यता या सम्बन्धन के लिए पुरोभाव्य शर्त बनाना राज्य के लिए अनुज्ञेय है। तथापि मान्यता या सम्बन्धन की ऐसी शर्तें विहित करना अनुज्ञेय नहीं है जिससे अल्पसंख्यक वर्ग के, अपनी रूचि की शिक्षा संस्थाओं की संस्थापना और प्रशासन के, अधिकार का ह्रास होता हो। निस्संदेह सम्बन्धन या मान्यता का अनुच्छेद 30(1) में उल्लेख नहीं किया गया है किन्तु स्थिति यह है कि अल्पसंख्यक संस्थाओं को मान्यता या सम्बन्धन देने से इन्कार करने का जब तक कि (अल्पसंख्यक) उन संस्थाओं के प्रशासन का अधिकार न छोड़ दें प्रभाव यह होगा, कि अनुच्छेद 30(1) के द्वारा गारण्टीकृत अधिकार पूर्णतः भ्रामक और वास्तव में एक तंग करने वाला भ्रम हो जाएगा। ... ...

... ... ...

सहायता या मान्यता की बाबत जो कुछ ऊपर कहा गया है वह विश्वविद्यालय से किसी कालेज की मान्यता को भी समान रूप से लागू होता है क्योंकि ऐसी मान्यता के कारण विद्यार्थी विश्वविद्यालय की उपाधि प्राप्त नहीं कर सकेगा जिसे वृत्ति और लोक सेवा में भविष्य नियोजन के लिए पार-पत्र के रूप में मान्यता दी गई है।

... ... ...

यदि अल्पसंख्यक के सम्बद्ध कालेजों के संघटक कालेज में संपरिवर्तन से अनुच्छेद 30(1) का उल्लंघन होता है तो यह तथ्य कि ऐसा संपरिवर्तन उस स्कीम के अनुसरण में है, जो प्रत्येक कालेज को

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh


स्वशासी होने की मन्जूरी देती है, आक्षेपित उपबंधों को अवैध घोषित करने से नहीं रोकेगा।

(रेखांकन हमने किया है)

... ... ...

(न्या० खन्ना)

"पिछले कई वर्षों में इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि मान्यता अथवा सम्बन्धन के बिना अनुच्छेद 30(1) के अधीन शिक्षा संस्थाओं की स्थापना करने और उनका प्रशासन करने के अधिकार का वस्तुत: अथवा सार्थक रूप से प्रयोग नहीं किया जा सकता।

... ... ...

इस विषय का सार यह है कि कोई भी शिक्षा संस्था यदि वह सम्बन्धन अथवा मान्यता चाहती है तो वह जिसे किसी धर्म या भाषायी अल्पसंख्यक वर्ग द्वारा स्थापित किया गया हो, विधानमण्डल द्वारा अथवा विश्वविद्यालय द्वारा विनियम से पूर्ण उन्मुक्ति प्राप्त नहीं कर सकता है किन्तु अनुज्ञेय विनियमों का स्वरूप उनके प्रयोजन पर ही निर्भर करेगा। जैसा कि हमने कहा है ऐसे विनियम केवल तभी अनुज्ञेय होंगे यदि वे मान्यता अथवा सम्बन्धन के उद्देश्य को बनाने या उसे प्रोन्नत करने के प्रयोजन के लिए सुसंगत हों।"

(न्या० मैथ्यू)

यह सत्य है कि यदि किसी अधिनियमिति का उद्देश्य किसी अल्पसंख्यक-संस्था को, भले ही अप्रत्यक्ष रूप से, उसके मूल अधिकारों के प्रयोग को त्याग देने के लिए बाध्य करना हो तो वे उपबंध जिनका ऐसा प्रभाव होगा अल्पसंख्यक-संस्था के विरुद्ध शून्य या अप्रवर्तनीय होंगे। सम्बन्धन की कीमत संविधान के अनुच्छेद 30(1) द्वारा प्रदत्त अल्पसंख्यक-संस्था की स्थापना और प्रशासन के अधिकार को पूर्ण रूप से त्याग देना नहीं हो सकती। अत: मामले का यह पहलू इस प्रश्न को उत्पन्न करता है कि क्या अधिनियम के किसी उपबन्ध का आशय अल्पसंख्यक संस्था के लिए ऐसा प्रभाव रखना है। भले ही वह आशय कानूनी उपबन्धों के अभिव्यक्त शब्दों से प्रकट न हो, किन्तु फिर भी वे उपबन्ध दूशित होंगे यदि वह उनका आवश्यक परिणाम या प्रभाव है।

(न्या० बेग)

तथापि सम्बन्धन विश्वविद्यालय के मामले में, अल्पसंख्यक वर्ग की संस्था को सम्बन्धन से इस एकमात्र आधार पर कि यह अल्पसंख्यक

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



वर्ग के प्रबन्ध में है, चाहे वह अल्पसंख्यक वर्ग, धर्म अथवा भाषा पर आधारित हो, अथवा मनमाने या अतर्कपूर्ण आधार पर इन्कार नहीं किया जा सकता। ऐसी इन्कारी अनुच्छेद 14 और 15(1) का अतिक्रमण करने वाली होगी और न्यायालय उसे अवैध घोषित कर देंगे। पुन: अनुच्छेद 13(2) राज्य को अनुच्छेद 30(1) के अधीन अधिकार छीनने अथवा उन्हें न्यून करने से प्रतिषिद्ध करता है। चूंकि राज्य अनुच्छेद 30(1) के अधीन प्रदत्त अधिकार को प्रत्यक्षत: छीन नहीं सकता अथवा न्यून नहीं कर सकता अत: राज्य सम्बन्धन का अनुदान ऐसी शर्तों के अधीन बनाकर जिससे प्रतिषिद्ध परिणाम पर पहुंचा जाए, अप्रत्यक्ष रूप से उस अधिकार को छीन नहीं सकता अथवा न्यून नहीं कर सकता।

(न्या० द्विवेदी)

7. उपरोक्त उद्धृत मामलों की ध्यानपूर्वक और विस्तारपूर्वक समीक्षा करने पर निम्नलिखित स्थिति सामने आती है—

(1) जबकि अनुच्छेद 30 निस्संदेह धार्मिक स्वतन्त्रता, स्वायत्ता और उसकी व्यष्टिकता परिरक्षित रखता है, ऐसा कोई मूल अधिकार नहीं है, जिसके अनुसार संस्था अधिकारपूर्वक सहायता या सम्बन्धन का दावा कर सके। यथास्थिति, राज्य या विश्वविद्यालय शिक्षा का उत्तम स्तर बनाए रखने के लिए युक्तियुक्त शर्तें अधिकथित कर सकता है किन्तु ऐसा करने के बहाने सम्बन्धन मन्जूर करने से इन्कार करना उक्त संस्था की व्यष्टिकता और वैयक्तित्व को नष्ट करने का बहाना नहीं बनाया जा सकता। यदि ऐसा किया जाता है तो नितान्त मनमाना और अयुक्तियुक्त होने के साथ-साथ यह अनुच्छेद 30 के उपबन्धों के स्पष्ट उल्लंघन के समान होगा, क्योंकि जो काम प्रत्यक्ष रूप से नहीं किया जा सकता, वह अप्रत्यक्ष रूप से कर दिया जाएगा।

(2) जबकि राज्य या विश्वविद्यालय को यह पूर्ण अधिकार है कि वह संस्थाओं पर एक निश्चित पाठ्यक्रम अपनाए जाने का आग्रह करे, तभी सम्बन्धन के लिए उनपर विचार किया जा सकता है। किन्तु इन शर्तों द्वारा किसी भी प्रकार संस्था के प्रबन्ध या प्रशासन की स्वतन्त्रता नहीं छीनी जानी चाहिए जिससे कि वह विश्वविद्यालय या राज्य का पिछलगु मात्र बन जाए। यह बिलकुल भी अनुज्ञेय नहीं है क्योंकि इस प्रकार की कारंवाई से प्रत्यक्षत: संविधान के अनुच्छेद 30 का उल्लंघन होता है।

(3) जैसा कि ऊपर इंगित किया जा चुका है, सम्बन्धन मंजूर

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



करने से पहले शर्तें विहित करते समय राज्य या विश्वविद्यालय प्रश्नगत संस्था से यह आग्रह करके उसकी व्यष्टिकता या वैयक्तित्व को नष्ट या ध्वंस्त नहीं कर सकता कि वह एक विशेष प्रकार का पाठ्यक्रम या अध्ययनक्रम अपनाए जो संस्थाओं द्वारा प्राप्तव्य लक्ष्यों, उद्देश्यों और आदर्शों के प्रत्यक्षत: विपरीत हो।

(4) असंगत आधारों पर एक विशेष प्रयोजन के लिए सम्बन्धन मंजूर न करना जिससे कि वह संस्था कठोर आदेशों, समादेशों या संकल्पों के अधीन कर दी जाए, जो उस प्रमुख प्रयोजन के विपरीत हो, जिसके लिए संस्था बनाई गई है और शिक्षा के व्यापक हित में अधिरोपित करने वाली वास्तविक और युक्तियुक्त शर्तों का आग्रह करने के बीच एक बहुत बारीक अन्तर रखा है।

8. इस प्रकार ऊपर वर्णित सभी नजीरों में यह स्पष्ट अधिकथित है कि जबकि सम्बन्धन अपने आप एक मूल अधिकार नहीं है फिर भी ऐसे निबन्धनों, शर्तों या स्थिति पर सम्बन्धन मन्जूर करने से इन्कार करना जिनसे संस्था की प्रगति और स्वायत्तता व्यावहारिक रूप से खत्म हो जाए, संविधान के अनुच्छेद 30 के उल्लंघन में होने के कारण अनुज्ञेय नहीं है। विषय के अन्य पहलुओं पर जाना हमारे लिए आवश्यक नहीं है क्योंकि इस मामले-विशेष में उनसे हमारा कोई सरोकार नहीं है।

9. अब हम वर्तमान मामले के तथ्यों पर विचार करेंगे। हम यह कहने के लिए बाध्य हैं कि इन तथ्यों से एक बहुत ही हताश और उद्विग्न करने वाला दृष्टिकोण प्रकट होता है जो विश्वविद्यालय और बिहार सरकार ने प्रदर्शित किया है। वस्तुतः मिली तालीमी मिशन बिहार, रांची को संबंधन से इन्कार करने का कारण और हेतु इतना स्पष्ट और प्रकट है कि बिहार राज्य के स्थायी काउंसेल भी अपने भरसक प्रयास के बावजूद विश्वविद्यालय की कार्रवाई का समर्थन करने में असफल रहे। हमें वस्तुत: आश्चर्य है कि देश के सर्वोच्च न्यायालय में अपने शपथपत्र फाइल करने में प्रत्यर्थी ने ऐसा व्यवहार किया है और इस न्यायालय के व्यक्त आदेशों का निर्भीक होकर उल्लंघन किया है। जो कुछ हमने कहा है, उसके समर्थन में प्रश्नगत संस्था का संक्षिप्त इतिहास देना आवश्यक है।

10. विवादग्रस्त संस्था मिली तालीमी मिशन बिहार, रांची एक सोसाइटी के अधीन टीचर्स ट्रेनिंग कालेज के नाम से शुरू हुआ था। सोसाइटी की स्थापना बहुत पहले सन् 1972 में की गई थी, हालांकि स्वयं कालेज जुलाई, 1977 में स्थापित किया गया और चलाया गया था। तारीख 22-9-1977 को संस्था ने संबंधन या मान्यता देने के लिए सरकार से आवेदन किया जिसके

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



उत्तर में सरकार ने एक अत्यन्त असाधारण आदेश पारित करके विश्वविद्यालयों को संबंधन इस विचित्र आधार पर इंकार करने का निदेश दिया कि गैर शासकीय शिक्षकों के प्रशिक्षण कालेजों द्वारा संबंधन के सभी प्रस्ताव अस्वीकार कर दिए जाएं तथा किसी भी छात्र को प्राइवेट रूप में बैठने की अनुमति न दी जाए। फिर भी अल्पसंख्यक संस्था की स्थिति में राज्य सरकार ने पैरा (1) के उप-पैरा (3) में यह कहा था—

> "(3) उपरोक्त विनिश्चय सं० (1) और (2) द्वारा वर्णित उक्त विनिश्चय अल्पसंख्यक समुदाय द्वारा चलाए गए कालेजों की दशा में लागू नहीं होगा। उनकी इस स्थिति में इस बाबत सरकार का विनिश्चय अलग से सूचित कर दिया जाएगा।"

11. उपरोक्त विवेचन की दृष्टि से संस्था को संबंधन मंजूर किए जा सकने से पूर्व यह साबित करना था कि वह अल्पसंख्यक संस्था है। तत्पश्चात् 24 फरवरी, 1978 को अपीलार्थियों ने संबंधन की मंजूरी के लिए रांची विश्वविद्यालय में आवेदन फाइल किया। इसके पश्चात् 5 जून, 1978 को बिहार गैर-शासकीय शिक्षक प्रशिक्षण कालेज अध्यादेश जारी किया गया। तारीख 15 जून, 1978 को सरकार ने अपीलार्थी के कालेज के निरीक्षण के लिए रांची विश्वविद्यालय को लिखा। तारीख 13 अगस्त, 1979 को सरकार ने यह अधिसूचित किया कि संबंधन विषयक विनिश्चय उसके तारीख 1-10-1973 के परिपत्र (उपाबंध बी) द्वारा शासित होगा। उस परिपत्र में संबंधन की मंजूरी की कुछ शर्तें दी गई थीं और यह कि अल्पसंख्यक संस्थाओं के संबंध में अंतिम विनिश्चय बाद में किया जायेगा। तत्पश्चात् पटना उच्च न्यायालय में एक रिट पिटीशन फाइल किया गया। उसमें यह विनिश्चय किया गया कि ऊपरनिर्दिष्ट अध्यादेश की धारा 2 अल्पसंख्यक प्रशिक्षण कालेजों को लागू नहीं होगी। तारीख 6 फरवरी, 1980 को बिहार सरकार के संयुक्त सचिव ने अपीलार्थी के कालेज के निरीक्षण के लिए रांची विश्वविद्यालय और रांची के उपायुक्त को पत्र भेजे। यह दिखाई देगा कि संस्था ने 1977 में संबंधन के लिए आवेदन किया था और अल्पसंख्यक संस्था होने का दावा किया था, जिसके बारे में किसी भी समय विवाद नहीं किया गया। फिर भी सरकार को अपीलार्थी के कालेज के संबंधन के बारे में विनिश्चय करने में तीन वर्ष लगे।

12. तारीख 5 मार्च, 1980 को विश्वविद्यालय प्राधिकारियों ने अपीलार्थी के कालेज का निरीक्षण किया और उसके संबंधन की सिफारिश की। इसके बाद रांची के जिला विकास अधिकारी ने 30-6-1980 को अपनी रिपोर्ट में संबंधन की सिफारिश की। किन्तु इन तथ्यों के बावजूद सरकार ने कोई अंतिम

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



विनिश्चय नहीं किया, जिसके फलस्वरूप अपीलार्थियों को संबंधन मंजूर करने के लिए सरकार को निदेश देने के लिए उच्च न्यायालय में समावेदन करना पड़ा और उच्च न्यायालय ने विनिर्दिष्ट समय के भीतर अपीलार्थी के कालेज की मान्यता और संबंधन का विनिश्चय करने के लिए सरकार को निदेश दिया। 3-11-80 को सरकार ने केवल तीन सत्रों के लिए अर्थात् 1977-78, 1978-79 तथा 1979-80 के लिए ही मान्यता मंजूर की और संबंधन के लिए अनुमोदन दिया।

13. तारीख़ 10 नवम्बर, 1980 को विश्वविद्यालय ने अपीलार्थी के कालेज को संबंधन प्रदान करने की सिफारिश करते हुए सरकार को पत्र लिखा। 22 नवम्बर, 1980 को अपीलार्थी ने स्थायी संबंधन के लिए आवेदन किया किन्तु न जाने किन कारणों से सरकार ने 27-11-80 को एक विचित्र आदेश पारित करके तारीख 3-11-80 के अपने पत्र द्वारा अपीलार्थी के कालेज को दी गई मान्यता और संबंधन का अनुमोदन रद्द कर दिया। इसी आदेश को उच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती दी गई, जिसे उच्च न्यायालय ने 18 मई, 1981 को अभिखण्डित कर दिया।

14. तत्पश्चात्, 17 अगस्त, 1981 को बिहार राज्य ने इस न्यायालय के समक्ष विशेष इजाजत अर्जी फाइल की, जो 30-11-81 को खारिज कर दी गई। फिर भी 7-9-81 को अपीलार्थियों के कालेज के साथ-साथ तीन अल्पसंख्यक कालेजों को सरकार द्वारा मान्यता और संबंधन प्रदान किया गया।

15. अन्ततोगत्वा, उच्च न्यायालय को पुनः दखल देना पड़ा। उसने राज्य सरकार को निदेश दिया कि स्थायी मान्यता के लिए अपीलार्थियों द्वारा दिए गए आवेदन-पत्र का निपटारा किया जाए, जो उन्होंने 22-11-80 को फाइल किया था। 16-9-82 को बिहार के शिक्षा आयुक्त ने अपीलार्थी के कालेज को संबंधन देने की सिफारिश की, जो इस प्रकार है—

> "इस संबंध में संयुक्त सचिव की टिप्पणी पृष्ठ 62-64 पर देखने का कष्ट करें। उच्च न्यायालय का निर्णय भी पृष्ठ 137 पर देख लें जिसके अनुसार अध्यादेश के निर्बन्धन अल्पसंख्यक संस्थाओं को लागू नहीं हैं। इसके अतिरिक्त इस संस्था का निरीक्षण भी करवाया गया है, जिसमें स्थानीय अधिकारी उपस्थित थे। सर्वसम्मति से यह सिफारिश की गई कि इस प्रशिक्षण संस्था को संबंधन प्रदान किया जाए। विश्वविद्यालय की सिफारिश पृष्ठ 150 पर देखने का कष्ट करें। तद्नुसार इस कालेज को इस समय 1980-81 से 1982-83 के सत्रों के लिए मान्यता और संबंधन अस्थायी तौर पर प्रदान करें।"

16. उपरोक्त सिफारिश के परिशीलन से पता चलता है कि प्रश्नगत

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



संस्था का निरीक्षण स्थानीय प्राधिकारियों एवं विश्वविद्यालय के प्राधिकारियों की उपस्थिति में किया गया था, जिन्होंने सर्वसम्मति से यह सिफारिश की थी कि यह संस्था एक अल्पसंख्यक संस्था है और इसे कम से कम 1981-82 से 1982-83 के सत्रों के लिए संबंधन और मान्यता प्रदान की जाए। इसके बावजूद कुछ भी विशेष कार्रवाई की गई प्रतीत नहीं होती, जिससे बाध्य होकर अपीलार्थियों ने अपने कालेज के छात्रों की, जिन्होंने 1982-83 सत्र पास किया था, परीक्षा के लिए 3 मई, 1983 को उच्च न्यायालय में एक दूसरा रिट पिटीशन फाइल किया। किन्तु उच्च न्यायालय ने वह रिट पिटीशन प्रारम्भ में ही खारिज कर दिया। इस प्रकार विशेष इजाजत लेकर इस न्यायालय में अपील फाइल की गई है।

17. इजाजत दिए जाने के बाद हमने प्रत्यर्थियों को निदेश दिया कि प्रदर्श जे (शिक्षा आयुक्त की सिफारिश) और वे आंकड़े पेश किए जाएं, जिनके आधार पर सम्बद्ध प्राधिकारियों ने यह सिफारिश की थी कि अपीलार्थी के कालेज को संबंधन प्रदान किया जाए किन्तु आज तक उन दस्तावेजों को पेश करने के लिए कोई प्रयास नहीं किया गया और बिहार राज्य के विद्वान् काउंसेल राज्य सरकार की ओर से इस अत्यन्त असाधारण कार्रवाई के लिए कोई स्पष्टीकरण देने में असमर्थ रहे।

18. राज्य ने शपथ-पत्र फाइल करके सभी प्रकार के अभिवाक् उठाए हैं, जो राज्य के काउन्सेल द्वारा समर्थित नहीं किए जा सके। यह दिखाई देगा कि व्यवहारिक दृष्टि से, सरकार ने ऐसे कोई कारण नहीं दिए कि अनेक प्राधिकारियों की सिफारिश के बावजूद जो पूर्ण और उचित निरीक्षण के बाद की गई थीं, संबंधन देने से इंकार क्यों किया गया। प्रत्यर्थियों द्वारा फाइल किए गए शपथ-पत्रों में से एक शपथ-पत्र के पैरा 7 में यह उल्लेख किया गया कि संबंधन मंजूर करने से पहले संस्था द्वारा निम्नलिखित शर्तें पूरी की जानी चाहिएं—

(क) 1:15 के अनुपात में पूर्णकालिक अर्हित प्रधानाचार्य और प्राध्यापकगण हों;

(ख) उस संस्था से एक मान्यता प्राप्त हाईस्कूल सम्बद्ध हो;

(ग) उसके पास अपनी पर्याप्त भूमि हो जिससे कि कक्षाओं, छात्रावासों, खेल मैदानों, प्राध्यापकों के आवासों, खेलकूद, कैंटीन आदि के लिए पर्याप्त जगह सुलभ हो सके तथा कालेज स्कूलों की तरह दिन के समय चलना चाहिए;

(घ) प्रवेश रजिस्टर, उपस्थिति रजिस्टर उचित रूप से रखे गए हों;

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



(ङ) किसी भी दशा में वह छात्रों से प्रतिव्यक्ति फीस या ट्यूशन फीस नहीं लेगी;

(च) कम से कम एक चौथाई कर्मचारियों के लिए आवास सुविधा होनी चाहिए ;

(छ) कम से कम 1/5 हिस्सा छात्रों को छात्रावास सुविधा दी जाए ;

(ज) कालेज चलाने के लिए एक स्थायी आय स्रोत हो ।

19. प्रकट है कि यदि ये शर्तें पूरी कर दी जाती हैं, तभी संबंधन स्वयं सरकार के विनिश्चयों और निष्कर्षों पर आमतौर पर दिया जा सकता है। अपीलार्थियों द्वारा फाइल किए गए शपथ-पत्र के उत्तर में प्रतिवाद था कि संस्था के निरीक्षण के बाद निरीक्षक-दल ने देखा कि संस्था में निम्नलिखित कमियां हैं—

"(i) वहां कोई पूर्णकालिक अर्हित प्रधानाचार्य या प्राध्यापकगण नहीं थे ।

(ii) उसके साथ कोई मान्यता प्राप्त स्कूल संबद्ध नहीं था।

(iii) कालेज सायंकाल में चलता है, जिससे स्कूलों में जो दिन के समय चलते हैं, कक्षाओं का प्रयोग करना असाध्य हो जाता है ।

(iv) कालेज के पास अपना कोई भवन नहीं है ।

(v) कालेज के पास कोई उचित पुस्तकालय और प्रयोगशाला नहीं है ।"

20. बड़ी विचित्र बात है कि जबकि उक्त संस्था का निरीक्षण करने के बाद एक पूर्व विशेषज्ञ समिति का निष्कर्ष था कि वह सुव्यवस्थित है, किन्तु बाद में सरकार ने विशेषज्ञ समिति द्वारा प्रस्तुत आंकड़ों का हवाला दिए बिना, जोकि प्रदर्श-जे का आधार था, ऐसा प्रतीत होता है कि उसे अकस्मात छोड़ दिया और प्रतिवाद किया कि कमियों की दृष्टि से और शर्तों की पूर्ति न करने की दृष्टि से संबंधन देना संभव नहीं है। उसने इस बात का भी उल्लेख नहीं किया कि किस ढंग से और किस हद तक शिक्षा आयुक्त की सिफारिश और वह सामग्री जिस पर वह सिफारिश आधारित थी, गलत है और पांच नई शर्तें क्यों अधिरोपित की गई हैं ।

21. शिक्षा आयुक्त की रिपोर्ट और उसके विवरण पेश करने के लिए प्रत्यर्थियों को इस न्यायालय द्वारा बार-बार आदेश दिए जाने के बावजूद उसके अनुसार कार्रवाई की गई और बहुत बाद में यह दर्शाने का प्रयास किया गया कि संस्था में कुछ कमियां थीं। अत्यन्त महत्वपूर्ण और निश्चायक सामग्री पेश न किए जाने के कारण हम प्रत्यर्थियों के पश्चात्वर्ती शपथ-पत्र को स्वीकार करने

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



में असमर्थ हैं। वह शपथ-पत्र को स्वीकार करने में असमर्थ हैं। वह शपथ-पत्र बाद में ही सोच-समझकर तैयार किया गया है।

22. राज्य सरकार ने अपने प्रतिशपथ-पत्र में यह उल्लेख किया है कि वह कुछ शर्तों की पूर्ति पर अपीलार्थी के कालेज को संबंधन देने के लिए तैयार है। फिर भी, हमारा समाधान हो गया है कि यह एक बहाना मात्र है अथवा असली मुद्दे को छिपाने का एक ढकोसला मात्र है। वस्तुतः यदि सरकार का उद्देश्य काम करना है तो उसे वह दस्तावेज पेश करने का साहस दिखाना चाहिए जिस पर प्रदर्श-जे आधारित था। उसे पेश करने हेतु हमारे आदेशों के बावजूद उसे जान-बूझकर दबाया गया। अतः हमें बाध्य होकर राज्य सरकार के विरुद्ध यह निष्कर्ष निकालना पड़ा कि यदि वह सामग्री जिस पर रिपोर्ट आधारित थी, पेश कर दी जाती तो उससे सरकार का भण्डाफोड़ हो जाता और वस्तुस्थिति सामने आ जाती अर्थात् यह कि अपीलार्थियों की संस्था राज्य द्वारा अधिरोपित समस्त शर्तों की पूर्ति करती है।

23. इस प्रकार, स्थिति यह है कि राज्य ने केवल भ्रामक आधारों पर संबंधन प्रदान करने से इन्कार किया है, जो विद्यमान नहीं हैं और उसने शिक्षा आयुक्त की सिफारिश पर विचार नहीं किया, जो संबंधन प्रदान करने के लिए पूर्ण निरीक्षण के बाद की गई थी। दूसरे शब्दों में, सम्बन्धन कोई पर्याप्त कारण बताए बिना इन्कार किया गया और ऐसी इन्कारी से संविधान के अनुच्छेद 30 के उपबंधों का उल्लंघन होता है।

24. ऊपर दिए गए कारणों से हमारा निष्कर्ष है कि यह एक उपयुक्त मामला है, जिसमें इस न्यायालय को उस सरकारी कार्रवाई को अवैध घोषित करने के लिए कदम उठाना चाहिए, जो संविधान के अनुच्छेद 30 का उल्लंघन करती है और जो हमारे निर्णय में उद्धृत विभिन्न नजीरों में इंगित निदेशक सिद्धांतों के अन्तर्गत नहीं आती। कहने का आशय है कि चूंकि सरकार ने शिक्षा आयुक्त की सिफारिश पसन्द नहीं की और वह अप्रकट कारणों से संबंधन मंजूर करने के लिए तैयार नहीं थी, इसलिए सरकार की कार्रवाई अधिकारिता का आभासी प्रयोग था जिससे अपीलार्थियों की संस्था अपने सांविधानिक अधिकारों से वंचित हो गई।

25. आमतौर पर यह न्यायालय ऐसे मामलों में खर्च मंजूर नहीं करता किन्तु जिस ढंग से राज्य सरकार ने व्यवहार किया है और अपने सांविधानिक कर्तव्य का पालन करने में अनिच्छा दिखाई है तथा कुछ दस्तावेजों को पेश करने के हमारे आदेशों की अवज्ञा करने का भी प्रयास किया है, उसे ध्यान में रखते हुए हमें राज्य पर भारी खर्च अधिरोपित करना होगा।

26. अतः हम 5,000/- (पांच हजार रुपये केवल) के खर्च सहित यह

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



अपील मंजूर करते हैं। यह राशि अपीलार्थियों को आज से तीन मास के भीतर दी जाएगी, उच्च न्यायालय का वह आदेश अपास्त करते हैं, जिसके द्वारा रिट पिटीशन आरम्भ में ही खारिज कर दिया था तथा सरकार के उस आदेश को भी खारिज करते हैं, जिसके द्वारा संबंधन से इन्कार किया था तथा सरकार को अत्यन्त कड़ाई से यह निदेश देते हैं कि अपीलार्थियों के कालेज को संबंधन प्रदान किया जाए और 1980-81 और 1981-82 तथा 1982-83 के सत्रों के छात्रों को लिखित और प्रायोगिक दोनों परीक्षाओं में बैठने की अनुमति दी जाए। फिर भी हम यह कहना चाहेंगे कि यदि राज्य या विश्वविद्यालय के पास उपयुक्त कारण और पर्याप्त सामग्री है जो यह दर्शाती हो कि अपीलार्थियों की संस्था ने उन शर्तों की पूर्ति नहीं की है, जो इसके बाद अधिरोपित की जा सकती हैं, तो वह संबंधन वापस ले सकती है बशर्ते कि अधिरोपित शर्तें युक्तियुक्त और न्यायोचित हों।

**न्या० सब्यसाची मुखर्जी—**

27. मैं अपने विद्वान् बन्धु न्या० फजल अली द्वारा तैयार किए गए प्रस्थापित आदेश से सहमत हूं। इस अपील का निपटारा करने के लिए यह कहना पर्याप्त है कि 5 मार्च, 1980 को विश्वविद्यालय प्राधिकारियों ने अपीलार्थियों के कालेज का निरीक्षण किया और उसके संबंधन की सिफारिश की और उसके बाद संबंधन की सिफारिश करते हुए 30 जून, 1980 को सरकार द्वारा रिपोर्ट दी गई। किन्तु इस सबके बावजूद सरकार द्वारा कोई अन्तिम विनिश्चय नहीं किया गया, जिसके फलस्वरूप अपीलार्थियों को उच्च न्यायालय से यह निवेदन करना पड़ा कि सरकार को यह निदेश दिया जाये कि विवादग्रस्त अवधि के भीतर अपीलार्थियों के कालेज को मान्यता और संबंधन के विषय पर विनिश्चय किया जाए। तारीख 3 नवम्बर, 1980 को सरकार ने तीन सत्रों अर्थात् 1977-78, 1978-79 और 1979-80 के लिए मान्यता तथा संबंधन के लिए अनुमोदन प्रदान किया। तारीख 10 नवम्बर, 1980 को विश्वविद्यालय ने संबंधन की सिफारिश करते हुए सरकार को लिखा। तारीख 22 नवम्बर, 1980 को अपीलार्थियों ने स्थायी संबंधन की मंजूरी के लिए आवेदन किया किन्तु सरकार ने 27 नवम्बर, 1980 को एक आदेश पारित करके 3 नवम्बर, 1980 के अपने पत्र द्वारा अपीलार्थी के कालेज को दी गई मान्यता तथा संबंधन का अनुमोदन रद्द कर दिया। इस आदेश को उच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती दी गई। उच्च न्यायालय ने 18 मई, 1981 को 27 नवम्बर, 1980 का उक्त आदेश अभिखण्डित कर दिया। तारीख 17 अगस्त, 1981 को बिहार राज्य ने इस न्यायालय के समक्ष एक विशेष इजाजत अर्जी फाइल की जो 30 नवम्बर, 1981 को खारिज कर दी गई।

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



उच्च न्यायालय से पुनः यह आवेदन किया गया कि राज्य सरकार को यह निदेश दिया जाए कि स्थायी मान्यता के लिए अपीलार्थियों के आवेदन का निपटारा किया जाए, जो उन्होंने 22 नवम्बर, 1980 को फाइल किया था। 16 सितम्बर, 1982 को बिहार के शिक्षा आयुक्त ने अपीलार्थियों के कालेज को संबंधन प्रदान करने की अपनी सिफारिश की। उसमें से उद्धरण मेरे विद्वान् बन्धु के निर्णय में वर्णित किए गए हैं। अपनी सिफारिश में शिक्षा आयुक्त ने सिफारिश की थी कि कालेज को इस समय 1981-82 और 1982-83 सत्रों के लिए अस्थायी आधार पर मान्यता एवं संबंधन प्रदान कर दिया जाए। तत्पश्चात् एक दूसरा रिट पिटीशन फाइल किया गया और अपीलार्थी के कालेज के छात्रों की परीक्षा के लिए कुछ भी नहीं, जिन्होंने 1982-83 सत्र पास कर लिया था। किन्तु उच्च न्यायालय ने यह रिट पिटीशन आरम्भ में ही खारिज कर दिया। यह अपील उक्त आदेश से ही उत्पन्न हुई है।

28. कुछ आंकड़े थे, जो विशेष समिति ने जुटाए थे और प्रदर्श जे का आधार थे। प्रदर्श जे को पेश करने के लिए पहले भी आदेश दिया गया था। वह पेश नहीं किया गया है और न ही कोई स्पष्टीकरण दिया गया है। मैं अपने विद्वान् बंधु से सहमत हूं कि शपथ-पत्रों से यह स्पष्ट है कि व्यावहारिक दृष्टि से राज्य ने ऐसे कोई कारण नहीं दिए हैं कि अनेक प्राधिकारियों की सिफारिश के बावजूद, जो पूर्ण और उचित निरीक्षण के बाद की गई थी, सम्बन्धन देने से इन्कार क्यों किया गया। सरकार ने कहा था कि यदि कुछ शर्तें पूरी कर दी जाती हैं तो सम्बन्धन प्रदान करने में कोई आपत्ति नहीं है। पेश किए गए अभिलेख से तथा प्रदर्श जे को पेश न करने से निकाले गए निष्कर्षों से भी यह स्पष्ट नहीं है कि ये शर्तें सारतः पूरी नहीं की गई हैं। अतः ऐसा प्रतीत होता है कि मैं अपने विद्वान् बंधु से ससम्मान सहमत हूं कि यह उपदर्शित करने के लिए कोई उपयुक्त या उचित कारण पेश नहीं किए गए कि अपीलार्थियों को सम्बन्धन क्यों प्रदान नहीं किया गया तथा इस कालेज को सम्बन्धन प्रदान करने के लिए शिक्षा आयुक्त की सिफारिशों और कारणों पर उचित रूप से विचार क्यों नहीं किया गया।

29. प्रत्यर्थियों द्वारा फाइल किए गए शपथ-पत्रों के पैरा 7 से यह प्रकट है कि सम्बन्धन प्रदान करने से पहले संस्था द्वारा कुछ शर्तें पूरी की जानी चाहिएं। इन शर्तों का उल्लेख मेरे विद्वान् बंधु के निर्णय में किया गया है। साथ ही अपीलार्थियों द्वारा फाइल किए गए शपथ-पत्रों से यह प्रकट होता है कि राज्य का प्रतिवाद था कि निरीक्षक-दल द्वारा निरीक्षण के बाद यह बताया गया कि पांच शर्तों की पूर्ति नहीं की गई है। मैं सहमत हूं कि यह विचित्र बात है कि जब कि संस्था का निरीक्षण करने के बाद पहली विशेषज्ञ समिति के निष्कर्ष के

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



अनुसार वह सुव्यवस्थित थी किन्तु बाद में ऐसा प्रतीत होता है कि सरकार ने विशेष समिति द्वारा प्रस्तुत आंकड़ों का हवाला दिए बिना यह मत अपना लिया कि कुछ शर्तों की पूर्ति नहीं की गई है। हमारे समक्ष कोई अकाट्य सामग्री या विश्वसनीय साक्ष्य पेश नहीं किया गया कि कोई उचित निरीक्षण किया गया था और तथ्य के रूप में पांच अभिकथित दोष पाए गए थे। मैं सहमत हूं कि इस मामले के तथ्यों के सन्दर्भ में तथा प्रदर्श जे पेश न करने के सम्बन्ध में कुछ शर्तों की पूर्ति न करने का अभिकथित अभिवाक् है, बहाना था। परिणामतः इस मामले के तथ्यों और परिस्थितियों की पृष्ठभूमि में सम्बन्धन मंजूर न करने में सरकार की कार्रवाई कारणविहीन कार्रवाई है और एक मनमानी कार्रवाई है। अकेले इसी आधार पर मैं अपने विद्वान् बंधु के प्रस्थापित आदेश से सहमत हूं। मेरे निष्कर्ष के अनुसार प्रत्यर्थियों की कार्रवाई मनमानी और अयुक्तियुक्त है। अतः मेरे लिए आवश्यक नहीं है कि मैं इस मामले में संविधान के अनुच्छेद 30 के बारे में अपने विचार प्रकट करूं। संविधान में अनुच्छेद 30 का समावेश शिक्षा संस्थाओं को संस्थापित करने और चलाने के अल्पसंख्यकों के अधिकारों की रक्षा और संरक्षण के उच्च तथा महान प्रयोजन के लिए किया गया था। इस मामले में मेरा यह निष्कर्ष नहीं है कि अपीलार्थी के कालेज को सम्बन्धन मंजूर न करने में किसी शिक्षा संस्था के विरुद्ध इस आधार पर कोई विभेद हुआ है कि यह धर्म या भाषा पर आधारित किसी अल्पसंख्यक समुदाय के प्रबन्ध में थीं। प्राधिकारियों की ओर से यह अक्रियता थी या मनमानेपन की कार्रवाई थी। ऐसी अयुक्तियुक्त और मनमानी कार्रवाइयों और अक्रियताओं से बहुसंख्यक या अल्पसंख्यक दोनों समुदायों की शिक्षा संस्थाओं या अन्य संस्थाओं को नुकसान उठाना पड़ता है और समुचित मामलों में न्यायालय को अल्पसंख्यकों की स्वतन्त्रता तथा अधिकारों की रक्षा करते हुए संविधान के अनुच्छेदों की मदद या सहारा लिए बिना अनुतोष प्रदान करना चाहिए। इस मामले में कोई साक्ष्य या कोई भी गम्भीर अभिकथन दिखाई नहीं पड़ता कि सम्बन्धन अपीलार्थी की संस्था को इस आधार पर नहीं दिया गया था कि वह अल्पसंख्यक संस्था है। मैं अपने विद्वान् बंधु न्या० फजल अली द्वारा प्रस्थापित आदेश से, ससम्मान, सहमत हूं।

कृ०

अपील मंजूर की गई।

---

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

# सुदर्शन चिट्स (इण्डिया) लिमिटेड

बनाम

# जी० सुकुमारन पिल्लै और अन्य

**(16 अगस्त, 1984)**

(न्यायाधिपति डी० ए० देसाई, वी० बालकृष्ण एराडी और वी० खालिद)

**कम्पनी अधिनियम, 1956 (1956 का 1)—धारा 446 (2)—कम्पनी न्यायालय द्वारा दिये गये परिसमापन आदेश को अपील न्यायालय द्वारा प्रास्थगित रखने की स्थिति में न्यायालय की अधिकारिता—कम्पनी का परिसमापन करने वाले कम्पनी न्यायालय के आदेश को अपील न्यायालय द्वारा केवल प्रास्थगित करना और शासकीय समापक को अंतरिम समापक के रूप में नियुक्त करना—ऐसा आदेश तत्समय अप्रवृत्त रहता है तथा समापन कार्यवाहियां लम्बित रहती हैं और वे अस्तित्वहीन नहीं होती हैं—आदेश पारित करने वाले या प्रास्थगित रखने वाले न्यायालय को धारा 446 (2) के अधीन कार्यवाहियों का निपटारा करने की अधिकारिता प्राप्त होगी।**

अपीलार्थी-कम्पनी इस अपील में कम्पनी अधिनियम, 1956 द्वारा शासित होती है। कम्पनी के लेनदारों ने कम्पनी के परिसमापन के लिए कम्पनी अधिनियम की धारा 439 के अधीन तीन पिटीशन इस आधार पर फाइल किए थे कि कम्पनी अपने ऋणों का संदाय करने में असमर्थ थी। कम्पनी न्यायाधीश ने कम्पनी के परिसमापन के लिए आदेश पारित किया था और शासकीय समापक को कंपनी के समापक के रूप में नियुक्त किया था। इस आदेश को तीन प्रकीर्ण अपीलों में चुनौती दी गई थी। वे अपीलें केरल उच्च न्यायालय की खण्ड न्यायपीठ के समक्ष सुनवाई के लिए पेश हुई थीं। अपीलों का कम्पनी अधिनियम की धारा 391 के अधीन समझौते और करार की स्कीम का अनुमोदन करने के पश्चात् उसे यह निदेश देते हुए निपटा दिया गया था कि परिसमापन आदेश निर्णय में अधिरोपित शर्तों का पालन करने के लिए विहित समय के भीतर न्यायालय के समक्ष कम्पनी द्वारा फाइल किए जाने वाले कतिपय परिवचनों पर प्रास्थगित रखा जाएगा और यदि इस प्रकार अधिरोपित शर्तों के अनुपालन की दशा में कोई त्रुटि होने पर और/या उसमें निदेशित परिवचन फाइल न किये जाने पर न्यायाधीश द्वारा किए गए परिसमापन आदेश की पुष्टि हुई जानी जाएगी। स्कीम के कार्यान्वयन के दौरान कम्पनी के पक्ष में देय कुछ ऋणों और दावों को प्रत्युद्धृत करना आवश्यक हो गया था। इस प्रयोजन के लिए, अपील

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



न्यायपीठ के समक्ष इस निदेश के लिए प्रार्थना करते हुए एक सिविल प्रकीर्ण पिटीशन फाइल किया गया था कि कम्पनी अधिनियम की धारा 446 (2) के अधीन अन्तरिम परिसमापक को कम्पनी के दावों को वसूल करने के लिए कम्पनी न्यायालय में दावों के लिए पिटीशन फाइल करने हेतु निदेश दिया जाए जिससे कि न्यायालय के पर्यवेक्षण के अधीन समझौते और करार की स्कीम को कार्यान्वित करने के लिए अतिरिक्त सहायता और सुविधा मिल सके। न्यायालय के समक्ष यह दलील दी गई है कि कम्पनी न्यायाधीश या अपील न्यायपीठ के समक्ष परिसमापक की कोई भी कार्यवाही लम्बित नहीं थी और चूंकि कम्पनी की व्यवस्था, समझौते और करार की स्कीम के अधीन की जा रही थी, इसलिए कम्पनी न्यायालय को कम्पनी अधिनियम की धारा 446 (2) के अधीन दावे के पिटीशन ग्रहण करने की कोई अधिकारिता नहीं होगी। इस दलील को अपील न्यायपीठ का समर्थन प्राप्त हुआ और सिविल प्रकीर्ण पिटीशन नामंजूर कर दिया गया था। धारा 446 (2) (ख) के सही अर्थान्वयन पर कम्पनी के परिसमापन के लिए न्यायालय को प्रदत्त अधिकारिता का क्षेत्र और परिधि क्या है, यही विधि का एकमात्र प्रश्न है जो इस अपील में उद्भूत हुआ है। अपील मंजूर करते हुए, उच्चतम न्यायालय द्वारा,

**अभिनिर्धारित**—यदि परिसमापन पिटीशन लम्बित है, तो उसका यह अर्थ होगा कि शासकीय समापक अन्तरिम समापक के रूप में नियुक्त किया गया है जो परिसमापन की प्रक्रिया में एक प्रक्रम है, न्यायालय को जिसके समक्ष ऐसी कार्यवाही लम्बित है, कम्पनी का परिसमापन करने वाला न्यायालय कहा जा सकता है और उसे स्वयमेव धारा 446 की उपधारा (2) के खण्ड (क) से (घ) में उलिखित कार्यवाही ग्रहण करने की अधिकारिता होगी। उच्चतम न्यायालय उच्च न्यायालय की इस आशंका से प्रभावित नहीं हुआ है कि यदि ऐसी अधिकारिता परिसमापन आदेश किए जाने से पूर्व, किन्तु शासकीय समापक की अन्तरिम समापक के रूप में नियुक्ति के पश्चात्, ऐसे प्रक्रम पर न्यायालय को प्रदत्त की जानी है, तो इससे असंगत स्थिति उत्पन्न होगी। यदि परिसमापन पिटीशन असफल होता है, तो न्यायालय में लम्बित कार्यवाहियों को ऐसे न्यायालय को अन्तरित करना पड़ सकता है जो कार्यवाही ग्रहण कर सकता है। यदि कम्पनी का परिसमापन की प्रार्थना के लिए पिटीशन परिसमापन आदेश में समाप्त हो जाता है तो उपधारा (2) के अधीन प्रारम्भ की गई कार्यवाहियों पर तब तक कार्यवाही करनी होगी जब तक कि उनको अन्तिम रूप से निपटा नहीं दिया जाता क्योंकि परिसमापन आदेश परिसमापन पिटीशन के पेश किए जाने की तारीख से सम्बन्धित होगा। मामले के इस पहलू को देखते हुए कभी भी कोई विषम स्थिति उत्पन्न नहीं हो सकती। (पैरा 13)

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



अपीलार्थी-कम्पनी के सम्बन्ध में कम्पनी न्यायाधीश द्वारा दिया गया परिसमापन आदेश न तो अभिखंडित, अपास्त, रद्द या प्रत्याहृत किया गया था और न ही वापस लिया गया था। इसके प्रतिकूल, यह निदेश देने के पश्चात् कि परिसमापन आदेश प्रास्थगित रखा जाएगा, अपील न्यायपीठ ने यह निदेश दिया था कि शासकीय समापक धारा 450 में उपबन्धित अनुसार अन्तरिम समापक के रूप में कार्य करता रहेगा और वह स्वयं परिसमापन कार्यवाहियों में एक प्रक्रम है। जब परिसमापन आदेश प्रास्थगित रखा गया हो तब वह निलम्बित प्रभावकारी स्थिति में रहता है। यह तथ्य कि अपील-न्यायपीठ ने यह निदेश दिया था कि उच्च न्यायालय द्वारा मंजूर की गई स्कीम के कार्यान्वयन के लम्बित रहते हुए परिसमापन आदेश स्वयं प्रास्थगित रखा जाएगा, बिना किसी बात के यह दर्शित करता है कि आदेश न तो रद्द किया गया था, न ही वापस लिया गया था और न प्रत्याहृत अथवा अपास्त किया गया था। यह विद्यमान बना रहता था, किन्तु अप्रवृत्त था। स्कीम के अधीन कम्पनी द्वारा अपनी बाध्यताओं के निर्वहन में उसकी ओर से की गई कोई भी त्रुटि स्वयं किसी अन्य बात के बिना परिसमापन आदेश को पुनः लागू कर देगी। इसलिए परिसमापन आदेश प्रभावी रूप से अस्तित्व में था, किन्तु तत्समय अप्रवृत्त था क्योंकि इसमें पुनरुज्जीवित होने और पुनः प्रभावी बनाने की सभी भावी शक्तियां विद्यमान हैं। (पैरा 14)

यदि परिसमापन आदेश केवल प्रास्थगित रखा गया था अर्थात् वह तत्समय प्रवृत्त नहीं था किन्तु वह अस्तित्वहीन नहीं हुआ था, तो परिसमापन कार्यवाहियां वास्तव में लम्बित थीं तथा जिस न्यायालय ने परिसमापन आदेश दिया था, वह न्यायालय होगा जो कम्पनी का परिसमापन कर रहा है। यह बात भली भांति सुस्थिर है कि एक बार किया गया परिसमापन आदेश प्रत्याहृत या पुनः वापस लिया जा सकता है किन्तु जब तक उसे प्रत्याहृत नहीं किया जाता या वापस नहीं लिया जाता है, तब तक वह अस्तित्व में बना रहा है। इस मामले में यही स्थिति है। यदि परिसमापन आदेश अस्तित्वशील है तो जिस न्यायालय को ऐसा आदेश दिया था अथवा जिसने उसे प्रास्थगित किया था, उसे धारा 446 (2) का अवलम्ब लेने के पश्चात् अन्तरिम समापक को आवश्यक निदेश देने की अधिकारिता प्राप्त होगी। (पैरा 15)

मामले के अत्यन्त तकनीकी अर्थ को देखने पर भी अपीलार्थी खण्ड न्यायपीठ के समक्ष पिटीशन देने में पूर्ण रूप से न्यायोचित था क्योंकि समझौते और करार की स्कीम के कार्यान्वयन का पर्यवेक्षण करने वाली तो मात्र खण्ड न्यायपीठ थी और वह अपील में भी खण्ड न्यायपीठ ही थी जिसके समक्ष परिसमापन आदेश के विरुद्ध अपील की गई थी जिसने परिसमापन आदेश को

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



प्रास्थगित रखा था इसलिए अपील न्यायपीठ द्वारा ठीक ही निदेश वांच्छित था। (पैरा 16)

उच्च न्यायालय ने कम्पनी द्वारा पेश किए जाने वाली सामग्री और व्ययों के आधार पर दावा पिटीशन करने के लिए अंतरिम समापक को निदेश देने हेतु अपीलार्थी-कम्पनी की ओर से किए गए आवेदन को नामंजूर करके गलती की थी। दावा पिटीशन फाइल करने पर अंतरिम समापक द्वारा वसूल की गई रकम, कम्पनी को सौंप दी जानी चाहिए तथा अपीलार्थी कम्पनी न्यायालय के पर्यवेक्षण के अधीन स्कीम के कार्यान्वयन में उनका प्रयोग करने, व्यय करने और समुचित रूप से उसका विनियोग करने की बाध्यता के अधीन है। (पैरा 17)

**निर्दिष्ट निर्णय**

| | | पैरा |
|---|---|---|
| [1983] | आई० एल० आर० (1983) 1 केरल 700 : **सुदर्शन चिट्स (इण्डिया) लिमिटेड बनाम जी० सुकुमार पिल्लै;** | 1 |
| [1977] | (1977) केरल ला टॉइम्स 30 : **शासकीय समापक बनाम कादिर और अन्य;** | 3 |
| | 48 कम्पनी केसेज 432 : **फरीदाबाद कोल्ड स्टोरेज एण्ड एलाइड इण्डस्ट्री बनाम शासकीय समापक, अम्मोनिया सप्लाइज कारपोरेशन प्राइवेट लिमिटेड,** | 3 |

**सिविल अपीली अधिकारिता :** 1984 की सिविल अपील सं० 2528.

1981 की प्रकीर्ण प्रथम अपील सं० 518-20 में 1983 के सिविल प्रकीर्ण पिटीशन सं० 14913 में कर्नाटक उच्च न्यायालय के तारीख 18 अगस्त, 1983 वाले निर्णय और आदेश के विरुद्ध की गई अपील।

**अपीलार्थी की ओर से** — सर्वश्री एस० एन० कक्कड़ और शिव पूजन सिंह

**प्रत्यर्थी की ओर से** — श्री के० एम० के० नायर

**मध्यक्षेपी की ओर से** — सर्वश्री गोबिन्द भारथन और ई० एम० एस० अनाम

न्यायालय का निर्णय न्यायाधिपति डी० ए० देसाई ने दिया।

**न्यायाधिपति देसाई—**

इसमें अपीलार्थी सुदर्शन चिट्स (इण्डिया) लिमिटेड (जिसे संक्षेप में 'कम्पनी' कहा गया है) कम्पनी अधिनियम, 1956 द्वारा शासित होता है। कम्पनी के लेनदारों ने कम्पनी के परिसमापन के लिए कम्पनी अधिनियम की धारा 439 के अधीन तीन पिटीशन कम्पनी पिटीशन सं० 9/81, 8/81 और 49/81 इस आधार पर फाइल किए थे कि कम्पनी अपने ऋणों का संदाय

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



करने में असमर्थ थी। विद्वान् कम्पनी न्यायाधीश ने कम्पनी के परिसमापन के लिए आदेश पारित किया था और शासकीय समापक को कम्पनी के समापक के रूप में नियुक्त किया था। इस आदेश को 1981 की प्रकीर्ण प्रथम अपील सं० 578,579 और 520 में चुनौती दी गई थी। वे अपीलें केरल उच्च न्यायालय की खण्ड न्यायपीठ के समक्ष सुनवाई के लिए पेश हुई थीं। खण्ड न्यायपीठ का निर्णय **सुदर्शन चिट्स (इण्डिया) लिमिटेड** बनाम **जी० सुकुमारन् पिल्लै**[1] के निर्णय में प्रतिवेदित है। अपीलों का कम्पनी अधिनियम की धारा 391 के अधीन समझौते और करार की स्कीम का अनुमोदन करने के पश्चात् यह निदेश देते हुए निपटारा कर दिया गया था कि परिसमापन आदेश निर्णय में अधिरोपित का पालन करने के लिए विहित समय के भीतर न्यायालय के समक्ष कम्पनी द्वारा फाइल किए जाने वाले कतिपय परिवचनों पर प्रास्थगित रखा जाएगा और यदि इस प्रकार अधिरोपित शर्तों के अनुपालन के मामले में कोई त्रुटि होने पर और/या उसमें निदेशित परिवचन फाइल न होने पर विद्वान् न्यायाधीश द्वारा किए गए परिसमापन आदेश की पुष्टि हुई जानी जाएगी। न्यायालय द्वारा इस निमित्त दिया गया अतिरिक्त निदेश तात्विक है और उसे उद्धृत किया जा सकता है, जो इस प्रकार है :—

> "इस तारीख से चार सप्ताह के भीतर 25,00,000/-रुपए के प्रथम संदाय किए जाने पर परिसमापन आदेश प्रास्थगित रखा जाएगा और तदुपरान्त शासकीय समापक को उसकी शक्तियों और विशेषाधिकारों पर ऐसे निर्बन्धनों के अध्यधीन, जो हम इसमें निर्दिष्ट करें, अस्थायी समापक के रूप में कार्य करने के लिए नियुक्त किया हुआ माना जाएगा।"

तब से खण्ड न्यायपीठ के निर्णय में उल्लिखित समझौते और करार की स्कीम कार्यान्वित की जा रही है और हमें यह सूचना दी गई है कि 2.40 करोड़ रुपए की रकम कम्पनी के दावेदारों और लेनदारों के बीच पहले ही वितरित कर दी गई है। हमें यह भी सूचना दी गई है कि समझौते और करार की स्कीम अपील न्यायपीठ के निदेशानुसार न्यायालय के पर्यवेक्षण के अधीन बहुत ही शीघ्रतापूर्वक कार्यान्वित की जा रही है।

2. स्कीम के कार्यान्वयन के दौरान कम्पनी के पक्ष में देय कुछ ऋणों और दावों को वसूल करना आवश्यक हो गया था। इस प्रयोजन के लिए 1983 का सिविल प्रकीर्ण आवेदन सं० 14913 अपील न्यायपीठ के समक्ष इस निदेश के लिए प्रार्थना करते हुए फाइल किया गया था कि कम्पनी अधिनियम की धारा 446 (2) के अधीन अन्तरिम परिसमापन को कम्पनी के दावों को वसूल

---

[1] आई० एल० आर० (1983) 1 केरल 700.

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



करने के लिए कम्पनी न्यायालय में दावों के लिए पिटीशन फाइल करने हेतु निदेश दिया जाए जिससे कि न्यायालय के पर्यवेक्षण के अधीन समझौते और करार की स्कीम को कार्यान्वित करने के लिए अतिरिक्त सहायता और सुविधा मिलेगी। जी० सुकुमारन् पिल्लै को प्रथम प्रत्यर्थी रूप में पक्षकार बनाया गया था तथा अन्तरिम समापक को द्वितीय प्रत्यर्थी के रूप में पक्षकार बनाया गया था।

3. न्यायालय के समक्ष यह दलील दी हुई प्रतीत होती है कि कम्पनी न्यायाधीश या अपील न्यायपीठ के समक्ष परिसमापक की कोई भी कार्यवाही लम्बित नहीं थी और चूंकि कम्पनी की व्यवस्था समझौते और करार की स्कीम के अधीन की जा रही थी, इसलिए कम्पनी न्यायालय को कम्पनी अधिनियम की धारा 446(2) के अधीन दावे के पिटीशन ग्रहण करने की कोई अधिकारिता नहीं होगी। इस दलील को अपील न्यायपीठ का समर्थन प्राप्त हुआ और सिविल प्रकीर्ण पिटीशन नामंजूर कर दिया गया था। **शासकीय समापक** बनाम **कादिर और अन्य**[1] तथा **फरीदाबाद कोल्ड स्टोरेज एण्ड एलाइड इण्डस्ट्री** बनाम **शासकीय समापक, अम्मोनिया सप्लाइज कारपोरेशन प्राइवेट लिमिटेड**[2] वाले मामलों के विनिश्चयों का अवलम्ब लेते हुए न्यायालय ने यह विनिश्चय किया था कि दावे का पिटीशन फाइल करके धारा 446 (2) के खण्ड (ख) द्वारा प्रदत्त उपचार का फायदा प्राप्त करने के अधिकार का लाभ केवल ऐसे न्यायालय में प्राप्त किया जा सकता है जो कम्पनी का परिसमापन कर रहा हो। इसलिए विशेष इजाजत लेकर यह अपील की गई है।

4. विशेष इजाजत लेने के पश्चात् अन्तरिम समापक को नोटिस दिया गया था और उन्हें यह जानकारी दी गई थी कि अपील की तारीख 1 अगस्त, 1984 को अन्तिम सुनवाई की जाएगी। इस सूचना के पश्चात् भी अन्तरिम समापक सुनवाई के समय हाज़िर नहीं हुआ।

5. आल इण्डिया सबस्क्राइबर्स एसोसिएशन आफ चिट्स की ओर से उसके सचिव श्री एस० के० जैन ने न्यायालय में 1984 का सिविल प्रकीर्ण पिटीशन सं० 6062 फाइल किया था और मामले में मध्यक्षेप करना चाहा था। मध्यक्षेप मंजूर किया गया था।

6. धारा 446 (2) (ख) के सही अर्थान्वयन पर कम्पनी के परिसमापन के लिए न्यायालय को प्रदत्त अधिकारिता का क्षेत्र और परिधि क्या है, यही विधि का एकमात्र प्रश्न है जो इस अपील में उद्भूत हुआ है, और इसका मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के अनुसार उत्तर दिया जाना है।

---

[1] (1977) केरल लॉ टाइम्स 30.
[2] 48 कम्पनी केसेज 432.

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



7. धारा 446 (2) इस प्रकार है—

"446 (2). उस न्यायालय को, जो कम्पनी का परिसमापन कर रहा है, किसी अन्य तत्समय प्रवृत्त विधि में अन्तर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी, यह अधिकारिता होगी कि वह—

(क) कम्पनी के द्वारा या उसके विरुद्ध किसी वाद या कार्यवाही को,

(ख) कम्पनी के द्वारा या उसके विरुद्ध किए गए किसी दावे को (जिसके अन्तर्गत भारत में उसकी शाखाओं में से किसी के द्वारा या उसके विरुद्ध किए गए दावे आते हैं),

(ग) कम्पनी के द्वारा या उसकी बाबत धारा 391 के अधीन किया गया कोई आवेदन,

(घ) अग्रताओं विषयक किसी प्रश्न का या चाहे तो विधि चाहे तथ्य के किसी अन्य प्रश्न का भले ही वह कैसा ही क्यों न हो, जो कम्पनी के परिसमापन से संबंधित हो, या उसके दौरान पैदा हो,

ग्रहण कर ले या निपटा दे भले ही कम्पनी के परिसमापन के लिए आदेश किए जाने के पूर्व या पश्चात् अथवा कम्पनीज (अमेंडमेंट) ऐक्ट, 1960 के प्रारम्भ के पूर्व या पश्चात् ऐसा वाद या कार्यवाही संस्थित की गई थी या की जाती, अथवा ऐसा दावा या प्रश्न पैदा हुआ था या पैदा होता अथवा ऐसा आवेदन किया गया था या किया जाता है।"

8. धारा 446(2)(ख) के अर्थान्वयन के प्रश्न पर विचार करने से पूर्व उपबंध के ऐतिहासिक विकास और उसके वर्तमान स्वरूप पर ध्यान देना लाभप्रद होगा। धारा 44^(1) की पूर्ववर्ती धारा इण्डियन कम्पनीज ऐक्ट, 1913 की धारा 171 क में धारा 446(2) के समान कोई उपबंध अन्तर्विष्ट नहीं है। धारा 171 में परिसमापन कार्यवाही के प्रारम्भ पर लम्बित वादों और कार्यवाहियों की रोक के लिए उपबंध है और न्यायालय की विशेष इजाजत के सिवाय कम्पनी के विरुद्ध किसी वाद या विधिक कार्यवाहियों के प्रारम्भ के विरुद्ध रोक है। यह उपबंध कुछ उपांतरणों के साथ धारा 446(1) में पुनः अधिनियमित है। धारा 446(2) द्वारा प्रदत्त अधिकारिता के समान कम्पनी के परिसमापन के लिए न्यायालय को अधिकारिता प्रदत्त करने वाला कोई विनिर्दिष्ट उपबंध नहीं था। उपधारा (2) कम्पनी के परिसमापन के लिए न्यायालय की अधिकारिता में वृद्धि के लिए अन्तःस्थापित की गई थी ताकि परिसमापन कार्यवाहियों का निपटारा सुकर बनाया जा सके। इस प्रकार अधिनियमित उपबंध संभवतः अपेक्षा को पूरा करने वाला नहीं था जिसका

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



परिणाम यह था कि कम्पनी अधिनियम में व्यापक संशोधन करने के लिए परीक्षा करने हेतु नियुक्त समिति ने अपनी रिपोर्ट में यह सिफारिश की थी कि परिसमापन वाली कम्पनी के विरुद्ध या उसके द्वारा वाद तत्समय विधि में किसी उपबंध के होते हुए भी ऐसे न्यायालय में संस्थित किया जाए जिसमें परिसमापन की कार्यवाहियाँ लम्बित हैं[1]। इन सिफारिशों को कार्यान्वित करने के लिए उपधारा (2) को उसके वर्तमान स्वरूप में लाने के लिए कम्पनी (संशोधन) अधिनियम, 1960 द्वारा उचित रूप से संशोधित किया गया था। समिति ने इस बात पर ध्यान दिया था कि परिसमापन आदेश किए जाने पर और शासकीय समापक नियुक्त किए जाने पर कम्पनी के समापक को धारा 456 की अपेक्षानुसार कम्पनी की सम्पत्ति को अपनी अभिरक्षा में लेना होता है। धारा 457 कम्पनी के नाम में तथा उसकी ओर से कोई वाद, अभियोजन या अन्य सिविल या दाण्डिक विधिक कार्यवाही संस्थित करने अथवा उसमें प्रतिरक्षा करने की शक्ति प्रदत्त करती है। उसे कम्पनी की स्थावर और जंगम दोनों ही प्रकार की सम्पत्तियों का विक्रय करने और कम्पनी की आस्तियों को वसूल करने के लिए शक्ति प्रदत्त की गई है और यह दावेदारों के बीच कम्पनी की आस्तियों का वितरण करने के प्रयोजन के लिए किया जाना था। अब किसी प्रक्रम पर जब समापन आदेश किया जाता है तो कम्पनी के पास दावे अस्तित्व में हो सकते हैं तथा इन दावों को वसूल करने के लिए समापक को दावे फाइल करने होंगे। इस परिणाम को टालने के लिए और ऐसे न्यायालय के समक्ष परिसमापन वाली सभी आनुषंगिक कार्यवाहियों को रखने के लिए, जो कम्पनी का परिसमापन कर रहा हो, उसकी अधिकारिता कम्पनी के दावों को वसूल करने के लिए अन्य पिटीशनों के बीच पिटीशन ग्रहण करने हेतु बढ़ाई गई थी। निरसित इण्डियन कम्पनीज ऐक्ट, 1913 के अधीन धारा 446(2) जैसे उपबंध के अभाव में शासकीय समापक को कम्पनी के दावे और विद्यमान ऋण वसूल करने के लिए शासकीय समापक को अनिवार्य रूप से वाद फाइल करने पड़े थे। ये दावे, जैसा कि ज्ञात है, विचारण न्यायालय में लाए गए थे तथा इसके परिणामस्वरूप अपील न्यायालयों में न केवल कार्यवाही की वृद्धि हुई थी, बल्कि समापन कार्यवाहियों की प्रगति में भी रुकावट आई थी। ऐसी कम्पनी को, जिसके परिसमापन के लिए आदेश हो गए हैं, इस लम्बी और खर्चीली मुकदमेबाजी से बचाने के लिए और परिसमापन कार्यवाहियों का शीघ्रता से निपटारा करने के लिए संसद् ने कम्पनी का परिसमापन करने वाले न्यायालय को कम्पनी के पक्ष में दावों और उसके विरुद्ध दावों के सम्बन्ध में पिटीशन ग्रहण करने के लिए अधिकारिता प्रदत्त

[1] देखिए : कम्पनी लॉ कमेटी रिपोर्ट, पैरा 207.

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



करके सस्ता और संक्षिप्त उपचार परिकल्पित किया था। धारा 446(2) अधिनियमित करने के पीछे यही उद्देश्य था और इसलिए न्यायालय द्वारा उसका ऐसा अर्थान्वयन किया जाना चाहिए जो किसी भी प्रकार से उसके उद्देश्य को अग्रसर कर सके न कि उसे निष्फल करे।

9. कम्पनी अधिनियम के भाग 7 में सम्मिलित धाराओं का शीर्षक समापन से सम्बन्धित है। धारा 443 ऐसी परिस्थितियां उल्लिखित करती है जिनमें कम्पनी का न्यायालय द्वारा परिसमापन किया जा सकता है। धारा 444 में यह उपबंध है कि जहां कि न्यायालय कम्पनी के परिसमापन का आदेश देता है, वहां न्यायालय तत्क्षण उसकी प्रज्ञापना शासकीय समापक और रजिस्ट्रार को भिजवाएगा। धारा 446(1) में यह उपबंध है कि जब कि परिसमापन आदेश दे दिया गया है अथवा शासकीय समापक अन्तरिम समापक के रूप में नियुक्त कर दिया गया है, तब कम्पनी के विरुद्ध कोई वाद अथवा अन्य विधिक कार्यवाही न्यायालय इजाजत से किए जाने के तथा ऐसे निबंधनों के अधीन किए जाने के, जैसे न्यायालय अधिरोपित करे, सिवाय न तो प्रारम्भ की जाएगी न उस दशा में जिसमें कि वह परिसमापन के आदेश की तारीख पर लम्बित है, आगे कोई कार्यवाही की जाएगी। इसके पश्चात् धारा 446 की उपधारा (2) आती है। वह ऐसे न्यायालय को जो कम्पनी का परिसमापन कर रहा हो, अधिकारिता प्रदत्त करती है। वह ऐसे न्यायालय को जो कम्पनी का परिसमापन कर रहा है, ऐसी बात करने के लिए किसी अन्य तत्समय प्रवृत्त विधि में अन्तर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी विशेष अधिकारिता प्रदत्त करती है जो विभिन्न उपखण्डों में उल्लिखित हैं। इस प्रकार धारा 446(2) परिसमापन करने वाले न्यायालय को विशेष अधिकारिता प्रदत्त करती है जो उसे अन्यथा न भी प्राप्त हो सकती थी। कम्पनी अधिनियम में 'न्यायालय' धारा 2(11) में परिभाषित किया गया है जिससे कम्पनी सम्बन्धी (इस अधिनियम के विरुद्ध किसी अपराध से भिन्न) किसी विषय के बारे में वह न्यायालय, जो उस कम्पनी से संबंधित उस विषय के बारे में इस अधिनियम के अधीन अधिकारिता, जैसा कि धारा 10 में उपबंधित है, रखता है, अभिप्रेत है। धारा 10 में यह उपबंध है कि अधिनियम के अधीन अधिकारिता रखने वाला न्यायालय, उस स्थान के सम्बन्ध में जहां सम्पृक्त कम्पनी का रजिस्ट्रीकृत कार्यालय स्थित है, अधिकारिता रखने वाला उच्च न्यायालय उस विस्तार तक के सिवाय होगा जहां तक उस उच्च न्यायालय के अधीनस्थ किसी जिला न्यायालय या जिला न्यायालयों को उपधारा (2) के अनुसरण में अधिकारिता प्रदत्त की गई है। इस प्रकार परिसमापन पिटीशन ऐसे न्यायाधीश के समक्ष, जिसे कम्पनी अधिनियम के अधीन काम समनुदेशित किया गया है, उच्च

Agamnigam Digi

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



न्यायालय में पेश किया जाना चाहिए। इसलिए न्यायालय जो कम्पनी का परिसमापन कर रहा है, वह न्यायालय होगा जिसे परिसमापन के लिए पिटीशन पेश किया गया था और जिसने कम्पनी के परिसमापन के लिए आदेश पारित किया था। इस मामले में केरल उच्च न्यायालय के विद्वान् कम्पनी न्यायाधीश द्वारा आदेश किया गया था और कम्पनी के परिसमापन के लिए निदेश दिया गया था। धारा 483 के अधीन कम्पनी के परिसमापन के बारे में दिए गए किसी आदेश के विरुद्ध अपील उसी न्यायालय में होगी, जिसमें, उसी रीति में होगी जिससे और उन्हीं शर्तों पर होगी जिन पर मामूली अधिकारिता के अन्दर वाले मामलों में उस न्यायालय के किसी आदेश या विनिश्चय की अपील होती है। इस अपीली अधिकारिता का प्रयोग करते हुए अपील न्यायपीठ ने अपीलें ग्रहण की थीं और यह निदेश दिया था कि परिसमापन आदेश तब तक प्रास्थगित रखा जाएगा जब तक कि स्कीम कार्यान्वित नहीं की जाती है और यदि कोई त्रुटि की जाती है तो विद्वान् कम्पनी न्यायालय द्वारा परिसमापन सम्बन्धी आदेश पुन: प्रवर्तित किया जाएगा।

10. अपील-न्यायपीठ ने धारा 446(2)(ख) के अधीन कम्पनी की ओर से दावा पिटीशन फाइल करने के लिए अन्तरिम समापक को निदेश देने हेतु इस एकमात्र आधार पर इन्कार किया था कि समापक की ओर से किया गया ऐसा पिटीशन परिसमापन कार्यवाहियों के दौरान कायम रहेगा जिसका अर्थ यह होगा कि परिसमापन कार्यवाहियाँ लम्बित हैं। निस्सन्देह धारा 446(1) इस विधायी आशय को स्पष्ट करती है कि उसके अधीन विहित प्रक्रिया को तब लागू किया जा सकता है जब परिसमापन आदेश किया गया हो अथवा जहां शासकीय समापक को अन्तरिम समापक के रूप में नियुक्त किया गया हो। धारा 446(1) ऐसी दो स्थितियां अनुध्यात करती है जिनमें न्यायालय को उसके अधीन अनुध्यात आदेश करने की अधिकारिता होगी। ये दो स्थितियां इस प्रकार हैं: जहां परिसमापन आदेश किया गया हो अथवा जहां शासकीय समापक को अन्तरिम समापक के रूप में नियुक्त किया गया हो। इन दो स्थितियों में से प्रथम कम्पनी का परिसमापन करने के लिए आदेश का दिया जाना और उसका अस्तित्व में होना अनुध्यात करती है। दूसरी स्थिति यह है कि जहां परिसमापन आदेश किए बिना न्यायालय ने शासकीय समापक को अन्तरिम समापक के रूप में नियुक्त किया हो। कम्पनी अधिनियम की धारा 450(1) कम्पनी न्यायालय को परिसमापन पिटीशन प्रस्तुत करने के पश्चात् और परिसमापन आदेश किए जाने से पूर्व किसी भी समय शासकीय समापक को अन्तरिम समापक के रूप में नियुक्त करने के लिए कम्पनी न्यायालय को शक्ति प्रदत्त करती है। न्यायालय को, जिसके समक्ष परिसमापन

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

पिटीशन पेश किया गया है, शासकीय समापक को परिसमापन आदेश किए जाने से पूर्व भी कम्पनी के अन्तरिम समापक के रूप में नियुक्त करने की शक्ति है। यदि, अंततः परिसमापन आदेश किया गया हो, तो शासकीय समापक उसी रूप में कार्य करता है। हमें यह बात ध्यान में रखनी चाहिए कि जहां परिसमापन आदेश किया गया हो, वहां वह उसी तारीख से लागू होता है जब परिसमापन के लिए पिटीशन पेश किया गया हो। धारा 446(1) को निर्दिष्ट करने पर यह बात स्पष्ट हो जाती है कि न्यायालय को उसमें अनुध्यात आदेश करने की अधिकारिता होगी जहां परिसमापन आदेश किया गया हो अथवा परिसमापन आदेश करने से पूर्व शासकीय समापक धारा 450(1) में अनुध्यातनुसार अन्तरिम समापक के रूप में नियुक्त किया गया हो।

11. धारा 446 की उपधारा (2) ऐसे न्यायालय को जो कम्पनी का परिसमापन कर रहा हो, उसके खण्ड (क) से (घ) में उल्लिखित कार्यवाहियों को ग्रहण करने और उसका निपटारा करने के लिए अधिकारिता प्रदत्त करती है। 'न्यायालय, जो कम्पनी का परिसमापन कर रहा हो' अभिव्यक्ति में ऐसा न्यायालय सम्मिलित है जिसके समक्ष परिसमापन पिटीशन लम्बित है अथवा जिसने कम्पनी के परिसमापन के लिए आदेश किया है और उसके निदेशों के अधीन परिसमापन की आगे की कार्यवाही चालू हो। निस्संदेह, धारा 446(1) और (2) की भाषा और भाग 7 में, जो परिसमापन कार्यवाहियों से संबंधित है, उसकी भूमिका को देखते हुए, यह बात स्पष्ट होगी कि उपधारा (2) के उपखण्ड (क) से (घ) में उल्लिखित कार्यवाहियों को ग्रहण करने वाले और उनका निपटारा करने वाले न्यायालय की अधिकारिता ऐसे न्यायालय को प्रदत्त की जा सकती है जो कम्पनी का परिसमापन कर रहा हो।

12. इस मामले के तथ्यों पर पुनः विचार करने पर अपील न्यायपीठ ने यह अभिनिर्धारित किया है कि चूंकि अपीलार्थी कम्पनी के सम्बन्ध में परिसमापन कार्यवाही अब लम्बित नहीं है और ऐसा कोई न्यायालय नहीं है जिसे कम्पनी का परिसमापन करने वाला न्यायालय कहा जा सके, इसलिए कम्पनी, जिसका परिसमापन नहीं किया जा रहा है, की ओर से दावा पिटीशन धारा 446 (2) द्वारा अनुध्यात किए गए रूप में संस्थित नहीं किया जा सकता। इस निष्कर्ष पर पहुंचने पर अपील न्यायपीठ ने उपधारा (2) की अभिव्यक्ति 'न्यायालय जो कम्पनी का परिसमापन कर रहा है' का अर्थ निर्बन्धित अर्थ किया है और उसे धारा 446 (1) की प्रथम स्थिति अर्थात् जब परिसमापन आदेश किया गया हो, तक ही सीमित किया है। अपील न्यायपीठ का यह मत प्रतीत होता है कि जहां शासकीय समापक अन्तरिम समापक के रूप में नियुक्त किया गया हो, जिनका विवक्षित अर्थ यह है कि कोई परिसमापन आदेश नहीं

Agamnigam Di

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



किया गया है, वहां धारा 446 (2) के अधीन अधिकारिता का अवलम्ब लिया जा सकता है। न्यायालय ने यह महसूस किया है कि इसी प्रकार की स्थिति तब भी उद्भूत होती जब ऐसे प्रक्रम पर धारा 446 (2) (ख) के अधीन दावा पिटीशन किए गए हों, जब कोई भी परिसमापन आदेश न किया गया हो क्योंकि यदि अंततोगत्वा परिसमापन आदेश न किया गया हो, तो अन्तरिम समापक द्वारा धारा 446 (2) (ख) के अधीन प्रारम्भ की गई कार्यवाहियां पूर्णत: बिना अधिकारिता के होंगी।

13. सादर, उच्च न्यायालय के इस मत में 1960 के संशोधन अधिनियम सं० 65 द्वारा धारा 446 में अन्तःस्थापित उपधारा (2) द्वारा चाहे गए उद्देश्य के प्रयोजन की उपेक्षा की गई है। जैसा कि पहले देखा जा चुका है, परिसमापन कार्यवाहियां कई दशाब्दियों तक चलती हैं और उनका कोई अन्त नहीं दिखाई देता है और इससे कम्पनी के लेनदारों और अंशदायों को कोई भी फायदा नहीं होता है। परिसमापन की प्रक्रिया को शीघ्र करने के लिए ताकि उन्हें समाप्त किया जा सके, सन् 1960 में यह उपधारा उसके वर्तमान स्वरूप में संशोधित की गई थी और कम्पनी का परिसमापन करने वाले न्यायालय को कम्पनी की ओर से या उनके विरुद्ध कोई वाद या कार्यवाही ग्रहण करने अथवा कम्पनी द्वारा या उसके विरुद्ध कोई दावा करने की अधिकारिता प्रदत्त की गई थी। इसलिए यदि परिसमापन पिटीशन लम्बित है, तो उसका यह अर्थ होगा कि शासकीय समापक अन्तरिम समापक के रूप में नियुक्त किया गया है जो परिसमापन की प्रक्रिया में एक प्रक्रम है, न्यायालय को, जिसके समक्ष ऐसी कार्यवाही लम्बित है, कम्पनी का परिसमापन करने वाला न्यायालय कहा जा सकता है और उसे स्वयमेव धारा 446 की उपधारा (2) के खण्ड (क) से (घ) में उल्लिखित कार्यवाही ग्रहण करने की अधिकारिता होगी। हम उच्च न्यायालय की इस आशंका से प्रभावित नहीं हुए हैं कि यदि ऐसी अधिकारिता परिसमापन आदेश दिए जाने से पूर्व, किन्तु शासकीय समापक की अन्तरिम समापक के रूप में नियुक्ति के पश्चात्, ऐसे प्रक्रम पर न्यायालय को प्रदत्त की जाती है, तो इससे असंगत स्थिति उत्पन्न होगी। यदि परिसमापन पिटीशन असफल होता है, तो न्यायालय में लम्बित कार्यवाहियों को ऐसे न्यायालय को अन्तरित करना पड़ सकता है जो कार्यवाही ग्रहण कर सकता है यदि कम्पनी का परिसमापन की प्रार्थना के लिए पिटीशन परिसमापन आदेश में समाप्त हो जाता है तो उपधारा (2) के अधीन प्रारम्भ की गई कार्यवाहियों पर तब तक कार्यवाही करनी होगी जब तक कि उनको अन्तिम रूप से निपटा नहीं दिया जाता, क्योंकि परिसमापन आदेश परिसमापन पिटीशन के पेश किए जाने की तारीख से सम्बन्धित होगा। मामले के इस पहलू को देखते हुए कभी भी कोई

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



विषम स्थिति उत्पन्न नहीं हो सकती है।

14. तथापि संक्षिप्त प्रश्न जिस पर इस अपील में विचार किया जाना अपेक्षित है, यह है कि क्या परिसमापन कार्यवाहियां लम्बित थीं अथवा समाप्त हो गई थीं जब अपील न्यायपीठ ने परिसमापन आदेश को प्रास्थगित करते हुए उसे निष्प्रभावी कर दिया था ? यह बात तुरन्त ही स्पष्ट कर देनी चाहिए कि अपीलार्थी-कम्पनी के सम्बन्ध में विद्वान् कम्पनी न्यायाधीश द्वारा किया गया परिसमापन आदेश न तो अभिखंडित, अपास्त, रद्द या प्रत्याहृत किया गया था और न ही वापस लिया गया था। इसके प्रतिकूल, यह निदेश देने के पश्चात् कि परिसमापन आदेश प्रास्थगित रखा जाएगा, अपील न्यायपीठ ने यह निदेश दिया था कि शासकीय समापक धारा 450 में उपबंधितानुसार अन्तरिम समापक के रूप में कार्य करता रहेगा और वह स्वयं परिसमापन कार्यवाहियों में एक प्रक्रम है। जब परिसमापन आदेश प्रास्थगित रखा गया हो तब वह निलम्बित प्रभावकारी स्थिति में रहता है। यह तथ्य कि अपील-न्यायपीठ ने यह निदेश दिया था कि उच्च न्यायालय द्वारा मंजूर की गई स्कीम के कार्यान्वयन के लम्बित रहते हुए परिसमापन आदेश स्वयं ही प्रास्थगित रखा जाएगा, बिना किसी बात के यह दर्शित करता है कि आदेश न तो रद्द किया गया था, न ही वापस लिया गया था और न प्रत्याहृत अथवा अपास्त किया गया था। वह विद्यमान बना रहा था, किन्तु अप्रवृत्त था। स्कीम के अधीन कम्पनी द्वारा अपनी बाध्यताओं के निर्वहन में उसकी ओर से की गई कोई भी त्रुटि स्वयं किसी अन्य बात के बिना परिसमापन आदेश को पुनः लागू कर देगी। इसलिए परिसमापन आदेश प्रभावी रूप से अस्तित्व में था किन्तु तत्समय अप्रवृत्त था क्योंकि इसमें पुनरुज्जीवित होने और पुनः प्रभावी बनाने की सभी भावी शक्तियां विद्यमान हैं।

15. अब यदि परिसमापन आदेश केवल प्रास्थगित रखा गया था, अर्थात् वह तत्समय प्रवृत्त नहीं था किन्तु वह अस्तित्वहीन नहीं हुआ था, तो परिसमापन कार्यवाहियां वास्तव में लम्बित थीं तथा जिस न्यायालय ने परिसमापन आदेश दिया था वह न्यायालय होगा जो कम्पनी का परिसमापन कर रहा है। अब यह बात भली-भांति सुस्थिर है कि एक बार किया गया परिसमापन आदेश प्रत्याहृत या पुनः वापस लिया जा सकता है किन्तु जब तक उसे प्रत्याहृत नहीं किया जाता है या वापस नहीं लिया जाता है तब तक वह अस्तित्व में बना रहता है। इस मामले में यही स्थिति है। यदि परिसमापन आदेश अस्तित्वशील न्यायालय को, जिसने ऐसा आदेश किया था अथवा न्यायालय को जिसने उसे प्रास्थगित किया था, उसे धारा 446 (2) का अवलम्ब लेने के लिए अन्तरिम समापक को आवश्यक निदेश देने की अधिकारिता प्राप्त होगी।

Agamnigam D

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



16. सरसरी तौर पर यह कहा गया था कि कम्पनी ने अपील न्यायपीठ से निदेश लिया था न कि उस न्यायालय से निदेश लिया था जो कम्पनी का परिसमापन कर रहा था अर्थात् विद्वान् कम्पनी न्यायाधीश का न्यायालय, जिसने परिसमापन आदेश किया था। यद्यपि यह बात सही है किन्तु मामले के अत्यन्त तकनीकी अर्थ को देखने पर भी अपीलार्थी खण्ड न्यायपीठ के समक्ष पिटीशन देने में पूर्ण रूप से न्यायोचित था क्योंकि वह समझौते और करार की स्कीम के कार्यान्वयन का पर्यवेक्षण करने वाली तो मात्र खण्ड न्यायपीठ थी और वह अपील में भी खण्ड न्यायपीठ थी जिसके समक्ष परिसमापन आदेश के विरुद्ध अपील की गई थी जिस परिसमापन आदेश को प्रास्थगित रखा था इसलिए अपील न्यायपीठ द्वारा ठीक निदेश वांछित किया था।

17. इस प्रकार मामले के सभी पहलुओं से परीक्षा करने के पश्चात् हमारा यह मत है कि उच्च न्यायालय ने कम्पनी द्वारा पेश की जाने वाली सामग्री और व्ययों के आधार पर दावा पिटीशन करने के लिए अन्तरिम समापक को निदेश देने हेतु अपीलार्थी कम्पनी की ओर से किए गए आवेदन को नामंजूर करके गलती की थी। दावा पिटीशन फाइल करने पर अन्तरिम समापक द्वारा वसूल की गई रकम, कम्पनी को सौंप दी जानी चाहिए तथा अपीलार्थी-कम्पनी न्यायालय के पर्यवेक्षण के अधीन स्कीम के कार्यान्वयन में उनका प्रयोग करने, व्यय करने और समुचित रूप से उसका विनियोग करने की बाध्यता के अधीन है।

18. तदनुसार यह अपील सफल होती है और मंजूर की जाती है तथा अपीलाधीन उच्च न्यायालय का आदेश अपास्त किया जाता है। अपीलार्थी-कम्पनी द्वारा अन्तरिम समापक को निदेश देने के लिए किया गया आवेदन मंजूर किया जाता है और प्रार्थना के अनुसार निदेश दिए जाते हैं। अपीलार्थी अपना खर्च स्वयं वहन करेगा।

अपील मंजूर की गई।

जैन/भू०

---

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

# गोवा, दमण और दीव माध्यमिक शिक्षा बोर्ड

बनाम

# कुमारी हेमा लाड और अन्य

(16-8-1984)

(न्यायाधिपति डी० ए० देसाई और वी० बालकृष्ण एराडी)

**गोवा, दमण और दीव बोर्ड आफ हायर सेकेण्डरी एजुकेशन बोर्ड ऐक्ट 1975 (1975 का 13) धारा-46 [सपठित गोवा, दमन एण्ड दीव सेकेण्डरी एण्ड हायर सेकेन्डरी एजूकेशन रूल्स 1975—नियम 37(1) और (2)]—विधिमान्यता—12 वें स्तर की परीक्षा में बैठने वाले कतिपय छात्रों द्वारा 1975 के ऐक्ट के अधीन विरचित नियमों के नियम 37 के खण्ड (1) और (2) के उपबन्धों को इस आधार पर चुनौती देते हुए रिट पिटीशन फाइल किया जाना कि वे अधिकारातीत और अविधिमान्य हैं—जहां तक नियम 37 के खण्ड (1) और (2) के उपबन्ध 12वें स्तर की परीक्षाओं में बैठने वाले अभ्यर्थियों द्वारा उत्तरपुस्तिकाओं के निरीक्षण और या पुर्नमूल्यांकन किए जाने पर प्रतिषेध लगाते हैं वहां तक वे अधिकरतीत और अविधिमान्य नहीं हैं।**

अपीलार्थी ने मुम्बई उच्च न्यायालय की पणजी न्यायपीठ के उस निर्णय के विरुद्ध विशेष इजाजत लेकर ये अपीलें फाइल की हैं, जिसके द्वारा गोवा, दमण और दीव माध्यमिक और उच्चतर माध्यमिक शिक्षा बोर्ड द्वारा संचालित 12वें स्तर की परीक्षा में बैठने वाले कतिपय छात्रों द्वारा फाइल किए गए रिट पिटीशन मंजूर किए गए थे और गोवा, दमण एण्ड दीव सेकेन्डरी एण्ड हायर सेकेन्डरी एजूकेशन बोर्ड ऐक्ट के अधीन गोवा दमण, और दीव के प्रकाशक द्वारा विरचित नियमों के नियम 37 के खण्ड (1) और (2) के उपबंधों को वहां तक अधिकारातीत और अविधिमान्य घोषित कर दिया गया था, जहां तक उनमें उत्तरपुस्तिकाओं के निरीक्षण और पुनर्मूल्यांकन पर प्रतिषेध लगाया गया था। उच्च न्यायालय ने आक्षेपित नियमों की विधिमान्यता विषयक निष्कर्ष निकालने में अपने पूर्व-निर्णय का अनुसरण करते हुए उन्हें अविधिमान्य और अधिकारातीत घोषित कर दिया। अपीलार्थी ने उच्च न्यायालय के इसी निर्णय के विरुद्ध ये अपीलें फाइल की हैं। अपीलें मंजूर करते हुए,

Agamnigam

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



*अभिनिर्धारित—आक्षेपित नियम नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत के अतिक्रमण के आधार पर भी अविधिमान्य नहीं है, क्योंकि इसमें विनिश्चय करने वाली ऐसी कोई प्रक्रिया जिसके परिणामस्वरूप परीक्षार्थियों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकते हैं, अन्तर्गस्त नहीं है। इस सिद्धांत का विस्तार युक्तियुक्त और तर्कसंगत सीमाओं से आगे नहीं किया जा सकता। दूसरी बात यह कि यह नियम उप-विधि की प्रकृति में नहीं है, यह कानूनी नियम की प्रकृति में है। उसे इसलिए भी अधिकारातीत नहीं घोषित किया जा सकता क्योंकि उनमें गौण विधान का पूर्ण बल और शक्ति मौजूद है जिसे किसी ऐसे प्रत्यायुक्त ने बनाया है जो इस निमित्त प्राधिकृत हो। वह नियम इस आधार पर भी अधिकारातीत और अविधिमान्य नहीं है क्योंकि वह धारा 46 के अधीन प्रदत्त शक्ति से अधिक है। यह विनिश्चित करना कि किसी कानून के उपबंधों को सर्वाधिक अच्छे ढंग से कार्यान्वित करने के लिए क्या करना है तथा अधिनियम के उद्देश्य की पूर्ति के लिए नियमों और विनियमों में कौन-से मुख्य और प्रक्रियात्मक अध्युपाय समाविष्ट किए जाने चाहिए, विधानमण्डल का, न कि न्यायालय का कार्य है। न्यायालय का यह कार्य नहीं है कि वह विनियम बनाने वाले निकाय द्वारा अधिकथित किसी नीति के गुणागुण की परीक्षा करे : उसकी परीक्षा केवल इस सीमा तक ही की जा सकती है कि क्या आक्षेपित विनियम, कानून द्वारा प्रत्यायुक्त को प्रदत्त विनियम बनाने की शक्ति की परिधि के भीतर है। अतः गोवा, दमण और दीव सेकेन्डरी एण्ड हायर सेकेण्डरी एजूकेशन ऐक्ट के अधीन विरचित नियमों के नियम 37 के खण्ड (1) और (2) विधिमान्य हैं।

## अनुसरित निर्णय

पैरा

[1985] [1985] 1 उम० नि० प०=123 ए० आई० आर० 1984 एस० सी० 1543 :
महाराष्ट्र राज्य माध्यमिक और उच्चतर माध्यमिक शिक्षा बोर्ड और एक अन्य बनाम परितोष भूपेश कुमार सेठ और अन्य 1

## उलट दिया गया निर्णय

[1981] ए० आई० आर० 1981 मुम्बई 895 :
परितोष भूपेश कुमार सेठ और अन्य बनाम महाराष्ट्र

*टिप्पणी : अभिनिर्धारित प्रभाग महाराष्ट्र राज्य माध्यमिक और उच्चतर माध्यमिक शिक्षा बोर्ड और एक अन्य ब० परितोष भूपेश कुमार सेठ और अन्य वाले मामले के आधार पर दिया गया है—सम्पादक

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

## गोवा, दमण और दीव माध्यमिक शिक्षा बोर्ड

बनाम

## कुमारी हेमा लाड और अन्य

(16-8-1984)

(न्यायाधिपति डी० ए० देसाई और वी० बालकृष्ण एराडी)

**गोवा, दमण और दीव बोर्ड आफ हायर सेकेण्डरी एजुकेशन बोर्ड ऐक्ट 1975 (1975 का 13) धारा-46 [सपठित गोवा, दमन एण्ड दीव सेकेण्डरी एण्ड हायर सेकेन्डरी एजूकेशन रूल्स 1975—नियम 37(1) और (2)]—विधिमान्यता—12 वें स्तर की परीक्षा में बैठने वाले कतिपय छात्रों द्वारा 1975 के ऐक्ट के अधीन विरचित नियमों के नियम 37 के खण्ड (1) और (2) के उपबन्धों को इस आधार पर चुनौती देते हुए रिट पिटीशन फाइल किया जाना कि वे अधिकारातीत और अविधिमान्य हैं—जहां तक नियम 37 के खण्ड (1) और (2) के उपबन्ध 12वें स्तर की परीक्षाओं में बैठने वाले अभ्यर्थियों द्वारा उत्तरपुस्तिकाओं के निरीक्षण और या पुर्नमूल्यांकन किए जाने पर प्रतिषेध लगाते हैं वहां तक वे अधिकारतीत और अविधिमान्य नहीं हैं।**

अपीलार्थी ने मुम्बई उच्च न्यायालय की पणजी न्यायपीठ के उस निर्णय के विरुद्ध विशेष इजाजत लेकर ये अपीलें फाइल की हैं, जिसके द्वारा गोवा, दमण और दीव माध्यमिक और उच्चतर माध्यमिक शिक्षा बोर्ड द्वारा संचालित 12वें स्तर की परीक्षा में बैठने वाले कतिपय छात्रों द्वारा फाइल किए गए रिट पिटीशन मंजूर किए गए थे और गोवा, दमण एण्ड दीव सेकेन्डरी एण्ड हायर सेकेन्डरी एजूकेशन बोर्ड ऐक्ट के अधीन गोवा दमण, और दीव के प्रकाशक द्वारा विरचित नियमों के नियम 37 के खण्ड (1) और (2) के उपबंधों को वहां तक अधिकारातीत और अविधिमान्य घोषित कर दिया गया था, जहां तक उनमें उतरपुस्तिकाओं के निरीक्षण और पुनर्मूल्यांकन पर प्रतिषेध लगाया गया था। उच्च न्यायालय ने आक्षेपित नियमों की विधिमान्यता विषयक निष्कर्ष निकालने में अपने पूर्व-निर्णय का अनुसरण करते हुए उन्हें अविधिमान्य और अधिकारातीत घोषित कर दिया। अपीलार्थी ने उच्च न्यायालय के इसी निर्णय के विरुद्ध ये अपीलें फाइल की हैं। अपीलें मंजूर करते हुए,

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



*अभिनिर्धारित—आक्षेपित नियम नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत के अतिक्रमण के आधार पर भी अविधिमान्य नहीं है, क्योंकि इसमें विनिश्चय करने वाली ऐसी कोई प्रक्रिया जिसके परिणामस्वरूप परीक्षार्थियों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकते हैं, अन्तर्गस्त नहीं है। इस सिद्धांत का विस्तार युक्तियुक्त और तर्कसंगत सीमाओं से आगे नहीं किया जा सकता। दूसरी बात यह कि यह नियम उप-विधि की प्रकृति में नहीं है, यह कानूनी नियम की प्रकृति में है। उसे इसलिए भी अधिकारातीत नहीं घोषित किया जा सकता क्योंकि उनमें गौण विधान का पूर्ण बल और शक्ति मौजूद है जिसे किसी ऐसे प्रत्यायुक्त ने बनाया है जो इस निमित्त प्राधिकृत हो। वह नियम इस आधार पर भी अधिकारातीत और अविधिमान्य नहीं है क्योंकि वह धारा 46 के अधीन प्रदत्त शक्ति से अधिक है। यह विनिश्चित करना कि किसी कानून के उपबंधों को सर्वाधिक अच्छे ढंग से कार्यान्वित करने के लिए क्या करना है तथा अधिनियम के उद्देश्य की पूर्ति के लिए नियमों और विनियमों में कौन-से मुख्य और प्रक्रियात्मक अध्युपाय समाविष्ट किए जाने चाहिए, विधानमण्डल का, न कि न्यायालय का कार्य है। न्यायालय का यह कार्य नहीं है कि वह विनियम बनाने वाले निकाय द्वारा अधिकथित किसी नीति के गुणागुण की परीक्षा करे: उसकी परीक्षा केवल इस सीमा तक ही की जा सकती है कि क्या आक्षेपित विनियम, कानून द्वारा प्रत्यायुक्त को प्रदत्त विनियम बनाने की शक्ति की परिधि के भीतर है। अतः गोवा, दमण और दीव सेकेन्डरी एण्ड हायर सेकेण्डरी एजूकेशन ऐक्ट के अधीन विरचित नियमों के नियम 37 के खण्ड (1) और (2) विधिमान्य हैं।

## अनुसरित निर्णय

पैरा

[1985] [1985] 1 उम० नि० प० = 123 ए० आई० आर० 1984 एस० सी० 1543:
**महाराष्ट्र राज्य माध्यमिक और उच्चतर माध्यमिक शिक्षा बोर्ड और एक अन्य बनाम परितोष भूपेश कुमार सेठ और अन्य** 1

## उलट दिया गया निर्णय

[1981] ए० आई० आर० 1981 मुम्बई 895:
**परितोष भूपेश कुमार सेठ और अन्य बनाम महाराष्ट्र**

*टिप्पणी: अभिनिर्धारित प्रभाग महाराष्ट्र राज्य माध्यमिक और उच्चतर माध्यमिक शिक्षा बोर्ड और एक अन्य ब० परितोष भूपेश कुमार सेठ और अन्य वाले मामले के आधार पर दिया गया है—सम्पादक

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh


राज्य माध्यमिक और उच्चतर माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, पुणे और एक अन्य 1

सिविल अपीली अधिकारिता : 1982 की सिविल अपील सं० 4152 से 4157 :

[1980 के विशेष सिविल आवेदन रिट पिटीशन० सं 129, 110, 103, 101, 102 और 104 में मुम्बई उच्च न्यायालय पणजी न्यायपीठ (गोआ) की तारीख 2 नवम्बर, 1982 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध विशेष इजाजत फाइल की गई अपीलें]।

अपीलार्थी की ओर से — श्री सोली जे० सोराब जी०, श्रीमती ए० के० वर्मा और श्री ओ० सी० माथुर

प्रत्यर्थी की ओर से — —

न्यायालय का निर्णय न्यायाधिपति वी० बालकृष्ण एराडी ने दिया।

न्यायाधिपति बालकृष्ण एराडी—

ये अपीलें मुम्बई उच्च न्यायालय (पणजी न्यायपीठ) की तारीख 2 नवम्बर, 1982 के उस निर्णय के विरुद्ध विशेष इजाजत लेकर की गई हैं जिसके द्वारा उच्च न्यायालय की खण्ड न्यायपीठ ने उसे कतिपय छात्रों द्वारा फाइल किए गए रिट पिटीशनों को मंजूर कर लिया था जो गोआ, दमण और दीव माध्यमिक और उच्चतर माध्यमिक शिक्षा बोर्ड द्वारा संचालित 12वें स्तर की परिक्षा में बैठे थे और गोआ, दमन और दीव सेकेन्डरी एण्ड हायर सेकेन्डरी ऐजुकेशन बोर्ड ऐक्ट के अधीन गोआ, दमन और दीव के प्रकाशक; द्वारा विरचित उक्त नियमों के नियम 37 के खण्ड (1) और (2) के उपबन्धों को वहां तक अधिकारातीत और अविधिमान्य घोषित किया जहां तक उनके द्वारा उत्तर-पुस्तिकाओं के निरीक्षण और/या पुनर्मूल्यांकन पर प्रतिषेध लगाया गया है। आक्षेपित नियमों की विधिमान्यता पर उक्त न्यायालय ने **परितोष भूपेश कुमार सेठ और अन्य बनाम महाराष्ट्र राज्य माध्यमिक और उच्चतर माध्यमिक शिक्षा बोर्ड**[1] वाले मामले में इसके पहले दिये गये अपने निर्णय का अनुसरण किया जिसमें महाराष्ट्र राज्य माध्यमिक और उच्चतर माध्यमिक शिक्षा बोर्ड द्वारा विरचित विनियम 104 (3) जो कि समान उपबंध हैं जिसमें उत्तरपुस्तिकाओं के निरीक्षण और/या पूनर्मूल्यांकन पर प्रतिषेध लगाया गया है, अवैध और अधिकारातीत घोषित किया गया था। इस न्यायालय ने उक्त निर्णय (**परितोष भूपेश कुमार सेठ और अन्य बनाम महाराष्ट्र राज्य माध्यमिक और उच्चतर माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, पुणे और एक अन्य**[1]) के सही होने की **महाराष्ट्र राज्य माध्यमिक और उच्चतर माध्यमिक शिक्षा बोर्ड और एक अन्य बनाम परितोष**

1 ए० आई० आर० 1981 मुम्बई 895.

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



भूपेश कुमार सेठ और एक अन्य[1] वाले मामले में परीक्षा की थी। तारीख 17 जुलाई, 1984 के निर्णय द्वारा इस न्यायालय ने मुम्बई उच्च न्यायालय द्वारा अपनाया गया दृष्टिकोण उलट दिया और विनियम 104 के आक्षेपित खण्ड (1) और (3) की विधिमान्यता को कायम रखा। प्रस्तुत मामला उक्त विनिर्णय में अधिकथित उक्ति के अन्तर्गत पूर्णत: आता है। इस प्रकार हम उच्च न्यायालय के निर्णय को अपास्त करते हैं और गोवा, दमन और दीव सेकेन्डरी एण्ड हायर सेकेन्डरी एजुकेशन बोर्ड ऐक्ट के अधीन विरचित नियमों के नियम 37 के खण्ड (1) और (2) की विधिमान्यता को कायम रखते हैं। यह अपीलें मंजूर की जाती हैं। और उच्च न्यायालय में फाइल किए गए रिट पिटीशन खारिज किए जाते हैं। अपीलार्थी अपना खर्चा प्रत्यर्थियों से प्राप्त करेगा।

अपीलें मंजूर की गईं।

प्र० श्री०

---

[1] [1985] 1 उम० नि० प० = 123 ए० आई० आर० [1984] एस० सी० 1543.

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

## कोरोमंडल फर्टिलाइज़र्स लिमिटेड

बनाम

## भारत संघ और अन्य

(17 अगस्त, 1984)

(न्यायाधिपति पी० एन० भगवती, आर० एस० पाठक और अमरेन्द्र नाथ सेन)

**केन्द्रीय उत्पाद-शुल्क और नमक अधिनियम, 1944 (1944 का 1)—धारा 3 और अनुसूची 1, मद 14-जज [सपठित केन्द्रीय उत्पाद-शुल्क नियम, 1944, नियम 8(1)]—उत्पाद-शुल्क से छूट की मांग का औचित्य—अपीलार्थी द्वारा अधिसूचना 23/70 तारीख 1-3-1970 के अधीन 'ग्रोमर एन० पी० के० 14-35-14' उर्वरक को मिश्रित उर्वरक के रूप में उत्पाद-शुल्क से छूट की मांग की जानी—चूंकि 'ग्रोमर एन० पी० के० 14-35-14' मिश्रित उर्वरक नहीं है, इसलिए वह उस रूप में उत्पाद-शुल्क से छूट प्राप्त करने का हकदार नहीं है।**

**केन्द्रीय उत्पाद-शुल्क और नमक अधिनियम, 1944 (1944 का 1)—धारा 4, स्पष्टीकरण (1973 के अधिनियम सं० 22 द्वारा उसके प्रतिस्थापन से पूर्व)—व्यापारिक बट्टा—चूंकि विक्रय अभिकर्ता को उसके द्वारा की गई सेवाओं के लिए करार के आधार पर पारिश्रमिक के रूप में संदत्त कमीशन व्यापारिक बट्टा नहीं है, इसलिए वह कटौती योग्य नहीं है।**

अपीलार्थी विशाखापटनम स्थित कारखाने में विभिन्न प्रकार के उर्वरकों के विनिर्माताओं के रूप में कारबार करते हैं। अपीलार्थी ने सोचा कि अपने उत्पादों का स्वयं अपीलार्थी द्वारा विनिर्मित उर्वरकों के विक्रय की बजाय उर्वरकों के विक्रय में अनुभवी संगठनों को उसके उत्पादों का विकय सौंपना लाभप्रद होगा। तदनुसार अपीलार्थी ने दो कम्पनियों को अपने विक्रय अभिकर्ताओं के रूप में नियुक्त किया और उनसे अपीलार्थी द्वारा विक्रय अभिकर्ताओं के साथ किए गए करारों में उल्लिखित निबन्धनों और शर्तों पर अपीलार्थी द्वारा विनिर्मित उर्वरकों के विक्रय के लिए करार किए। करार के निबन्धनों के अधीन विक्रय-अभिकर्ता अपीलार्थी द्वारा नियुक्त किए गए थे तथा विक्रय अभिकर्ता को शुद्ध वसूलनीय मूल्य पर अर्थात् उत्पाद-शुल्क और विक्रय-शुल्क, भाड़ा, व्यय और बट्टा तथा रिबेट कम करके कुल विक्रय मूल्य पर संगणित 3-1/2 प्रतिशत का कमीशन प्राप्त करने के प्रतिफल में अपीलार्थी की ओर से उर्वरकों के विक्रय

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



की व्यवस्था करने का काम सौंपा गया था। यह कमीशन उर्वरकों के विक्रय करार के अधीन विक्रय-अभिकर्ताओं को बाध्यता का निर्वहन करने के लिए विक्रय अभिकर्ताओं को अपीलार्थी द्वारा संदत्त पारिश्रमिक है। किसी ऐसे करार के अभाव में अपीलार्थी अपने स्वयं के उत्पादों के विक्रय की व्यवस्था करने के क्रियाकलाप करने के लिए बाध्य होगा? तारीख 1 मार्च, 1970 को केन्द्रीय सरकार ने अधिसूचना सं० 25/70 जारी की। इस अधिसूचना के आधार पर अपीलार्थी ने उसके द्वारा विनिर्मित उर्वरकों पर उत्पाद-शुल्क के अधिरोपण से छूट के लिए मांग की थी और यह दावा किया था कि ऐसे उर्वरक इस अधिसूचना के अर्थ में मिश्रित उर्वरक माने जाने चाहिएं। अपीलार्थी ने उसके द्वारा विनिर्मित उर्वरकों पर संदेय उत्पाद-शुल्क की गणना के मामले में व्यापारिक कटौती के रूप में उसके द्वारा विनिर्मित उर्वरकों के विक्रय के लिए उसके अभिकर्ताओं को उसके द्वारा विक्रय अभिकर्ताओं को संदत्त कमीशन की कटौती का भी दावा किया था। इन दोनों कारणों के आधार पर किए गए दावे सहायक कलक्टर द्वारा नामन्जूर कर दिए गए। सहायक कलक्टर के विनिश्चय को अपील कलक्टर द्वारा कायम रखा गया। सम्बन्धित प्राधिकारियों के विनिश्चयों से व्यथित होकर अपीलार्थी ने उच्च न्यायालय में रिट पिटीशन फाइल किए। उच्च न्यायालय ने अपने एक ही निर्णय द्वारा इन दो शीर्षकों के अधीन अपीलार्थियों के दावों को ग्रहण करने से इनकार कर दिया और अपीलार्थी द्वारा फाइल किए गए सब रिट पिटीशन खारिज कर दिए। उच्च न्यायालय के विनिश्चय और निर्णय के विरुद्ध अपीलार्थी को इस न्यायालय द्वारा मंजूर की गई विशेष इजाज़त से ये अपीलें फाइल की गईं। उच्चतम न्यायालय द्वारा अपीलें खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित—केन्द्रीय उत्पाद-शुल्क और नमक अधिनियम की प्रथम अनुसूची की मद सं० 14-जज के अधीन आने वाला 'मिश्रित उर्वरक' है जिसे छूट प्राप्त है। मद सं० 14-जज सभी प्रकार के उर्वरकों को निर्दिष्ट करती है किन्तु ऐसे प्राकृतिक, पाशविक या वनस्पति उर्वरकों को अपवर्जित करती है जिन पर रासायनिक प्रक्रिया न की गई हो। वह दो या उससे अधिक उर्वरकों से विनिर्मित मिश्रित उर्वरकों को ही केवल छूट प्रदान करने के लिए तात्पर्यित है। उसका प्रयोजन उर्वरकों और अन्य वस्तुओं के मिश्रणों को छूट प्रदान करना नहीं है। अधिसूचना का सही और वास्तविक अर्थ यह है कि छूट केवल मिश्रित उर्वरकों को ही उपलभ्य है। यदि अन्य वस्तुओं का भी मिश्रित उर्वरकों के विनिर्माण में प्रयोग किया गया है, तब भी उक्त मिश्रित उर्वरक छूट के हकदार नहीं होंगे। (पैरा 9)

एन० पी० के० 14 : 35 : 14 की विनिर्माण प्रक्रिया को, जो कई

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



अन्य वस्तुओं को अस्तित्व में लाती है, और जिसका प्रयोग पुनः एक बार इस प्रक्रिया में किया जाता है और जिसमें एक वस्तु के साथ दूसरी वस्तु मिलाई जाती है, अधिसूचना द्वारा परिकल्पित रूप में उर्वरकों के मिश्रण की प्रक्रिया नहीं कहा जा सकता। इसलिए यह अभिनिर्धारित करना होगा कि एन० पी० के० 14 : 35 : 14 अधिसूचना सं० 25/70 के अधीन छूट प्राप्त करने के योग्य नहीं है। (पैरा 10)

अधिसूचना के साथ जोड़ा गया स्पष्टीकरण भी स्वयं अधिसूचना का एक भाग है। अधिसूचना का उचित रूप से अर्थान्वयन करने पर स्पष्टीकरण की, जो अधिसूचना में जोड़ा गया है, उपेक्षा नहीं की जा सकती। स्पष्टीकरण में जो कुछ उपबन्धित है, वह किसी भी प्रकार से उस का विरोधी या प्रतिकूल नहीं है जो अधिसूचना उपबन्ध करती है। (पैरा 11)

अपीलार्थी द्वारा विनिर्मित उर्वरक, जिसके सम्बन्ध में अधिसूचना के अधीन छूट का दावा किया गया है, अधिसूचना के अर्थ और परिधि में मिश्रित उर्वरक नहीं है और अपीलार्थी के पक्षकथन को नामंजूर करने में कोई हिचकिचाहट नहीं हो सकती। (पैरा 12)

यह सम्भव है कि प्रस्तुत मामले में संदाय, जिसे कमीशन कहा गया है, मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करते हुए व्यापारिक मोक की प्रकृति का हो सकता है। किन्तु प्रत्येक प्रकार की व्यापारिक मोक अनिवार्य रूप से उत्पाद शुल्क के निर्धारण में कटौती नहीं होती है। अपीलार्थी और उसके विक्रय अभिकर्ताओं के बीच हुए करार के आधार पर अपीलार्थी की ओर से अपीलार्थी के उत्पाद के विक्रय के मामले में अभिकर्ता को उसके द्वारा की गई सेवाओं के लिए संदत्त कमीशन को ऐसे व्यापारिक बट्टे की प्रकृति के रूप में नहीं माना जा सकता जो उत्पाद शुल्क के उद्ग्रहण के प्रयोजन के लिए माल के निर्धारणीय मूल्य की संगणना में की जाने वाली कटौती के लिए अर्हित हो। विक्रय अभिकर्ताओं को संदत्त कमीशन व्यापारिक बट्टा नहीं है जो या तो थोक क्रेताओं को या फुटकर क्रेताओं को दी जाती है। वह उपभोक्ता या व्यापारी को नहीं दी गई है। अभिकर्ता द्वारा की गई सेवाओं के लिए पारिश्रमिक के तौर पर विक्रय अभिकर्ता को करार के आधार पर संदत्त कमीशन को अथवा कारखाने अथवा विनिर्माण या उत्पादन के किसी अन्य परिसर से विनिर्माण या उत्पादन के स्थान पर परिदान के लिए माल के हटाने के समय संदत्त कमीशन को किसी भी तर्क के आधार पर संदेय व्यापारिक बट्टा नहीं कहा जा सकता। इसलिए विक्रय अभिकर्ताओं को संदत्त कमीशन की रकम अधिनियम की धारा 4 के स्पष्टीकरण के अर्थ में व्यापारिक बट्टा नहीं है और किसी भी कटौती के लिए अर्हित नहीं

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



है। इसलिए उच्च न्यायालय का अपीलार्थी के इस दावे को नामंजूर करना स्पष्ट रूप से न्यायोचित था। (पैरा 19)

**निर्दिष्ट निर्णय**

पैरा

[1959] [1959] सप्लीमेंट 1 एस० सी० आर० 92 :
**एम० सी० वी० एस० अरुणाचला नाडार और अन्य बनाम मद्रास राज्य और अन्य;** 15

[1889] (1889) 42 ला रिपोर्ट्स चांसरी डिवीज़न 1 :
**रेलीकैन्स्ड विक्चुअलर्स म्युचुअल ट्रेडिंग एसोसिएशन एक्सपार्टी आडेन,** 15, 18

**सिविल अपीली अधिकारिता : 1976 की सिविल अपील सं० 1373 से 1376, 1977 की सिविल अपील सं० 683 से 686, 1062 से 1064 तथा 1978 की सिविल अपील सं० 885 से890 तक.**

1976 के रिट पिटीशन सं० 1400 से 1403 तक में आन्ध्र प्रदेश उच्च न्यायालय के तारीख 24 सितम्बर, 1976 वाले निर्णय और आदेश तथा 1976 के रिट पिटीशन सं० 2898, 2940, 2946, 2948, 2899, 2900, 2904, 2901, 2902, 2903, 2941, 2947 और 2961 में आन्ध्र प्रदेश उच्च न्यायालय के तारीख 31 जनवरी, 1977 वाले निर्णय और आदेश के विरुद्ध विशेष इजाज़त लेकर की गईं अपीलें।

**अपीलार्थी की ओर से** — सर्वश्री रविन्द्र नारायण, ओ० सी० माथुर, तलत अंसारी, कमल मेहता और कुमारी रेनू वालिया

**प्रत्यर्थी की ओर से** — कुमारी ए० सुभाषिणी और श्री गिरीश चन्द्र

न्यायालय का निर्णय न्यायाधिपति अमरेन्द्र नाथ सेन ने दिया।

**न्यायाधिपति अमरेन्द्र नाथ सेन—**

ये अपीलें हैदराबाद स्थित आन्ध्र प्रदेश उच्च न्यायालय में पिटीशनरों के रूप में अपीलार्थी द्वारा फाइल किए गए रिट पिटीशनों से उद्भूत हुई है। उच्च न्यायालय ने एक ही निर्णय द्वारा इन सब रिट पिटीशनों का निपटारा किया। उच्च न्यायालय ने निर्णय में उल्लिखित कारणों से सब रिट पिटीशन खारिज कर दिए। इस न्यायालय ने रिट पिटीशनों की उच्च न्यायालय द्वारा की गई खारिजी के विरुद्ध अपीलें फाइल करने के लिए अपीलार्थी को विशेष इजाज़त दी है और कुछ विशेष इज़ाज़त पिटीशनों की अपीलों के साथ सुनवाई करने के निदेश भी

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



दिए हैं। चूंकि सब रिट पिटीशन उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए एक ही निर्णय के जरिए खारिज कर दिए गए थे, इसलिए हम इस निर्णय द्वारा इन सब मामलों का निपटारा करना चाहते हैं।

2. इन अपीलों में विचारार्थ दो प्रश्न उद्भूत होते हैं। प्रथम प्रश्न यह है कि क्या भारत सरकार द्वारा जारी की गई तारीख 1 मार्च, 1970 की अधिसूचना सं० 23/70 पर सही रूप से विचार करने पर अपीलार्थी ऐसे उर्वरकों पर, जो अपीलार्थी के अनुसार, अपीलार्थी द्वारा विनिर्मित मिश्रित उर्वरक हैं, उत्पाद-शुल्क के अधिरोपण से छूट का दावा करने की हकदार है। अन्य प्रश्न यह है कि क्या अपीलार्थी द्वारा अपने विक्रय अभिकर्ताओं को संदत्त कमीशन की रकम की कटौती उत्पाद-शुल्क के निर्धारण के लिए माल के मूल्य की संगणना करने में व्यापारिक मोक के रूप की जानी चाहिए।

3. इस बात पर ध्यान दिया जा सकता है कि इन अपीलों में से कुछ अपीलें प्रथम प्रश्न अर्थात् तारीख 1 मार्च, 1970 की अधिसूचना सं० 23/70 के अधीन छूट से सम्बन्धित हैं और शेष अपीलों में विक्रय अभिकर्ता को संदत्त कमीशन के अपवर्जन का प्रश्न अन्तर्वलित है। ये ही प्रश्न विशेष इजाज़ात पिटीशन में भी अन्तर्ग्रस्त हैं।

4. मोटे-मोटे तथ्यों पर, जिन पर कोई गंभीर विवाद प्रतीत नहीं होता है, संक्षेप में ध्यान दिया जा सकता है।

5. अपीलार्थी विशाखापट्नम स्थित कारखाने में विभिन्न प्रकार के उर्वरकों के विनिर्माताओं के रूप में कारबार करती है। अपीलार्थी ने यह सोचा कि स्वयं अपीलार्थी द्वारा विनिर्मित उर्वरकों के विक्रय की व्यवस्था करने की बजाय उर्वरकों के विक्रय में अनुभाव प्राप्त संगठनों को अपने उत्पादों का विक्रय सौंपना लाभप्रद होगा। तदनुसार, अपीलार्थी ने मैसर्स ई० आई० डी० पैरी लिमिटेड और मैसर्स रैलिस इण्डिया लिमिटेड को अपने विक्रय अभिकर्ताओं के रूप में नियुक्त किया और उनसे अपीलार्थी द्वारा विक्रय अभिकर्ताओं के साथ किए गए करारों में उल्लिखित निबन्धनों और शर्तों के आधार पर अपीलार्थी द्वारा विनिर्मित उर्वरकों के विक्रय के लिए करार किए। करार के निबन्धनों के अधीन अपीलार्थी ने विक्रय अभिकर्ता नियुक्त किए थे तथा विक्रय अभिकर्ता को शुद्ध वसूलनीय मूल्य पर अर्थात् उत्पाद-शुल्क और विक्रय शुल्क, भाड़ा, व्यय और बट्टा तथा रिबेट कम करके कुल विक्रय मूल्य पर संगणित 3-1/2 प्रतिशत का कमीशन प्राप्त करने के प्रतिफलस्वरूप अपीलार्थी की ओर से उर्वरकों के विक्रय की व्यवस्था करने का काम सौंपा था। यह कमीशन उर्वरकों के विक्रय करार के अधीन विक्रय-अभिकर्ताओं की बाध्यता का निर्वहन करने के लिए विक्रय अभिकर्ताओं को अपीलार्थी द्वारा संदत्त पारिश्रमिक है। किसी ऐसे

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



करार के अभाव में, अपीलार्थी अपने स्वयं के उत्पादों के विक्रयों की व्यवस्था करने के क्रियाकलाप करने के लिए बाध्य होगा।

6. केन्द्रीय सरकार ने तारीख 1 मार्च, 1970 को अधिसूचना सं० 25/70 जारी की, जो इस प्रकार है :—

"सैण्ट्रल एक्साइज़ रूल्स, 1944 के नियम 8 के उपनियम (1) द्वारा प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए, केन्द्रीय सरकार, एतद द्वारा केन्द्रीय उत्पाद शुल्क और नमक अधिनियम, 1944 (1944 का 1) की प्रथम अनुसूची की मद सं० 14-जज के अधीन आने वाले बिजली की सहायता से एवं दो या अधिक उर्वरकों को, जिन पर यथास्थिति, उत्पाद शुल्क की समुचित रकम या, इण्डियन टैरिफ ऐक्ट, 1943 की धारा 2-ए के अधीन अतिरिक्त शुल्क पहले से ही संदत्त कर दिया गया हो, उन पर उद्ग्रहणीय सम्पूर्ण उत्पाद-शुल्क से छूट देती है।

स्पष्टीकरण : इस अधिसूचना के प्रयोजन के लिए 'मिश्रित उर्वरक' अभिव्यक्ति से एक से अधिक न्यूट्रीएण्ट (नाइट्रोजन, फासफेट या पोटाश) वाले उर्वरकों का मिश्रण अभिप्रेत है और उसमें राक फासफेट से विनिर्मित सुपर फासफेट जैसा एकल न्यूट्रीएण्ट उर्वरक सम्मिलित नहीं है।"

7. इस अधिसूचना के आधार पर अपीलार्थी ने स्वयं द्वारा विनिर्मित उर्वरकों पर उत्पाद-शुल्क के अधिरोपण से छूट के लिए मांग की और यह दावा किया कि ऐसे उर्वरक इस अधिसूचना के अर्थ में मिश्रित उर्वरक माने जाने चाहिएं। अपीलार्थी ने स्वयं द्वारा विनिर्मित उर्वरकों पर संदेय उत्पाद-शुल्क की गणना के मामले में व्यापारिक बट्टा के रूप में अपने द्वारा बिनिर्मित उर्वरकों के विक्रय के लिए अपने अभिकर्ताओं को अभिकर्ताओं को स्वयं द्वारा विक्रय संदत्त कमीशन की कटौती का भी दावा किया था। इन दोनों कारणों के आधार पर सहायक कलक्टर ने किए गए दावे नामंजूर कर दिए। कलक्टर ने सहायक कलक्टर के विनिश्चयों को अपील कायम रखा। सम्बन्धित प्राधिकारियों के विनिश्चयों से व्यथित होकर अपीलार्थी ने उच्च न्यायालय में रिट पिटीशन फाइल किए। जैसा कि हम पहले बतला चुके हैं, उच्च न्यायालय ने अपने एक ही निर्णय द्वारा इन दो शीर्षकों के अधीन अपीलार्थियों के दावों को ग्रहण करने से इनकार कर दिया और उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी द्वारा फाइल किए गए सब रिट पिटीशन खारिज कर दिए। अपीलार्थी ने इन दावों को नामंजूर करने वाले उच्च न्यायालय के विनिश्चय और निर्णय के विरुद्ध इस न्यायालय द्वारा दी गई विशेष इजाज़त से ये अपीलें फाइल की हैं।

8. अधिसूचना के अधीन छूट के लिए अपीलार्थी के दावे के समर्थन में

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



उसके पक्षकथन का उल्लेख किया जा सकता है। दावा 'ग्रोमर एन० पी० के० 14-35-14 नामक उर्वरक के सम्बन्ध में किया गया है। अपीलार्थी के अनुसार वह मिश्रित उर्वरक है जो अधिसूचना के अधीन अनुतोष पाने के योग्य है। पिटीशनर का पक्ष कथन यह है कि ग्रोमर एन० पी० के० 14-35-14 आयात किए गए दो उर्वरकों अर्थात् रॉक फासफेट और यूरीएट आफ पोटाश को मिलाकर बिजली की सहायता से निर्मित है जिस पर अपीलार्थी ने उचित शुल्क संदत्त किया है। उक्त उर्वरक की विनिर्माण प्रक्रिया में रॉक फासफेट को सल्फ्यूरिक एसिड के साथ मिलाना है जिससे फासफोरिक एसिड तैयार होता है। जब ऐसे फासफोरिक एसिड को अमोनिया के साथ मिलाया जाता है तब मोनो और डी अमोनियम फासफेट घोल के रूप में तैयार होता है। इस घोल में पोटाश का अम्ल लवण (क्लोराइड) मिलाया जाता है। इसके पश्चात् उक्त मिश्रित उर्वरक अस्तित्व में आता है। उक्त प्रक्रिया के दौरान अमोनियम सल्फेट कुछ मात्रा में बनता है, किन्तु न तो उसे पृथक् करना सम्भव है और न ही उसका उपयोग करना सम्भव है, क्योंकि यह अन्य अवयवों के साथ मिश्रित होता है। अपीलार्थी के अनुसार घोल के रूप में मोनो और डी अमोनियम फासफेट का उर्वरक के रूप में इस कारण से प्रयोग नहीं किया जा सकता क्योंकि वे अधिकतम गाढ़े और घोल के रूप में होते हैं। दलील यह है कि चूंकि ग्रोमर एन० पी० के० 14-35-14 दो उर्वरकों से बिजली की सहायता से विनिर्मित है, इसलिए वह अधिसूचना के अधीन छूट के योग्य है। इस दलील के समर्थन में कि उर्वरक ग्रोमर एन० पी० के० 14-35-14 अधिसूचना के अधीन छूट की परिधि के अन्तर्गत आता है, अपीलार्थी की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउन्सेल ने यह दलील दी है कि अधिसूचना में प्रयुक्त भाषा को साधारण रूप से पढ़ने पर यह उर्वरक स्पष्ट रूप से अधिसूचना की परिधि के अन्तर्गत आता है और उक्त अधिसूचना के अधीन छूट का दावा अधिसूचना के लिए अधिकथित सभी अपेक्षाओं की पूर्ति करता है। श्री सीतलवाड ने यह बहस की है कि अधिसूचना में जोड़ा गया स्पष्टीकरण अधिसूचना में प्रयुक्त स्पष्ट भाषा को किसी भी प्रकार से नियंत्रित या प्रभावित नहीं कर सकता। उनका यह भी तर्क है कि कराधान कानूनों और नियमों तथा उनके अधीन जारी की गई अधिसूचनाओं का अर्थान्वयन करना होगा और उनमें प्रयुक्त भाषा के प्रति निर्देश से उन्हें समझने पर उसमें प्रयुक्त भाषा का निर्वचन करके उसके सही आशय के बारे में अथवा उससे अन्यथा सही आशय निकालने का प्रयत्न करने के लिए अनुमान लगाने की कोई गुंजाइश नहीं है। श्री सीतलवाड ने आगे यह भी दलील दी है कि नवम्बर, 1974 में सरकार द्वारा जारी की गयी व्यापारिक सूचना महत्त्वपूर्ण नहीं है जिससें कि यह अधिकथित करते हुए अधिसूचना के साथ

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



विशेषक लगाना तात्पर्यित था कि छूट केवल शुल्क-संदत्त-उर्वरकों के भौतिक मिश्रणों को ही लागू होती है, न कि रासायनिक प्रतिक्रिया के परिणामस्वरूप उत्पादित मिश्रित उर्वरकों को। उनकी यह भी टिप्पणी है कि अधिसूचना के अधीन दी गई छूट में ऐसी व्यापारिक सूचना जारी करके किसी भी प्रकार से कटौती नहीं की जा सकती अथवा उसे वापस नहीं लिया जा सकता या अन्यथा उससे प्रभावित नहीं किया जा सकता, जिसका तात्पर्य अधिसूचना के अर्थ और परिधि को विशेषित करना है तथा अधिसूचना के अधीन फायदा प्राप्त करने के हकदार किसी भी पक्षकार के अधिकार को, स्वयं अधिसूचना का संशोधन किए बिना, सूचना के किसी भी प्रकार के तात्पर्यित स्पष्टीकरण द्वारा छीना नहीं जा सकता।

9. इस बात पर ध्यान दिया जा सकता है कि उच्च न्यायालय के समक्ष इसी प्रकार की दलील दी गई थी और इसी प्रकार के तर्क भी प्रस्तुत किए गए थे। उच्च न्यायालय ने बहुत ही विस्तारपूर्वक और सावधानीपूर्वक अधिसूचना के अधीन छूट के लिए पेश किए गए पक्षकथन और उसके समर्थन में दिए गए तर्कों पर विचार किया है। हमारे मत में उच्च न्यायालय ने सावधानीपूर्वक और उचित रूप से विचार करने के पश्चात् सही रूप से छूट के दावे को और दिए गए तर्कों को नामंजूर किया था। इस सम्बन्ध में दावे को ग्रहण करने से इनकार करते समय उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया था—

> "अधिनियम की प्रथम अनुसूची की मद सं० 14-जज के अधीन आने वाला 'मिश्रित उर्वरक' है जिसे छूट प्राप्त है। मद सं० 14-जज सभी प्रकार के उर्वरकों को निर्दिष्ट करती है किन्तु ऐसे प्राकृतिक, पाशविक या वनस्पति उर्वरकों को अपवर्जित करती है जिन पर रासायनिक अभिक्रिया न की गई हो। इसलिए यह बात स्पष्ट है कि अधिसूचना केवल उर्वरकों से सम्बन्धित है और वह किसी अन्य वस्तु से सम्बन्धित नहीं है। इस मत को इन शब्दों से 'दो या उससे अधिक उर्वरकों से...मिश्रित' और आगे समझाया गया है। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि शुल्क से छूट प्राप्त करने के लिए मिश्रित उर्वरकों को ऐसा होना चाहिए जो दो या उससे अधिक उर्वरकों से विनिर्मित किया गया है। जब अधिसूचना में प्रयुक्त शब्द 'उर्वरक' पर इस आशय से पुनः बल दिया जाता है, तो यह स्पष्ट हो जाता है कि छूट केवल उर्वरकों के मिश्रण पर ही उपलभ्य होगी। यह अर्थ स्पष्टीकरण द्वारा और भी स्पष्ट कर दिया गया है जो मिश्रित उर्वरकों को उर्वरकों के मिश्रण के रूप में परिभाषित करता है। इसलिए अधिसूचना के इस अर्थ को समझने में कोई हिचकिचाहट

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



नहीं हो सकती कि वह दो या उससे अधिक उर्वरकों से विनिर्मित मिश्रित उर्वरकों को ही केवल छूट प्रदान करने के लिए तात्पर्यित है। उसका प्रयोजन उर्वरकों और अन्य वस्तुओं के मिश्रणों को छूट प्रदान करना नहीं है।

पिटीशनर कम्पनी की ओर से श्री सीतलवाड ने बलपूर्वक यह तर्क दिया है कि यदि मिश्रित उर्वरकों के विनिर्माण में दो या उससे अधिक उर्वरकों का उपयोग किया गया है, तो ऐसे उर्वरक सल्फ्यूरिक एसिड और अमोनिया जैसी अन्य वस्तुओं के उपयोग के बावजूद भी छूट के हकदार होंगे। उनके अनुसार अधिसूचना में जो कुछ अपेक्षित है, वह मिश्रित उर्वरकों के विनिर्माण में दो या उससे अधिक उर्वरकों, का प्रयोग है और इस बात से कोई अन्तर नहीं पड़ता, यदि दो या उससे अधिक उर्वरक के अतिरिक्त किन्हीं अन्य वस्तुओं का भी प्रयोग किया जाता है। उन्होंने यह भी बताया है कि यदि भारत सरकार उस रीति से छूट को सीमित करना चाहती जिससे विद्वान् सरकारी वकील ने इसका अर्थान्वयन किया है, तब उसने 'दो या उससे अधिक उर्वरकों शब्दों के पहले 'केवल' शब्द का प्रयोग किया होता। चूंकि उस शब्द का प्रयोग नहीं किया गया है, इसलिए छूट उस समय उपलभ्य होगी, जब अन्य वस्तुओं का प्रयोग किया गया हो। यदि अधिसूचना का यही आशय था, तब उसमें सरलता से यह बात कही जा सकती थी; 'दो या उससे अधिक उर्वरकों या अन्य वस्तुओं से विनिर्मित' उसमें न केवल इस बात के कहने की चूक हुई है बल्कि दूसरी ओर सम्पूर्ण अधिसूचना में उर्वरकों और केवल उर्वरकों के उपयोग पर बल दिया गया है। 'दो या उससे अधिक उर्वरकों' के पहले 'केवल' शब्द का अभाव भारत सरकार के वास्तविक आशय को समझने के रास्ते में किसी भी प्रकार से बाधा नहीं डालता। इसके परिणामस्वरूप, हमारे मत में अधिसूचना का सही और वास्तविक अर्थ यह है कि छूट केवल मिश्रित उर्वरकों को ही उपलभ्य है। यदि अन्य वस्तुओं का भी मिश्रित उर्वरकों के विनिर्माण में प्रयोग किया गया है, तब भी उक्त मिश्रित उर्वरक छूट के हकदार नहीं होंगे।"

उच्च न्यायालय ने आगे निम्नलिखित मत व्यक्त किया—

"हम एन० पी० के० 14 : 35 : 14 और उर्वरकों के विनिर्माण की प्रक्रिया तथा उनमें प्रयुक्त वस्तुओं का वर्णन करने वाले रिट पिटीशन के पैरा 8 के प्रकथनों पर पहले ही ध्यान दे चुके हैं। पिटीशनर कम्पनी ने स्वयं ही यह कहा है कि एन० पी० के० 14 : 35 : 14

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



दो आयात किए गए उर्वरकों अर्थात् रॉक फासफेट और पोटाश के अम्ल लवण से बिजली की सहायता से मिश्रित करके बनाया जाता है। रिट पिटीशन के प्रकथनों के अनुसार विनिर्माण की प्रक्रिया में रॉक फासफेट के साथ सल्फ्यूरिक एसिड को मिलाना सम्मिलित है और इस मिश्रण से फासफोरिक एसिड तैयार होता है। इस प्रकार विनिर्मित फासफोरिक एसिड अमोनिया के साथ और मिलाया जाता है जिसके परिणामस्वरूप मोनो और डी अमोनियम फासफेट घोल रूप में तैयार होता है। इस समय हमें फासफोरिक एसिड और मोनो और डी अमोनियम फासफेट के बारे में विचार नहीं करना है जो विनिर्माण की प्रक्रिया में अस्तित्व में आते हैं। हमें इस उर्वरक के विनिर्माण में प्रयुक्त मूल वस्तुओं पर भी ध्यान केन्द्रित करना है। रिट पिटीशन के पैरा 8 के प्रकथनों से यह बात स्पष्ट है कि न केवल दो उर्वरक अर्थात् रॉक फासफेट और पोटाश का अम्ल लवण का ही प्रयोग किया जाता है, बल्कि सल्फ्यूरिक एसिड और अमोनिया का भी प्रयोए किया जाता है। एन० पी० के० 14 : 35 : 14 के विनिर्माण में प्रयुक्त सल्फ्यूरिक एसिड और अमोनिया, विनिर्माण की प्रक्रिया में सृष्ट नहीं किए जाते हैं। वे बाहर से लाए जाते हैं और रॉक फासफेट और पोटाश के अम्ल लवण जैसे दो उर्वरकों के विनिर्माण की प्रक्रिया में प्रयोग किए जाते हैं यह बात रिट पिटीशन के पैरा 8 में स्पष्ट है।

निस्संदेह सल्फ्यूरिक एसिड एक एसिड है। यह बात न केवल उसके इस नाम से ही ज्ञात है बल्कि 'एसिड' शीर्षक के अधीन प्रथम अनुसूची की मद 14-छ में दिए गए एसिडों की सूची से भी स्पष्ट है। मद 14-ज से जो गैस शीर्षक के अधीन है, यह देखा जा सकता है कि अमोनिया गैस है, सल्फ्यूरिक एसिड और अमोनिया स्वतंत्र वस्तुएं हैं जिन पर स्वयं ही उत्पाद शुल्क लगाया जा सकता है। इसके विरुद्ध जब हम प्रथम अनुसूची की मद सं० 14-जज पर विचार करते हैं, तो वह केवल उर्वरकों से सम्बन्धित है। उससे प्राकृतिक पाशविक या वनस्पति उर्वरकों को अपवर्जित करते हुए सभी प्रकार के उर्वरक तात्पर्यित हैं जबकि उन पर रासायनिक अभिक्रिया न की गई हो। उसमें ऐसी बहुत सी वस्तुएं दी गई हैं जिन्हें विधि के अधीन उर्वरक के रूप में माना गया है। मद 14-जज की प्रविष्टि 3 में वे शब्द हैं जिनका अधिसूचना में प्रयोग किया गया है। वह दो या उससे अधिक उर्वरकों से बिजली की सहायता से विनिर्मित मिश्रित उर्वरकों से सम्बन्धित है। जब स्वयं अधिनियम में एक ओर मिश्रित उर्वरकों सहित उर्वरकों और दूसरी

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



ओर सल्फ्यूरिक एसिड जैसे एसिडों और अमोनिया जैसी गैसों के बीच प्रभेद किया गया है और रखा गया है, तब यह तर्क देना निरर्थक है कि अधिसूचना सं० 25/70 ऐसे दो मिश्रित उर्वरकों को छूट देती है जो दो या उससे अधिक उर्वरकों और एसिड तथा गैस से विनिर्मित है। यह कहना केवल ऐसी बात को जोड़ना है जो अधिसूचना में नहीं है। इसलिए हमारा यह मत है कि ग्रोमर एन० पी० के० 14 : 35 : 14 असूचना के अधीन दी गई छूट के अन्तर्गत नहीं आता है।'

10. हम उच्च न्यायालय द्वारा व्यक्त मत से पूर्णतः सहमत हैं। हम इस बात पर भी ध्यान दे सकते हैं कि उच्च न्यायालय ने आगे स्पष्ट रूप से निम्नलिखित मत व्यक्त भी किया है—

"एन० पी० के० 14 : 35 : 14 की विनिर्माण प्रक्रिया को, जो कई अन्य वस्तुओं को अस्तित्व में लाती है, और जिसका प्रयोग पुनः एक बार इस प्रक्रिया में किया जाता है और जिसमें एक वस्तु के साथ दूसरी वस्तु मिलाई जाती हैं, अधिसूचना द्वारा परिकल्पित रूप में उर्वरकों के मिश्रण की प्रक्रिया नहीं कहा जा सकता। इसलिए यह अभिनिर्धारित करना होगा कि एन० पी० के० 14 : 35 : 14 अधिसूचना सं० 25/70 के अधीन छूट प्राप्त करने के योग्य नहीं है।"

11. यह बात भी ध्यान में रखनी चाहिए कि अधिसूचना के साथ जोड़ा गया स्पष्टीकरण भी स्वयं अधिसूचना का एक भाग है। अधिसूचना का पूर्ण रूप में अर्थान्वयन किया जाना चाहिए और अधिसूचना का उचित रूप से निर्वचन करने पर स्पष्टीकरण की, जो अधिसूचना में जोड़ा गया है उपेक्षा नहीं की जा सकती। इस बारे में यह प्रश्न कि क्या स्पष्टीकरण वास्तव में आतात्विक है, जो अधिसूचना के प्रवर्तन या प्रभाव को नियन्त्रित करने के लिए है, क्योंकि स्पष्टीकरण न तो नियन्त्रित करने के लिए है और न ही प्रवर्तन के लिए है बल्कि केवल स्पष्ट करने के लिए है। स्पष्टीकरण में जो कुछ उपबन्धित है, वह किसी भी प्रकार से उसका विरोधी या प्रतिकूल नहीं है जो अधिसूचना उपबन्ध करती है।

12. श्री सीतलवाड ने यह शिकायत की है कि सम्बन्धित प्राधिकारियों ने विरोधी कम्पनी को समान परिस्थितियों में अधिसूचना का फायदा दिया था। यदि अपीलार्थी की शिकायत सही है, तो निस्सन्देह अपीलार्थी को उसके बारे में दुःख महसूस करने का कारण हो सकता है। तथापि, हमें यह बतलाना होगा कि यदि अपीलार्थी की शिकायत साधार है, तो भी वह उसे अधिसूचना के फायदे का दावा करने का हकदार नहीं बनाती है। किसी विशेष पक्षकार के पक्ष में

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



गलत विनिश्चय अन्य पक्षकार को गलत विनिश्चय के आधार पर फायदे का दावा करने का हकदार नहीं बनाता है। इसलिए हमारी यह स्पष्ट राय है कि अपीलार्थी द्वारा विनिर्मित उर्वरक जिसके सम्बन्ध में अधिसूचना के अधीन छूट का दावा किया गया है, अधिसूचना के अर्थ और परिधि में मिश्रित उर्वरक नहीं है और हमें अपीलार्थी के पक्षकथन को नामंजूर करने में कोई हिचकिचाहट नहीं है। हम उच्च न्यायालय के निर्णय में उल्लिखित कारणों से अपनी सहमति व्यक्त करते हैं।

13. अपीलार्थी की ओर से उठाया गया अन्य प्रश्न उत्पाद-शुल्क की संगणना के मामले में विनिर्मित माल के निर्धारणीय मूल्य से विक्रय-अभिकर्ताओं को संदत्त कमीशन की कटौती विषयक अपीलार्थी के दावे से सम्बन्धित है। अपीलार्थी ने जो करार विक्रय अभिकर्ताओं से किया था, वह स्पष्ट रूप से यह दर्शाता है कि जो विक्रय अभिकर्ता नियुक्त किए गए हैं, वे अपीलार्थी की ओर से उर्वरकों के विक्रय के लिए अपीलार्थी के अभिकर्ता थे। करार में स्पष्ट रूप से यह उपबन्ध है कि विक्रय अभिकर्ता अपीलार्थी की ओर से आर्डर प्राप्त करेंगे और अपीलार्थी की ओर से ही ऐसे आर्डर निष्पादित करेंगे और विभिन्न पक्षकारों को बेचे गए माल का मूल्य वसूल करने के लिए अपीलार्थी के प्रति दायी रहेंगे और विक्रय अभिकर्ताओं द्वारा की गई ऐसी सेवाओं के लिए विक्रय अभिकर्ता पक्षकारों के बीच किए गए करार में अनुबन्धित कमीशन के हकदार होंगे। करार निश्चित रूप से अभिकरण करार है तथा विक्रय अभिकर्ता करार में अनुबन्धित निबन्धनों और शर्तों के आधार पर अपीलार्थी के उत्पाद के विक्रय और विनिर्माण के लिए अभिकर्ताओं के रूप में नियुक्त किए गए थे। मैसर्स रैलिस इण्डियालिमिटेड के साथ तारीख 1 अप्रैल, 1971 को हुए करार का खण्ड 2(क), जो नियुक्ति के प्रश्न से सम्बन्धित है, स्पष्ट रूप ये यह उल्लेख करता है :—"कोरोमंडल एतदद्वारा राज्यक्षेत्रों······में उत्पाद······को उसकी ओर से उत्पाद के विक्रय और वितरण के लिए कोरोमण्डल के विक्रय अभिकर्ताओं में से एक विक्रय अभिकर्ता के रूप में नियुक्त करता है···।"

14. अपीलार्थी जो कमीशन, विक्रय अभिकर्ताओं को संदत्त करता है, वह ऐसे अभिकर्ताओं के रूप में उनके द्वारा की गई सेवाओं के लिए है। अभिकर्ताओं को की गई सेवाओं के लिए संदत्त ऐसे कमीशन को किसी व्यापारिक बट्टे की प्रकृति के रूप में नहीं माना जा सकता जो केन्द्रीय उत्पाद शुल्क और नमक अधिनियम, 1944 के अधीन उत्पाद शुल्क के अधिरोपण के प्रयोजन के लिए माल के निर्धारणीय मूल्य का अवधारण करने में छूट के योग्य है।

15. श्री सीतलवाड द्वारा अवलम्ब लिए गए एम० सी० बी० एस०

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



**अरुणाचला नाडर और अन्य बनाम मद्रास राज्य और अन्य**[1] के मामले में इस न्यायालय का विनिश्चय और **रेलीकेंस्ड विक्चुअलर्स म्युचुअल ट्रेडिंग एसोसिएशन, एक्सपार्टी अडेन**[2] के मामले में इंग्लैण्ड में अपील न्यायालय का विनिश्चय वर्तमान मामले के प्रश्न का विनिश्चय करने में किसी भी प्रकार से सहायक नहीं हैं।

16. **एम० सी० बी० एस० अरुणाचला नाडर और अन्य बनाम मद्रास राज्य और अन्य**[1] के मामले में इस न्यायालय का सम्बन्ध मद्रास कार्मशियल क्राप्स मार्केट्स ऐक्ट, 1939 (1939 का मद्रास अधिनियम सं० 20) और उसके अधीन विरचित नियमों और उनके अनुसरण में जारी की गई कतिपय अधिसूचनाओं की सांविधानिक विधिमान्यता के प्रश्न से था। उपविधि 25 बाजार और अधिसूचित क्षेत्र को लागू होने वाली व्यापारिक मोक से सम्बन्धित है। व्यापारिक मोक की प्रकृति पर विचार करते हुए इस न्यायालय ने पृष्ठ 109 पर निम्नलिखित मत व्यक्त किया है—

> "व्यापारिक मोक क्या है? व्यापार में धन के बदले वस्तुओं का विनिमय होता है, क्रय और विक्रय का कारबार तथा व्यवहार में विक्रेता, क्रेता और बेची गई वस्तु सदा विक्रय के लिए संदत्त कमीशन सम्मिलित होता है। मोक से प्रतिकर रिबेट या कटौती के रूप में दी गई कोई वस्तु अभिप्रेत है। उस धारा के अधीन उक्त कटौती वाणिज्यिक फसलों के सम्बन्ध में किसी संव्यवहार में होनी चाहिए। कटौती वस्तु या कीमत में से हो सकती है। प्राप्तकर्ता विक्रेता, क्रेता या तृतीय पक्षकार भी हो सकता है। जब 'क' 'ख' को कपास की कुछ मात्रा 100/-रुपये में विक्रय करता है तो 'ख', क्रेता, विक्रय कीमत में से एक रुपए की कटौती कर सकता है और 'क' को 99/-रुपए का संदाय कर सकता है। वह उस रकम को स्वयं रख सकता है अथवा 'ग' को उसका संदाय कर सकता है। इसी प्रकार 'क', विक्रेता एक मन कपास के विक्रय का प्रस्ताव कर सकता है किन्तु वास्तव में उसके कुछ भाग की कटौती करता है और उस मात्रा को स्वयं के लिए रखता है अथवा 'ग' को देता है अथवा 'क' और 'ख' दोनों क्रय की गई वस्तु की कीमत 102/-रुपये तय कर सकते हैं किन्तु क्रेता 'ग' को एक रुपये का संदाय करता है अथवा यह भी हो सकता है कि संदाय की कीमत अथवा संव्यवहार से कोई सम्बन्ध न हो किन्तु दोनों पक्षकार परिसरों के उपयोग के लिए अथवा 'ग' द्वारा की गई सेवाओं के लिए प्रतिफलस्वरूप विनिर्दिष्ट

---

[1] [1959] सप्लीमेंट 1 एस० सी० आर० 92.

[2] (1899) 42 ला रिपोर्ट्स चांसरी डिवीजन 1.

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



रकम 'ग' का संदाय कर सकते हैं। यह प्रश्न कि क्या विशेष संदाय व्यापारिक मोक है अथवा नहीं, प्रत्येक मामले के तथ्यों पर निर्भर होता है। प्रथमतः, वह वाणिज्यिक फसलों के सम्बन्ध में किसी संव्यवहार में कटौती अवश्य ही होनी चाहिए। यदि वह संदत्त की जाने वाली करार की गई कीमत अथवा अन्तरित की जाने वाली वस्तु में से कटौती है, तो वह व्यापारिक मोक होगी। दूसरी ओर, यदि संदाय संव्यवहार के निबन्धनों के प्रतिकूल है, किन्तु वह परिसरों के उपयोग अथवा की गई सेवाओं के प्रतिफल के बारे में किया जाता है, तो वह कीमत में से अथवा किसी संव्यवहार में से कटौती नहीं होगी।"

17. मत अधिनियम का अर्थान्वयन करते समय उसके उपबन्धों के संदर्भ में व्यक्त किए गए थे। वे प्रस्तुत मामले में उठाए गए प्रश्नों पर विचार करने के लिए किसी भी प्रकार से सहायक नहीं हैं। इस बात पर भी ध्यान दिया जा सकता है कि प्रस्तुत मामले में अपीलार्थी द्वारा उन अभिकर्ताओं को किया गया कोई भी विक्रय नहीं है जिन्हें अपीलार्थी के अभिकर्ताओं के रूप की गई सेवाओं के लिए पारिश्रमिक के तौर पर कमीशन का संदाय किया गया है।

18. **रेलीसेन्स्ड विक्चुअलर्स म्युचुअल ट्रेडिंग एसोसिएशन एक्सपार्टी आडेन**[1] वाले मामले में इंग्लैण्ड में अपील न्यायालय ने करार का अर्थान्वयन करने पर यह मत व्यक्त किया था कि करार में 'बट्टा' शब्द का अर्थान्वयन कमीशन के रूप किया जाना चाहिए क्योंकि करार बट्टे पर शेयर पुरोधृत करने के लिए नहीं था।

19. यह सम्भव है कि प्रस्तुत मामले में संदाय, जिसे कमीशन कहा गया है, मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करते हुए व्यापारिक मोक की प्रकृति का हो सकता है। किन्तु प्रत्येक प्रकार का व्यापारिक मोक अनिवार्य रूप से उत्पाद शुल्क के निर्धारण में कटौती नहीं होती है। अपीलार्थी और उसके विक्रय अभिकर्ताओं के बीच हुए करार के आधार पर अपीलार्थी की ओर से अपीलार्थी के उत्पाद विक्रय के मामले में अभिकर्ता को उसके द्वारा की गई सेवाओं के लिए संदत्त कमीशन को ऐसे व्यापारिक बट्टे की प्रकृति के रूप में नहीं माना जा सकता जो उत्पाद शुल्क के उद्ग्रहण के प्रयोजन के लिए माल के निर्धारणीय मूल्य की संगणना की जाने वाली कटौती के लिए अर्हित हो। विक्रय अभिकर्ताओं को संदत्त कमीशन व्यापारिक बट्टा नहीं है जो या तो थोक क्रेताओं को या फुटकर क्रेताओं को दी जाती है। वह उपभोक्ता या व्यापारी को नहीं दी जाती है। अभिकर्ता द्वारा की गई सेवाओं के लिए पारिश्रमिक के तौर पर विक्रय अभिकर्ता को करार के आधार पर संदत्त कमीशन अथवा कारखाने

1 (1899) 42 ला रिपोर्ट्स चांसरी डिवीजन 1.

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



अथवा विनिर्माण या उत्पादन के किसी अन्य परिसर से विनिर्माण या उत्पादन के स्थान पर परिदान के लिए माल के हटाने के समय संदत्त कमीशन किसी भी तर्क के आधार पर संदेय व्यापारिक बट्टा नहीं कहा जा सकता। इसलिए विक्रय अभिकर्ताओं को संदत्त कमीशन की रकम अधिनियम की धारा 4 के स्पष्टीकरण के अर्थ में व्यापार बट्टा नहीं है और किसी भी कटौती के लिए अर्हित नहीं है। हमारे विचार से उच्च न्यायालय का अपीलार्थी के इस दावे को नामंजूर करना स्पष्ट रूप से न्यायोचित था।

20. इसलिए अपीलार्थी द्वारा किए गए दोनों दावे असफल होते हैं और उच्च न्यायालय ने उन्हें सही तौर से ही नामंजूर किए हैं। तदनुसार, हम अपीलें खारिज करते हैं। तथापि, हम खर्चे के बारे कोई आदेश नहीं करते हैं।

अपीलें खारिज की गईं।

जैन०/श्री०

---

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

राजेन्द्र झा

बनाम

पीठासीन अधिकारी, श्रम न्यायालय, बोकारो स्टील सिटी, जिला धनबाद और एक अन्य

(21 अगस्त, 1984)

(मुख्य न्यायाधिपति वाई० वी० चन्द्रचूड़, न्यायाधिपति ए० वरदराजन और ए० एन० सेन)

**औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 (1947 का 14)— धारा 33 (2) (ख) (सपठित सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 11]—कर्मचारी की पदच्युति या सेवोन्मुक्ति के अनुमोदन के समर्थन में अतिरिक्त साक्ष्य पेश करने का औचित्य—अपीलार्थी को अवचार के अभिकथन के आधार पर पदच्युत किया जाना—श्रम न्यायालय के समय औद्योगिक विवाद का पर्याप्त समय तक लम्बित रहना प्रबन्धमण्डल द्वारा पदच्युति के अनुमोदन और पश्चातवर्ती प्रक्रम में और आगे साक्ष्य पेश किए जाने के लिए आवेदन फाइल किया जाना— कर्मचारी द्वारा ऐसी इजाज़त दिए जाने की बात को चुनौती दी जानी— वास्तव में, पदच्युति या सेवोन्मोचन के आदेश के अनुमोदन के लिए उक्त धारा के अधीन की गई कार्यवाही में नियोजक को यह छूट होती है कि वह कर्मचारी के विरुद्ध पारित आदेश को न्यायोचित ठहराने के लिए साक्ष्य पेश करे—जब कर्मचारी न्यायालय के आदेश को प्रथम बार चुनौती नहीं दे रहा है, तो ऐसे मामले में पूर्व-न्याय का सिद्धान्त प्रवर्तित होगा।**

अपीलार्थी को भारतीय इस्पात प्राधिकरण के चिकित्सा विभाग में ड्रेसर के रूप में नियुक्त किया गया था। 1 मार्च, 1975 को उसे अवचार के उन आरोपों के आधार पर जिनके अन्तर्गत कर्त्तव्य से अनुपस्थित रहना, रजिस्टरों में की प्रविष्टियों का मिथ्याकरण और अभिलेखों को नष्ट करना आदि था, विभागीय जांच के परिणामस्वरूप सेवा से पदच्युत कर दिया गया था। चूंकि बोकारो के श्रम न्यायालय में प्रबन्ध मण्डल और उसके कर्मकारों के बीच औद्योगिक विवाद लम्बित था, इसलिए प्रबन्ध मण्डल ने ओद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 33 (2) (ख) के अधीन आवेदन फाइल किया

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



जिसके द्वारा उसने छोटा नागपुर के श्रम न्यायालय का, अपीलार्थी के विरुद्ध पारित पदच्युति के आदेश के सम्बन्ध में अनुमोदन प्राप्त करने की ईप्सा की थी। उस आवेदन पर किया गया विनिश्चय भागत: अपीलार्थी के पक्ष में था और भागत: उसके विरुद्ध था। श्रम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि (1) विभागीय जांच इसलिए अविधिमान्य थी, क्योंकि बोकारो स्टील लिमिटेड का मुख्य चिकित्सा अधिकारी न तो आरोप-पत्र जारी करने के लिए और न ही ऐसी जांच समिति, जिसने अपीलार्थी को उसके विरुद्ध विरचित आरोपों के लिए दोषी ठहराया था, गठित करने के लिए सक्षम था ; और यह कि (2) प्रबन्ध मण्डल को पदच्युति का आदेश न्यायोचित ठहराने के लिए साक्ष्य पेश करने का अवसर दिया जाना चाहिए। अपीलार्थी ने श्रम न्यायालय के आदेश के दूसरे भाग के विरुद्ध रिट पिटीशन फाइल किया जिसकी दलील यह थी कि प्रबन्ध मण्डल को पदच्युति के आदेश को न्यायोचित ठहराने के लिए साक्ष्य प्रस्तुत करने की अनुज्ञा नहीं दी जानी चाहिए। उच्च न्यायालय ने उस रिट पिटीशन के सम्बन्ध में आदेश जारी किया और श्रम न्यायालय में चलने वाली आगे की कार्यवाहियों पर रोक लगा दी। प्रबन्धमण्डल ने श्रम न्यायालय के आदेश के प्रथम भाग के विरुद्ध रिट पिटीशन फाइल किया जिसके द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया कि जांच दूषित है। पटना उच्च न्यायालय की रांची स्थित न्यायपीठ ने अपने निर्णय द्वारा दोनों रिट पिटीशनों को खारिज कर दिया। उच्च न्यायालय के उसी निर्णय के विरुद्ध जिसके परिणामस्वरूप रिट पिटीशन खारिज कर दिया गया था, प्रबन्धमण्डल ने उच्चतम न्यायालय में सिविल अपील फाइल की जिसमें उच्च न्यायालय के निष्कर्ष की बाबत यह शिकायत की गई कि मुख्य चिकित्सा अधिकारी अपीलार्थी को आरोप-पत्र जारी करने या जांच समिति गठित करने के लिए सक्षम नहीं था। उच्चतम न्यायालय ने 22 जुलाई, 1980 को अपील खारिज कर दी और उसने श्रम न्यायालय और उच्च न्यायालय का यह निष्कर्ष कि वह जांच जिसके परिणामस्वरूप अपीलार्थी को पदच्युत किया गया था, दूषित है, कायम रखा। चूंकि उच्चतम न्यायालय ने प्रबन्ध मण्डल द्वारा की गई अपील में श्रम न्यायालय के इस आदेश पर कि पदच्युति के आदेश को न्यायोचित ठहराने की दृष्टि से प्रबन्ध मण्डल को साक्ष्य प्रस्तुत करने के लिए अनुज्ञात किया जाना चाहिए, रोक नहीं लगाई थी, इसलिए श्रम न्यायालय ने उससे साक्ष्य प्रस्तुत करने की अपेक्षा की। अपीलार्थी ने प्रबन्धमण्डल द्वारा साक्ष्य प्रस्तुत किए जाने पर आपत्ति करते हुए एक आवेदन फाइल किया, किन्तु उस आवेदन को श्रम न्यायालय ने खारिज कर दिया। उस आदेश से व्यथित होकर अपीलार्थी ने पटना उच्च न्यायालय में यह दलील देते हुए रिट पिटीशन फाइल किया कि प्रबन्धमण्डल को साक्ष्य प्रस्तुत करने की अनुज्ञा नहीं दी जानी चाहिए, विशेष

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



रूप से इसलिए क्योंकि उसने श्रम न्यायालय के आदेश के अनुसरण में साक्ष्य प्रस्तुत करने की बजाय, इस निष्कर्ष को कि जांच दूषित है, चुनौती देने का रास्ता अपनाया है। उच्च न्यायालय की रांची स्थित न्यायपीठ द्वारा रिट पिटीशन खारिज कर दिए जाने के पश्चात्, अपीलार्थी ने विशेष इजाज़त लेकर यह अपील फाइल की है। अपील खारिज करते हुए,

**अभिनिर्धारित**—यह सर्वविदित है कि ऐसी किसी कार्यवाही में नियोजक को यह छूट है कि वह कर्मचारी के विरुद्ध पारित आदेश को न्यायोचित ठहराने लिए साक्ष्य पेश करे। श्रम न्यायालय का निर्णय इस अभिकथन का समर्थन नहीं करता कि नियोजकों ने आवश्यक साक्ष्य प्रस्तुत करने के अवसर की मांग नहीं की थी। बहुत दिनों से चली आ रही इन लम्बी कार्यवाहियों से यह दर्शित होता है कि अपीलार्थी मुकदमा लड़ने वाला अत्युत्साही व्यक्ति है जिसे स्पष्टतः अपने अधिकारों के सम्बन्ध में अच्छी जानकारी है। उसने श्रम न्यायालय के समक्ष चल रही कार्यवाहियों में इस विस्तृत धरती पर उपलभ्य हर संभव आपत्ति की है। वस्तुतः यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि वह श्रम न्यायालय के पीठासीन अधिकारी की सत्यनिष्ठा पर लांछन लगाने की सीमा तक भी गया। यह असंभाव्य है कि यदि नियोजक ऐसे अवसर की मांग न करते तो वह श्रम न्यायालय द्वारा साक्ष्य प्रस्तु करने की उन्हें अनुज्ञा दिए जाने का विरोध न करता। उसने तो विरोध किया ही था। (पैरा 6 और 10)

अपीलार्थी की इस दलील में कोई सार नहीं है कि श्रम न्यायालय ने नियोजकों को साक्ष्य प्रस्तुत करने की अनुज्ञा देने में स्वयं अपनी पहल पर कार्य किया। श्रम न्यायालय ने नियोजकों को साक्ष्य प्रस्तुत करने की अनुज्ञा देते हुए पारित आदेश स्वीकार कर लिया और अपीलार्थी ने उसके अनुसार कार्य किया उसने पहले ही अपने साक्षियों की एक सूची दी है और उन साक्षियों की प्रति-परीक्षा की है जिनका साक्ष्य नियोजकों ने प्रस्तुत किया था। इस प्रक्रम में श्रम न्यायालय के आदेश के अनुसरण में जो कुछ भी किया गया, उसे समाप्त करना गलत होगा। इसके अलावा अपीलार्थी ने न्यायालय के आदेश को जो चुनौती दी थी, वह विफल हो चुकी है और पटना उच्च न्यायालय का अपीलार्थियों का रिट पिटीशन खारिज करने वाला आदेश अन्तिम हो चुका है। (पैरा 11 और 12)

विधि सम्बन्धी कोई ऐसा प्रश्न जो तथ्यों का नया अन्वेषण करने की अपेक्षा नहीं करता, कार्यवाही के पश्चात्वर्ती प्रक्रम में उठाए जाने की इजाजत दी जा सकती है, किन्तु वह इस शर्त के अधीन है कि वह प्रश्न उन्हीं पक्षकारों के बीच किसी विनिश्चय द्वारा समाप्त नहीं हुआ है जहां तक पूर्व-न्याय के प्रश्न मकसबन्ध है यदि कोई न्यायालय ऐसी अधिकारिता धारण करते हुए जो उसके

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



पास नहीं है, विधि के प्रश्न के सम्बन्ध में कोई त्रुटिपूर्ण विनिश्चय करता है, तो यह तर्क देना संभव हो सकता है कि वह विनिश्चय उन्हीं पक्षकारों के बीच भी पूर्वन्याय के रूप में प्रवर्तित नहीं हो सकता। श्रम न्यायालय को यह विनिश्चय करने की अधिकारिता थी कि क्या उसे नियोजकों को साक्ष्य प्रस्तुत करने की इजाज़त देनी चाहिए। यह हो सकता है कि उसने उस अधिकारिता का प्रयोग करने में अनियमितता बरती हो, किन्तु उसका उन मामलों से प्रभेद किया जाना है जिनमें किसी कार्यवाही को ग्रहण करने या कोई विशेष आदेश पारित करने की अधिकारिता न्यायालय के पास मूल रूप से नहीं होती। इसके अलावा, यद्यपि यह कहना सत्य होगा कि नियोजकों ने अधिनियम की धारा 33 (2) (ख) के अधीन आवेदन फाइल करने के साथ ही साथ-साक्ष्य प्रस्तुत करने के अवसर की मांग नहीं की फिर भी यह अभिनिर्धारित करना संभव नहीं है कि उन्होंने कार्यवाहियों के समाप्त हो जाने के पश्चात् ऐसे अवसर की मांग की। जो बात हुई थी, वह यह है कि नियोजकों ने अधिनियम की धारा 33 (2) (ख) के अधीन जो आवेदन फाइल किया था, उस पर सबसे पहले विचार किया गया। जब उस आवेदन पर सुनवाई लगभग पूरी होने वाली थी, तब किन्तु उस पर अन्तिम आदेश पारित किए जाने से पूर्व, नियोजकों ने पदच्युति के आदेश को न्यायोचित ठहराने के लिए साक्ष्य प्रस्तुत करने के अवसर की मांग की। श्रम न्यायालय ने अपने एक ही निर्णय द्वारा दोनों ही मामलों का निपटारा साथ-साथ किया। उसने अपने एक ही और उसी निर्णय द्वारा यह अभिनिर्धारित किया कि विभागीय जांच दूषित है, किन्तु नियोजकों को पदच्युति आदेश को न्यायोचित ठहराने के लिए साक्ष्य प्रस्तुत करने की इजाज़त दी जानी चाहिए। अपीलार्थी की यह दलील कि नियोजकों ने साक्ष्य प्रस्तुत करने के अवसर की मांग बिल्कुल ही नहीं की और यह कि श्रम न्यायालय ने अनुग्रहपूर्वक कार्य किया, स्वीकार करना संभव नहीं है। इस प्रकार यह नहीं कहा जा सकता कि श्रम न्यायालय ने नियोजकों को साक्ष्य प्रस्तुत करने की इजाज़त देते हुए आदेश पारित करके अधिकारिता के बिना कार्य किया है। (पैरा 16)

**प्रभेदित निर्णय**

पैरा

[1980] [1980] 2 उम० नि० प० 911=[1979] 3 एस० सी० आर० 1165:
**शंकर चक्रवर्ती बनाम ब्रिटानिया बिस्कुट कम्पनी लिमिटेड;** 8

[1972] [1972] 2 उम० नि० प० 18=(1972) 3 एस० सी० आर० 29: 7,8
**दिल्ली क्लाथ और जनरल मिल्स कम्पनी बनाम लुढ बुधसिंह;**

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



निर्दिष्ट निर्णय

[1970] [1970] 3 एस० सी० आर० 830:
मथुरा प्रसाद बाजू जायसवाल बनाम डोसीबाई ए० बी० जीजीबाई 15

[1965] [1965) 2 एस० सी० आर० 661:
चित्तूरी सुब्बन्ना बनाम कुडप्पा सुब्बन्ना, 14

**सिविल अपीली अधिकारिता : 1981 की सिविल अपील सं० 1346— (एन० एल०)**

(1980 के सी० डब्ल्यू० जे० सी० सं० 531 में पटना उच्च न्यायालय के 5 फरवरी, 1981 वाले निर्णय और आदेश के विरुद्ध विशेष इजाजत लेकर की गई अपील)

**अपीलार्थी की ओर से** श्री ए० मिनोचा और श्रीमती मीना मिनोचा

**प्रत्यर्थी की ओर से** सर्वश्री ओ० पी० मल्होत्रा और पी० पी० सिंह

न्यायालय का निर्णय मुख्य न्यायाधिपति वाई० वी० चन्द्रचूड़ ने दिया

**मुख्य न्यायाधिपति चन्द्रचूड़—**

अपीलार्थी को भारतीय इस्पात प्राधिकरण के जिसे इससे पूर्व बोकारो स्टील प्लांट लिमिटेड कहा जाता था, चिकित्सा विभाग में ड्रेसर के रूप में नियुक्त किया गया था। 1 मार्च, 1975 को उसे अवचार के उन आरोपों के आधार पर जिनके अन्तर्गत कर्त्तव्य से अनुपस्थिति रहना, रजिस्टरों में की प्रविष्टियों का मिथ्याकरण और अभिलेखों को नष्ट करना आदि था, विभागीय जांच के परिणामस्वरूप सेवा से पदात्युत कर दिया गया था। चूंकि बोकारो के श्रम न्यायालय में प्रबन्ध मण्डल और उसके कर्मकारों के बीच औद्योगिक विवाद लंबित था, इसलिए प्रबन्ध मण्डल ने औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 33 (2) (ख) के अधीन आवेदन फाइल किया जिसके द्वारा उसने अपीलार्थी के विरुद्ध पारित पदच्युति के आदेश के सम्बन्ध में छोटा नागपुर के श्रम न्यायालय का अनुमोदन प्राप्त करने की ईप्सा की थी। उस आवेदन पर किया गया विनिश्चय भागत: अपीलार्थी के पक्ष में था और भागतः उसके विरुद्ध था। श्रम न्यायालय ने 16 नवम्बर, 1976 के निर्णय द्वारा यह अभिनिर्धारित किया कि (1) विभागीय जांच इसलिए अविधिमान्य थी, क्योंकि बोकारो स्टील लिमिटेड का मुख्य चिकित्सा अधिकारी न तो अरोपपत्र जारी करने के लिए और न ऐसी जांच समिति जिसने अपीलार्थी को उसके विरुद्ध विरचित आरोपों के लिए दोषी ठहराया था, गठित करने के लिए सक्षम था, किन्तु यह कि (2) प्रबन्ध मण्डल को पदच्युति का आदेश न्यायोचित ठहराने के लिए साक्ष्य पेश करने का अवसर दिया जाना चाहिए।

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



2. अपीलार्थी ने श्रम न्यायालय के आदेश के दूसरे भाग के विरुद्ध रिट पिटीशन (1976 का सी० डब्ल्यू० जे० सी० 336) फाइल किया जिसकी दलील यह थी कि प्रबन्ध मण्डल को पदच्युति के आदेश को न्यायोचित ठहराने के लिए साक्ष्य प्रस्तुत करने की अनुज्ञा नहीं दी जानी चाहिए। उच्च न्यायालय ने उस रिट पिटीशन के सम्बन्ध में आदेश जारी किया और श्रम न्यायालय में चलने वाली आगे की कार्यवाहियों पर रोक लगा दी। प्रबन्ध मण्डल ने श्रम न्यायालय के आदेश के प्रथम भाग के विरुद्ध रिट पिटीशन (1977 का सी० डब्ल्यू० जे० सी० सं० 2) फाइल किया जिसके द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया कि जांच दूषित है। पटना उच्च न्यायालय की रांची स्थित, न्यायपीठ ने अपने 26 अप्रैल, 1978 के निर्णय द्वारा दोनों रिट पिटीशनों को खारिज कर दिया।

3. उच्च न्यायालय के उसी निर्णय के विरुद्ध जिसके परिणामस्वरूप रिट पिटीशन खारिज कर दिया गया था, प्रबन्ध मण्डल ने इस न्यायालय में 1978 की सिविल अपील सं० 682 (एल) फाइल की जिसमें उच्च न्यायालय के निष्कर्ष की बाबत यह शिकायत की गई कि मुख्य चिकित्सा अधिकारी अपीलार्थी को आरोप-पत्र जारी करने या जांच समिति गठित करने के लिए सक्षम नहीं था। इस न्यायालय ने 22 जुलाई, 1980 को अपील खारिज कर दी। इस न्यायालय ने श्रम न्यायालय और उच्च न्यायालय का यह निष्कर्ष कि वह जांच जिसके परिणामस्वरूप अपीलार्थी को पदच्युत किया गया था, दूषित है, कायम रखा।

4. अपीलार्थी ने उच्च न्यायालय द्वारा अपने रिट पिटीशन की खारिजी के विरुद्ध इस न्यायालय में अपील नहीं की।

5. चूंकि इस न्यायालय ने प्रबन्ध मण्डल द्वारा की गयी अपील में इस न्यायालय द्वारा श्रम न्यायालय के इस आदेश पर कि पदच्युति के आदेश को न्यायोचित ठहराने की दृष्टि से प्रबन्धमण्डल को साक्ष्य प्रस्तुत करने के लिए अनुज्ञात किया जाना चाहिए, रोक नहीं लगाई थी, इसलिए श्रम न्यायालय ने उससे साक्ष्य प्रस्तुत करने की अपेक्षा की। अपीलार्थी ने प्रबन्ध मण्डल द्वारा साक्ष्य प्रस्तुत किए जाने पर आपत्ति करते हुए एक आवेदन फाइल किया, किन्तु उस आवेदन को श्रम न्यायालय ने 24 अगस्त, 1978 को खारिज कर दिया। उस आदेश से व्यथित होकर अपीलार्थी ने पटना उच्च न्यायालय में यह दलील देते हुए रिट पिटीशन (1980 का 531) फाइल किया कि प्रबन्ध मण्डल को साक्ष्य प्रस्तुत करने की अनुज्ञा नहीं दी जानी चाहिए विशेष रूप से इसलिए, क्योंकि उसने श्रम न्यायालय के आदेश के अनुसरण में साक्ष्य प्रस्तुत करने की बजाए, इस निष्कर्ष को कि जांच दूषित है, चुनौती देने का रास्ता अपनाया है। उच्च न्यायालय की रांची स्थित न्यायपीठ द्वारा 5 फरवरी, 1981 को रिट

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



पिटीशन खारिज कर दिए जाने के पश्चात, अपीलार्थी ने विशेष इजाजत लेकर यह अपील फाइल की है।

6. औद्योगिक विवाद अधिनियम की धारा 33 (2) (ख) में, जहां तक कि वह सुसंगत है, यह उपबन्ध किया गया है कि यद्यपि, किसी औद्योगिक विवाद की बाबत कार्यवाही के लम्बित रहने के दौरान, नियोजक को यह छूट है कि वह किसी कर्मकार को किसी ऐसे अवचार के लिए जो विवाद से सम्बद्ध नहीं है, सेवोन्मुक्त कर सकता है या दंडित कर सकता है, तथापि, ऐसे किसी कर्मकार को तब तक सेवोन्मुक्त या पदच्युत नहीं किया जायगा जब तक कि नियोजक ऐसे कर्मकारी के विरुद्ध की गयी करंवाई के अनुमोदन के लिए उस प्राधिकारी के समक्ष जिसके समक्ष कार्यवाही लम्बित थी, आवेदन नहीं प्रस्तुत कर देता। यह सर्व विदित है कि ऐसी किसी कार्यवाही में, नियोजक को यह छूट है कि वह कर्मचारी के विरुद्ध पारित आदेश को न्यायोचित ठहराने के लिए साक्ष्य पेश करे। उस कार्यवाही में नियोजक के अधिकारों और उसकी बाध्यताओं विषयक प्रश्न इस न्यायालय के समक्ष अनेक मामलों में जा चुका है। हमारे प्रयोजन के लिए इस प्रश्न के सम्बन्ध में उन दो महत्वपूर्ण विनिश्चयों का उल्लेख करना जिनसे यह दर्शित होता है कि नियोजक का साक्ष्य प्रस्तुत करने का अधिकार कतिपय शर्तों से नियंत्रित होता है, पर्याप्त होगा और इससे अधिक वह व्यर्थ की पुनरावृत्ति होगा।

7. **दिल्ली क्लाथ और जनरल मिल्स कम्पनी** ब० **लुढ बुध सिंह**[1] वाले मामले में एक कर्मचारी को अवचार के अभिकथन की जांच करने के पश्चात पदच्युत कर दिया गया था। चूंकि औद्योगिक अधिकरण के समक्ष नियोजक और उसके कर्मकारों के बीच औद्योगिक विवाद लम्बित था, इसलिए, नियोजकों ने औद्योगिक विवाद अधिनियम की धारा 33 (2) (ख) के अधीन उस कर्मचारी को पदच्युत करने की अनुज्ञा देने के लिए अधिकरण के समक्ष आवेदन प्रस्तुत किया। उस आवेदन पर बहस समाप्त होने के पश्चात् अधिकरण ने अपने निर्णय को आरक्षित कर लिया। तत्पश्चात नियोजकों ने यह प्रार्थना करते हुए आवेदन फाइल किया कि यदि जांच त्रुटिपूर्ण पायी जाती है, तो उन्हें कर्मचारी की पदच्युति को न्यायोचित ठहराने के लिए साक्ष्य प्रस्तुत करने का अवसर दिया जाना चाहिए। अधिकरण ने इस पश्चात्कथित आवेदन पर विचार नहीं किया किन्तु मुख्य कार्यवाही में ही यह अभिनिर्धारित किया कि जांच अधिकारी के निष्कर्ष साक्ष्य के अनुसार नहीं हैं और इसलिए जांच दूषित है। तदनुसार, उसने कर्मचारी की पदच्युति की अनुज्ञा देने से इंकार कर दिया। नियोजकों द्वारा फाइल की गई अपील में इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि औद्योगिक

[1] [1972] 2 उम० नि० प० 18=[1972] 3 एस० सी० आर० 29.

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



विवाद अधिनियम की धारा 10 के अधीन किए गए निर्देश के आधार पर या धारा 33 के अधीन आवेदन के तौर पर की गई कार्यवाहियों में जिन मामलों में विभागीय जांच की गयी है उनमें नियोजक के लिए प्रथमत: उसका आश्रय लेने की और आनुकल्पिक रूप से, और उसके इस अभिवाक पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना कि जांच समुचित है, साथ ही साथ अपनी कर्रवाई को न्यायोचित ठहराते हुए अधिकरण के समक्ष अतिरिक्त साक्ष्य पेश करने की छूट है। नियोजक को चाहिए कि वह उपयुक्त निवेदन करके कार्यवाही समाप्त किए जाने से पूर्व साक्ष्य प्रस्तुत करने के अवसर का लाभ उठा ले। न्यायालय ने मामले के तथ्यों के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला कि नियोजकों ने अधिकरण के समक्ष कार्यवाही समाप्त हो जाने और निर्णय आरक्षित कर लिए जाने के पश्चात्, और आगे साक्ष्य पेश करने के लिए आवेदन फाइल किया। चूंकि नियोजकों ने उस समय साक्ष्य प्रस्तुत करने का अवसर नहीं मांगा, जब कि कार्यवाहियां लम्बित थीं, इसलिए यह अभिनिर्धारित किया गया कि उस आवेदन पर जो कि उन्होंने पदच्युति के आदेश को न्यायोचित ठहराने के वास्ते साक्ष्य प्रस्तुत करने का अवसर प्राप्त करने के लिए फाइल किया था, अधिकरण का विचार न करना न्यायोचित था।

8. **शंकर चक्रवर्ती बनाम ब्रिटानिया बिस्कुट कम्पनी लिमिटेड**[1] वाले मामले में अधिकरण ने अधिनियम की धारा 33 (2) (ख) के अधीन नियोजक द्वारा किया गया आवेदन, इस आधार पर नामंजूर कर दिया कि वह जांच जिसके परिणामस्वरूप कर्मचारी की सेवाओं का पर्यवसान किया गया था, दूषित है। कलकत्ता उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश ने अधिकरण के अधिनिर्णय को चुनौती देते हुए नियोजकों द्वारा फाइल किए गए रिट पिटीशन को खारिज कर दिया। उनके द्वारा फाइल की गई लेटर्स पेटैंट अपील में, उच्च न्यायालय की खण्ड न्यायपीठ ने यह अभिनिर्धारित किया कि यह अभिनिर्धारित किए जाने के पश्चात् कि जांच दूषित है, अधिकरण के लिए यह लाजिम था कि वह नियोजकों को कर्मचारी के विरुद्ध लगाए गए आरोपों को साबित करने के लिए साक्ष्य प्रस्तुत करने का अवसर देता। इसलिए, उच्च न्यायालय ने यह मामला अधिकरण को वापस भेज दिया जिससे कि यदि नियोजक ऐसा करने की इच्छा रखते हैं, तो उन्हें और आगे साक्ष्य प्रस्तुत करने का अवसर दिया जा सके। कर्मचारी द्वारा फाइल की गई अपील को मंजूर करते हुए इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि सेवा का पर्यवसान करने के किसी आदेश की वैधता या औचित्य का न्याय-निर्णयन करते समय, चाहे वह अधिनियम की धारा 10 के अधीन हो या धारा 33 के अधीन, औद्योगिक अधिकरण या श्रम

1 [1980] 1 उम० नि० प० 911=[1979] 3 एस० सी० आर० 1165.

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

न्यायालय पर ऐसा कोई कर्तव्य नहीं डाला गया है कि वह नियोजक से कर्मचारी के विरुद्ध लगाए गए अवचार के आरोप को सिद्ध करने के लिए साक्ष्य पेश करने की अपेक्षा करे। यह नियोजक पर निर्भर है कि वह विनिर्दिष्ट अभिवचन करके या विनिर्दिष्ट आवेदन द्वारा साक्ष्य प्रस्तुत करने के अवसर का लाभ उठाए। यदि ऐसे अवसर की ईप्सा नहीं की गई और न ही उस प्रभाव का कोई अभिवचन नहीं किया गया, तो अधिकरण या श्रम न्यायालय इस बात के लिए बाध्य नहीं है कि वह नियोजक से स्वप्रेरणा से यह अपेक्षा करे कि वह कर्मचारी के विरुद्ध आरोपों को सिद्ध करने के लिए साक्ष्य पेश करे। **दिल्ली क्लाथ और जनरल मिल्स कम्पनी** बनाम लुढ बुध सिंह[1] वाले मामले में किए गए विनिश्चय का अनुसरण करते हुए, इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि चूंकि उनके समक्ष प्रस्तुत किए गए मामले में कर्मचारी के विरुद्ध आरोपों को सिद्ध करने के लिए साक्ष्य प्रस्तुत करने के अवसर के लिए समुचित समय पर उनके समक्ष न तो कोई ऐसा अभिवचन किया गया और न ही कोई प्रार्थना की गई, इसलिए उच्च न्यायालय का नियोजक को वह अवसर देना गलत था। न्यायालय ने नियोजकों की इस दलील को नामंजूर कर दिया कि अधिनिर्णय सुनाने के लिए कार्यवाहियों को स्थगित किए जाने के पश्चात्, इस निमित्त उनके द्वारा किए गये निवेदन को विचार में लिया जाना चाहिए। न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया कि उस अवसर की मांग करने की स्थिति पहले ही बीत चुकी है।

9. यह संदिग्ध है कि क्या इन दोनों विनिश्चयों द्वारा विहित मानदण्ड का इस मामले में दृढ़तापूर्वक अनुसरण किया गया था। नियोजकों ने जो इस अपील में प्रत्यर्थी सं० 2 है, अधिनियम की धारा 33(2)(ख) के अधीन श्रम न्यायालय से पदच्युति के उस आदेश के अनुमोदन की मांग करते हुए आवेदन प्रस्तुत किया जो अपीलार्थी के विरुद्ध पारित किया गया था। उस आवेदन द्वारा उन्होंने आनुकल्पिक रूप से पदच्युति के आदेश को न्यायोचित ठहराने के लिए साक्ष्य प्रस्तुत करने के अवसर की मांग नहीं की। श्रम न्यायालय द्वारा दिए गए 16 नवम्बर, 1976 के निर्णय के भावार्थ से यह दर्शित होता है कि पूरी अधिसंभाव्यता यह थी कि नियोजकों ने श्रम न्यायालय से साक्ष्य प्रस्तुत करने की अनुज्ञा के देने के लिए मौखिक निवेदन उस समय किया जबकि धारा 33(2)(ख) के अधीन फाइल किए गए आवेदन की सुनवाई समाप्त होने वाली थी। अपीलार्थी ने अत्यधिक कड़ा रुख अपनाया है कि नियोजकों ने ऐसे अवसर की मांग की ही नहीं और यह कि श्रम न्यायालय ने स्वयं ही उन्हें अवसर प्रदान किया। यह दलील बहुत दूर की है और समकालीन तथा अनुवर्ती दोनों ही तथ्यों

[1] [1972] 2 उम० नि० प० 18=[1972] 3 एस० सी० आर० 29.

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

को देखते हुए स्वीकार नहीं की जा सकती। हम अभी-अभी उन तथ्यों के प्रति निर्देश करेंगे।

10. पहली बात तो यह है कि श्रम न्यायालय का निर्णय इस अभिकथन का समर्थन नहीं करता कि नियोजकों ने आवश्यक साक्ष्य प्रस्तुत करने के अवसर की मांग नहीं की थी। बहुत दिनों से चली आ रही इन लम्बी कार्यवाहियों से यह दर्शित होता है कि अपीलार्थी अत्युत्साही मुकदमा लड़ने वाला व्यक्ति है जिसे स्पष्टतः अपने अधिकारों के सम्बन्ध में अच्छी जानकारी है। उसने श्रम न्यायालय के समक्ष चल रही कार्यवाहियों में इस विस्तृत धरती पर उपलभ्य हर संभव आपत्ति की है। वस्तुतः यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि वह श्रम न्यायालय के पीठासीन अधिकारी की सत्यनिष्ठा पर लांछन लगाने की सीमा तक भी गया। यह असंभाव्य है कि यदि नियोजक ऐसे अवसर की मांग न करते, तो वह साक्ष्य प्रस्तुत करने की उन्हें अनुज्ञा दिए जाने का श्रम न्यायालय द्वारा विरोध न करता। उसने तो विरोध किया ही था।

11. उन घटनाओं से जिनसे श्रम न्यायालय के आदेश के बीच घटित हुई, निष्कर्ष को बल मिलता है कि अपीलार्थी की इस दलील में कोई सार नहीं है कि श्रम न्यायालय ने नियोजकों को साक्ष्य प्रस्तुत करने की अनुज्ञा देने में अपनी पहल पर कार्य किया। अपीलार्थी और नियोजकों द्वारा फाइल किए गए रिट पिटीशन को पटना उच्च न्यायालय द्वारा खारिज कर दिए जाने के पश्चात् वह रोक आदेश जो उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी द्वारा फाइल किए गए रिट पिटीशन में पारित किया था, निष्प्रभाव कर दिया गया। तदुपरान्त अपीलार्थी ने स्वयं ही 4 मई, 1948 को श्रम न्यायालय में यह निवेदन करते हुए आवेदन प्रस्तुत किया कि इस तथ्य को देखते हुए कि उच्च न्यायालय ने रिट पिटीशन खारिज कर दिए थे, नियोजकों से पदच्युति का आदेश न्यायोचित ठहराने के लिए साक्ष्य पेश करने की अपेक्षा की जानी चाहिए। 24 अगस्त, 1978 को नियोजकों ने श्रम न्यायालय में इस प्रभाव का एक आवेदन फाइल किया कि उनके द्वारा न्यायालय की अभिरक्षा में रखी गई मूल दस्तावेजें उन्हें वापस कर दी जाएं, क्योंकि वे पदच्युति का आदेश न्यायोचित ठहराने के लिए साक्ष्य प्रस्तुत करते समय उनका आश्रय लेना चाहते हैं। अपीलार्थी ने अपने आप उन साक्षियों की जिनकी परीक्षा वे मामले में कराना चाहते थे, सूची फाइल की। 1 सितम्बर, 1978 को नियोजकों ने श्रम न्यायालय में कतिपय साक्षियों की परीक्षा की और अपीलार्थी ने उनकी प्रति-परीक्षा की। इसी प्रक्रम में अपीलार्थी ने पीठासीन अधिकारी के विरुद्ध जिसने कार्यवाहियों में विलम्ब किया था, कुछ कठोर टिप्पणियां कीं और इसके पश्चात् ही अपीलार्थी ने यह दलील देते हुए श्रम

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



न्यायालय में यह आवेदन फाइल किया कि नियोजकों को साक्ष्य प्रस्तुत करने की अनुज्ञा नहीं दी जानी चाहिए।

12. इस प्रकार श्रम न्यायालय ने नियोजकों को साक्ष्य प्रस्तुत करने की अनुज्ञा देते हुए पारित आदेश स्वीकार कर लिया और अपीलार्थी ने उसके अनुसार कार्य किया। उसने पहले ही अपने साक्षियों की एक सूची दी है और उन साक्षियों की प्रति-परीक्षा की है जिनका साक्ष्य नियोजकों ने प्रस्तुत किया था। इस प्रक्रम में श्रम न्यायालय के आदेश के अनुसरण में जो कुछ भी किया गया, उसे समाप्त करना गलत होगा। इसके अलावा अपीलार्थी ने न्यायालय के आदेश को जो चुनौती दी थी, वह विफल हो चुकी है और पटना उच्च न्यायालय का अपीलार्थियों का रिट पिटीशन खारिज करने वाला आदेश अन्तिम हो चुका है।

13. इन कठिनाइयों पर काबू पाने के लिए अपीलार्थी ने इस बात पर जोर दिया कि विधि के विरुद्ध कोई विबन्ध नहीं हो सकता और इसलिए इस प्रक्रम में भी उसे यह दलील देने की छूट है कि श्रम न्यायालय को वह आदेश पारित नहीं करना चाहिए था। इस दलील के समर्थन में अपीलार्थी ने इस न्यायालय के दो निर्णयों का आश्रय लिया।

14. **चित्तूरी सुब्बना** बनाम **कुडप्पा सुब्बना**[1] वाले मामले में बहुमत निर्णय द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया कि मुकदमे में पश्चात्‌वर्ती प्रक्रम में भी प्रथम बार शुद्ध रूप से विधि सम्बन्धी ऐसे प्रश्न जो तथ्य के किन्हीं प्रश्नों के अवधारण पर निर्भर न हो, उठाए जाने की इजाज़त दी जानी चाहिए।

15. **मथुरा प्रसाद बाजू जायसवाल** बनाम **दोसी बाई एन० बी० जीजी बाई**[2] वाले मामले में इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि न्यायालय की अधिकारिता से सम्बन्धित प्रश्न के बारे में यह नहीं समझा जा सकता कि वह न्यायालय के दोषपूर्ण विनिश्चय द्वारा अन्तिम रूप से अवधारित कर दिया गया है। यदि, किसी त्रुटिपूर्ण विनिश्चय द्वारा, न्यायालय ऐसी अधिकारिता धारण कर लेता है जो उसके पास नहीं है, तो उसका विनिश्चय पक्षकारों के बीच पूर्वन्याय के रूप में प्रवर्तित नहीं हो सकता। इस सम्बन्ध में न्यायालय ने तथ्य सम्बन्धी प्रश्न के विनिश्चय और न्यायालय की अधिकारिता से सम्बन्धित प्रश्न के विनिश्चय के बीच प्रभेद किया। जहां तक तथ्य सम्बन्धी प्रश्नों का सम्बन्ध है, न्यायालय का सम्बन्ध पूर्वन्याय के नियम के लागू होने की बात अवधारित करते समय पूर्वतर निर्णय की शुद्धता से, या अन्यथा, कोई भी नहीं होता। तथापि, जहां प्रश्न शुद्धतः विधि सम्बन्धी है और न्यायालय की

---

1 [1965] 2 एस० सी० आर० 661.

2 [1970] 3 एस० सी० आर० 830.

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh


अधिकारिता से सम्बन्धित है या जहां न्यायालय का विनिश्चय किसी ऐसी बात की मंजूरी देता है, जो अवैध है, वहां विनिश्चय से प्रभावित पक्षकार को पूर्वत्तर विनिश्चय की विधिमान्यता को चुनौती देने से पूर्वन्याय के नियम द्वारा प्रवारित नहीं किया जाएगा। इसका कारण यह है कि प्रक्रिया सम्बन्धी नियम देश की विधि को अधिक्रान्त नहीं कर सकता।

16. हम ऐसा नहीं समझते कि इन विनिश्चयों में से कोई भी अपीलार्थी की सहायता कर सकता है। विधि सम्बन्धी ऐसा कोई प्रश्न जो तथ्यों का अन्वेषण करने की अपेक्षा नहीं करता, कार्यवाही के पश्चात्वर्ती प्रक्रम में उठाने की इजाजत दी जा सकती है, किन्तु वह इस शर्त के अधीन है कि वह प्रश्न उन्हीं पक्षकारों के बीच किसी विनिश्चय द्वारा समाप्त नहीं हुआ है। इस मामले में अपीलार्थी इस बात से सम्बन्धित यह प्रश्न कि क्या श्रम न्यायालय का नियोजकों को साक्ष्य प्रस्तुत करने का अवसर देना ठीक था, इस न्यायालय में पहली बार नहीं उठ रहा है। उसने उसे उस रिट पिटीशन में भी उठाया था जो उसने पटना उच्च न्यायालय में फाइल किया था और वह रिट पिटीशन खारिज कर दिया गया था। जहां एक पूर्वन्याय के प्रश्न का सम्बन्ध है, यदि कोई न्यायालय ऐसी अधिकारिता धारण करते हुए जो उसके पास नहीं है, विधि के प्रश्न के सम्बन्ध में कोई त्रुटिपूर्ण विनिश्चय करता है, तो यह तर्क देना संभव हो सकता है कि वह विनिश्चय उन्हीं पक्षकारों के बीच भी पूर्वन्याय के रूप में प्रवर्तित नहीं हो सकता। किन्तु हमारे समक्ष लाए गए मामले में, श्रम न्यायालय को यह विनिश्चय करने की अधिकारिता थी कि क्या उसे नियोजकों को साक्ष्य प्रस्तुत करने की इजाजत देनी चाहिए। यह हो सकता है कि उसने उस अधिकारिता का प्रयोग करने में अनियमितता बरती हो, किन्तु उसका उन मामलों से प्रभेद किया जाना है जिन में किसी कार्यवाही को ग्रहण करने या कोई विशेष आदेश पारित करने की अधिकारिता न्यायालय के पास मूल रूप से नहीं होती। इसके अलावा, जैसा कि हमने इससे पूर्व कथन किया है, यद्यपि यह कहना सत्य होगा कि नियोजकों ने अधिनियम की धारा 33 (2) (ख) के अधीन आवेदन फाइल करने के साथ ही साथ साक्ष्य प्रस्तुत करने के अवसर की मांग नहीं की, फिर भी हमारे समक्ष प्रस्तुत किए गए आंकड़े के आधार पर यह अभिनिर्धारित करना सम्भव नहीं है कि उन्होंने कार्यवाहियों के समाप्त हो जाने के पश्चात् ऐसे अवसर की मांग की। ऐसा प्रतीत होता है कि जो बात हुई थी, वह यह है कि नियोजकों ने अधिनियम की धारा 33 (2) (ख) के अधीन जो आवेदन फाइल किया था, उस पर सबसे पहले विचार किया गया। जब उस आवेदन पर सुनवाई लगभग पूरी होने वाली थी, तब किन्तु उस पर अन्तिम आदेश पारित किए जाने

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



से पूर्व, नियोजकों ने पदच्युति के आदेश को न्यायोचित ठहराने के लिए साक्ष्य प्रस्तुत करने के अवसर की मांग की। श्रम न्यायालय ने 16 नवम्बर, 1976 वाले अपने एक ही निर्णय द्वारा दोनों ही मामलों का निपटारा साथ-साथ किया। उसने अपने एक ही और उसी निर्णय द्वारा यह अभिनिर्धारित किया कि विभागीय जांच दूषित है, किन्तु नियोजकों को पदच्युति आदेश को न्यायोचित ठहराने के लिए साक्ष्य प्रस्तुत करने की इजाज़त दी जानी चाहिए। अपीलार्थी की यह दलील कि नियोजकों ने साक्ष्य प्रस्तुत करने के अवसर की मांग बिल्कुल ही नहीं की और यह कि श्रम न्यायालय ने अनुग्रहपूर्वक कार्य किया, स्वीकार करना संभव नहीं है। इस प्रकार यह नहीं कहा जा सकता कि श्रम न्यायालय ने नियोजकों को साक्ष्य प्रस्तुत करने की इजाज़त देते हुए आदेश पारित करके अधिकारिता के बिना कार्य किया है।

17. इन्हीं कारणों से, हम यह अपील खारिज करते हैं और यह अभिनिर्धारित करते हैं कि नियोजक उस आदेश को न्यायोचित ठहराने के लिए साक्ष्य प्रस्तुत कर सकते हैं जिसके द्वारा अपीलार्थी को 1 मार्च, 1975 से पदच्युत किया गया था। खर्चे की बाबत कोई भी आदेश नहीं किया जाता है।

18. अपीलार्थी को पदच्युत हुए एक लम्बा समय बीत चुका है। 9 वर्ष का विलम्ब घोर विलम्ब है। इस मामले के निपटारे में उस अवधि का एक बड़ा भाग स्वयं अपीलार्थी द्वारा उत्पन्न की गई कतिपय बाधाओं को दूर करने में ही बर्बाद हो गया जिनमें वे अभिकथन भी सम्मिलित हैं जो उसने श्रम न्यायालय के पीठासीन अधिकारी के विरुद्ध किए थे। उसने श्रम न्यायालय की अग्रिम कार्यवाहियों पर दो बार रोक लगाने के आदेश प्राप्त किए; एक बार 1976 के रिट पिटीशन सं० 336 में उच्च न्यायालय से और तत्पश्चात् इस अपील में। इन रोक आदेशों के परिणामस्वरूप, अभी भी साक्ष्य अभिलिखित किया जाना रह गया है। श्रम न्यायालय वह प्रक्रिया पूरी करेगा और इस मामले का निपटारा यथासंभव उतनी शीघ्रता से करेगा जितनी कि मानवीय दृष्टि से संभव हो।

19. नियोजक इस बात पर विचार करें कि क्या वह उत्पीड़न जिससे होकर अपीलार्थी को इन पिछले वर्षों के दौरान गुजरना पड़ा है, उसके लिए पर्याप्त दण्ड नहीं है। नियोजक पब्लिक सेक्टर उपक्रम है और वे औद्योगिक शान्ति और सौहार्द्र को सुनिश्चित करने के लिए मार्ग प्रशस्त कर सकते हैं।

अपील खारिज की गई।

द्वि०/श्री०

---

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

## आयकर आयुक्त, एर्नाकुलम, केरल

**बनाम**

## शासकीय समापक, पलई सैंट्रल बैंक लिमिटेड (समापनाधीन)

**(16 अक्तूबर, 1984)**

**(न्यायाधिपति वी० डी० तुलजापुरकर, बालकृष्ण एराडी और डी० पी० मदान)**

**अधिलाभ कर अधिनियम (सुपर प्राफिट्स टैक्स ऐक्ट), 1963 (1963 का 14) धारा 4 [सपठित धारा 2 (5), 2 (9) और द्वितीय अनुसूची, नियम 1]—अधिलाभ कर का प्रभार—प्रश्नगत निर्धारिती कम्पनी का समापनाधीन होना—शासकीय समापक का नियुक्त किया जाना—कम्पनी की पूंजी और उसकी आरक्षितियों की संगणना के लिए अधिनियम के उपबन्ध समापनाधीन कम्पनी की बाबत लागू नहीं हो सकते। परिणामस्वरूप मानक कटौती अभिनिश्चित नहीं की जा सकती और इसलिए ऐसी कम्पनी पर उक्त धारा 4 के अधीन अधिलाभ कर प्रभार्य नहीं है।**

निर्धारिती एक बैंककारी कम्पनी है, जिसका नाम है पलई सैंट्रल बैंक लिमिटेड, जिसका समापन 8 अगस्त, 1960 को हुआ था। उस तारीख को शासकीय समापक ने कम्पनी की आस्तियों और दायित्वों का भार ग्रहण किया था तथा उसी तारीख को एक तुलन-पत्र तैयार किया गया था। तत्पश्चात् हर वर्ष समापक भारती रिजर्व बैंक को प्रस्तुत करने के लिए आय-व्यय का विवरण ही तैयार करता था। वह निर्धारण वर्ष, जिससे हमारा सम्बन्ध है, 1963-64 है जो 31 मार्च, 1963 को समाप्त हुआ था। उक्त निर्धारण वर्ष के लिए आयकर आधिकारी ने निर्धारिती की करादेय आय 5,79,678.00 रुपए अवधारित की। अधिकारी की राय थी कि इस रकम पर अधिलाभ कर भी लगेगा और चूंकि निर्धारिती ने इस अधिनियम के अधीन कोई विवरणी फाइल नहीं की, इसलिए अधिनियम की धारा 9 (क) के अधीन एक सूचना जारी करके विवरणी मांगी गई। इस पर निर्धारिती ने प्रभार्य लाभ शून्य दर्शाते हुए विवरणी प्रस्तुत की। सहायक आयुक्त (अपील) ने, आयकर अधिकारी के आदेश की पुष्टि कर दी। निर्धारिती ने कोचीन न्यायपीठ में आयकर अपील अधिकरण के समक्ष दूसरी अपील फाइल की। अधिकरण ने निर्धारित किया कि समापक के हाथ में केवल एक निधि होती है, जिसे शेयर-पूंजी, आरक्षिती और लाभ में विभाजित नहीं किया जा सकता। तदनुसार अधिकरण ने निर्धारिती की अपील मंजूर कर

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



ली और यह अभिनिर्धारित किया कि समापनाधीन कम्पनी पर अधिलाभ कर निर्धारण नहीं किया जा सकता। तत्पश्चात्, राजस्व विभाग के निवेदन पर अधिकरण ने विधि का निम्नलिखित प्रश्न केरल उच्च न्यायालय की राय के लिए उसके पास भेज दिया—"क्या मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में अधिकरण ने यह अभिनिर्धारित करके न्यायोचित किया कि समापनाधीन निर्धारिती कम्पनी पर अधिलाभ कर अधिनियम, 1963 के अधीन कोई निर्धारण नहीं किया जा सकता ?" उच्च न्यायालय अधिकरण द्वारा अपनाए गए इस मत से सहमत था कि जब कम्पनी का समापन हो जाता है तो यह नहीं कहा जा सकता कि समापक के हाथ में कोई रकम है, जिसे कम्पनी की समादत्त पूंजी या आरक्षिति का सुभिन्न नाम दिया जा सके। इसकी बाबत कम्पनी की पूंजी अधिनियम की दूसरी अनुसूची के उपबन्धानुसार परिकलित की जाएगी जिससे कि मानक कटौती की रकम निकाली जा सके। निर्देशित प्रश्न का उत्तर उच्च न्यायालय ने तदनुसार "हां" में दिया अर्थात निर्धारिती के पक्ष में और राजस्व विभाग के विपक्ष में। उक्त विनिश्चय से व्यथित होकर राजस्व विभाग ने विशेष इजाज़त लेकर उच्चतम न्यायालय में अपील फाइल की। अपील खारिज करते हुए,

**अभिनिर्धारित**—यह दृष्टव्य है कि जब तक कम्पनी के बारे में यह नहीं कहा जा सके कि उसके पास निर्धारण वर्ष से सुसंगत पूर्व वर्ष के पहले दिन समादत्त शेयर-पूंजी है, तब तक कम्पनी की पूंजी की संगणना के नियम में अधिकथित सूत्र लागू नहीं हो सकता और चूंकि "मानक कटौती" की संगणना पूर्णतः, कम्पनी की पूंजी पर निर्भर करती है, अतः उसे बिल्कुल भी अभिनिश्चित नहीं किया जा सकता। कम्पनी के समापन में आने के बाद क्या यह कहा जा सकता है कि किसी पश्चात्वर्ती वर्ष के पहले दिन जो कि निर्धारण वर्ष से पूर्व सुसंगत वर्ष है, समापक के हाथ में ऐसी कोई रकम है जो कम्पनी की समादत्त शेयर पूंजी को ऐसी कोई धनराशी सुभिन्न रूप से बनाती है जिसे आरक्षिति कहा जा सके ? इसका उत्तर स्पष्ट रूप से नकारात्मक होगा। (पैरा 8)

चूंकि कम्पनी की पूंजी और उसकी आरक्षितियों की संगणना के लिए अधिनियम में अंतर्विष्ट उपबन्ध समापनाधीन कम्पनी की बाबत लागू नहीं हो सकते और परिणामस्वरूप मानक कटौती अभिनिश्चित नहीं की जा सकती, इसलिए अधिनियम की धारा 4 के अधीन अधिलाभ कर का प्रभार ऐसी दशा में लागू नहीं होगा। (पैरा 10)

## अवलम्बित निर्णय

पैरा

[1981] (1981) 128 आई० टी० आर० 294 :
आयकर अयुक्त, बंगलौर बनाम बी० सी० श्री निवास शेट्टी 10

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



[1967] (1967) 63 आई० टी० आर० 300 :
आयकर आयुक्त बनाम गिरधरदास एण्ड कम्पनी प्राइवेट लिमिटेड; 9

[1924] (1924) 2 के० बी० 52 :
कमिशनर्स आफ इनलैण्ड रेवेन्यू बनाम जार्ज बूरेल 9

सिविल अपीली अधिकारिता : 1980 की सिविल अपील सं० 2090.

1977 के आयकर निर्देश सं० 76 में केरल उच्च न्यायालय के तारीख 30 जनवरी, 1979 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध विशेष इजाजत लेकर की गई अपील।

**अपीलार्थी की ओर से** — श्री अब्दुल कादिर और कुमारी ए० सुभाषिणी।

**प्रत्यर्थी की ओर से** — सर्वश्री पी० गोबिन्दन नायर, एन० सुधाकरन और श्रीमती बेबी कृष्णन

न्यायालय का निर्णय न्यायाधिपति वी० बालकृष्ण एराडी ने दिया।

**न्यायाधिपति एराडी**—

इस अपील में विचारणीय एक छोटा-सा प्रश्न यह उत्पन्न हुआ है कि क्या समापनाधीन कंपनी पर अधिलाभ कर अधिनियम (सुपर प्राफिटस् टैक्स ऐक्ट), 1963 (1963 का अधिनियम सं० 14) (जिसे इसमें इसके पश्चात् "अधिनियम" कहा गया है) के अधीन अधिलाभ कर प्रभार्य है या नहीं। इस प्रश्न का उत्तर इस बात पर निर्भर करेगा कि क्या परिसमापन की तारीख से बाद की अवधि में शासकीय समापक के हाथ में उपलब्ध निधियों का कोई भाग सुभिन्न रूप से निर्धारण वर्ष से सुसंगत लेखा वर्ष के पहले दिन कंपनी की समादत्त शेयर-पूंजी को रूपित करने वाला वर्गीकृत किया जा सकता है और क्या निधि का कोई भाग उसी प्रकार "आरक्षिति" माना जा सकता है।

2. निर्धारिती एक बैंककारी कंपनी है, जिसका नाम है पलई सैंट्रल बैंक लिमिटेड, जिसका समापन 8 अगस्त, 1960 को हुआ था। उस तारीख को शासकीय समापक ने कंपनी की आस्तियों और दायित्वों का भार ग्रहण किया था तथा उसी तारीख को एक तुलन-पत्र तैयार किया गया था। तत्पश्चात् हर वर्ष समापक भारतीय रिजर्व बैंक को प्रस्तुत करने के लिए आय-व्यय का विवरण ही तैयार करता था। वह निर्धारण वर्ष, जिससे हमारा सम्बन्ध है, 1963-64 है, जो 31 मार्च, 1963 को समाप्त हुआ था। उक्त निर्धारण वर्ष के लिए आयकर अधिकारी ने निर्धारिती की करादेय आय 5,79,678.00 रुपए अवधारित की। अधिकारी की राय थी कि इस रकम पर अधिलाभ कर भी लगेगा और चूंकि निर्धारिती ने इस अधिनियम के अधीन कोई विवरणी फाइल नहीं की;

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



इसलिए अधिनियम की धारा 9(क) के अधीन एक सूचना जारी करके विवरणी मांगी गई। इस पर निर्धारिती ने प्रभार्य लाभ शून्य दर्शाते हुए विवरणी प्रस्तुत की। उक्त विवरणी के समर्थन में अधिकारी के समक्ष इन बातों के साथ-साथ यह दलील दी गई कि समापनाधीन कंपनी की बाबत अधिलाभ कर का कोई दायित्व नहीं हो सकता, क्योंकि अधिनियम की दूसरी अनुसूची में अधिकथित सूत्रमानक कटौती की संगणना के लिए इस तथ्य के फलस्वरूप लागू नहीं होता कि समापनाधीन कंपनी निर्धारण वर्ष से सुसंगत पूर्व वर्ष के प्रथम दिन जो कि परिसमापन से बहुत बाद में था यथाविद्यमान समादत्त शेयर-पूंजी वाली नहीं कही जा सकती। निर्धारिती ने कुछ अन्य दलीलें भी दीं किन्तु चूंकि इस प्रक्रम पर उनकी कोई विशेष सुसंगति नहीं है, इसलिए उनका हवाला देना अनावश्यक है।

3. आयकर अधिकारी ने निर्धारिती की दलीलों को नामंजूर कर दिया और अधिनियम की धारा 2(9) में वर्णित 50,000.00 रुपए की न्यूनतम रकम मामले में लागू मानक कटौती के रूप में मानकर 2,04,740,00 रुपए प्रभार्य लाभनिकाला। सहायक आयुक्त (अपील) ने, जिसके समक्ष निर्धारिती ने अपील फाइल की थी, आयकर अधिकारी के आदेश की पुष्टि कर दी। निर्धारिती ने कोचीन न्यायपीठ में आयकर अपील अधिकरण के समक्ष दूसरी अपील फाइल की। अधिकरण ने निर्धारित किया कि समापक के हाथ में केवल एक निधि होती है, जिसे शेयर-पूंजी, आरक्षिती और लाभ में विभाजित नहीं किया जा सकता। अधिकरण की राय में अधिनियम की धारा 27 में अन्तर्विष्ट छूट उपबन्ध, जिसमें लिखा है कि अधिनियम में अन्तर्विष्ट कोई भी बात किसी कंपनी को लागू नहीं होगी, जिसके पास शेयर पूंजी नहीं है, मामले में स्पष्टत: लागू होता है। अधिकरण ने यह भी अभिनिर्धारित किया कि यदि अधिनियम की धारा 27 के अधीन छूट लागू नहीं होती तो भी अधिनियम की धारा 4, जो कि प्रभारी धारा है, समापनाधीन निर्धारिती कंपनी को लागू नहीं होगी क्योंकि मानक कटौती अभिनिश्चित नहीं की जा सकती थी। तदनुसार अधिकरण ने निर्धारिती की अपील मंजूर कर ली और यह अभिनिर्धारित किया कि समापनाधीन कंपनी पर अधिलाभ कर का निर्धारण नहीं किया जा सकता।

4. तत्पश्चात्, राजस्व विभाग के निवेदन पर अधिकरण ने विधि का निम्नलिखित प्रश्न केरल उच्च न्यायालय की राय के लिए उसके पास भेज दिया :—

"क्या मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में अधिकरण ने यह अभिनिर्धारित करके न्यायोचित किया कि समापनाधीन निर्धारिती

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



कंपनी पर अधिलाभ कर अधिनियम, 1963 के अधीन कोई निर्धारण नहीं किया जा सकता ?"

5. उच्च न्यायालय अधिकरण द्वारा अपनाए गए इस मत से सहमत था कि जब कम्पनी का समापन हो जाता है तो यह नहीं कहा जा सकता कि समापक के हाथ में कोई रकम है, जिसे कंपनी की समादत्त पूंजी या आरक्षिति के रूप में सुभिन्न रूप से अभिहित किया जा सके। इसकी बाबत कंपनी की पूंजी अधिनियम की दूसरी अनुसूची के उपबंधानुसार निकाली जाएगी जिससे कि मानक कटौती की रकम निकाली जा सके। निर्देशित प्रश्न का उत्तर उच्च न्यायालय ने तदनुसार 'हां' में दिया अर्थात् निर्धारिती के पक्ष में और राजस्व विभाग के विपक्ष में। उक्त विनिश्चय से व्यथित होकर राजस्व विभाग ने विशेष इजाजत लेकर इस न्यायालय में अपील फाइल की है।

6. दोनों पक्षों की ओर से हाजिर होने वाले काउन्सेलों को सुनने के बाद हम निस्संकोच रूप से इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि उच्च न्यायालय द्वारा अपनाया गया मत पूरी तरह सही है और इस अपील में कोई गुणता नहीं है।

7. अधिनियम की धारा 4 जो कि प्रभारी धारा है, इस प्रकार है :—

> "4. **कर का प्रभारण**—इस अधिनियम में अन्तर्विष्ट उपबन्धों के अध्यधीन रहते हुए, हर कंपनी पर अप्रैल, 1963 के प्रथम दिन को और उससे प्रारम्भ होने वाले हर निर्धारण वर्ष के लिए, यथास्थिति, पूर्व वर्ष या पूर्व वर्षों के उसके प्रभार्य लाभों में से उतने के बारे में, जितने मानक कटौती से अधिक है, तृतीय अनुसूची में विनिर्दिष्ट दर या दरों पर एक कर (जो अधिनियम में अधिलाभ कर नाम से निर्देशित है) प्रभारित किया जाएगा।"

धारा 2 के खण्ड (5) में "प्रभार्य लाभ" पद की परिभाषा इस प्रकार दी गई है :—

---

*अंग्रेजी में यह इस प्रकार है—

> "4. **Charge of tax**—Subject to the provisions contained in this Act, there shall be charged on every company for every assessment year commencing on and from the 1st day of April, 1963, a tax (in this Act referred to as the super profits tax) in respect of so much of its chargeable profits of the previous year or previous years, as the case may be, as exceed the standard deduction, at the rate or rates specified in the Third Schedule."

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



*"2 (5) 'प्रभार्य लाभ' से निर्धारिति की वह कुल आय अभिप्रेत है जो आय-कर अधिनियम, 1961 (1961 का 43) के अधीन, यथास्थिति, किसी पूर्व वर्ष या वर्षों के लिए संगणित तथा प्रथम अनुसूची के उपबन्धों के अनुसार समायोजित हो।"

अगली सुसंगत परिभाषा इसी धारा के खण्ड (9) में दी गई है जो "मानक कटौती" के बारे में है। वह खण्ड इस प्रकार है :—

**2 (9) 'मानक कटौती' से द्वितीय अनुसूची के उपबन्धों के अनुसार संगणित कंपनी की पूंजी के छह प्रतिशत के बराबर रकम या पचास हजार रुपए की रकम, जो भी अधिक हो, अभिप्रेत है :

परन्तु जहां पूर्व वर्ष बारह मास की कालावधि से अधिक या कम है, वहां, यथास्थिति, पूर्वोक्त छह प्रतिशत की रकम या पचास हजार रुपए की रकम में आनुपातिक वृद्धि या कमी कर दी जाएगी :

परन्तु यह और कि जहां किसी कम्पनी की आय, लाभों और अभिलाभों के बारे में उसके पूर्व वर्ष भिन्न भिन्न हैं, वहां, यथास्थिति, पूर्वोक्त वृद्धि या कमी का परिकलन सबसे लम्बे पूर्व वर्ष की लम्बाई के प्रति निर्देश से किया जाएगा।"

---

*अंग्रेजी में यह इस प्रकार है—

"2(5) "Chargeable profits" means the total income of an assessee computed under the Income-tax Act, 1961 (XLIII of 1961), for any previous year or years, as the case may be, and adjusted in accordance with the provisions of the First Schedule."

*"2(9) 'Standard deduction' means an amount equal to six percent, of the capital of the company as computed in accordance with the provisions of the Second Schedule, or an amount of fifty thousand rupees whichever is greater :

Provided that where the previous year is longer or shorter than a period of twelve months, the aforesaid amount of six percent or, as the case may be, of fifty thousand rupees shall be increased or decreased proportionately :

Provided further that where a company has different previous years in respect of its income, profits and gains, the aforesaid increase or decrease, as the case may be, shall be calculated with reference to the length of the previous year of the longest duration."

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



8. उपरोक्त परिभाषा से पता चलता है कि "मानक कटौती" के परिकलन के लिए द्वितीय अनुसूची में विनिर्दिष्ट रीति से संगणित कंपनी की पूंजी अभिनिश्चित करनी होगी। फलस्वरूप, हमारे लिए यह आवश्यक हो जाता है कि अधिनियम की द्वितीय अनुसूची के उपबन्धों का निर्वचन किया जाए। द्वितीय अनुसूची में अधिलाभ कर उद्ग्रहण के प्रयोजन के लिए कंपनी की पूंजी की संगणना के नियम दिए गए हैं। सुसंगत उपबन्ध उक्त अनुसूची के नियम 1 में हैं, जो इस प्रकार है :—

"1. इस अनुसूची के अन्य उपबन्धों के अधीन रहते हुए किसी कंपनी की पूंजी निम्नलिखित अर्थात् इण्डियन इन्कम टैक्स ऐक्ट, 1922 (1922 का 11) की धारा 10 की उपधारा (2) के खण्ड (i-ख) के परन्तुक (ख) के अधीन या आयकर अधिनियम, 1961 (1961 का 43) की धारा 34 की उपधारा (3) के अधीन सृष्ट उसकी समादत्त शेयर पूंजी की और उसकी आरक्षिति की तथा उसकी अन्य आरक्षितियों की जहां तक ऐसी अन्य आरक्षितियों में जमा रकम इंडियन इन्कम टैक्स ऐक्ट, 1922 (1922 का 11) या आयकर अधिनियम, 1961 (1961 का 43) के प्रयोजन के लिए उसके लाभों की संगणना में अनुज्ञात नहीं की गई हैं, रकमों का योग होगी, जैसी वे निर्धारण वर्ष के सुसंगत पूर्व वर्ष के पहले दिन थीं, जिनमें से उतनी रकम कम कर दी गई हो, जितनी उन आस्तियों की लागत, जिनमें से आय प्रथम अनुसूची

अंग्रेजी में यह इस प्रकार है :—

"1. Subject to the other provisions contained in this Schedule, the capital of a company shall be the sum of the amounts, as on the first day of the previous year relevant to the assessment year, of its paid-up share capital and of its reserve, if any, created under the proviso (b) to clause (vi-b) of sub-section (2) of Section (10) of the Indian Income-tax Act, 1922 (XI of 1922), or under Sub-section (3) of section 34 of the Income-tax Act, 1961 (XLIII of 1961), and of its other reserves in so far as the amounts credited to such other reserves have not been allowed in computing its profits for the purpose of the Indian Income-tax Act, 1922 (XI of 1922), or the Income-tax Act, 1961 (XLIII of 1961), diminished by the amount by which the cost to it of the as sets the income from which in accordance with

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



के नियम 1 के खण्ड (iii) या खण्ड (vi) या खण्ड (viii) के अनुसार उसके प्रभार्य लाभों में शामिल करने लायक नहीं है, निम्नलिखित के योग से अधिक है—

(i) उसके द्वारा उधार लिया गया कोई धन जो अभी बकाया है; और

(ii) किसी निधि, किसी अधिशेष और किसी ऐसी आरक्षिति की रकम इस नियम के अनुसार पूंजी की संगणना में हिसाब नहीं ली जाएगी।

स्पष्टीकरण 1. समादत्त शेयर पूंजी या आरक्षिति, जो किसी बही आस्ति को सृजन या वृद्धि (पुनर्मूल्यांकन द्वारा या अन्यथा) करके आस्ति में लाई गई हो, इस अधिनियम के प्रयोजनों के लिए किसी कंपनी की पूंजी का परिकलन करने के लिए पूंजी नहीं है।

स्पष्टीकरण 2. किसी कंपनी के शेयरों के पुरोधृत किए जाने पर उसके द्वारा नकदी में प्राप्त किसी प्रीमियम को जो शेयर प्रीमियम खाते जमा हो, उसके समादत्त शेयर पूंजी का भाग रूप समझा जाएगा।

स्पष्टीकरण 3. जहां किसी कंपनी की आय लाभों या अभिलाभों के बारे में उसके पूर्व वर्ष भिन्न-भिन्न हों, वहां इस अनुसूची के नियम 1

---

clause (iii) or clause (vi) or clause (viii) of rule 1 of the First Schedule is not includible in its chargeable profits exceeds the aggregate of—

(i) any money borrowed by it which remains outstanding; and

(ii) the amount of any fund, any surplus and any such reserves is not to be taken into account in computing the capital under this rule.

Explanation 1—A paid-up share capital or reserve brought into existence by creating or increasing (by revaluation or otherwise) any book asset is not capital for computing the capital of a company for the purposes of this Act.

Explantion 2—Any premium received in cash by the company on the issue of its shares standing to the credit of the share Premium account shall be regarded as forming part of its paid-up share capital.

Explanation 3—Where a company has different previous years in respect of its income, profits and gains,

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



और 2 के अधीन पूंजी की संगणना उस पूर्व वर्ष के निर्देश से की जाएगी जो सबसे पहले प्रारम्भ हुआ था।"

इस नियम के शब्दों से यह प्रकट है कि वे अनिवार्य संघटक जो किसी कंपनी की पूंजी को बनाने के लिए एक साथ होने चाहिएं, ये हैं :—

(i) निर्धारण वर्ष से सुसंगत पूर्व वर्ष के पहले दिन उसकी समादत्त शेयर पूंजी;

(ii) इण्डियन इन्कम टैक्स ऐक्ट, 1922 की धारा 10 की उपधारा (2) के खण्ड (i-ख) के परन्तुक (ख) के अधीन या आयकर अधिनियम, 1961 की धारा 34 की उपधारा (3) के अधीन सृजित उसकी आरक्षितियां, यदि कोई हैं; और

(iii) उसकी अन्य आरक्षितियां जिनमें से ऐसी आरक्षितियों में जमा की गई वे रकमें आयकर निर्धारण के प्रयोजनों के लिए कंपनी के लाभों की संगणना में अनुज्ञात नहीं की गई हों।

पूर्वोक्त रकमों के योग में से धारा में विनिर्दिष्ट कुछ कटौतियाँ करनी होंगी किन्तु ऐसी कटौतियों के व्यौरे प्रस्तुत मामले के प्रयोजनों के लिए सुसंगत नहीं हैं। यह दृष्टव्य है कि जब तक कंपनी के बारे में यह नहीं कहा जा सके कि उसके पास निर्धारण वर्ष से सुसंगत पूर्व वर्ष के पहले दिन समादत्त शेयर पूंजी है, तब तक कंपनी की पूंजी की संगणना के नियम में अधिकथित सूत्र लागू नहीं हो सकता और चूंकि "मानक कटौती" की संगणना पूर्णतः कंपनी की पूंजी पर निर्भर करती है, अतः उसे बिल्कुल भी अभिनिश्चित नहीं किया जा सकता। कंपनी के समापन में जाने के बाद क्या यह कहा जा सकता है कि किसी पश्चात्वर्ती वर्ष में पहले दिन जो कि निर्धारण वर्ष से पूर्व सुसंगत वर्ष है, समापक के हाथ में ऐसी कोई रकम है जो कंपनी की समादत्त शेयर पूंजी को ऐसी कोई धनराशि सुभिन्न रूप से बनाती है जिसे आरक्षिति कहा जा सकता है? हमारी राय में इसका उत्तर स्पष्ट रूप से नकारात्मक होगा।

9. कमिश्नर्स आफ इनलैण्ड रेवेन्यु बनाम जार्ज बुरैल[1] वाले मामले में एम० आर० पोल्लोक ने यह मत व्यक्य किया था :—

"...समापक द्वारा अपना कार्यभार ग्रहण करने के बाद अधिशेष लाभों और पूंजी में अन्तर करना भ्रामक होता है। ब्रश बनाम क्रापर

---

the computation of capital under rule 1 and rule 2 of this Schedule shall be made with reference to the previous year which commenced first."

1 [1924) 2 के० बी० 52, 63.

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



[ (1889) एल० आर० 14 अपील केसेज 525, 546] वाले मामले में लार्ड मेकनेटन, जिसमें ब्रिजवाटर कनाल के अधिमान और साधारण शेयरधारकों के पारस्परिक अधिकारों को अन्तिम रूप से निश्चित किया गया था, ने कहा था : "मेरे विचार में निष्कर्ष यह निकलता है कि ये आस्तियां जो इस आवेदन की विषय-वस्तु हैं, अधिशेष आस्तियां हैं मानो वे कंपनी की पूंजी में अभिवृद्धि या वृद्धि को जिन्हें उससे सुभिन्न किया जा सकता है और जिन पर भिन्न-भिन्न विचार किए जा सकते हैं, वे कंपनी की सम्पत्ति के अभिन्न अंग हैं—संयुक्त भंडार या सामान्य निधि के अभिन्न अंग हैं—जो परिसमापन की तारीख को कंपनी की पूंजी को दर्शाते हैं।"

इस न्यायालय ने **आयकर आयुक्त बनाम गिरधरदास एण्ड कंपनी प्राइवेट लिमिटेड**[1] में विधि का उपरोक्त कथन सानुमोदन उद्धृत और अंगीकृत किया था और यह अभिनिर्धारित किया था कि समापनाधीन कंपनी की बाबत, उसके परिसमापन की तारीख के बाद, पूंजी, आरक्षिति और समुच्च लाभों का अन्तर समाप्त हो जाता है और समापक के हाथ में केवल एक सम्पूर्ण या समेकित निधि होती है। उतार-चढ़ाव वाली शेयर पूंजी या आरक्षिति की संकल्पना जो द्वितीय अनुसूची के नियम को लागू करने के लिए आवश्यक मूलभूत आधार है, समापनाधीन कंपनी की बाबत पूर्णतः असंगत है।

10. **आयकर आयुक्त, बंगलौर बनाम बी० सी० श्रीनिवास शेट्टी**[2] वाले मामले में इस न्यायालय ने यह कहा था कि आयकर अधिनियम, 1961 की स्कीम के अन्तर्गत कर का प्रभारण तब तक लागू नहीं होगा जब तक कि वह मामला या संव्यवहार सुसंगत संगणना उपबन्धों के अन्तर्गत न आ जाए। "प्रत्येक मामले में संगणना उपबन्धों का स्वरूप भार की प्रकृति से सम्बन्ध रखता है।" इस प्रकार यह प्रभारी धारा और संगणना उपबन्ध एक साथ मिलकर एक संहिता का गठन करते हैं। जहां ऐसा मामला होता है, जिसमें संगणना उपबन्ध बिल्कुल भी लागू नहीं हो सकते वहां यह प्रकट है कि ऐसा मामला प्रभारी धारा के अन्तर्गत लाने के लिए आशयित नहीं है अन्यथा यह निष्कर्ष निकाला जाएगा कि जबकि कोई आय प्रभारी धारा के अन्तर्गत प्रतीत होती है, उसका परिमाण निकालने के लिए संगणना की कोई स्कीम नहीं है। अधिनियम में प्रकट विधायी पद्धति ऐसे निष्कर्ष के प्रतिकूल है। चूंकि अधिलाभकर अधिनियम, 1963 की स्कीम बिल्कुल हू-ब-हू ऐसी है, इसलिए

---

1 (1967) 63 आई० टी० आर० 300.

2 [1981] 128 आई० टी० आर० 294.

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



उपरोक्त मत हमारे समक्ष वाले मामले में पूरी तरह लागू होते हैं। इस प्रकार यह अभिनिर्धारित करना होगा कि चूंकि कंपनी की पूंजी और उसकी आरक्षितियों की संगणना के लिए अधिनियम में अन्तर्विष्ट उपबन्ध समापनाधीन कंपनी की बाबत लागू नहीं हो सकते और परिणामस्वरूप मानक कटौती अभिनिश्चित नहीं की जा सकती, इसलिए अधिनियम की धारा 4 के अधीन अधिलाभ कर का प्रभार ऐसी दशा में लागू नहीं होगा। अतः उच्च न्यायालय के निर्णय में हस्तक्षेप करना आवश्यक नहीं है।

11. तदनुसार यह अपील खर्चे सहित खारिज की जाती है।

अपील खारिज की गई।

कृ०

---

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

सत्यमेव जयते

विधि साहित्य प्रकाशन

# विधि साहित्य प्रकाशन

(विधायी विभाग)

विधि और न्याय मंत्रालय

भारत सरकार

## उपलब्ध प्रकाशनों की सूची

---

संलग्न सूची के अनुसार प्रकाशन उपलब्ध हैं।

डाक की दरों में वृद्धि के कारण ये प्रकाशन वी० पी० पी० से नहीं भेजे जा सकते। कृपया अपेक्षित प्रकाशनों के निर्धारित अग्रिम धन सहित अपना आर्डर भेजें।

यदि आप द्वारा मंगाई गई पुस्तकों का आर्डर 25.00 रु० से कम हो और आप पुस्तकें रजिस्ट्री डाक द्वारा मंगाना चाहें तो कृपया रजिस्ट्री शुल्क के 2.75 रु० मंगाए गए प्रकाशनों की मूल कीमत के अतिरिक्त भेजें अन्यथा ये साधारण डाक द्वारा आपकी जिम्मेदारी पर भेज दिए जायेंगे। 25.00 रु० से अधिक मूल्य के प्रकाशन मंगवाने पर यह कार्यालय स्वयं डाक शुल्क वहन करेगा।

मनी आर्डर/बैंक ड्राफ्ट आदि **विधि साहित्य प्रकाशन** के नाम अन्त में दिए गये पते पर भेजें।

हमारे सभी प्रकाशन आपके स्थानीय विधि (कानूनी) पुस्तक विक्रेताओं से भी प्राप्त किए जा सकते हैं।

इस सूची में उल्लिखित प्रकाशनों के अतिरिक्त शेष प्रकाशन/अधिनियम फिलहाल उपलब्ध नहीं हैं।



Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



(1) यदि मंगाई गयी पुस्तकों का आर्डर 25 रुपए से कम हो तो 2.75 रुपए अतिरिक्त भेजें अन्यथा ये पुस्तकें साधारण डाक से आपकी जिम्मेदारी पर भेज दी जायेंगी।

(2) एक बार वी० पी० पी० लौटने के बाद पुनः वी० पी० पी० नहीं भेजी जाएगी।

(3) अपना पता पूरा व साफ-साफ लिखें।

(4) वी० पी० पी० से प्रकाशन मंगवाने के लिए एडवांस अवश्य भेजें। 100 रुपए या उससे अधिक मूल्य की पुस्तकें वी० पी० पी० एल० से मंगवाने के लिए आदेशित पुस्तक मूल्य का कम से कम 25% एडवांस भेजना आवश्यक है।

(5) मनी आर्डर/बैंक ड्राफ्ट आदि विधि साहित्य प्रकाशन के नाम भेजें।

(6) प्रकाशन रेल से मंगवाने के लिए अपने निकटतम रेलवे स्टेशन का नाम अवश्य लिखें।

(7) हमारे सभी प्रकाशन आपके स्थानीय विधि (कानूनी) पुस्तक विक्रेताओं से भी प्राप्त किए जा सकते हैं।

(8) हमारे प्रकाशनों के सम्बन्ध में अपने मूल्यवान सुझाव हमें भेजें। आपके सुझावों का स्वागत है।

## पुस्तक विक्रेताओं के लिए

अपने एजेन्टों को प्रकाशन के लिए विक्रय पर आकर्षक कमीशन देने की व्यवस्था है। कृपया इस विषय में पत्र-व्यवहार करें।



Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

# उपलब्ध प्रकाशन

(क) हिन्दी में पाठ्य पुस्तकें (Law Text Books in Hindi)

1. प्राइवेट (निजी) अन्तरराष्ट्रीय विधि (प्राइवेट इण्टरनेशनल लॉ)— छात्र संस्करण—डॉ० पारस दीवान — 6.25 रुपए
2. अपकृत्य विधि के सिद्धांत (लॉ आफ टार्ट्स)—(द्वितीय परिवर्धित संस्करण)— शर्मन लाल अग्रवाल — 14.50 रुपए
3. निर्णय लेखन (जजमेंट राइटिंग)—भूतपूर्व मुख्य न्यायमूर्ति भगवती प्रसाद बेरी — 11.00 रुपए
4. दण्ड विधि के साधारण सिद्धांत (लॉ ऑफ क्राइम)—डॉ० रामचन्द्र निगम — 19.00 रुपए
5. अन्तरराष्ट्रीय संगठन (इन्टरनेशनल आर्गेनाइजेशन)—डॉ० प्रयाग सिंह — 23.80 रुपए
6. प्रशासनिक विधि (एडमिनिस्ट्रेटिव लॉ)—डा० कैलाश चन्द्र जोशी — 16.50 रुपए
7. चिकित्सा न्यायशास्त्र और विषविज्ञान (मैडिकल ज्यूरिस्प्रूडेन्स एण्ड टॉक्सीकालोजी)—पृष्ठ संख्या 1042 तथा 287 चित्रों सहित पूरे कपड़े की पक्की जिल्द—लेखक—सी० के० पारिख—अनुवादक—डा० नरेन्द्र कुमार पटोरिया — 70.00 रुपए
8. श्रम विधि (लेबर लॉ)—गोपी कृष्ण अरोड़ा — 24.20 रुपए
9. भारतीय संविधान के प्रमुख तत्व (कांस्टीट्यूशन आफ इण्डिया सेलिएन्ट फीचर्स)—लेखक—डॉ० प्रद्युम्न कुमार त्रिपाठी — 36.50 रुपए
10. मुस्लिम विधि (मुस्लिम लॉ)—लेखक—ड़ॉ० हफीजुल रहमान — 16.50 रुपए



Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

11. **साक्ष्य की विधि (लॉ श्राफ एविडेन्स)—(द्वितीय परिवर्धित संस्करण)**—रेवाशंकर गोविन्दराम त्रिवेदी 33.60 रुपए

12. **दण्ड प्रक्रिया संहिता (कोड श्रॉफ क्रिमिनल प्रोसिजर)**—न्यायमूर्ति महावीर सिंह 46.50 रुपए

13. **कम्पनी विधि (कम्पनी लॉ)**—सुरेन्द्रनाथ 30.00 रुपए

14. **संविदा विधि (लॉ श्रॉफ कान्ट्रेक्ट)**—आर० जी० चतुर्वेदी 24.35 रुपए

15. **श्रन्तरराष्ट्रीय विधि के प्रमुख निर्णय (केस लॉ श्रान इन्टरनेशनल लॉ)**—लेखक—डॉ० सुभाष चन्द्र खरे 16.70 रुपए

16. **मध्य प्रदेश भू-विधि (मध्य प्रदेश लैण्ड लॉ)**—लेखक—भूतपूर्व मुख्य न्यायमूर्ति शिवदयाल श्रीवास्तव 10.50 रुपए

**(ख) मासिक विधि निर्णय पत्रिकाएं** (Monthly Law Reports in Hindi)

(1) उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका (सुप्रीम कोर्ट लॉ रिपोर्ट)

प्रथम प्रकाशन अप्रैल, 1968,
वार्षिक मूल्य 65 रुपए.

(2) उच्च न्यायालय निर्णय पत्रिका (हाई कोर्ट लॉ रिपोर्ट)
प्रथम प्रकाशन जनवरी, 1969, वार्षिक मूल्य 75.00 रुपए

एक साथ दोनों पत्रिकाओं का ग्राहक बनने पर संयुक्त वार्षिक चन्दा 120.00 रुपए ।

**विधि छात्रों के लिए प्रमाण-पत्र देने पर विशेष रियायती मूल्य (दोनों पत्रिकाश्रों का 95 रुपए श्रग्रिम संदाय) ।**

**(ग) निर्णयसार** (Digests)

**1.** उच्च न्यायालय निर्णय पत्रिका सप्तवर्षीय (1969-75) निर्णयसार (भाग I और II) मूल्य 24.00 रुपए



Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

(घ) विधि साहित्य समाचार

विधि (कानूनी) और विधि साहित्य सम्बन्धी नवीनतम जानकारी के लिए त्रैमासिक पत्रिका मूल्य 5.00 रुपए, वार्षिक चन्दा, एक प्रति का मूल्य 1.50 रुपए

(ङ) अन्य पुस्तकें (Other Publications)

1. निर्वाचन विधि निर्देशिका (Manual of Election Law) 20.50 रुपए

2. विधि शब्दावली (लीगल ग्लासरी) नवीनतम संशोधित संस्करण 15.50 रुपए

(च) केन्द्रीय अधिनियमों के द्विभाषी (हिन्दी-अंग्रेजी संस्करण)

भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872, दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973, भारतीय दण्ड संहिता, 1860, माल विक्रय अधिनियम, 1930 सहित लगभग 150 निम्नलिखित पाठ उपलब्ध हैं—

केन्द्रीय अधिनियमों के उपलब्ध द्विभाषी संस्करण

| | |
|---|---|
| 1. जाति निर्योगिता निवारण अधिनियम, 1850<br>Cast Disabilities Removal Act, 1850 | 0.65 |
| 3. सोसायटी रजिस्ट्रीकरण अधिनियम, 1860<br>The Societies Registration Act, 1860 | 1.00 |
| 5. पुलिस अधिनियम, 1861<br>The Police Act, 1861 | 2.35 |
| 5ए. धार्मिक विन्यास अधिनियम, 1863<br>The Religious Endowment Act, 1863 | 0.70 |
| 5बी. वाहक अधिनियम, 1865<br>The Carriers Act, 1865 | 0.85 |
| 9. पशु अतिचार अधिनियम, 1871<br>The Cattle-Trespass Act, 1871 | 1.60 |



Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

| | | |
|---|---|---|
| 11. | भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872<br>The Indian Evidence Act, 1872 | 5.65 |
| 12. | भारतीय वयस्कता अधिनियम, 1875<br>The Indian Majority Act, 1875 | 0.80 |
| 13. | नाट्य प्रदर्शन अधिनियम, 1876<br>The Dramatic Performances Act, 1876 | 0.70 |
| 17ए. | मुख्तारनामा अधिनियम, 1882<br>The Power of Attorney Act, 1882 | 0.65 |
| 19. | वाद मूल्यांकन अधिनियम, 1887<br>The Suits Valuation Act, 1887 | 0.65 |
| 23बी. | भारतीय रेल अधिनियम, 1890<br>The Indian Railways Act,1890 | 5.75 |
| 23सी. | राजस्व वसूली अधिनियम, 1890<br>The Revenue Recovery Act, 1890 | 0.80 |
| 26. | साधारण खण्ड अधिनियम, 1897<br>The General Clauses Act, 1897 | 1.45 |
| 26बी. | महामारी अधिनियम, 1897<br>The Epidemic Diseases Act, 1897 | 0.70 |
| 26सी. | भारतीय मतस्य-क्षेत्र अधिनियम, 1897<br>The Indian Fisheries Act,1897 | 0.70 |
| 28. | रजिस्ट्रीकरण अधिनियम, 1908<br>The Registration Act, 1908 | 2.55 |
| 29. | विस्फोटक पदार्थ अधिनियम, 1908<br>The Explosive Substance Act, 1908 | 0.60 |
| 30ए. | आनन्द विवाह अधिनियम, 1909<br>The Anand Marriage Act, 1909 | 0.80 |
| 32ए. | हिन्दू सम्पत्ति व्ययन अधिनियम, 1916<br>The Hindu Disposition of Property Act, 1916 | 0.85 |



Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

| | | |
|---|---|---|
| 32बी. | शासकीय न्यासी अधिनियम, 1913<br>The Official Trustees Act, 1913 | 1.45 |
| 32सी. | सहकारी सोसाइटी अधिनियम, 1912<br>The Co-operative Societies Act, 1912 | 2.25 |
| 33सी. | विष अधिनियम, 1919<br>The Poison Act, 1919 | 0.70 |
| 33डी. | प्रान्तीय दिवाला अधिनियम, 1920<br>The Provincial Insolvency Act, 1920 | 4.65 |
| 35. | कर्मकार प्रतिकर अधिनियम, 1923<br>The workmen's Compensation Act, 1923 | 4.05 |
| 35ए. | भारतीय बायलर अधिनियम, 1923<br>The Indian Boiler Act, 1923 | 2.70 |
| 37बी. | भारतीय वन अधिनियम, 1927<br>The Indian Forest Act, 1927 | 3.55 |
| 38. | बाल विवाह अवरोध अधिनियम, 1929<br>The Child Marriage Restraint Act, 1929 | 1.15 |
| 40. | माल विक्रय अधिनियम, 1930<br>The Sale of Goods Act, 1930 | 1.20 |
| 41. | भारतीय भागीदारी अधिनियम, 1932<br>The Indian Partnership Act, 1932 | 1.90 |
| 42. | बालक (श्रम गिरवीकरण) अधिनियम, 1933<br>Children (Pledging of Labour) Act, 1933 | 0.90 |
| 43. | भारतीय बेतार तार यांत्रिकी अधिनियम, 1933<br>The Indian Wireless Telegraphy Act, 1933 | 0.70 |
| 44. | भारतीय डाक श्रमिक अधिनियम, 1934<br>The Indian Dock Labourers Act, 1934 | 1.20 |



Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

| | | |
|---|---|---|
| 45. | वायुयान अधिनियम, 1934<br>The Air Craft Act, 1934 | 2.30 |
| 46बी. | आर्य विवाह विधिमान्यकरण अधिनियम, 1937<br>The Arya Marriage Validation Act, 1937 | 0.60 |
| 48. | नियोजक दायित्व अधिनियम, 1938<br>The Employers Liability Act, 1938 | 0.70 |
| 49डी. | विदेशियों का रजिस्ट्रीकरण अधिनियम, 1939<br>The Registration of Foreigners Act, 1939 | 0.75 |
| 49ई. | वाणिज्यिक दस्तावेज साक्ष्य अधिनियम, 1939<br>The Commercial Documents Evidence Act, 1939 | 1.35 |
| 50. | माध्यस्थम् अधिनियम, 1940<br>The Arbitration Act, 1940 | 1.90 |
| 50ए. | औषधि और प्रसाधन सामग्री अधिनियम, 1940<br>The Drugs and Cosmetics Act, 1940 | 1.90 |
| 51. | साप्ताहिक अवकाश दिन अधिनियम, 1942<br>The Weekly Holidays Act, 1942 | 0.75 |
| 51ए. | कॉफी अधिनियम, 1942<br>The Coffee Act, 1942 | 2.55 |
| 54. | विदेशियों विषयक अधिनियम, 1946<br>The Foreigners Act, 1946 | 1.10 |
| 57. | भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1947<br>The Prevention of Corruption Act, 1947 | 0.80 |
| 58ए. | पूंजी निर्गमन (नियंत्रण) अधिनियम, 1947<br>The Capital Issues (Control) Act, 1947 | 0.60 |
| 58बी. | आयात और निर्यात (नियंत्रण) अधिनियम, 1957<br>The Imports and Exports (Control) Act, 1947 | 1.10 |



Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

| | | |
|---|---|---|
| 61. | कारखाना अधिनियम 1948<br>The Factories Act, 1948 | 3.70 |
| 62. | कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम, 1948<br>The Employees State Insurance Act, 1948 | 13.35 |
| 67ए. | जनगणना अधिनियम, 1948<br>The Census Act, 1948 | 1.00 |
| 68बी. | चार्टर्ड अकाउन्टेंट अधिनियम, 1949<br>The Chartered Accountant Act, 1949 | 3.25 |
| 71. | सेना अधिनियम, 1950<br>The Army Act, 1950 | 4.10 |
| 73. | औषधि (नियंत्रण) अधिनियम, 1950<br>The Drugs (Control) Act, 1950 | 0.80 |
| 73ए. | सड़क परिवहन निगम अधिनियम, 1950<br>The Road Transport Corporation Act, 1950 | 1.75 |
| 76. | अखिल भारतीय सेवा अधिनियम, 1951<br>The All India Services Act, 1951 | 0.65 |
| 76ए. | राष्ट्रपति पेंशन अधिनियम, 1951<br>The President Pension Act, 1951 | 0.85 |
| 79. | खान अधिनियम, 1952<br>The Mines Act, 1952 | 4.25 |
| 81ए. | कॉयर उद्योग अधिनियम, 1953<br>The Coir Industry Act, 1953 | 1.95 |
| 82. | विशेष विवाह अधिनियम, 1954<br>The Special Marriage Act, 1954 | 2.15 |



Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

83ए. पुस्तक और समाचार पत्र परिदान (सार्वजनिक पुस्तकालय) अधिनियम, 1954
The Delivery of Books and Newspapers (Public Libraries) Act, 1954 — 0.80

83बी. औषधि और चमत्कारिक उपचार (आक्षेपणीय विज्ञापन) अधिनियम, 1954
The Drugs and Magic Remedies (Objectionable Advertisements) Act, 1954 — 1.10

86ए. श्रमजीवी पत्रकार और अन्य समाचार-पत्र कर्मचारी (सेवा की शर्तें) और प्रकीर्ण उपलब्ध अधिनियम, 1955
The Working Journalists and other Newspapers Employees (Conditions of Service) and Miscellaneous Provisions Act, 1955 — 3.05

89ए. औषधीय और प्रसाधन निर्मितियां (उत्पाद शुल्क) अधिनियम, 1955
The Medical and Toilet Preparations (Excise Duties) Act, 1955 — 1.80

95. हिन्दू अप्राप्तवयता और संरक्षकता अधिनियम, 1956
The Hindu Minority and Guardianship Act, 1956 — 0.55

97ए. केन्द्रीय विक्रय-कर अधिनियम, 1956
The Central Sales-Tex Act, 1956 — 6.25

99. नौ सेना अधिनियम, 1957
The Navy Act, 1957 — 6.30

100. प्रतिलिप्यधिकार अधिनियम, 1957
The Copyright Act, 1957 — 3.00

100ए. दिल्ली नगर निगम अधिनियम, 1957
The Delhi Municipal Corporation Act, 1957 — 20.00



Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

| | | |
|---|---|---|
| 101ए. | रेल संरक्षण बल अधिनियम, 1957<br>The Railway Protection Force Act, 1957 | 0.90 |
| 109. | बालक अधिनियम, 1960<br>The Children Act, 1960 | 2.45 |
| 109ए. | केन्द्रीय उत्पाद शुल्क (मीटरी मात्रक संपरिवर्तन) अधिनियम, 1960<br>The Central Excise (Conversion of Metric Units) Act, 1960 | 0.60 |
| 109बी. | अनाथालय और अन्य पूर्त आश्रम (पर्यवेक्षण और नियंत्रण) अधिनियम, 1960<br>The Orphanages and other Charitable Homes (Supervision and Control) Act, 1960 | 0.70 |
| 114ए. | प्रौद्योगिक संस्थान अधिनियम, 1961<br>The Institutes of Technology Act, 1961 | 2.60 |
| 116. | हिन्दी साहित्य सम्मेलन अधिनियम, 1962<br>The Hindi Sahitya Sammelan Act, 1962 | 0.50 |
| 117बी. | प्रत्यर्पण अधिनियम, 1962<br>The Extraditon Act, 1962 | 2.35 |
| 120. | विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1963<br>The Specific Relief Act, 1963 | 1.25 |
| 122. | वैयक्तिक क्षति (प्रतिकर बीमा) अधिनियम, 1963<br>The Personal Injuries (Compensation Insurance) Act, 1963 | 1.20 |
| 123ए. | निर्यात (क्वालिटी नियंत्रण और निरीक्षण) अधिनियम, 1963<br>The Export (Quality Control and Inspection) Act, 1963 | 0.90 |



Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

| | | |
|---|---|---|
| 123बी. | समुद्री बीमा अधिनियम, 1963<br>The Marine Insurance Act, 1963 | 4.10 |
| 133. | इलायची अधिनियम, 1965<br>The Cardamom Act, 1965 | 1.00 |
| 135. | रेल सम्पत्ति (विधि-विरुद्ध कब्जा) अधिनियम, 1966<br>The Railway Property (Unlawful Possession) Act, 1966 | 1.00 |
| 143. | दिल्ली प्रशासन अधिनियम, 1966<br>The Delhi Administration Act, 1966 | 1.70 |
| 146. | विधि-विरुद्ध क्रियाकलाप (निवारण) अधिनियम, 1967<br>Unlawful Activities (prevention) Act, 1967 | 1.55 |
| 153. | नागरिक सुरक्षा अधिनियम, 1968<br>The Civil Defence Act, 1968 | 0.85 |
| 157बी. | कीटनाशी अधिनियम, 1968<br>The Insecticides Act, 1968 | 4.60 |
| 160. | जन्म और मृत्यु रजिस्ट्रीकरण अधिनियम, 1969<br>The Registration of Births and Deaths Act, 1969 | 1.15 |
| 172ए. | अन्तराष्ट्रीय विमानपत्तन अधिनियम, 1971<br>International Airport Authority Act, 1971 | 1.10 |
| 172बी. | भारत रक्षा और आन्तरिक सुरक्षा नियम, 1971<br>The Defence and Internal Security of India Rules, 1971 | 3.85 |
| 173सी. | दिल्ली भूमि (अन्तरण पर निर्बन्धन) अधिनियम, 1972<br>The Delhi Lands (Restriction on Transfer) Act, 1972 | 1.00 |



Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

| | | |
|---|---|---|
| 173एफ. | वास्तुविद अधिनियम, 1972<br>The Architects Act, 1972 | 3.50 |
| 174बी. | प्राधिकृत अनुवाद (केन्द्रीय विधि) अधिनियम, 1973<br>The Authorised Translation (Central Laws) Act, 1973 | 0.20 |
| 174सी. | विदेशी मुद्रा विनियमन अधिनियम, 1973<br>The Foreign Exchange Regulation Act, 1973 | 7.70 |
| 177ए. | विदेशी मुद्रा संरक्षण और तस्करी निवारण अधिनियम 1974<br>The Conservation of Foreign Exchange and Prevention of Smuggling Activities Act, 1974 | 0.80 |
| 177बी. | दिल्ली विक्रय कर अधिनियम, 1975<br>The Delhi Sales Tax Act, 1975 | 6.45 |
| 178. | तस्कर और विदेशी मुद्रा छलसाधक (सम्पत्ति समपहरण) अधिनियम, 1976<br>The Smugglers and Foreign Exchange Manipulators (Forfeiture of Property) Act, 1976 | 1.65 |
| 179. | समान पारिश्रमिक अधिनियम, 1976<br>The Equal Remuneration Act, 1976 | 0.85 |
| 180. | विक्रय संवर्धन कर्मचारी (सेवा शर्तें) अधिनियम, 1976<br>The Sales Promotion Employees (Conditions of Service) Act, 1976 | 0.80 |
| 182. | बाट और माप मानक अधिनियम, 1976<br>The Standards of Weights and Measures Act, 1976 | 4.90 |
| 182ए. | विक्षुब्ध क्षेत्र (विशेष न्यायालय) अधिनियम, 1976<br>The Disturbed Areas (Special Courts) Act, 1976 | 0.85 |
| 184. | विदेशी अभिदान (विनियमन) अधिनियम, 1976<br>The Foreign Contribution (Regulation) —Act, 1976 | 2.00 |



Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh



**विधि (कानून के) विद्यार्थियों के लिए विशेष रियायत**

**25/—रुपए बचाइए**

**अप्रैल, 1968 से आरम्भ**
**उच्चतम न्यायालय निणय पत्रिका**
(SUPREME COURT JUDGEMENTS IN HINDI)
**जनवरी, 1969 से प्रारम्भ**
**उच्च न्यायालय निर्णय पत्रिका**
(HIGH COURT JUDGEMENTS IN HINDI)

निर्णयज विधि (Case Law) के अध्ययन के लिए इन दो अद्वितीय हिन्दों पत्रिकाओं को विधि के विद्यार्थी सुविधा से खरीद सकें, इनके लिए सरकार ने उनको कम मूल्य पर पत्रिकाएं देने का निर्णय किया है। **अपने कालेज के अधिकारियों से यह प्रमाण पत्र लेकर कि आप विधि के विद्यार्थी हैं, आज ही आर्डर भेजिए :**

| | साधारण मूल्य | रियायती मूल्य |
|---|---|---|
| **उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका :** | 65/- रु० वार्षिक | 55/- रु० वार्षिक |
| **उच्च न्यायालय निर्णय पत्रिका :** | 75/- रु० वार्षिक | 60/- रु० वार्षिक |
| **दोनों पत्रिकाओं का संयुक्त ग्राहक बनने पर** | 120/- रु० वार्षिक | 95/- रु० वार्षिक |

अब 'उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका' तथा 'उच्च न्यायालय निर्णय पत्रिका' के पिछले अंक अनुक्रमणिका सहित उपलब्ध हैं; कृपया अगला पृष्ठ देखें।

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

| उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका | | | कुल |
|---|---|---|---|
| 1968 | (अप्रैल से दिसम्बर तक) | 9 अंक | 33-75 रुपए |
| 1969 | (जनवरी से दिसम्बर तक) | 12 अंक | 45-00 रुपए |
| 1970 | — | 12 अंक | 45-00 रुपए |
| 1971 | — | 12 अंक | 45-00 रुपए |
| 1972 | — | उपलब्ध नहीं है | |
| 1973 | — | 12 अंक | 45-00 रुपए |
| 1974 | — | 12 अंक | 45-00 रुपए |
| *1975 | — | 12 अंक | 65-00 रुपए |
| *1976 | — | उपलब्ध नहीं है | |
| *1977 | — | 12 अंक | 65-00 रुपए |
| *1978 | — | 12 अंक | 65-00 रुपए |
| *1979 | — | 12 अंक | 65-00 रुपए |
| *1980 | — | 12 अंक | 65-00 रुपए |
| *1981 | — | 12 अंक | 65-00 रुपए |
| *1982 | — | उपलब्ध नहीं है | |

(डाक अथवा रेल ख़र्च सहित)

| उच्च न्यायालय निर्णय पत्रिका | | | कुल |
|---|---|---|---|
| 1969 | (जनवरी से दिसम्बर) | 12 अंक | 75/-रुपए |
| 1970 | — | 12 अंक | 75/-रुपए |
| 1971 | — | 12 अंक | 75/-रुपए |
| 1972 | — | 12 अंक | 75/-रुपए |
| 1973 | — | 12 अंक | 75/-रुपए |
| 1974 | — | 12 अंक | 75/-रुपए |
| 1975 | — | 12 अंक | 75/-रुपए |
| *1976 | — | 12 अंक | 75/-रुपए |
| *1977 | — | 12 अंक | 75/-रुपए |
| *1978 | — | 12 अंक | 75/-रुपए |
| *1979 | — | 12 अंक | 75/-रुपए |
| *1980 | — | 12 अंक | 75/-रुपए |
| *1981 | — | 12 अंक | 75/-रुपए |
| *1982 | — | उपलब्ध नहीं है | |

(डाक अथवा रेल खर्च सहित)

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

*एक साथ दोनों पत्रिकाएं मंगवाने पर साधारण वार्षिक मूल्य 120 रुपए तथा विद्यार्थियों के लिए रियायती मूल्य 95 रुपए मात्र।

नोट—रियायती मूल्य पर ग्राहक बनने के लिए अपेक्षित प्रमाण-पत्र प्रस्तुत करना आवश्यक है।

मनीआर्डर/बैंक ड्राफ्ट विधि साहित्य प्रकाशन के नाम नीचे पते पर भेजें :—

प्रकाशन और विक्रय प्रबन्धक,

**विधि साहित्य प्रकाशन,**

विधि और न्याय मंत्रालय,

इंडियन लॉ इन्स्टीट्यूट बिल्डिंग, भगवानदास रोड, नई दिल्ली—110001.

Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh
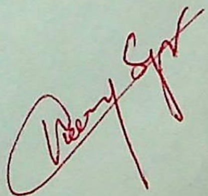
Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh